तर्जुमानुल
कुरआन

जिल्द अव्वल
(प्रथम खंड)

अज़
मौलाना अबुल कलाम आज़ाद रह०

देवनागरी लिप्यांतर
(कठिन शब्दों के अर्थ के साथ)
प्रो. अख़्तरुल वासे

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद
आज़ाद भवन, इन्द्रप्रस्थ एस्टेट,
नई दिल्ली-110002

Tarjuman-ul-Qur'an, Vol. 1 Hindi Translation of the *Holy Qur'an* with commentary, annotations and introduction by the late Maulana Abul Kalam Azad.

तर्जुमानुल- क़ुरआन, जिल्द अव्वल, कलामे पाक का हिन्दी तर्जुमा मअ़ा तफ़्सीर व तशरीह व दीबाचा अज़ मौलाना अबुल कलाम आज़ाद रहमतुल्लाह अ़लैह

प्रकाशक : **महानिदेशक, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद**
आजाद भवन, इन्द्रप्रस्थ एस्टेट, नई दिल्ली-110002

प्रथम संस्करण : फ़रवरी, 2004
सर्वाधिकार : सुरक्षित
हदिया : रु. 500/-
मुद्रक : **स्काई पब्लिकेशन्स**,167/7, सराय जुलैना, नई दिल्ली–25
फोन : 26914598, टेलीफैक्स : 011-26823063
अ.मा.पु.सं. : 81-901601-1-5

आमुख

मौलाना अबुलकलाम आज़ाद एक शख़्स का नाम नहीं बल्कि उनकी ज़ात में कई शख़्सियतें जमा हो गई थीं । वह लेखक, वक्ता, पत्रकार, विचारक होने के साथ-साथ आज़ादी की तहरीक के हीरो, नए हिन्दुस्तान के निर्माता और धार्मिक विद् थे । मौलाना आज़ाद ने जो कुछ लिखा वह उर्दू ज़ुबान में है । अगरचे उन पर बहुत कुछ लिखा गया है लेकिन इस बात की ज़रूरत हमेशा महसूस की जाती रही कि उनकी तहरीरों को दूसरी ज़बानों, ख़ास कर हिन्दी में सामने लाया जाए। इसी सोच के तहत मौलाना आज़ाद की क़ुरआने-करीम की तफ़सीर **'तर्जुमानुल- क़ुरआन'** की पहली जिल्द हिन्दी रस्मुल-ख़त में आपके हाथों में है। मौलाना आज़ाद की मज़हबी सोच तंग-नज़री वाली नहीं थी बल्कि वह एकेश्वरवाद, वहदते-आदम अर्थात् मनुष्य की एकता और विश्वव्यापी दृष्टिकोण के सबसे बड़े हामी थे और उन्होंने क़ुरआन की पहली सूरः, सूरः फ़ातेहा की व्याख्या में क़ुरआन के इसी विश्वबंधुत्व के नज़रिये को साबित किया है और इस तरह मज़हब के नाम पर इंसानों को बांटने का विरोध किया है ।

मौलाना आज़ाद का ऐसा विचार था कि ईश्वर का पैग़ाम विभिन्न स्थानों पर, विभिन्न भाषाओं में जहां-जहा उसकी ज़रूरत महसूस हुई है मनुष्यों को सही रास्ता दिखाने के लिए आया है । पैग़ाम एक ही है, भाषा अलग हो सकती है ।

मुझे ख़ुशी है कि इंडियन काउंसिल फॉर कल्चरल रिलेशन्स, जिसके मौलाना आज़ाद संस्थापक भी थे, **'तर्जुमानुल- क़ुरआन'** की पहली जिल्द को देवनागरी लिपि में पेश कर रही है । मुझे इस बात पर और ज़्यादा ख़ुशी है कि मेरी तजवीज़ पर इस ज़िम्मेदारी को इस्लामियात के विद्वान और विख़्यात बुद्धिजीवी प्रो. अख़्तरूल वासे, डायरेक्टर, ज़ाकिर हुसैन इंस्टीटियूट ऑफ इस्लामिक स्टडीज़, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली ने कबूल किया और उन्होंने इसको हिन्दी रस्मुल-ख़त में इस तरह पेश किया है ताकि पढ़ने वाले मौलाना की ज़बान और शैली से वाकिफ़ भी हो सकें । उर्दू के मुश्किल अल्फ़ाज के उन्होंने हिन्दी में मानी भी दे दिए हैं ।

मुझे उम्मीद है कि यह कोशिश आपको पसंद आयेगी और इस पहली जिल्द के बाद मौलाना आज़ाद की तफसीर तर्जुमानुल-क़ुरआन की बक़िया तीन जिल्दों को भी प्रो. अख़्तरूल वासे के सहयोग से आई.सी.सी.आर. इसी तरह हिन्दी में पेश करेगी । मैं इस सफल प्रयास के लिए प्रो. अख़्तरूल वासे, आई.सी.सी.आर. के डायरेक्टर जनरल श्री राकेश कुमार और उनके सहकर्मियों को मुबारकबाद पेश करती हूं ।

नजमा हेपतुल्ला

अध्यक्ष, आई.सी.सी.आर.

अपनी बात

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद एक निहायत ही ख़ल्लाक़[1] और ओरिजनल ज़ेहन के मालिक थे जो अबक़री[2] शख़्सियात[3] का ख़ास्सा[4] होता है । अबक़री ज़ेहन कभी भी बने बनाए रास्तों पर नहीं चलते । वह अपनी राह ख़ुद बनाते हैं । उन्हें हक़ीक़त के अस्ल सरचश्मों[5] तक रसाई हासिल होती है और इसलिए उनकी फ़िक्र और उनका अमल हक़ीक़त के एक बिल्कुल नए तसव्वुर पर मबनी[6] होता है और उनसे हक़ीक़त के नए मज़ाहिर[7] और अब्आद[8] मुनकशिफ़[9] होते हैं । मौलाना आज़ाद की ख़ल्लाक़ाना[10] इन्फ़रादियत[11] बहुत कम-उम्री में ही जाहिर होने लगी थी जो इस बात का इशारा था कि एक निहायत अबकरी दिमाग़ अपनी तमाम तर क़ुव्वतों के साथ ज़ाहिर होने वाला है । 'लिसानुस्सिद्क़' नाम के अख़बार से जिसे उन्होंने बहुत कम-उम्री में जारी किया था, से लेकर 'अलहिलाल' और 'अलबलाग' तक मौलाना आज़ाद की फ़िक्रो-नज़र की अबक़रियत के रौशन नक़ूश[12] देखे जा सकते हैं ।

लेकिन मौलाना आज़ाद की तख़्लीक़ी फ़िक्र का बालिग़तरीन[13] इज़हार उनकी क़ुरआन-फ़हमी[14] में नज़र आता है जो अब **तर्जुमानुल क़ुरआन** की सूरत में क़ुरआन की तफ़सीर[15] और उर्दू अदब की लाज़वाल शाहकार की हैसियत अख़्तियार कर चुका है । क़ुरआन की तफ़सीर की एक लम्बी तारीख़ है जिसे एक से एक तेज निगाह और असरार-कुशा[16] जेहनों ने रौशन किया है । इस तारीख़ में अपनी इन्फ़रादियत का नक़्श क़ायम करना आसान नहीं है मगर मौलाना आज़ाद ने न सिर्फ़ अपनी इन्फ़रादियत क़ायम की बल्कि फ़िक्रो-नजर और फ़हम-व-फ़रासत[17] का एक ऐसा मैयार[18] क़ायम किया जिसने तफ़सीरी सरमाये की एक बिल्कुल नई तारीख़ तश्कील[19] दे दी । 'तर्जुमानुल क़ुरआन' यूं तो अपनी बेशुमार ख़सूसियात के लिए मारूफ़ है मगर उसका बुनियादी इम्तियाज़ अक़्ल और विजदान[20] का वह मुबारक तवाज़ुन[21] है जिसने इस तफ़सीरी कारनामे को हर इफ़रातो-तफ़रीत[22] से पाक रखते हुए उसे क़ुरआन फ़हमी की सिराते-मुस्तक़ीम[23] की तरह क़ायम कर दिया है । इस तफ़सीर का मुतालेआ कहीं से भी किया जाए ऐसा मालूम होता है कि साहिबे-तफ़सीर का दिल-व-दिमाग़ और क़ुरआने-करीम के मतालिब में एक फ़ितरी रब्त[24] और हमआहंगी[25] पैदा हो गई है । यह रब्त और हमआहंगी सूर: फ़ातेहा की तफ़सीर में अपने नुक़्तए-उरूज[26] को पहुंच गई है ।

---

1. बहुत पैदा करने वाला 2. जीनियस 3. व्यक्तित्व 4. विशिष्टता 5. स्रोत 6. आधारित 7. दृष्टि 8. रूप 9. जाहिर होना 10. सर्जनात्मक 11. विशिष्टता 12. चिन्ह् 13. परिपक्व 14 कुरआन की समझ 15. व्याख्या 16. भेद खोलने वाला 17 समझ-बूझ 18 कसौटी 19 बनाना 20. जानने और खोजने की शक्ति 21 संतुलन 22. कम-ज्यादा 23. सीधा रास्ता 24 सबंध 25. समानता 26. चरम बिन्दु

मौलाना ने इस सूर: के कलीदी अल्फ़ाज़[27] रब, यौमुद्दीन[28], सिराते-मुस्तकीम[29] वग़ैरह की जो शरह[30] बयान की है और उसके हवाले से जिस तरह आफ़ाकी[31] इन्सानियत और वहदते-आदम[32] के जिन इस्लामी उसूलों का इन्किशाफ किया है उसे हमारे ज़माने में क़ुरआनी तालीमात को तमाम इंसानों की ज़िदंगी में शामिल और जारी-व-सारी करने की कोशिशों का रौशन-तरीन संगेमील[33] कहा जा सकता है ।

यह मेरे लिए सआदत[34] की बात है कि मौलाना आज़ाद की इस तफ़सीर की पहली जिल्द को हिन्दी रस्मे-ख़त[35] में मुनतक़िल[36] करने और मुश्किल उर्दू अल्फ़ाज़ के हिन्दी में मानी देने का काम कर सका । यह काम इंडियन काउंसिल फॉर कल्चरल रिलेशन्स की सद्र राज्य सभा की डिप्टी चेयरपर्सन और सारी दुनिया में एक पार्लियामेंटेरियन और स्कालर के तौर पर अपनी पहचान बना चुकीं नजमा हेपतुल्ला की तजवीज़[37] पर मेरे सुपुर्द किया गया । डा. नजमा हेपतुल्ला अपनी ख़ानदानी निस्बत के ऐतबार से भी मौलाना आज़ाद से सबसे क़रीब हैं । क़ुदरत को शायद यह काम उन्हीं के ज़रिये कराना था। मैं उनका लफ़्ज़ों में बहरहाल शुक्रिया अदा नहीं कर सकता ।

मैं आई.सी.सी.आर. के डायरेक्टर जनरल मशहूर सिफ़ारतकार जनाब राकेश कुमार का बेहद शुक्रगुज़ार हूं जिनकी ख़सूसी तवज्जोह से यह काम तकमील को पहुंचा । मैं उप महानिदेशक श्री एस. चक्रवर्ती, डा. मधु मोहता, श्री अजय गुप्ता और अफ़शां अंजुम का भी ममनून हूं जिन्होंने हर-हर क़दम पर मेरी मदद की ।

मैं जनाब सग़ीर किरमानी, जनाब लव इरानी और जनाब मौलाना नायबुल हक़ कासमी का अगर तज़किरा न करूं तो बडी नाइंसाफ़ी होगी जिन्होंने अरबी मतन[38] और हिन्दी हवालों के सिलसिले में मेरी भरपूर मदद की ।

सबसे आख़िर में लेकिन ख़ास तौर पर मैं जनाब जयंत मिश्रा का ज़िक्र करना ज़रूरी समझता हूं जिन्होंने क़दम-क़दम पर मेरी हिम्मत-अफ़ज़ाई की ।

ख़ुदा से दुआ है कि वह हमें एक और नेक बनने की तौफीक दे ताकि हम इंसानों की ख़िदमत कर सकें।

प्रो. अख़्तरुल वासे
डायरेक्टर, ज़ाकिर हुसैन इंस्टीटियूट
ऑफ इस्लामिक स्टडीज़,
जामिया मिल्लिया इस्लामिया,
नई दिल्ली-110025

01—02—2004

27 मूल शब्दावली 28 कयामत का दिन 29. सीधा रास्ता 30. व्याख्या 31 विश्वव्यापी 32.मानव एकता 33 मील का पत्थर 34.सौभाग्य 35 लिपि 36 रूपांतरित 37 सुझाव 38 मूल

इन्तिसाब[1]

गालिबन[2] दिसम्बर 1918 ई० का वाकिआ है कि मैं रांची में नज़र बन्द था, इशा की नमाज़ से फ़ारिग़ हो कर मस्जिद से निकला तो मुझे महसूस हुआ कि कोई शख़्स पीछे आ रहा है, मुड़ के देखा तो एक शख़्स कंबल ओढे खड़ा था :

आप मुझ से कुछ कहना चाहते हैं?

हाँ, जनाब! मैं बहुत दूर से आया हूँ।

कहाँ से?

सरहद पार से।

यहाँ कब पहुँचे?

आज शाम को पहुँचा, मैं बहुत गरीब आदमी हूँ, कंधार से पैदल चल कर क्वेटा पहुँचा, वहाँ चन्द हम-वतन सौदागर मिल गए थे, उन्होंने नौकर रख लिया और आगरा पहुँचा दिया, आगरे से यहाँ तक पैदल चल कर आया हूँ।

अफ्सोस तुमने इतनी मुसीबत क्यों बर्दाश्त की?

इसलिए कि आप से क़ुरआने मजीद के बाज़ मकामात समझ लूँ। मैंने "अल-हिलाल" और "अल-बलाग" का एक-एक हर्फ पढा है।

यह शख़्स चन्द दिनों तक ठहरा और फिर यकायक वापस चला गया।

वो चलते वक्त इसलिए नहीं मिला कि उसे अन्देशा था मैं उसे वापसी के मसारिफ़[3] के लिए रुपया दूँगा और वो नहीं चाहता था कि इस का बार मुझ पर डाले। उसने यक़ीनन वापसी में भी मसाफ्त का बड़ा हिस्सा पैदल तय किया होगा।

मुझे उसका नाम याद नहीं (1), मुझे ये भी नहीं मालूम कि वो ज़िन्दा है या नहीं, लेकिन अगर मेरे हाफ़िज़े[4] ने कोताही न की होती तो मैं ये किताब उसके नाम से मंसूब[5] करता।

अबुल कलाम

---

1 समर्पण। 2 सभवत । 3. खर्च। 4. स्मरण शक्ति। 5 समर्पित, प्रतिबद्धित।

اَیُّ سَمَاءٍ تُظِلُّنِیْ وَاَیُّ اَرْضٍ تُقِلُّنِیْ اِذَا قُلْتُ فِیْ کِتَابِ اللّٰهِ مَالَا اَعْلَمُ۔

(قاله ابوبکر صدیق رضی اللّٰه عنه)

(कौन सा आसमान मुझको साया देगा और कौन सी ज़मीन मुझको सहारा देगी अगर मैं ख़ुदा की किताब के बारे में ऐसी बात कहूं जिसका मुझे इल्म न हो।)

हज़रत अबू बक्र रह०

उमीद हस्त कि बेगानगी-ए-उर्फ़ी रा
ब-दोस्ती-ए-सुखनहाये आश्ना बख़्शन्द

(उम्मीद है कि उर्फ़ी[1] की (दोस्त) से दूरी को इसलिए माफ़ कर दिया जाएगा कि वह कम से कम दोस्त की बात तो समझता है।)

1. फारसी के विख्यात कवि

फ़ेहरिस्त

तर्जुमानुल-क़ुरआन जिल्द अव्वल

तन्क़ीदी ज़ेहन[1] की भी तस्कीन[2] हो जाती है।

साहित्य एकेडमी ने मौलाना मरहूम की कुल तसानीफ़[3] को ख़ास एहतमाम[4] से शाय करने का फ़ैसला किया है और बिस्मिल्लाह तर्जुमानुल-क़ुरआन से हो रही है। तर्जुमानुल-क़ुरआन के दो एडीशन इससे पहले निकल चुके हैं, मगर अफ़सोस है कि इन में तस्हीह[5] का काम पूरा न हो सका और बहुत-सी ग़लतियां रह गयीं जिसका मरहूम को बहुत क़लक़ था। जदीद[6] एडीशन के लिए किताब पर नज़रे-सानी[7] करने का काम, पहले मौलवी अजमल ख़ाँ साहब करते रहे, फिर डा० अब्दुल मुईद ख़ाँ साहब के सपुर्द किया गया, जिन्हों ने अपने मददगार मौलवी अहमद हुसैन ख़ाँ साहब, साबिक़ उस्तादे अ़रबी, जामिया उस्मानिया, के तआ़वुन[8] से बड़ी मेहनत और दीदा-रेज़ी से पिछले एडीशनों की तस्हीह करने के बाद प्रेस कॉपी तैयार की। मैं साहित्य एकेडमी की तरफ़ से उन सब लोगों का जिन्हों ने उनकी मदद की, शुक्रिया अदा करता हूँ, ख़ुदा उन्हें जज़ाए ख़ैर[9] अ़ता फ़रमाए।

मेरी ख़्वाहिश थी कि ये जदीद एडीशन न सिर्फ़ तबाअ़त[10] की ग़लतियों से पाक हो, बल्कि मरहूम ने जिस क़द्र मेहनत और कोशिश इस अहम काम में सर्फ़ की है, उसका पूरा आईनादार[11] भी हो। इसलिए इस एडीशन में न सिर्फ़ पहले और दूसरे एडीशन के इख़्तिलाफ़ात[12] को बल्कि पहले एडीशन की उन इबारतों को भी जिन्हें मौलाना ने दूसरे एडीशन में हज़्फ़ कर दिया था, ग़रज़ तमाम मतरूकात[13] और तरमीमात[14] को हाशिये में महफ़ूज़ कर लिया गया

1- आलोचनात्मक बुद्धि। 2- तुष्टि। 3- कृतित्व। 4- विशेष ध्यान। 5- संशोधन। 6- नए। 7- पुनरावलोकन। 8- सहयोग, मदद। 9- सत्कर्म का फल। 10- छपाई। 11- परिचायक। 12- विरोधाभासों। 13- काट-छांट। 14- संशोधन-परिवर्तन।

है, ताकि आइन्दा तहक़ीक़ात करने वालों के लिए मौलाना आज़ाद के इर्तक़ा-ए-ज़ेहनो-फ़िक्र व ख़याल[1] का जायज़ा लेने में आसानी हो।

चूंकि मौलाना आज़ाद ने सूर: फ़ातिहा को क़ुरआन की तालीमात[2] का निचोड़ समझ कर उसकी तफ़्सीर निहायत शर्हो-बस्त[3] से की है, इसलिए मुनासिब ख़याल किया गया कि सूर: फ़ातिहा के मुक़द्दमे[4], तर्जुमे और तफ़्सीर[5] को एक मुस्तक़िल जिल्द में शाय किया जाए और बक़िया पारों की तफ़्सीर को दो जिल्दों में। इस तरह तर्जुमानुल-क़ुरआन अब बजाए दो जिल्दों के तीन जिल्दों में शाय किया जा रहा है।

इस एडीशन में मेरे मश्वरे के मुताबिक़ जिन उसूले-तम्हीद[6] को मल्हूज़[7] रखा गया है उनकी तफ़्सील हस्बेज़ैल है :

(1) पहले और दूसरे एडीशन का बा-हम[8] मुक़ाबला किया गया है। पहले एडीशन के उन जुम्लों[9] और इबारतों को जिन्हें ख़ुद मौलाना ने दूसरे एडीशन में किसी क़द्र बदल दिया था या बिल्कुल हज़्फ़[10] कर दिया था, हाशिये में दर्ज किया गया है। नीज़[11] उन फ़िक़रों को भी नुमायां किया गया है जिनका इज़ाफ़ा[12] मौलाना ने दूसरे एडीशन में फ़रमाया था।

(2) दोनों एडीशनों में आयात के नम्बर ग़लत थे जिनको दुरुस्त किया गया है। इस सिलसिले में एक दुश्वारी ये थी कि हिन्दुस्तान में क़ुरआने मजीद के जो नुस्ख़े[13] शाय[14] हुए हैं, उनमें बाज़ सूरतों की आयात की तादाद में इख़्तिलाफ़ है, यहाँ तक कि

1 – चिंतन-मनन व विचारों के विकास। 2 – शिक्षाओं। 3 – खुल कर, विस्तार से। 4 – प्रस्तावना, भूमिका। 5 – व्याख्या, टीका। 6 – संशोधन-नियमों। 7 – ध्यान में। 8 – पारस्परिक। 9 – वाक्यों। 10 – निकालना। 11 – इसके अतिरिक्त। 12 – वृद्धि। 13 – प्रति, पांडुलिपियां। 14 – प्रकाशित।

मिस्टर पिकथाल और मुहम्मद अली लाहौरी भी बाज़ आयात के बारे में मुत्तफ़िक़[1] नहीं हैं, इस मुश्किल को इस तरह हल किया गया है कि एक ख़ास नुस्ख़े को जो जामे अज़हर के शैख़ की ज़ेरे-निगरानी[2] हुकूमते मिस्र की तरफ़ से 1338 हि० में तबा किया गया था, असास[3] क़रार दे कर उसके मुताबिक़ आयात के नम्बर दिये गए हैं जो बेशतर[4] नुस्ख़ों में यकसाँ[5] हैं।

(3) सूरः फ़ातिहा की तफ़्सीर में मुख़्तलिफ़[6] मसाइल[7] पर बहस करते हुए अपने नुक़्त-ए-नज़र[8] की ताईद[9] में मौलाना ने क़ुरआने मजीद की मुख़्तलिफ़ आयात बड़ी कसरत[10] से नक़ल की हैं, इन सबके एराब और नम्बरों की जांच की गई और जो ग़लत थे उनको दुरुस्त कर दिया गया।

(4) आयात के बाज़ हिस्सों का तर्जुमा छूट गया था जिसको लिख दिया गया।

(5) इसी तरह अहादीसे-नबवी[11], अरबी अश्आर, मक़ूले और बाइबल के हवाले भी मुक़ाबले के बाद दुरुस्त कर किए गए।

(6) यूरोपीय मुसन्निफ़ीन[12] और उनकी तस्नीफ़ात के नामों को रोमन हर्फ़ों में भी लिखा गया।

(7) पिछले दोनों एडीशनों में इम्ला[13] की तरफ़ से बहुत लापर्वाई बरती गई थी, जिसको ख़ुद मौलाना ने भी महसूस फ़रमाया था। बाज़ अल्फ़ाज़ का इम्ला ग़लत था, बाज़ को बेज़रूरत मिला कर लिखा गया था, मसलन---तैयार--तैया, गढ़ना--घड़ना,

---

1-सहमत। 2-देखरेख में। 3-मूल। 4-अधिकांश। 5-समान। 6-विभिन्न। 7-विषयों, समस्याओं। 8-दृष्टिकोण। 9-पुष्टि। 10-अधिकता से। 11-नबी की हदीसें। 12-लेखकों। 13-वर्तनी।

ठहरना--ठहेरना, वग़ैरह। इस एडीशन में इन सब ग़लतियों को दुरुस्त कर दिया गया है और इम्ला में यक्सानियत[1] को पेशे-नज़र रखा गया है।

ख़ुदा से दुआ है कि तर्जुमानुल-क़ुरआन का ये एडीशन उसी तरह मक़बूल हो जैसे पहले दो एडीशन हुए थे और उसी तरह तालिबाने-हक़[2] को सर-चश्म-ए-हक़ीक़त[3] की राह दिखाए।

ज़ाकिर हुसैन
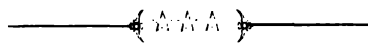
1- समानता। 2 - सत्यार्थियों। 3 - सत्य-स्रोत।

بسم اللہ الرحمن الرحیم

तर्जुमानुल-क़ुरआन

और

क़ुरआने हकीम की तालीमो-इशाअ़त

अब कि "तर्जुमानुल-क़ुरआन" की पहली जिल्द शाय हो रही है और दूसरी जिल्द ज़ेरे-तबा[1] है, मैं ये कहने की जुरअत करता हूँ कि मुसलमानों की "मज़हबी इस्लाह[2]" की राह से वक़्त की सबसे बड़ी रुकावट दूर हो गई।

मज़हबी इस्लाह के लिए सबसे पहली चीज़ ये थी कि वक़्त की ज़रूरियात के मुताबिक़ क़ुरआन की तालीमो-इशाअ़त[3] का सरो-सामान हो, लेकिन बद-क़िस्मती से इसका कोई सामान मौजूद न था।

क़ुरआन की तालीम व इशाअ़त के लिए हस्बे-ज़ैल उमूर[4] ज़रूरी थे :

1 - सबसे पहले वो मुश्किलात दूर हों जो क़ुरआन के फ़ह्मो-तदब्बुर[5] की राह में पैदा हो गई हैं और जिन की वजह से इसकी

1-प्रकाशनाधीन, 2-धार्मिक सुधार 3-शिक्षा और प्रसार। 4-बातें। 5-बोध, प्रबोध

तन्क़ीदी ज़ेहन[1] की भी तस्कीन[2] हो जाती है।

साहित्य एकेडमी ने मौलाना मरहूम की कुल तसानीफ़[3] को ख़ास एहतमाम[4] से शाय करने का फ़ैसला किया है और बिस्मिल्लाह तर्जुमानुल-क़ुरआन से हो रही है। तर्जुमानुल-क़ुरआन के दो एडीशन इससे पहले निकल चुके हैं, मगर अफ़सोस है कि इन में तस्हीह़[5] का काम पूरा न हो सका और बहुत-सी ग़लतियां रह गयीं जिसका मरहूम को बहुत क़लक़ था। जदीद[6] एडीशन के लिए किताब पर नज़रे-सानी[7] करने का काम, पहले मौलवी अजमल ख़ाँ साहब करते रहे, फिर डा० अब्दुल मुईद ख़ाँ साहब के सपुर्द किया गया, जिन्हों ने अपने मददगार मौलवी अहमद हुसैन ख़ाँ साहब, साबिक़ उस्तादे अरबी, जामिया उस्मानिया, के तआवुन[8] से बड़ी मेहनत और दीदा-रेज़ी से पिछले एडीशनों की तस्हीह़ करने के बाद प्रेस कॉपी तैयार की। मैं साहित्य एकेडमी की तरफ़ से उन सब लोगों का जिन्हों ने उनकी मदद की, शुक्रिया अदा करता हूँ, ख़ुदा उन्हें जज़ाए ख़ैर[9] अता फ़रमाए।

मेरी ख़्वाहिश थी कि ये जदीद एडीशन न सिर्फ़ तबाअ़त[10] की ग़लतियों से पाक हो, बल्कि मरहूम ने जिस क़द्र मेहनत और कोशिश इस अहम काम में सर्फ़ की है, उसका पूरा आईनादार[11] भी हो। इसलिए इस एडीशन में न सिर्फ़ पहले और दूसरे एडीशन के इख़्तिलाफ़ात[12] को बल्कि पहले एडीशन की उन इबारतों को भी जिन्हें मौलाना ने दूसरे एडीशन में हज़फ़ कर दिया था, ग़रज़ तमाम मतरूकात[13] और तरमीमात[14] को हाशिये में महफ़ूज़ कर लिया गया

1- आलोचनात्मक बुद्धि। 2- तुष्टि। 3- कृतित्व। 4- विशेष ध्यान। 5- संशोधन। 6- नए। 7- पुनरावलोकन। 8- सहयोग, मदद। 9- सत्कर्म का फल। 10- छपाई। 11- परिचायक। 12- विरोधाभासों। 13- काट-छांट। 14- संशोधन-परिवर्तन।

है, ताकि आइन्दा तहक़ीक़ात करने वालों के लिए मौलाना आज़ाद के इर्तक़ा-ए-ज़ेहनो-फ़िक्र व ख़याल[1] का जायज़ा लेने में आसानी हो।

चूंकि मौलाना आज़ाद ने सूर: फ़ातिहा को क़ुरआन की तालीमात[2] का निचोड़ समझ कर उसकी तफ़्सीर निहायत शर्हो-बस्त[3] से की है, इसलिए मुनासिब ख़याल किया गया कि सूर: फ़ातिहा के मुक़द्दमे[4], तर्जुमे और तफ़्सीर[5] को एक मुस्तक़िल जिल्द में शाय किया जाए और बक़िया पारों की तफ़्सीर को दो जिल्दों में। इस तरह तर्जुमानुल-क़ुरआन अब बजाए दो जिल्दों के तीन जिल्दों में शाय किया जा रहा है।

इस एडीशन में मेरे मश्वरे के मुताबिक़ जिन उसूले-तस्हीह़[6] को मल्हूज़[7] रखा गया है उनकी तफ़्सील हस्बेज़ैल है :

(1) पहले और दूसरे एडीशन का बा-हम[8] मुक़ाबला किया गया है। पहले एडीशन के उन जुम्लों[9] और इबारतों को जिन्हें ख़ुद मौलाना ने दूसरे एडीशन में किसी क़द्र बदल दिया था या बिल्कुल हज़फ़[10] कर दिया था, हाशिये में दर्ज किया गया है। नीज़[11] उन फ़िक़रों को भी नुमायां किया गया है जिनका इज़ाफ़ा[12] मौलाना ने दूसरे एडीशन में फ़रमाया था।

(2) दोनों एडीशनों में आयात के नम्बर ग़लत थे जिनको दुरुस्त किया गया है। इस सिलसिले में एक दुश्वारी ये थी कि हिन्दुस्तान में क़ुरआने मजीद के जो नुस्ख़े[13] शाय[14] हुए हैं, उनमें बाज़ सूरतों की आयात की तादाद में इख़्तिलाफ़ है, यहाँ तक कि

1 - चिंतन-मनन व विचारों के विकास। 2 - शिक्षाओं। 3 - खुल कर, विस्तार से। 4 - प्रस्तावना, भूमिका। 5 - व्याख्या, टीका। 6 - संशोधन-नियमों। 7 - ध्यान में। 8 - पारस्परिक। 9 - वाक्यों। 10 - निकालना। 11 - इसके अतिरिक्त। 12 - वृद्धि। 13 - प्रति, पांडुलिपियां। 14 - प्रकाशित।

بسم اللہ الرحمن الرحیم
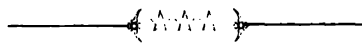
तर्जुमानुल-क़ुरआन

और

क़ुरआने हकीम की तालीमो-इशाअ़त

अब कि "तर्जुमानुल-क़ुरआन" की पहली जिल्द शाय हो रही है और दूसरी जिल्द ज़ेरे-तबा[1] है, मैं ये कहने की जुरअत करता हूँ कि मुसलमानों की "मज़हबी इस्लाह[2]" की राह से वक़्त की सबसे बड़ी रुकावट दूर हो गई।

मज़हबी इस्लाह के लिए सबसे पहली चीज़ ये थी कि वक़्त की ज़रूरियात के मुताबिक़ क़ुरआन की तालीमो-इशाअ़त[3] का सरो-सामान हो, लेकिन बद-क़िस्मती से इसका कोई सामान मौजूद न था।

क़ुरआन की तालीम व इशाअ़त के लिए हस्बे-ज़ैल उमूर[4] ज़रूरी थे :

1 – सबसे पहले वो मुश्किलात दूर हों जो क़ुरआन के फ़ह्मो-तदब्बुर[5] की राह में पैदा हो गई हैं और जिन की वजह से इसकी

1–प्रकाशनाधीन, 2–धार्मिक सुधार 3–शिक्षा और प्रसार। 4–बातें। 5–बोध, प्रबोध

होगा जिस में उसका तर्जुमा लाखों की तादाद में छपा हुआ मौजूद न हो। उसके मुक़ाबले में हमारी बे-बिज़ाअती[1] का क्या हाल है? ये हाल है कि हम आज तक उन चन्द ज़बानों में भी क़ुरआन का तर्जुमा शाय न कर सके जो ख़ुद हमारे मुल्क की ज़बानें हैं और लाखों, करोड़ों हिन्दुस्तानियों को सिर्फ़ इन्हीं ज़बानों में मुख़ातिब[2] किया जा सकता है।

बिला-शुब्हा[3] उर्दू में मुतअ़द्दिद[4] तर्जुमे हो चुके हैं और अंग्रेज़ी में भी क़दीम[5] तराजिम के अ़लावा बाज़ नये तर्जुमे मुसलमानों के क़लम से मुरत्तब हुए। इन में हर कोशिश जिस क़द्रो-क़ीमत की मुस्तहिक़ है मुझे उससे इनकार नहीं, लेकिन मैं कहना चाहता हूँ कि जहाँ तक मुन्दरज-ए-सदर[6] का तअ़ल्लुक़ है उन में कोई तर्जुमा भी मुफ़ीदे मक़सद[7] नहीं।

एक ज़माना था कि मुसलमानों में मज़हबी इस्लाहो-तज्दीद[8] की ज़रूरत का एहसास न था, मगर सन् 1912 ई० में मैंने "अल-हिलाल" जारी किया और क़ुरआन के मुतालआ़ व तदब्बुर[9] की एक नई राह (जो फ़िल-हक़ीक़त नई थी) रौशनी में आई। उस वक़्त से मैं बराबर देख रहा हूँ कि लोगों को इस्लाह की ज़रूरत का न सिर्फ़ एहसास है, बल्कि आ़लमगीर[10] ख़्वाहिश पैदा हो गई है। लोग चाहते हैं कि क़ुरआन को उसकी हक़ीक़ी[11] शक्लो-नौइयत[12] में देखें, लेकिन उन्हें कोई राह नज़र नहीं आती। लोग चाहते हैं कि मज़हबी तालीम का सहीह तरीक़े पर निज़ाम क़ायम हो जाए, लेकिन उन्हें

1- अयोग्यता, अर्थात बेतवज्जोही। 2- सम्बोधित। 3- निस्सन्देह। 4- असंख्य। 5- प्राचीन। 6- ऊपर लिखे हुए। 7- सार्थक। 8- सुधार और सामयिकीकरण। 9- चिंतन-मनन, ग़ौरो-फ़िक्र। 10- विश्वव्यापी, सार्वभौमिक। 11- वास्तविक। 12- रूप-रंग।

सामान मुयस्सर नहीं आता। मदारिस के बानी[1] व मोहतमिम[2] आमादा हैं कि मज़हबी तालीम का इस्लाह-याफ़्ता[3] निसाब इख़्तियार कर लें, लेकिन उन्हें मुफ़ीदे-मक़्सद किताब मिलती नहीं। सन् 1912 ई० से लेकर इस वक़्त तक बेशुमार मदरसों के लिए मुझ से ख़्वाहिश की गई कि इस्लाह-याफ़्ता निसाबे-तालीम[4] तैयार कर दूँ, मैंने तैयार करके दे दिया, लेकिन जब दर्याफ़्त[5] किया गया कि क़ुरआन की तालीम के लिए क्या किया जाए तो मुझे जवाब में कहना पड़ा : इन्तिज़ार किया जाए।

सोलह बरस हुए कि मैंने इस काम की ज़रूरत महसूस की थी और काम शुरू भी कर दिया था, लेकिन अफ़सोस है कि चन्द दर चन्द मवानेअ़[6] पेश आते रहे और काम अंजाम न पा सका, लेकिन अब कि तौफ़ीक़े-इलाही[7] से "तर्जुमानुल-क़ुरआन" मुकम्मल हो कर शाय हो रहा है, मैं महसूस करता हूँ कि मुसलमानों की इस्लाह के वो तमाम दरवाज़े खुल रहे हैं जो हमारी कोताहि-ए-अ़मल[8] से इस वक़्त बन्द थे।

तक्मीले-कार और मतलूबा सरो-सामान

लेकिन ये जो कुछ है फ़िल-हक़ीक़त काम की इब्तिदा[9] है। तक्मील[10] के लिए अभी बहुत कुछ करना बाक़ी है। क़ुरआन की तालीमो-इशाअ़त का मक़्सदे अ़ज़ीम[11] पूरा नहीं हो सकता जब तक हस्बेज़ैल उमूर[12] अंजाम न पाएँ।

1-संस्थापक। 2-प्रबंधक। 3-सुधरा हुआ। 4-पाठ्यक्रम। 5-पूछना। 6-रुकावटें। 7-ईश-अनुकंपा। 8-कर्म में कोताही। 9-आरंभ। 10-पूर्णता। 11-महान उद्देश्य। 12-निम्नलिखित बातें।

1 - मुतालआ व इशाअत के लिए ज़रूरी है कि तर्जुमानुल-क़ुरआन को मुख़्तलिफ़ सूरतों, मुख़्तलिफ़ तरतीबों और मुख़्तलिफ़ क़िस्म के एडीशनों में इस तरह और इतनी बड़ी तादाद में शाय किया जाए कि मुसलमानों का हर तबक़ा और हर फ़र्द[1] इससे फ़ायदा उठा सके और कोई मुसलमान घर इससे ख़ाली न रहे।

2 - ज़रूरी है कि क़ुरआन के तमाम उसूली मबाहिस[2] अज़ सरे-नौ मुदव्वन[3] किए जाएँ। मसलन, इस की ज़बान, इसकी अदबी[4] खुसूसियात, इसका उस्लूबे बयान[5], इसके मक़ासिद[6] व मुहिम्मात[7], इसका तरीक़-ए-इस्तिदलाल[8], इसके क़िससो-अम्साल[9], इसके नुज़ूल व किताबत[10] की तारीख़ वग़ैरहा। और अब कि तर्जुमानुल-क़ुरआन की तरतीब इन मबाहिस की एक मुक़र्ररा[11] तहक़ीक़ात[12] के मातहत मुकम्मल हो चुकी है, निहायत आसानी के साथ ये पूरा सिलसिला मुरत्तब[13] किया जा सकता है।

3 - ज़रूरत थी कि क़ुरआन के उस्लूबे बयान और तरीक़े इस्तिदलाल की तन्क़ीह[14] के बाद ऐसे अब्वाब[15] व अनावीन तरतीब दिये जाएँ जिनके नीचे मतालिबे क़ुरआनी की हर क़िस्म अलग-अलग जमा की जा सके और क़ुरआन की हर तालीम अपनी शक्लो-नौइयत में नुमायाँ हो जाए। अब कि तर्जुमानुल-क़ुरआन मुरत्तब हो चुका है, निहायत आसानी के साथ अब्वाब व मज़ामीन[16] की मुकम्मल तब्वीब[17] अमल में आ सकती है और उन्हें यकजा और अलाहिदा-अलाहिदा शाय किया जा सकता है।

1- व्यक्ति। 2- मौलिक विषय। 3- नये सिरे से लिखे जाएँ। 4- साहित्यिक। 5- वर्णन शैली। 6- उद्देश्य। 7- अहम मसअले। 8- तर्क शैली। 9- वृतांत-कहावतें। 10- अवतरण व लिप्यांकन। 11- निर्धारित। 12- शोध। 13- क्रमबद्ध, संकलित। 14- समीक्षा। 15- अध्याय। 16- विषयों। 17- विषय-विभाजन, वर्गीकरण।

याद रहे कि इस सिलसिले में इस वक़्त तक जो कुछ हुआ है, मुफ़ीद मक़सद नहीं है।

4 - एक ऐसी किताब के लिए जो हवाले और इस्तिशहाद[1] की किताब हो, ज़रूरी है कि इस्तिख़राजे[2] मतालिब व अल्फ़ाज़ की तमाम सहूलतें ब-हम पहुँचाई जाएँ। मसलन क़ुरआन के ऐसे एडीशन मुरत्तब किये जाएँ जो हवाला-जात (**Refrence**) के साथ हों, या मसलन क़ुरआन के अल्फ़ाज़ व अस्मा[3] और मतालिब के इंडेक्स मुरत्तब किये जाएँ जो हर पहलू से जामे[4] और मुकम्मल हों, या मसलन क़ुरआन में जिस क़द्र जुग़राफ़ियाई[5] और तारीख़ी इशारात[6] हैं उनके नक़्शे तयार किये जाएँ, ताकि उन मक़ामात[7] की क़दीमो-जदीद[8] जुग़राफ़ियाई हैसियत बयक नज़र वाज़ेह[9] हो जाए। हमसे पहले यूरोप के बाज़ मुस्तशरिक़ों[10] ने इन कामों की ज़रूरत महसूस की (और हमारे कामों के किस मैदान में वो हम से आगे नहीं हैं?) लेकिन अब तक जो कुछ हुआ है ना-काफ़ी है और ज़रूरी है कि अज़ सरे-नौ[11] ये तमाम काम अंजाम दिये जाएँ।

बाइबल का एक मामूली-सा छपा हुआ नुस्ख़ा भी जो ख़ुसूसियात रखता है, हम इस वक़्त तक क़ुरआन के बेहतर से बेहतर एडीशन का वैसा एहतिमाम न कर सके। हमारे नज़दीक क़ुरआन की बड़ी-से बड़ी ख़िदमत ये है कि उसकी लौह सुनहरी छाप दी जाए या उसकी सतरों पर हिनाई[12] रंग लेप दिया जाए। हम न सिर्फ़ हिन्दुस्तान में बल्कि तमाम इस्लामी दुनिया में क़ुरआन का एक एडीशन भी ऐसा शाय न कर सके जिस में मौजूदा ज़माने के

1- संदर्भ। 2- सारांश। 3- नाम। 4- सम्पूर्ण। 5- भौगोलिक। 6- ऐतिहासिक। 7- जगहों। 8- नई-पुरानी। 9- स्पष्ट। 10- ओरिएंटलिस्ट, प्राच्यविद। 11- नये सिरे से। 12- हरा।

महासिने-तबाअत[1] सलीक़े के साथ जमा कर दिये हों।

5 - सबसे आख़िर, मगर बएतिबारे अहमियत[2] सबसे पहला काम ये है कि दुनिया की तमाम ज़बानों में क़ुरआन के तर्जुमे मुरत्तब किए जाएँ और बड़ी से बड़ी तादाद में उनकी इशाअ़त का सरो-सामान हो, कम अज़ कम मग़रिबो-मश्रिक़[3] की उन ज़बानों में जो मौजूदा अक़्वामे-अर्ज़ी[4] की अहम ज़बानें तस्लीम की जाती हैं।

एक इल्मी और इशाअ़ती इदारे का क़ियाम

ये तमाम काम बग़ैर इसके अंजाम नहीं पा सकता कि क़ुरआन की ख़िदमत व इशाअ़त के लिए एक इल्मी और इशाअ़ती इदारा[5] क़ायम किया जाए और वो उन्हीं तरीक़ों पर काम करे जिन तरीक़ों पर यूरोप और अमरीका की ''बाइबल सोसाइटियाँ'' काम कर रही हैं। जब तक एक दफ़्तर, मुन्तख़ब[6] स्टाफ़ और तबो-इशाअ़त[7] का काफ़ी सरो-सामान मौजूद न हो, इस तरह के काम ख़्वाबो-ख़याल से ज़्यादा नहीं हैं।

दो साल हुए मैं ने एक ऐसे इदारे के क़ियाम[8] की तफ़्सीलात[9] क़लम-बंद की थीं, मुझे हैरत हुई थी कि कितने थोड़े सरमाए से कितना अज़ीमुश्शान काम अंजाम पा सकता है। मैंने अंदाज़ा किया था कि अगर एक रक़म यक-मुश्त तबो-इशाअ़त के लिए और एक रक़म माहवार तीन साल तक स्टाफ़ के लिए फ़राहम[10] हो जाए तो निहायत वसीअ़[11] पैमाने पर एक इदारा क़ायम किया जा सकता है।

1-प्रकाशित संस्करणों के चुनींदा अंश। 2-महत्व की दृष्टि से। 3-पूर्व-पश्चिम। 4-विश्व की क़ौमों। 5-प्रकाशन संस्थान। 6-चुना हुआ। 7-मुद्रण-प्रकाशन। 8-स्थापना। 9-रोपरेखा, विवरण। 10-उपलब्ध। 11-व्यापक।

वो तीन साल के अन्दर इतना काम अंजाम दे देगा कि तराजिम व इशाअ़त के बुनियादी काम मुकम्मल हो जाएँगे और फिर उसकी मतबूआत[1] की आमदनी से काम का सिलसिला हमेशा के लिए जारी हो जाएगा।

जहाँ तक क़ुरआन के तराजिम का तअ़ल्लुक़ है, अंग्रेज़ी और फ़्रेंच तर्जुमों की तरतीब मुक़द्दम[2] है, क्योंकि इन दो ज़बानों में तर्जुमे के बाद यूरोप की बक़िया ज़बानों में तर्जुमा करना आसान हो जाएगा। मश्रिक़ की ज़बानों में फ़ारसी, तुरकी और पश्तो सबसे ज़्यादा ज़रूरी हैं, क्योंकि मुसलमानाने आ़लम[3] की बड़ी तादाद इन ज़बानों में मुख़ातिब की जा सकती है। हिन्दुस्तान की ज़बानों में से बंगाली, गुजराती, मराठी, तमिल, तिलंगी और सिंधी ज़बानों में तर्जुमा ज़रूरी है। नीज़ तर्जुमानुल-क़ुरआन को हिन्दी रस्मुल-ख़त[4] में भी मुरत्तब करना चाहिए और इसकी इबारत हिन्दी के लिए मौज़ूँ कर देनी चाहिए।

मदारिसे अ़रबिय्या में दाख़िले-दर्स करने और बिलादे-अ़रबिय्या[5] में इशाअ़त के लिए एक तफ़्सीर अ़रबी में भी मुरत्तब होनी चाहिए।

मैं वुसूक़ के साथ कह सकता हूँ कि अगर एक इदारा क़ायम हो जाए तो तीन साल के अन्दर इस काम का बड़ा हिस्सा अंजाम पा जाएगा और फिर हमेशा के लिए इसका कारख़ाना चलता रहेगा। एक ऐसे मक़सद के लिए जो इस्लाम और मुसलमानों के लिए वक़्त का सबसे बड़ा मक़सद हो ये कम अज़ कम काम है जिस की दुनिया को हम से तवक़्क़ो करनी चाहिए।

1-प्रकाशनों पुस्तकों। 2-श्रेष्ठ। 3-दुनिया के मुसलमानों। 4-लिपि। 5-अ़रब देशों।

मैं नहीं कह सकता कि सरे-दस्त[1] एक ऐसा इदारा क़ायम हो सकेगा या नहीं। इस तरह के काम दो ही तरीक़े से अंजाम पा सकते हैं: या तो पब्लिक से इआ़नत[2] की अपील की जाए या रुअसाए मुल्क[3] में से कोई अहले-ख़ैर[4] आमादा हो जाए। पहली सूरत, मैं इख़्तियार करनी नहीं चाहता और दूसरी की चन्दाँ उम्मीद नहीं। पस बहालते मौजूदा इसके सिवा चारा नहीं कि शख़्सी तौर पर जो कुछ कर सकता हूँ उसी पर एतिमाद[5] करूँ और बाक़ी कामों को मुस्तक़्बिल[6] के हवाले कर दूँ। चुनांचे मैंने फ़ैसला कर लिया है कि जूँ-ही तर्जुमानुल-क़ुरआन शाय हो गया मैं कोशिश करूँगा कि बिल-फ़ेल अंग्रेज़ी और हिन्दी तर्जुमे का काम शुरू कर दिया जाए।

कलकत्ता, 1 अगस्त सन् 1931 ई० अबुल कलाम

1-हाथ के हाथ, तुरंत। 2-चंदा, वित्तीय सहायता। 3-देश के अमीर लोग। 4-भला इन्सान। 5-भरोसा। 6-भविष्य।

بسم الله الرحمن الرحیم

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ وَحْدَهٗ

अल्-हम्दु लिल्लाहि वह्दहू

सन् 1916 ई० में जब "अल-बलाग़" के सफ़हात पर "तर्जुमानुल-कुरआन" और "तफ़्सीरुल-बयान" का एलान किया गया तो मेरे वहमो-गुमान में भी ये बात न थी कि एक ऐसे काम का एलान कर रहा हूँ जो पन्द्रह बरस तक इल्तिवा[1] व इन्तिज़ार की हालत में मुअल्लक़[2] रहेगा और जो मुल्क के शौक़ व इन्तिज़ार[3] के लिए एक नाक़ाबिले-बर्दाश्त[4] बोझ और मेरे इरादों की ना तमामियों के लिए एक दर्द-अंगेज़[5] मिसाल साबित होगा।

लेकिन वाक़िआत की रफ़्तार ने बहुत जल्द बतला दिया कि सूरते हाल ऐसी ही थी।

जिला वतनी

अभी इस एलान पर ब-मुश्किल चन्द महीने ही गुज़रे होंगे कि 3 मार्च सन् 1916 ई० को हुकूमते बंगाल ने डिफ़ेन्स आर्डिनेन्स (2) के मातहत मुझे हुदूदे बंगाल[6] से बाहर चले जाने का हुक्म दे दिया और दफ़अतन अल-बलाग़ और अल-बलाग़ प्रेस के साथ तस्नीफ़ व तबाअत का तमाम कारख़ाना दर्हम-बर्हम हो गया।

1-स्थगन। 2-लटका रहे, यानी रुका रहे। 3-उत्सुकता व प्रतीक्षा। 4-असहनीय। 5-कष्टप्रद। 6-बंगाल की सीमाओं।

चूंकि इससे पहले उसी आर्डिनेन्स के मातहत देहली, पंजाब, यूपी और मदरास की हुकूमतें अपने-अपने सूबों में मेरा दाख़िला रोक चुकी थीं, इसलिए अब सिर्फ़ बिहार और बम्बई ही के दो सूबे रह गए थे जहाँ मैं जा सकता था। मैं ने रांची मुन्तख़ब किया। मेरा ख़याल था कि कलकत्ते से क़रीब रह कर शायद तस्नीफ़ व तबाअ़त का काम जारी रख सकूँ।

सन् 1915 ई० में जब मैंने इस काम का इरादा किया तो बयक वक़्त तीन चीज़ें पेशे-नज़र थीं: तर्जुमा, तफ़्सीर और मुक़द्दम-ए-तफ़्सीर। मैंने ख़याल किया था कि ये तीन किताबें क़ुरआन के मुतालआ़ की तीन मुख़्तलिफ़ ज़रूरतें पूरी कर देंगी। आ़म तालीम के लिए तर्जुमा, मुतालआ़ के लिए तफ़्सीर, अहले इ़ल्मो-नज़र[1] के लिए मुक़द्दमा।

अल-बलाग़ में जब तर्जुमे और तफ़्सीर की इशाअ़त का एलान किया गया तो तर्जुमा पांच पारों तक पहुँच चुका था, तफ़्सीर सूर: आले इमरान तक मुकम्मल हो चुकी थी और मुक़द्दमा याद-दाश्तों की शक्ल में क़लम-बंद था। इस ख़याल से कि थोड़े वक़्त के अन्दर ज़्यादा से ज़्यादा काम अंजाम पाए, मैंने तस्नीफ़ के साथ छपाई का सिलसिला भी जारी कर दिया। मेरा ख़याल था कि इस तरह साल भर के अन्दर तर्जुमा मुकम्मल भी हो जाएगा और छप भी जाएगा, नीज़ तफ़्सीर की भी कम अज़ कम पहली जिल्द शाय हो जाएगी। हर सात दिन की मश्ग़ूलियत[2], मैंने यूँ तक़्सीम[3] कर दी थी कि तीन दिन अल-बलाग़ की तरतीब में सर्फ़ करता था, दो दिन तर्जुमे में और दो दिन तफ़्सीर में।

1-प्रबुद्ध लोगों के लिए। 2-व्यस्तता। 3-विभाजित।

3 मार्च सन् 1916 ई० को जब मैं कलकत्ते से रवाना हुआ तो तफ़्सीर के छह फ़ार्म छप चुके थे और तर्जुमे की किताबत शुरू हो रही थी। अब मैंने कोशिश की कि मेरी अ़दमे-मौजूदगी[1] में प्रेस जारी रहे और कम अज़ कम तफ़्सीर और तर्जुमे का काम होता रहे, चुनांचे जून सन् 1916 ई० में प्रेस के दोबारा इजरा[2] का इन्तिज़ाम हो गया और मैं मुसव्वदात[3] की तरतीब में मश्ग़ूल हो गया ताकि प्रेस के हवाले कर दूँ।

नज़र बन्दी

लेकिन 8 जुलाई सन् 1916 ई० को यकायक हुकूमते हिन्द ने मेरी नज़र बन्दी के अहकाम[4] जारी कर दिये और इस तरह इस उम्मीद का भी ख़ातिमा हो गया। नज़र बन्दी के बाद कोई मौक़ा बाक़ी नहीं रहा कि बाहर की दुनिया से किसी तरह का इलाक़ा रख सकूँ।

अब मेरे इख़्तियार में सिर्फ़ एक ही काम रह गया था, यानी तस्नीफ़ व तस्वीद का मश्ग़ला। नज़र बन्दी की उन्नीस दफ़आ़त[5] में से कोई दफ़ा भी मुझे इससे नहीं रोक सकती थी। मैंने इस पर क़नाअ़त की। इतना ही नहीं बल्कि मैंने ख़याल किया कि अगर ज़िन्दगी की तमाम आज़ादियों से महरूम होने पर भी लिखने-पढ़ने की आज़ादी से महरूम नहीं हूँ और इसके नताइज[6] महफ़ूज़[7] हैं तो ज़िन्दगी की राहतों में से कोई राहत भी मुझ से अलग नहीं हुई। मैं इस आ़लम में पूरी ज़िन्दगी बसर कर दे सकता हूँ, लेकिन अभी इस

1-अनुपस्थिति। 2-उद्घाटन। 3-मसौदों। 4-आदेश। 5-धाराओं। 6-नतीजे। 7-सुरक्षित।

सूरते हाल पर तीन महीने भी नहीं गुज़रे थे कि मालूम हो गया इस गोशे में भी मुझे महरूमी[1] ही से दोचार होना था।

दोबारा तलाशी और मुसव्वदात की ज़ब्ती

नज़र बन्दी के अहकाम जिस वक़्त नाफ़िज़[2] किए गए तो मेरी क़ियाम-गाह[3] की तलाशी भी ली गई थी और जिस क़द्र कागज़ात मिले थे, अफ़्सराने तफ़्तीश[4] ने अपने क़ब्ज़े में कर लिए थे। उन्हीं में तर्जुमा और तफ़्सीर का मुसव्वदा[5] भी था, लेकिन जब मुआइने के बाद मालूम हुआ कि इनमें कोई चीज़ क़ाबिले एतिराज़ और हुकूमत के मुफ़ाद मग़ायर नहीं है तो दो हफ़्ते के बाद वापस दे दिए गए।

लेकिन जब तफ़्तीश के नतीजे से हुकूमते हिन्द को इत्तिला दी गई तो उसने मक़ामी हुकूमत के फ़ैसले से इत्तिफ़ाक़[6] नहीं किया। वहाँ ख़याल किया गया कि मक़ामी हुकूमत ने कागज़ात वापस दे देने में जल्दी की और बहुत मुमकिन है कि पूरी होशियारी के साथ मुआइना न किया गया हो। उस ज़माने में हुकूमते हिन्द के महकम-ए-तफ़्तीश का अफ़्सरे-आला[7] सर चार्ल्स क्लीवलैंड (Sir Charles Cleveland) था और मुख़्तलिफ़ अस्बाब[8] से जिन की तशरीह[9] का ये मौक़ा नहीं, उसे मेरी मुख़ालफ़त में एक ख़ास कद[10] हो गई थी। वो पहले कलकत्ता आया और दो हफ़्ते तक तफ़्तीश में मशग़ूल रहा और फिर रांची आया और अज़ सरे-नौ मेरे मकान की तलाशी ली गई। तलाशी के बाद कहा गया कि जो कागज़ात पिछली तलाशी के मौक़े पर लिए गए थे अब हुकूमते हिन्द के मुआइने के

1-वंचना (वंचित होना)। 2-लागू। 3-आवास। 4-जांच अधिकारियों। 5-पांडुलिपि।
6-सहमति। 7-उच्चाधिकारी। 8-कारणों। 9-व्याख्या। 10-चिढ़-उग्रता।

लिए भेजे जाएँगे। चुनांचे तमाम कागज़ात हत्ताकि[1] छपी हुई किताबें भी ले ली गयीं। उनमें न सिर्फ़ तर्जुमा और तफ़्सीर का मुसव्वदा था, बल्कि बाज़ दूसरी मुसन्नफ़ात के भी मुकम्मल व ना मुकम्मल मुसव्वदात थे।

जिस वक़्त ये मामला पेश आया तर्जुमे का मुसव्वदा आठ पारों तक और तफ़्सीर का मुसव्यदा सूरः निसा तक पहुँच चुका था, लेकिन अब उनका एक वरक़[2] भी मेरे क़ब्ज़े में न था। ताहम मैंने नवें पारे से तर्जुमे की तरतीब जारी रखी और सन् 1918 ई० के अवाखिर में काम ख़त्म कर दिया। अब अगर इब्तिदा के आठ पारों का तर्जुमा वापस मिल जाए तो पूरे क़ुरआन का तर्जुमा मुकम्मल था।

मैंने कागज़ात की वापसी के लिए ख़तो-किताबत की, लेकिन जवाब मिला कि न तो सरे-दस्त वापस दिये जा सकते हैं, न यही बताया जा सकता है कि कब तक वापस किये जाएंगे (3) चूंकि कागज़ात की वापसी की बज़ाहिर[3] कोई क़रीबी उम्मीद नज़र नहीं आती थी और कुछ मालूम न था कि आगे चल कर क्या सूरते हाल पेश आए, इसलिए यही मुनासिब मालूम हुआ कि अज़ सरे-नौ उन पारों का तर्जुमा करके किताब मुकम्मल कर ली जाए। ये काम आसान न था, एक लिखी हुई चीज़ को दोबारा लिखना तबीअत पर बहुत शाक़[4] गुज़रता है, ताहम मैंने चन्द माह की मेहनत के बाद ये हिस्सा भी अज़ सरे-नौ मुकम्मल कर लिया।

''गुफ़्तह'' गर शुद ज़-कफ़म, शुक्र केह ''ना गुफ़्तह'' बजास्त
अज़ दो सद गंज, यक मुश्त गुहर बाख़्तह अम

1-यहाँ तक कि। 2-पन्ना। 3-प्रत्यक्षतः। 4-कष्टप्रद।

इस ख़याल से कि मुसव्वदा बेहतर हालत में मुरत्तब हो जाए, और अगर किसी दूसरे शख़्स के हवाले किया जाए तो तस्हीह़ में आसानी हो, मैंने उर्दू टाइप राइटर मंगवाकर उसे टाइप कराना शुरू कर दिया था, चुनांचे दिसम्बर सन् 1919 ई० में निस्फ़[1] से ज़्यादा हिस्सा टाइप हो चुका था।

रिहाई और तहरीके ला-तआवुन

27 दिसम्बर सन् 1919 ई० को हुकूमत ने मुझे रिहा कर दिया और अब तबाअ़तो-इशाअ़त की तमाम रुकावटें राह से दूर हो गयीं, लेकिन ये वक़्त वो था कि मुल्क में एक आम सियासी हर्कत का मवाद तैयार हो रहा था और जहाँ तक मुसलमानों का तअ़ल्लुक़ है "अल-हिलाल" की सियासी दावत[2] की सदा-ए-बाज़गश्त[3] हर गोशे से बुलंद होने लगी थी। मेरे लिए मुमकिन न था कि वक़्त के तक़ाज़े से तग़ाफ़ुल[4] करता। नतीजा ये निकला कि रिहा होते ही तहरीके ला-तआवुन[5] की सर-गरमियों में मशग़ूल हो गया और अ़र्से तक इसकी मोहलत ही नहीं मिली कि किसी दूसरी तरफ़ निगाह उठा सकता।

लेकिन सन् 1921 ई० में जब मुल्क के हर गोशे से तर्जुमानुल-कुरआन के लिए तक़ाज़ा शुरू हुआ तो मुझे उस की इशाअ़त के लिए आमादा हो जाना पड़ा। चूंकि टाइप की लिखाई उसके लिए मौज़ूँ नहीं समझी गई थी, इसलिए किताबत का इन्तिज़ाम किया गया। पहले मत्न[6] की किताबत कराई गई, फिर

1-आधा। 2-आमंत्रण। 3-प्रतिध्वनि। 4-मुंह मोड़ता। 5-असहयोग आंदोलन। 6-मूल पाठ।

तर्जुमा लिखवाना शुरू किया। नवम्बर सन् 1921 ई० में मत्न की किताबत ख़त्म हो चुकी थी, तर्जुमे की किताबत शुरू हुई थी, लेकिन वक़्त का फ़ैसला अब भी मेरे ख़िलाफ़ था।

गिरफ़्तारी और तमाम मुसव्वदात की बर्बादी

सन् 1921 ई० के अवाख़िर में तहरीके ला-तआवुन की सर-गर्मियाँ मुन्तहा-ए-उरूज[1] तक पहुँच गई थीं और अब ना-गुज़ीर[2] था कि हुकूमत भी अपने तमाम वसाइल काम में लाए, 20 नवम्बर को सबसे पहले हुकूमते बंगाल ने क़दम उठाया और उन तमाम मजालिस[3] को ख़िलाफ़े क़ानून क़रार दे दिया जो तहरीक की सर-गर्मियों में मश्ग़ूल थीं। इस इक़दाम[4] ने कांग्रेस को अदमे-मुताबअ़त क़ानून के इज्रा का मौक़ा दे दिया और 10 दिसम्बर सन् 1921 ई० को बाज़ दीगर रुफ़क़ा-ए-बंगाल[5] के साथ मुझे भी गिरफ़्तार कर लिया गया।

इस मर्तबा मेरी गिरफ़्तारी, प्रेस के इन्तिज़ामात में ख़लल नहीं डाल सकती थी, क्योंकि किताब मुकम्मल मौजूद थी और मैंने इसका पूरा बंदोबस्त कर लिया था कि मेरी अ़दमे मौजूदगी में भी काम बदस्तूर जारी रहे, लेकिन गिरफ़्तारी के बाद जो वाक़िआ पेश आया वो अफ़्साने की आख़िरी अलमनाकी[6] है। उसकी वजह से न सिर्फ़ तर्जुमानुल-क़ुरआन और तफ़्सीर की इशाअ़त रुक गई, बल्कि मेरी इल्मी ज़िन्दगी के वलवले अफ़्सुर्दा[7] हो गए।

गिरफ़्तारी के बाद जब हुकूमत ने महसूस किया कि मेरे

1-पराकाष्ठा। 2-अपरिहार्य। 3-सभाओं, मीटिंगों। 4-क़दम। 5-बंगाल के साथियों। 6-ट्रेजडी, त्रासदी। 7-हौसले मुर्झाना।

ख़िलाफ़ मुक़द्दमा चलाने के लिए काफ़ी मवाद मौजूद नहीं है तो उसे मवाद की जुस्तुजू[1] हुई और इसलिए तीसरी मर्तबा मेरे मकान और मत्बा की तलाशी ली गई। तलाशी के लिए जो लोग आए थे उनमें कोई शख़्स ऐसा न था जो उर्दू या अ़रबी या फ़ारसी की इस्तेदाद रखता हो, जो चीज़ भी इन ज़बानों में लिखी हुई मिली, उन्होंने ख़याल किया इसमें कोई न कोई बात हुकूमत के ख़िलाफ़ ज़रूर होगी। नतीजा ये निकला कि क़लमी मुसव्वदात का तमाम ज़ख़ीरा उठा ले गए, हत्ताकि तर्जुमानुल-क़ुरआन की तमाम लिखी हुई कापियाँ भी तोड़-मरोड़ कर मुसव्वदात के ढेर में मिला दीं।

सूए-इत्तिफ़ाक़ से उस वक़्त किसी ने मुतालबा[2] नहीं किया कि काग़ज़ात मुरत्तब[3] करके लिए जाएँ और हस्बे-क़ायदा[4] उन पर गवाहों के दस्तख़त हो जाएँ, नीज़ उनकी रसीद तफ़्सील के साथ मुरत्तब करके दी जाए। अफ़्सराने तफ़्तीश अपने साथ छपा हुआ फ़ार्म लाए थे, सिर्फ़ ये लिख कर कि मुतफ़र्रिक़[5] क़लमी[6] काग़ज़ात लिए गए, छपा हुआ फ़ार्म दे दिया और रवाना हो गए।

पन्दरह माह के बाद जब मैं रिहा हुआ तो हुकूमत से काग़ज़ात का मुतालबा किया। एक अ़र्से की ख़तो-किताबत[7] के बाद काग़ज़ात मिले, मगर इस हालत में मिले कि तमाम ज़ख़ीरा बर्बाद हो चुका था।

अफ़्सराने-तफ़्तीश ने जब इन काग़ज़ात पर क़ब्ज़ा किया तो ये क़लमी मुसव्वदात के मुख़्तलिफ़ मज्मूऐ[8] थे और अलग-अलग पट्ठों की दफ़्तियों में तरतीब दिये हुए थे। इन में मुख़्तलिफ़ मुकम्मल और

1-तलाश। 2-मांग। 3-लिखा-पढ़ी। 4-नियमानुसार। 5-कई तरह के, विभिन्न। 6-हाथ से लिखे हुए। 7-पत्र-व्यवहार। 8-संकलन।

ग़ैर मुकम्मल तस्नीफ़ात के अलावा बड़ा ज़खीरा याद-दाश्तों का था। लेकिन जब वापस मिले तो महज़ औराके-परेशाँ[1] का एक ढेर था और निस्फ़ से ज़्यादा या तो ज़ाय हो चुके थे या अतराफ़ से फटे हुए और पारा-पारा थे।

ये मेरे सब्रो-शकेब[2] के लिए ज़िन्दगी की सबसे बड़ी आज़माइश थी, लेकिन मैं ने भी कोशिश कि इसमें भी पूरा उतरूँ। ये सबसे ज़्यादा तल्ख़[3] घूंट था जो जामे-हवादिस[4] ने मेरे लबों को लगाया, लेकिन मैं ने बग़ैर किसी शिकायत के पी लिया, अलबत्ता इससे इंकार नहीं करता कि उसकी तल्ख़ी आज तक गुलू-गीर[5] है :

रगो-पै में जब उतरे ज़हरे ग़म तब देखिये क्या हो
अभी तो तल्ख़िए कामो-दहन की आज़माइश है

सियासी ज़िन्दगी की शोरिशें[6] और इल्मी ज़िन्दगी की जम्इय्यतें[7], एक ज़िन्दगी में जमा नहीं हो सकतीं और पुंबओ-आतिश[8] में आश्ती[9] मुहाल है। मैंने चाहा दोनों को बयक वक़्त जमा करूँ, मैं नामुराद[10] एक तरफ़ मताए फ़िक्र[11] के अंबार लगाता रहा, दूसरी तरफ़ बर्क़ ख़िर्मने-सोज़[12] को भी दावत देता रहा, नतीजा मालूम था और मुझे हक़ नहीं कि हर्फ़े शिकायत ज़बाँ पर लाऊँ[13]। उर्फ़ी ने मेरी ज़बानी कह दिया है :

ज़ाँ शिकस्तम् कि ब दंबाल दिले ख़्वेश मदाम
दर नशेब शिकन् ज़ुल्फ़े परेशाँ रफ़्तम्

1-बिखरे हुए, बेतरतीब पन्नों। 2-धैर्य व सयम। 3-कड़वा। 4-हादिसों के जाम। 5-कंठ में रची-बसी। 6-आपाधापी। 7-सामूहिकताएं। 8-कपास व आग। 9-दोस्ती। 10-असफल। 11-विचारों की पूंजी। 12-खलियान जलाने वाली बिजली। 13-शिकायत में एक शब्द भी कहूँ।

अब तर्जुमानुल-क़ुरआन और तफ़्सीर की हस्ती इसके सिवा मुमकिन न थी कि अज़ सरे-नौ मेहनत की जाए, लेकिन इस हादिसे के बाद तबीअ़त कुछ इस तरह अफ़्सुर्दा हो गई कि हर चन्द कोशिश की मगर साथ न दे सकी। मैं ने महसूस किया कि हादिसे का ज़ख़्म इतना हलका नहीं है कि फ़ौरन मुन्दमिल[1] हो जाए।

तबीअ़त की बड़ी रुकावट जो रह-रह कर सामने आती थी ये तसव्वुर था कि एक तस्नीफ की हुई चीज़ दोबारा तस्नीफ़ की जाए। वाक़िआ ये है कि एक अहले क़लम के लिए इससे ज़्यादा मुश्किल काम कोई नहीं। वो हज़ारों सफ़्हे नये ब-असानी लिख देगा, लेकिन एक ज़ाय-शुदा[2] सफ़्हे के दोबारा लिखने में अपनी तबीअ़त को यक-क़लम दरमांदा[3] पाएगा। फ़िक्रो-तबीअ़त[4] की जो गर्म-जोशी पिछली मेहनतों की बर्बादी के तसव्वुर से बुझ जाती है, बहुत दुश्वार[5] होता है कि उसे दोबारा पैदा किया जाए। इस हालत का अंदाज़ा सिर्फ़ वही लोग कर सकते हैं जो ऐसी बद-क़िस्मतियों से दोचार हुए हों। मैं ने थॉमस कार्लाइल (**Thomas Carlyle**) के हालात में जब पढ़ा था कि उसने इन्क़िलाबे फ्रांस[6] पर अपनी मशहूर किताब दोबारा तस्नीफ़ की और अहले फ़न ने उसे क़ुव्वते-तस्नीफ़[7] का एक ग़ैर मामूली मुज़ाहरा[8] समझा तो मैं नहीं समझ सका था कि उसमें ग़ैर मामूली बात क्या है। लेकिन इस हादिसे के बाद मुझे मालूम हो गया कि ये न सिर्फ़ ग़ैर मामूली है बल्कि इससे भी कुछ ज़्यादा है और फ़िल-हक़ीक़त कार्लाइल की मुसन्निफ़ाना अ़ज़्मत[9] का इससे बढ़ कर और कोई सबूत नहीं हो सकता।

1-भरना। 2-नष्ट हुए। 3-पस्त। 4-चिंतन-मनन। 5-कठिन। 6-फ्रांस की क्रांति। 7-लेखन-सामर्थ्य। 8-प्रदर्शन। 9-लेखकीय महानता।

तर्जुमानुल-क़ुरआन की अज़ सरे-नौ तरतीब

कई साल गुज़र गए, मगर मैं अपने आप को इस काम के लिए आमादा न कर सका :

दिले सर-गश्तह दारम कि दर सहरास्त पंदारी

बारहा ऐसा हुआ कि तर्जुमा व तफ़्सीर के बचे खुचे औराक़ निकाले लेकिन जूँ-ही बर्बाद-शुदह काग़ज़ात पर नज़र पड़ी, तबीअ़त का इन्क़िबाज़[1] ताज़ा हो गया और दो-चार सफ़्हे लिख कर छोड़ देना पड़ा।

लेकिन एक ऐसे काम की तरफ़ से जिस की निस्बत[2] मेरा यक़ीन था कि मुसलमानों के लिए वक़्त का सबसे ज़्यादा ज़रूरी काम है, मुमकिन न था कि ज़्यादा अ़र्से तक तबीअ़त ग़ाफ़िल रहती। जिस क़द्र वक़्त गुज़रता जाता था इस काम की ज़रूरत का एहसास मेरे लिए ना क़ाबिले बर्दाश्त होता जाता था। मैं महसूस करता था कि अगर ये काम मुझ से अंजाम न पाया तो शायद अ़र्से तक इसकी अंजाम-दही का कोई सामान न हो।

सन् 1927 ई० क़रीबुल इख़्तिताम[3] था कि अचानक मुद्दतों की रुकी हुई तबीअ़त में जुंबिश हुई और रिश्त-ए-कार[4] की जो गिरह ज़ेहनो-दिमाग़ की पैहम कोशिशें न खोल सकी थीं, दिल की जोशिशें[5] बेइख़्तियार से ख़ुद-बख़ुद खुल गईं। काम शुरू किया तो इब्तिदा में चन्द दिनों तक तबीअ़त रुकी-रुकी रही, लेकिन जूँ-ही ज़ौक़ व फ़िक्र

1-संत्रास, उदासी। 2-सम्बंध मे। 3-समापन के निकट। 4-कार्य-सम्बंध। 5-आवेग, उफान।

के दो-चार जाम गर्दिश में आए, तबीअ़त की सारी रुकावटें दूर हो गयीं और फिर तो ऐसा मालूम होने लगा गोया इस शोरिश कद-ए-मस्ती[1] में अफ़्सुर्दगी व ख़ुमार-आलूदगी का कभी गुज़र ही नहीं हुआ था।

ब-बद्-मस्ती सज़द गर मुत्तहम साज़द मुरा साक़ी
हुनूज़ अज़ बाद-ए-दोशीनह अम् पैमाना बू-दारद

इतना ही नहीं, बल्कि कहना चाहिए शोरिशे ताज़ा[2] की सर-मस्तियाँ मजलिसे दोशीं[3] की कैफ़ियतों से भी कहीं तुन्द-तर[4] हो गईं :

चह मस्तीस्त न दानम कि रूबह मा-आवुरद
के बुवद साक़ी व ईं बादा अज़ कुजा आवुरद

सुब्हानल्लाह! आ़लमे रूहो-क़ल्ब[5] के तसर्रुफ़ात[6] का भी कुछ अ़जीब हाल है! या तो यह हाल था कि बार-बार कोशिश की मगर तबीअ़त का इन्क़िबाज़ दूर नहीं हुआ, या अब ख़ुद-बख़ुद खुली तो इस तरह खुली कि क़लम रोकना भी चाहूँ तो नहीं रोक सकता :

शोरीस्त नवा रेज़-ए-तारे नफ़्सम रा
पैदान-ए-ऐ जुंबिशे मिज़राब कुजाई

बहरहाल काम शुरू हो गया और इस ख़याल से कि सूर: फ़ातिहा की तफ़्सीर, तर्जुमे के लिए भी ज़रूरी थी सबसे पहले उसकी तरफ़ मुतवज्जह हुआ, फिर तर्जुमा की तरतीब शुरू की। हालात अब भी मुवाफ़िक़[7] न थे, सेहत रोज़-बरोज़ कमज़ोर हो रही थी, सियासी

1-कोलाहलपूर्ण, निर्बाध मस्ती। 2-नई हलचल। 3-पिछली व्यस्तताओं। 4-प्रबल, प्रचंड। 5-आत्मा व अंत: करण की दुनिया। 6-प्रभुत्व। 7-अनुकूल।

मशग़ूलियत की आलूदगियाँ[1] बदस्तूर खलल-अन्दाज़[2] थीं, ताहम[3] काम का सिलसिला कमो-बेश जारी रहा और 20 जुलाई सन् 1930 ई० को आख़िरी सूरत के तर्जुमा व तरतीब से फ़ारिग़ हो गया।

ता दस्त रसम बूद ज़-दम चाके गिरेबाँ
शर्मिन्दगी अज़ ख़िर्क़-ए-पशमीनह न दारम

उसूले तर्जुमा व तफ़्सीर

तर्जुमानुल-क़ुरआन के मक़ासिद[4] व मतालिब[5] जिन उसूल व मबादियात[6] के मातहत तरतीब दिये गए हैं, क़ुदरती तौर पर तबीअतें मुन्तज़िर होंगी कि अस्ल किताब के मुतालआ से पहले उनसे आश्ना[7] हो जाएँ। इस दीबाचे[8] के लिखने के वक़्त तक मेरा भी यही ख़याल था कि इस बारे में एक मुख़्तसर-सी तहरीर बतौर मुक़द्दमए किताब[9] शामिल कर दी जाएगी, लेकिन अब कि दीबाचा लिख रहा हूँ, उन उसूलो-मबादियात[10] को लपेटना चाहा तो मालूम हुआ मौज़ू की पेचीदगियाँ और मबाहिस की गहराइयाँ ऐसी नहीं हैं कि तफ़्सील व इत्नाब[11] के बग़ैर बयान में आ सकें। मबाहिस में से हर मब्हस की वज़ाहत के लिए मुक़द्दमात और तम्हीदात ना गुज़ीर हैं और हर मब्हस के अतराफ़[12] इस तरह दूर-दूर फैले हुए हैं कि न तो समेटे जा सकते हैं, न मुज्मल[13] इशारात आम मुतालआ के लिए किफ़ायत[14] कर सकते हैं। मजबूरन इस ख़याल से दस्तबर्दार[15] होता

1-प्रदूषण। 2-हस्तक्षेपरत। 3-फिर भी। 4-उद्देश्यों। 5-अर्थों। 6-नियम-सिद्धांतों। 7-परिचित। 8-प्रस्तावना। 9-किताब की भूमिका। 10-नियम-सिद्धांतों। 11-विस्तार। 12-आसपास। 13-संक्षिप्त। 14-काफ़ी, पर्याप्त। 15-छोड़ना।

हूँ और सर-सरी इशारा उन मुश्किलातो-मवाने[1] की तरफ़ कर देता हूँ जो इस राह में हाइल थे, ताकि अन्दाज़ा किया जा सके कि मामले की आम हालत क्या थी और मुताल-ए-क़ुरआन का जो क़दम उठाया गया है वो किस रुख़ पर जा रहा है।

बाक़ी रहे तर्जुमानुल-क़ुरआन के उसूले तफ़्सीर तो उनके लिए मुक़द्दम-ए-तफ़्सीर का इंतिज़ार करना चाहिए जो तर्जुमानुल-क़ुरआन के बाद इस सिलसिले की दूसरी किताब है और जिस के क़दीम मुसव्वदात की तहज़ीबो-तरतीब में आज-कल मशग़ूल हूँ।

क़ुरूने अख़ीरा और क़ुरआन के मुतालआ व तदब्बुर का आम मे'यार

मुख़्तलिफ़ अस्बाब से जिनकी तश्रीह की ये महल[2] नहीं, सदियों से इस तरह के अस्बाबो-मोअस्सिरात[3] नशो-नुमा[4] पाते रहे हैं जिनकी वजह से बतदरीज[5] क़ुरआन की हक़ीक़त निगाहों से मस्तूर[6] होती गई और रफ़्ता-रफ़्ता उसके मुतालआ व फ़हम का एक पस्त मेयार क़ायम हो गया। ये पस्ती सिर्फ़ मआनी व मतालिब ही में नहीं हुई, बल्कि हर चीज़ में हुई, हत्ताकि उसकी ज़बान, उसके अल्फ़ाज़, उस की तराकीब और उसकी बलाग़त[7] के लिए भी नज़रो-फ़हम[8] की कोई बुलन्द जगह बाक़ी नहीं रही।

हर अहद[9] का मुसन्निफ़[10] अपने अहद की ज़ेहनी आबो-

1-कठिनाइयों व व्यवधानों। 2-अवसर। 3-कारण और प्रभाव। 4-उन्नति। 5-धीरे-धीरे, क्रमश:। 6-ओझल, छुपना। 7-संप्रेषणता, अभिव्यक्ति। 8-देखने-समझने। 9-दौर। 10-लेखक।

हवा[1] की पैदावार होता है और इस क़ायदे से सिर्फ़ वही दिमाग़ मुस्तस्ना[2] होते हैं जिन्हें मुज्तहिदाना[3] ज़ौक़ो-नज़र[4] की क़ुदरती बख़्शाइश ने सफ़्फ़े-आम[5] से अलग कर दिया हो। चुनांचे हम देखते हैं कि इस्लाम की इब्तिदाई सदियों से लेकर क़ुरूने-अख़ीरा[6] तक जिस क़द्र मुफ़स्सिर[7] पैदा हुए, उनका तरीक़-ए-तफ़सीर एक रू-बतनज़्ज़ुल मेयारे फ़िक्र[8] की मुसलसल ज़ंजीर है जिसकी हर पिछली कड़ी पहली से पस्त-तर[9] और हर साबिक़[10] लाहिक़[11] से बुलन्द-तर वाक़े हुई है। इस सिलसिले में जिस क़द्र ऊपर की तरफ़ बढ़ते जाते हैं, हक़ीक़त ज़्यादा वाज़ेह[12], ज़्यादा बुलन्द और अपनी क़ुदरती शक्ल में नुमायाँ होती जाती है।

ये सूरते हाल फ़िल-हक़ीक़त मुसलमानों के आम दिमाग़ी तनुज़्ज़ुल[13] का क़ुदरती नतीजा था। उन्होंने जब देखा कि क़ुरआन की बुलन्दियों का साथ नहीं दे सकते तो कोशिश की कि क़ुरआन को उसकी बुलन्दियों से इस क़द्र नीचे उतार लें कि उनकी पस्तियों का साथ दे सके।

अब अगर हम चाहते हैं कि क़ुरआन को उसकी हक़ीक़ी शक्लो-नौइयत में देखें तो ज़रूरी है कि पहले वो तमाम पर्दे हटाएँ, जो मुख़्तलिफ़ अहदों और मुख़्तलिफ़ गोशों के ख़ारिजी मोअस्सिरात[14] ने उसके चेहरे पर डाल दिये हैं, फिर आगे बढ़ें और क़ुरआन की हक़ीक़त ख़ुद क़ुरआन ही के सफ़्हों में तलाश करें।

1-मानसिक-वैचारिक परिवेश। 2-अपवाद। 3-अभिनवशील। 4-दृष्टि व रुचि। 5-सामान्य पंक्ति। 6-अंतिम दौर। 7-व्याख्याकार। 8-गिरते वैचारिक स्तर। 9-गिरी हुई। 10-पिछली। 11-बाद की। 12-स्पष्ट। 13-गिरावट। 14-बाहरी प्रभावों।

बाज़ अस्बाब व मोअस्सिरात जो फ़हमे हक़ीक़त में माने हैं

ये मुख़ालिफ़ असरात[1] जो यके-बाद दीगरे जमा होते रहे, दो-चार नहीं, बेशुमार हैं और हर गोशे में फैले हुए हैं, मुमकिन नहीं कि इख़्तिसार[2] के साथ बयान में आ सकें, लेकिन मैं ने मुक़द्दमाए तफ़्सीर में कोशिश की है कि उन्हें चन्द उसूलो-अन्वाअ के मा-तहत समेट लूँ। इस सिलसिले में हस्बेज़ैल दफ़आत क़ाबिले ग़ौर हैं :

1- क़ुरआने हकीम अपनी वज़अ[3], अपने उस्लूब[4], अपने अंदाज़े बयान[5], अपने तरीक़े-ख़िताब[6], अपने तरीक़े इस्तिदलाल[7], ग़रज़ कि[8] अपनी हर बात में हमारे वज़ई और सन्नाई तरीक़ों[9] की पाबन्द नहीं है और न उसे पाबन्द होना चाहिए। वो अपनी हर बात में अपना बे-मेल फ़ित्री[10] तरीक़ा रखता है और यही वो बुनियादी इम्तियाज़[11] है जो अंबिया-ए-किराम[12] (अलैहिमुस्सलाम) के तरीक़े हिदायत[13] को इल्मो-हिकमत[14] के वज़ई[15] तरीक़ों से मुम्ताज़[16] कर देता है।

क़ुरआन जब नाज़िल[17] हुआ तो उसके मुख़ातिबों[18] को पहला गिरोह भी ऐसा ही था। तमद्दुन[19] के वज़ई और सन्नाई[20] सांचों में अभी उसका दिमाग़ नहीं ढला था। फ़ित्रत की सीधी-सादी फ़िक्री हालत पर क़ाने[21] था। नतीजा ये निकला कि क़ुरआन अपनी

1-विरोधी प्रभाव। 2-संक्षेप। 3-बनावट। 4-तरीक़ा, शैली। 5-वर्णन शैली। 6-सम्बोधन शैली। 7-तर्क शैली। 8-तात्पर्य कि। 9-बनाने, निर्मित करने और सृजित करने के तरीक़ों। 10- क़ुदरती, नैसर्गिक। 11-फ़र्क़, भेद। 12-पैग़म्बरों। 13-हिदायत का तरीक़ा। 14-ज्ञान और बोध (विज़डम)। 15-बनावटी, कृत्रिम, मानव-निर्मित। 16-ऊपर। 17-अवतरित। 18-सम्बोधनों। 19-सभ्यता। 20-सृजित और बनाए। 21-संतुष्ट।

शक्लो-मअ़ना में जैसा कि वाक़े हुआ था ठीक-ठीक वैसा ही उसके दिलों में उतर गया और उसे क़ुरआन के फ़हमो-मारिफ़त[1] में किसी तरह की दुश्वारी महसूस नहीं हुई। सहाब-ए-किराम[2] पहली मर्तबा क़ुरआन की कोई आयत या सूरत सुनते थे और सुनते ही उसकी हक़ीक़त पा लेते थे।

लेकिन सदरे-अव्वल का दौर अभी ख़त्म नहीं हुआ था कि रोम व ईरान के तमद्दुन की हवाएं चलने लगीं और फिर यूनानी उलूम[3] के तराजिम ने उलूम व फ़ुनूने वज़इय्या[4] का दौर शुरू कर दिया। नतीजा ये निकला कि जूँ-जूँ वज़इय्यत का ज़ौक़ बढ़ता गया क़ुरआन के फ़ित्री उस्लूबों से तबीअ़तें ना आशना होती गयीं। रफ़्ता-रफ़्ता वो वक़्त आ गया कि क़ुरआन की हर बात वज़ई और सन्नाई तरीक़ों के सांचों में ढाली जाने लगी। चूंकि इन सांचों में वो ढल नहीं सकती थीं, इसलिए तरह-तरह के उलझाव पैदा होने लगे और फिर जिस क़द्र कोशिशें सुलझाने की की गयीं, उलझाव और ज़्यादा बढ़ते गए।

फ़ित्रिय्यत से जब बोद[5] हो जाता है और वज़इय्यत का इस्तिग़राक़[6] तारी हो जाता है तो तबीअ़तें इस पर राज़ी नहीं होतीं कि किसी बात को उसकी क़ुदरती सादगी में देखें। वो सादगी के साथ हुस्न व अ़ज़्मत[7] का तसव्वुर[8] कर ही नहीं सकतीं। वो जब किसी बात को बुलन्द और शानदार दिखाना चाहती हैं तो कोशिश करती हैं कि ज़्यादा से ज़्यादा वज़इय्यत और सन्नाइय्यत[9] के पेचो-ख़म पैदा कर दें। यही मामला क़ुरआन के साथ पेश आया।

1-समझने-जानने। 2-रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) के साथी। 3-ज्ञान, विद्या। 4-बनावट। 5-दूरी, अपरिचय। 6-प्रभाव, क़ब्ज़ा, तन्मयता। 7-सौंदर्य और महानता। 8-कल्पना। 9-बनावट व कलाकारी।

सलफ़[1] की तबीअतें वज़ई तरीक़ों में नहीं ढली थीं, इसलिए वो क़ुरआन की सीधी-सादी हक़ीक़त बेसाख़्ता[2] पहचान लेते थे। लेकिन ख़लफ़[3] की तबीअतों पर ये बात शाक़ गुज़रने लगी कि क़ुरआन अपनी सीधी-सादी शक्ल में नुमायाँ हो। उनकी वज़इय्यत पसन्दी इस पर क़ाने नहीं हो सकती थी। उन्होंने क़ुरआन की हर बात के लिए वज़इय्यत के जामे तैयार करने शुरू कर दिये। और चूंकि ये जामा इस पर रास्त नहीं आ सकता था, इसलिए ब-तकल्लुफ़[4] पहनाना चाहा। नतीजा ये निकला कि हक़ीक़त की मौज़ूनियत[5] बाक़ी न रही, हर बात ना मौज़ूँ और उलझी हुई बन कर रह गई।

तफ़्सीरे क़ुरआन का पहला दौर वो है जब उलूमे इस्लामिया की तदवीनो-किताबत[6] शुरू नहीं हुई थी। दूसरा दौर तदवीनो-किताबत से शुरू होता है और अपने मुख़्तलिफ़ अहदों और तब्क़ों में उतरता आता है। हम महसूस करते हैं कि अभी दूसरा दौर शुरू ही हुआ था कि ये जामा क़ुरआन के लिए बनना शुरू हो गया। लेकिन इसका मुन्तहा-ए- बुलूग़ फ़लसफ़ा व उलूम[7] की तरवीजो-इशाअत[8] का आख़िरी ज़माना है। यही ज़माना है जब इमाम फ़ख़रुद्दीन राज़ी रह० ने तफ़्सीरे कबीर लिखी और पूरी कोशिश की कि क़ुरआन का सरापा[9] उस मस्नूई लिबासे वज़इय्यत से आरास्ता[10] हो जाए। अगर इमामे राज़ी की नज़र इस हक़ीक़त पर होती तो उनकी पूरी तफ़्सीर नहीं तो दो तिहाई हिस्सा यक़ीनन बेकार हो जाता।

बहरहाल, याद रहे वज़इय्यत के सांचे जितने टूटते जाएंगे, क़ुरआन की हक़ीक़त उतनी ही उभरती आएगी।

1-पूर्व लोगों। 2-सहज ही। 3-बाद के लोगों। 4-सप्रयास। 5-उपयुक्तता। 6-अभिलेखन और सुलेखन (कैलिग्राफ़ी)। 7-ज्ञान। 8-प्रकाशन। 9-समग्र रूप। 10-सुसज्जित।

क़ुरआन के उस्लूबे बयान की निस्बत लोगों को जिस क़द्र मुश्किलें पेश आयीं, महज़ इसलिए कि वज़इय्यत का इस्तिग़राक़ हुआ और फ़ित्रिय्यत की मारिफ़त बाक़ी न रही।

क़ुरआन के मुख़्तलिफ़ हिस्सों और आयतों के मुनासबात[1] व रवाबित[2] के सारे उलझाव सिर्फ़ इसलिए हैं कि फ़ित्रिय्यत से बोद हो गया और वज़इय्यत हमारे अन्दर बसी हुई है। हम चाहते हैं क़ुरआन को भी एक ऐसी मुरत्तब[3] किताब की शक्ल में देखें जैसी किताबें हम मुरत्तब करते हैं।

क़ुरआन की ज़बान की निस्बत बहसों का जिस क़द्र अंबार लगा दिया गया है, वो भी महज़ इसलिए है कि फ़ित्रिय्यत के समझने की हम में इस्तेदाद[4] बाक़ी नहीं रही।

क़ुरआन की बलाग़त[5] का मसअला हमारे विज्दान[6] के लिए इस क़द्र सहल, मगर हमारे दिमाग़ के लिए इस क़द्र दुश्वार क्यों हो रहा है? सिर्फ़ इसी लिए कि वज़इय्यत का ख़ुद-साख़्ता तराज़ू हमारे हाथ में है, हम चाहते हैं उसी से क़ुरआन की बलाग़त भी वज़न करें।

क़ुरआन का तरीक़े इस्तिदलाल[7] क्यों नुमायाँ नहीं होता? इसके तमाम दलाइल[8] व बराहीन जिन्हें वो ''हुज्जते बालिग़ह[9]'' से ताबीर करता है, क्यों मस्तूर[10] हो गए हैं? इसी लिए कि वज़इय्यत के इस्तिग़राक़ ने मन्तिक़[11] का सांचा हमें दे दिया है। हम चाहते हैं क़ुरआन के दलाइल व बराहीन[12] भी उस में ढालें।

1-पारस्परिकता। 2-प्रतिबद्धताओं। 3-लिखी हुई। 4-तत्परता। 5-अभिव्यक्ति। 6-अवचेतन, अंत: बोध। 7-तर्क शैली। 8-दलीलों। 9-पक्के सबूत। 10-ओझल। 11-तर्क। 12-प्रमाण।

ग़रज़ कि जिस गोशे में जाओगे यही अस्ल सामने पाओगे।

2- जब किसी किताब की निस्बत ये सवाल पैदा हो उसका मतलब क्या है? तो क़ुदरती तौर पर उन लोगों के फ़हम को तरजीह दी जाएगी जिन्हों ने ख़ुद साहिबे किताब से मतलब समझा हो। क़ुरआन तेईस (23) बरस के अन्दर ब-तदरीज नाज़िल हुआ। वो जिस क़द्र नाज़िल होता था, सहाब-ए-किराम सुनते थे, नमाज़ों में दोहराते थे और जो कुछ पूछना होता था ख़ुद पैग़म्बरे इस्लाम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से पूछ लेते थे। इनमें बाज़ अफ़राद खुसूसियत के साथ फ़हमे क़ुरआन में मुम्ताज़[1] हुए और ख़ुद पैग़म्बरे इस्लाम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने इसकी शहादत[2] दी। मज़हबी जोशे-एतक़ादी[3] की बिना पर नहीं, बल्कि क़ुदरती तौर पर उनके फ़हम को बाद के लोगों के फ़हम पर तरजीह होनी चाहिए। लेकिन बद-क़िस्मती से ऐसा नहीं समझा गया। बाद के लोगों ने अपने-अपने अहद के फ़िक्री मोअस्सिरात के मातहत नई-नई काविशें शुरू कर दीं और सलफ़ की सरीह तफ़्सीर के खिलाफ़ हर गोशे में क़दम उठा दिये। कहा गया "सलफ़ ईमान में क़वी[4] हैं, लेकिन इल्म में ख़लफ़ का तरीक़ा क़वी है" हालाँकि ख़ुद सलफ़ का अपनी निस्बत ये एलान था कि "अबर्रहुम क़ुलूबन व अअ़मक़हुम इल्मन्" (वो नेक दिल और गहरे इल्म वाले हैं।) नतीजा ये निकला कि रोज़-बरोज़ हक़ीक़त मस्तूर होती गई और अक्सर गोशों में एक साफ़ बात उलझते-उलझते बिल्कुल ना क़ाबिले हल बन गई।

आफ़त पर आफ़त ये हुई कि पहले एक कमज़ोर पहलू इख़्तियार किया गया फिर बढ़ते-बढ़ते दूर तक निकल गए। फिर जब

1-श्रेष्ठ, उच्च। 2-गवाही। 3-आस्था का जोश। 4-पक्के, मज़बूत।

मुश्किलों से दोचार हुए तो नयी-नयी बहसों और काविशों की इमारतें उठाने लगीं। मुतून, शुरूह, हवाशी और मन्हिय्यात व तालीक़ात का तरीक़ा यहाँ भी चला। उसने और ज़्यादा उलझाव में उलझाव डाले और बाज़ सूरतों में तो पर्दों की इतनी तहें जमा हो गयीं कि एक के एक उठाते चले जाओ "ظُلُمَاتٌ بَعْضُهَا فَوْقَ بَعْضٍ" (अंधेरों पर अंधेरे) का आलम दिखाई देगा।

इस बात का अंदाज़ा करने के लिए क़ुरआन का कोई एक मक़ाम ले लो। पहले उसको तफ़्सीर सहाबा व ताबईन[1] की रिवायात में ढूंढो फिर बाद के मुफ़स्सिरों की तरफ़ रुख़ करो और दोनों का मुक़ाबला करो, साफ़ नज़र आ जाएगा कि सहाबा व सलफ़ की तफ़्सीर में मामला बिल्कुल वाज़ेह था, बाद की बेमहल दक़ीक़ा संजियों[2] ने उसे कुछ से कुछ बना दिया और उलझाव पैदा हो गए।

मसलन सूर: बक़रह की इब्तिदाई आयतों की निस्बत हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास और इब्ने मस्ऊद (रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा) से मरवी है कि "اَلَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِالْغَيْبِ وَيُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ الخ" से मक़सूद अ़रब के अहले ईमान हैं और "وَالَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِمَا أُنْزِلَ إِلَيْكَ الخ" से अहले किताब। इमाम इब्ने जरीर ने भी यही तफ़्सीर इख़्तियार की, लेकिन बाद के मुफ़स्सिर इस पर क़ाने नहीं हुए और अ़जीब-अ़जीब दूर अज़-कार[3] बहसें पैदा कर दीं, नतीजा ये निकला कि पहले "هُدًى لِّلْمُتَّقِيْنَ" के मतलब की नशिस्त[4] बिगड़ी, फिर क़ुरआन ने तीन गिरोहों की तक़्सीम करके जिस बात पर ज़ोर दिया था उसकी सारी ख़ूबी और हक़ीक़त गुम हो गई।

1-अनुकरण करने वाले। 2-अप्रासंगिक दुरूहता। 3-विषय से भटक कर। 4-श्रेणी, कक्षा।

3- नौ-मुस्लिम अक़्वाम[1] के क़सस[2] व रिवायात[3] अव्वल दिन से फैलना शुरू हो गए थे, इन में इस्राइलियात (यानी यहूदियों के क़ससो- ख़ुराफ़ात) को हमेशा मुहक़्क़िक़ीन ने छांटना चाहा, लेकिन वाक़िआ ये है कि इन अ़नासिर के मख़्फ़ी[4] असरात दूर-दूर तक सरायत[5] कर चुके थे और वो बराबर जिस्मे तफ़्सीर में पेवस्त[6] रहे।

4- एक तरफ़ तो सहाबा व सलफ़ की रिवायात से तग़ाफुल[7] हुआ दूसरी तरफ़ रिवायाते तफ़्सीर के ग़ैर मुहतात[8] जामिओं ने अलग आफ़त बपा कर दी और हर तफ़्सीर, जिसका सिरा किसी न किसी ताबई से मिला दिया गया, सलफ़ की तफ़्सीर समझ ली गई।

5- इस सूरते हाल का सबसे ज़्यादा अफ़सोसनाक नतीजा ये निकला कि क़ुरआन का तरीक़े इस्तिदलाल दूर अज़-कार दक़ीक़ा संजियों में गुम हो गया। ये ज़ाहिर है कि उसके तमाम बयानात का महवर और मर्कज़[9] उसका तरीक़े इस्तिदलाल ही है। उसके इर्शादात[10] व बसाइर, उसके क़ससो-अम्साल[11], उसके मवाइज़ व हिकम[12], उसके मक़ासिद व मुहिम्मात सब उसी चीज़ से खुलते और उभरते हैं। ये एक चीज़ क्या गुम हुई गोया उसका सब कुछ गुम हो गया :

हमीन वर्क़ कि सियह गश्तह, मुद्दआ ईं जास्त

अंबिया-ए-किराम का तरीक़े इस्तिदलाल ये नहीं होता कि मन्तिक़ी तरीक़े पर नज़री मुक़द्दमात तरतीब[13] दें, फिर उनकी बहसों में मुख़ातिब को उलझाना शुरू कर दें। वो बराहे-रास्त[14] तल्क़ीन व

1-नई मुस्लिम क़ौमों। 2-क़िस्से। 3-परंपराएं, लोकाचार। 4-नकारात्मक। 5-फैलना। 6-घुसे। 7-भटकाव, लापरवाही। 8-असावधानीपूर्ण। 9-केन्द्र। 10-सम्बोधन, कथन। 11-कथा तत्व व मिसालें। 12-उपदेश व आदेश। 13-वैचारिक भूमिकाएं बांधें। 14-सीधे।

इज़्आन[1] का फित्री तरीक़ा इख़्तियार करते हैं। उसे हर दिमाग़ विज्दानी[2] तौर पर पा लेता है, हर दिल क़ुदरती तौर पर क़बूल कर लेता है। लेकिन हमारे मुफ़स्सिरों को फ़लसफ़ा व मन्तिक़ के इन्हिमाक ने इस क़ाबिल ही न रखा कि किसी हक़ीक़त को उसकी सीधी-सादी शक्ल में देखें और क़बूल कर लें। उन्होंने अंबिया-ए-किराम के लिए बड़ी फ़ज़ीलत[3] इसमें समझी कि उन्हें मन्तिक़ी बना दें और क़ुरआन की सारी अ़ज़्मत इसमें नज़र आई कि उसकी हर बात अरस्तू के मन्तिक़ी सांचे में ढली हुई निकले। इस सांचे में वो ढल नहीं सकती थी, नतीजा ये निकला कि क़ुरआम के दलाइल व बराहीन की सारी ख़ूब-रूई[4] और दिल नशीनी तरह-तरह की बनावटों में गुम हो गई। हक़ीक़त तो गुम हो ही चुकी थी लेकिन वो बात भी न बनी जो लोग बनानी चाहते थे। शुकूक[5] व ईरादात के बेशुमार दरवाज़े खुल गए, उनके खोलने में तो इमामे राज़ी का हाथ बहुत तेज़ निकला, लेकिन बंद करने में तेज़ी न दिखा सके।

6- ये आफ़त सिर्फ़ तरीक़े इस्तिदलाल ही में पेश नहीं आई, बल्कि तमाम गोशों में फैली। मन्तिक़ व फ़लसफ़ा[6] के मबाहिस ने तरह-तरह की नयी मुस्तलिहात[7] पैदा कर दी थीं। अ़रबी लुग़त के अल्फ़ाज़ उन मुस्तलिहा मआ़नी में मुस्तअ़मल[8] होने लगे थे। ये ज़ाहिर है कि क़ुरआन का मौज़ू फ़लसफ़-ए-यूनानी[9] नहीं है और न नुज़ूले क़ुरआन के वक़्त अ़रबी ज़बान इन मुस्तलिहात से आश्ना हुई थी। पस जहाँ कहीं क़ुरआन में वो अल्फ़ाज़ आए हैं उनके मआ़नी वो नहीं हो सकते जो वज़अ़े मुस्तलिहात[10] के बाद क़रार पाए।

1-शिक्षा-उपदेश, निर्देश। 2-अवचेतन, अंतः 3-बड़ाई। 4-सौंदर्य, आकर्षण। 5-सन्देहों। 6-तर्क व दर्शन। 7-पारिभाषिक शब्दावली। 8-प्रयोग, प्रचलित। 9-यूनानी दर्शन। 10-बनावटी या गढ़ी हुई शब्दावली।

लेकिन अब उनके वही मफ़्हूम[1] लिये जाने लगे और उसकी बिना पर तरह-तरह की दूर अज़-कार बहसें पैदा कर दी गयीं। चुनांचे ख़ुलूद, अहदियत, मिस्लियत, तफ़्सील, हुज्जत, बुरहान, तावील वग़ैरहा ने वो मआनी पैदा कर लिए जिनका सदरे अव्वल में किसी सामे-क़ुरआन[2] को वहमो-गुमान भी न हुआ होगा।

7- इसी तुख़्म के ये भी बरगो-बार हैं कि समझा गया कि क़ुरआन को वक़्त की तहक़ीक़ाते इल्मिया[3] का साथ देना चाहिए। चुनांचे कोशिश की गई कि निज़ामे बतलीमूसी उस पर चिपकाया जाए, ठीक उसी तरह जिस तरह आजकल के दानिश-फ़रोशों[4] का तरीक़े तफ़्सीर ये है कि मौजूदा इल्मे हयअत[5] के मसाइल क़ुरआन पर चिपकाए जाएँ।

8- हर किताब और तालीम के कुछ मर्कज़ी मक़ासिद[6] होते हैं और उस की तमाम तफ़्सीलात उन्हीं के गिर्द गर्दिश करती हैं। जब तक ये मराकिज़[7] समझ में न आएँ, दायरे की कोई बात समझ में नहीं आ सकती। क़ुरआन का भी यही हाल है, उसके भी चन्द मर्कज़ी मक़ासिद व मुहिम्मात[8] हैं और जब तक वो सहीह तौर न समझ लिए जाएँ, उसकी कोई बात सहीह तौर पर समझी नहीं जा सकती।

मुतज़क्किर-ए-सदर अस्बाब[9] से जब उसके मर्कज़ी मक़ासिद की वज़ाहत बाक़ी न रही तो क़ुदरती तौर पर उसका हर गोशा इससे मुतअस्सिर हुआ, उसका कोई बयान, कोई तालीम, कोई

1-अर्थ, आशय। 2-कुरआन के श्रोता। 3-बौद्धिक शोध। 4-बुद्धिवादियों। 5-जीव विज्ञान। 6-केन्द्रीय उद्देश्य। 7-केन्द्र (बहुवचन)। 8-मुख्य बिन्द। 9-उपरोक्त कारणों मे।

इस्तिदलाल, कोई ख़िताब, कोई इशारा, कोई इज्माल ऐसा न रहा जो इस तअस्सुर से महफ़ूज़ हो। अफ़सोस ये है कि इख़्तिसार का तक़ाज़ा मिसालें पेश करने से माने है और बग़ैर मिसाल के हक़ीक़त वाज़ेह नहीं हो सकती।

मसलन आले इमरान की आयत "وَمَا كَانَ لِنَبِيٍّ اَنْ يَّغُلَّ" (3:161) की तफ़्सीर निकाल कर देखो कि क्या-क्या दूर अज़-कार बहसें नहीं की गयीं। यहूदियों के इस क़ौल की तफ़्सीर में कि "يَدُ اللّٰهِ مَغْلُوْلَةٌ" (5:64) किन-किन गोशों में नहीं निकल गए और किस तरह महल्ले बयान[1] और सियाक़ो-सबाक़[2] का साफ़-साफ़ मुक़्तज़ा[3] नज़र-अन्दाज़ कर दिया गया।

9- क़ुरआन के सेहते फ़हम[4] के लिए अरबी लुग़त[5] व अदब[6] का सहीह ज़ौक़[7] शर्ते अव्वल है, लेकिन मुख़्तलिफ़ अस्बाब से जिन की तशरीह मोहताजे तफ़्सील है, ये ज़ौक़ कमज़ोर पड़ता गया, यहाँ तक कि वो वक़्त आ गया जब मतालिब में बेशुमार उलझाव महज़ इसलिए पड़ गए कि अरबिय्यत का ज़ौक़े सलीम बाक़ी नहीं रहा और जिस ज़बान में क़ुरआन नाज़िल हुआ था उसके मुहावरात व मदलूलात से यक-क़लम बोद हो गया।

10- हर अहद का फ़िक्री असर तमाम उलूमो-फ़ुनून की तरह तफ़्सीर में भी काम करता रहा है। इसमें शक नहीं कि तारीख़े इस्लाम का ये पुर-फ़ख़्र वाक़िआ हमेशा यादगार रहेगा कि उलमाए हक़[8] ने वक़्त के सियासी असरात के सामने कभी हथियार नहीं डाले और कभी ये बात गवारा न की कि इस्लाम के अक़ाइद व मसाइल

1-प्रसंग। 2-परिप्रेक्ष्य। 3-लक्ष्य, केन्द्र बिन्दु। 4-सही समझ। 5-शब्द कोश। 6-साहित्य। 7-रुचि, लगाव। 8-सच्चे (इस्लामी) विद्वानों।

उन से असर-पज़ीर[1] हों। लेकिन वक़्त की तासीर सिर्फ़ सियासत ही के दरवाज़े से नहीं आती, उसके नफ़्सियाती[2] मोअस्सिरात के बेशुमार दरवाज़े हैं और जब खुल जाते हैं तो किसी के बंद किए बंद नहीं हो सकते। उनके इस्तीला[3] से अक़ाइद व आमाल[4] महफ़ूज़ रखे जा सकते थे और उलमा-ए-हक़ ने महफ़ूज़ रखे, लेकिन दिमाग़ महफ़ूज़ नहीं रखे जा सकते थे और महफ़ूज़ नहीं रहे। यहाँ ज़रूरत मिसालों की है, लेकिन इसकी मिसालें तफ़्सील तलब[5] हैं और इख़्तिसार का तक़ाज़ा इजाज़त नहीं देता।

11- चौथी सदी हिज्री के बाद उलूमे इस्लामिया की तारीख़ का मुज्तहिदाना[6] दौर खत्म हो गया और शवाज़ो-नवादिर[7] के अलावा आम शाहे-राह[8] तक़लीद[9] की शाहे-राह हो गई। इस दाए-अज़ाल[10] ने जिस्मे तफ़्सीर में भी पूरी तरह सिरायत की। हर शख़्स जो तफ़्सीर के लिए क़दम उठाता था, किसी पेश-रौ को अपने सामने रख लेता था और फिर आँखें बंद करके उसके पीछे-पीछे चलता रहता। अगर तीसरी सदी में किसी मुफ़स्सिर से कोई ग़लती हो गई है तो ज़रूरी है कि नवीं सदी की तफ़्सीरों तक वो बराबर नक़ल दर नक़ल होती चली आए। किसी ने इसकी ज़रूरत महसूस नहीं की कि चन्द लमहों के लिए तक़लीद से अलग हो कर तहक़ीक़[11] करे कि मामले की अस्लियत क्या है? रफ़्ता-रफ़्ता तफ़्सीर नवीसी की हिम्मतें इस क़द्र पस्त हो गयीं कि किसी मुतदाविल[12] तफ़्सीर पर हाशिया चढ़ा देने से आगे न बढ़ सकीं। बैज़ावी और जलालैन के

1-प्रभावित। 2-मनोवैज्ञानिक। 3-प्रभावों, वर्चस्व। 4-आस्था व कर्म। 5-विस्तार चाहती है। 6-अभिनवशील, मौलिक सोच का। 7-एकाध अपवाद। 8-मुख्य मार्ग, मुख्य धारा। 9-अनुकरण। 10-कुप्रभाव, बुराई। 11-शोध, 12-विस्तृत।

हाशिये देखो ! एक बने हुए मकान की लीप-पोत करने में किस तरह क़ुव्वते-तस्नीफ़[1] रायगाँ[2] गई है।

12- ज़माने की बद-ज़ौक़ी[3] ने भी हर कज-अंदेशी को सहारा दिया। चुनांचे हम देखते हैं कि क़ुरूने अख़ीरा में दर्सो-तदावुल के लिए वही तफ़्सीरें मक़बूल हुईं जो क़ुदमा[4] के महासिन[5] से यक-क़लम ख़ाली थीं। वक़्त का ये सू-ए-इन्तख़ाब[6] हर इल्मो-फ़न में जारी रहा है। जो ज़माना जुरजानी पर सक्काकी को और सक्काकी पर तफ़्ताज़ानी को तरजीह देता था, उसके दरबार से बैज़ावी व जलालैन ही को हुस्ने-क़बूल[7] की सनद मिल सकती थी।

13- मुतदाविल तफ़्सीरें उठा कर देखो! जिस मक़ाम की तफ़्सीर में मुतअद्दिद अक़्वाल[8] मौजूद होंगे, वहाँ अक्सर उसी क़ौल को तरजीह देंगे जो सबसे ज़्यादा कमज़ोर और बेमहल होगा, जो अक़्वाल नक़्ल करेंगे उनमें बेहतर क़ौल मौजूद होगा लेकिन उसे नज़र-अंदाज़ कर देंगे।

14- इश्कालो-मबाने का बड़ा दरवाज़ा तफ़्सीर-बिर्राय से खुल गया जिसके अन्देशे से सहाबा[9] और सलफ़ की रूहें लरज़ती रहती थीं।

तफ़्सीर-बिर्राय[10] का मतलब समझने में लोगों को लग़्ज़िशें हुई हैं। तफ़्सीर-बिर्राय की मुमानअत[11] से मक़सूद ये न था कि क़ुरआन के मतालिब में अक़्लो-बसीरत[12] से काम न लिया जाए, क्योंकि अगर ये मतलब हो तो फिर क़ुरआन का दर्सो-मुतालआ ही

1-लेखकीय शक्ति। 2-अकारथ। 3-कुरुचि। 4-प्राचीन लोगों। 5-सौंदर्य। 6-चयन का रुझान। 7-स्वीकृति। 8-अनगिनत कथन। 9-पैग़म्बरों के साथियों। 10-अपनी राय के साथ व्याख्या करना। 11-मनाही, निषेध। 12-बुद्धि-विवेक।

बे-सूद हो जाए। हालाँ कि ख़ुद क़ुरआन का ये हाल है कि अव्वल से लेकर आख़िर तक तअक़्क़ुल व तफ़क्कुर[1] की दावत देता है और जगह-जगह मुतालबा करता है कि :

"أفلا يتدبرون القرآن أم على قلوب أقفالها" (27:47)

दरअसल तफ़्सीर-बिर्राय में "राय" लुग़वी[2] मअ़ना में नहीं है, बल्कि राय मुस्तलिहा शारेअ़ है और इससे मक़सूद ऐसी तफ़्सीर है जो इस लिए न की जाए कि ख़ुद क़ुरआन क्या कहता है, बल्कि इसलिए की जाए कि हमारी कोई ठहराई हुई राय क्या चाहती है और किस तरह क़ुरआन का खींच-तान कर उसके मुताबिक़ कर दिया जा सकता है।

मसलन जब बाबे अक़ाइद[3] में रद्दो-कद शुरू हुई तो मुख़्तलिफ़ मज़ाहिबे कलामिया[4] पैदा हो गए। हर मज़हब के मुनाज़िर[5] ने चाहा अपने मज़हब पर नुसूसे क़ुरआनिया को ढाले, वो इसकी जुस्तुजू में न थे कि क़ुरआन क्या कहता है, बल्कि सारी काविश इसकी थी कि किसी तरह उसे अपने मज़हब का मुअय्यिद[6] दिखला दें। इस तरह की तफ़्सीर, तफ़्सीर-बिर्राय थी।

या मसलन मज़ाहिबे फ़िक़्हिय्या[7] के मुक़ल्लिदों[8] में जब तहज़्ज़ुब[9] व तअस्सुब के जज़्बात तेज़ हुए तो अपने-अपने मसाइल की पेच में आयाते क़ुरआनिया को खींचने-तानने लगे, इसकी कुछ फ़िक्र न थी कि लुग़ते अरबी के साफ़-साफ़ मआ़नी, उसलूबे-बयान का क़ुदरती मुक़्तज़ा, अक़्लो-बसीरत का वाज़ेह फ़ैसला क्या कहता है। तमाम-तर कोशिश ये थी कि किसी न किसी तरह क़ुरआन को अपने इमाम के मज़हब के मुताबिक़ कर दिखाए। ये तरीक़े तफ़्सीर,

---

1-सोचने-समझने, चिंतन-मनन। 2-शाब्दिक। 3-आस्थाओं के क्षेत्र में। 4-कुरआन की व्याख्या अपने अनुकूल करने वाले पंथ। 5-पक्षकार, वर्ग विशेष के पक्ष में शास्त्रार्थ करने वाला। 6-समर्थक। 7-धर्म विधिशास्त्रीय वर्गों। 8-अनुगामियों। 9-संस्कारों।

तफ़्सीर-बिर्राय है।

या मसलन सूफ़िया का एक गिरोह असरारो-बुतून[1] की जुस्तुजू में दूर तक निकल गया और फिर अपने मौज़ूआ अक़ाइद व मबाहिस पर क़ुरआन को ढालने लगा। क़ुरआन का कोई हुक्म, कोई अक़ीदा, कोई बयान तहरीफ़े मअ़नवी[2] से न बच सका। ये तफ़्सीर, तफ़्सीर-बिर्राय थी।

या मसलन क़ुरआन के तरीक़े इस्तिदलाल को मन्तिक़ी जामा पहनाना या जहाँ कहीं आसमान और कवाकिब व नुजूम[3] के अल्फ़ाज़ आ गए हैं, यूनानी इल्मे हयअत के मसाइल चिपकाने लगना यक़ीनन तफ़्सीर-बिर्राय है।

या मसलन आजकल हिन्दुस्तान और मिस्र के बाज़ मुद्दइयाने इज्तिहादो-नज़र[4] ने ये तरीक़ा इख़्तियार किया है कि ज़मान-ए-हाल के उसूले इल्मो-तरक़्क़ी, क़ुरआन से साबित किए जाएँ या जदीद तहक़ीक़ाते इल्मिय्या[5] का उससे इस्तिंबात[6] किया जाए। गोया क़ुरआन सिर्फ़ इसी लिए नाज़िल हुआ है कि जो बात कॉपरनिकस (Copernicus) और न्यूटन (Newton) ने या डार्विन (Darwin) और वेलेस (Wallace) ने बग़ैर किसी इल्हामी[7] किताब की फ़लसफ़ा अन्देशियों के दर्याफ़्त कर लीं, उसे चन्द सदी पहले मोअ़म्मों[8] की तरह दुनिया के कान में फूंक दें और फिर वो भी सदियों तक दुनिया की समझ में न आएँ। यहाँ तक कि मौजूदा ज़माने के मुफ़स्सिर पैदा हों और तेरह सौ बरस पेश्तर के मोअ़म्मे हल फ़रमाएँ। यक़ीनन ये तरीक़े तफ़्सीर भी ठीक-ठीक तफ़्सीर-बिर्राय है।

1-भेदों की तलाश। 2-अर्थ में हेरफेर। 3-ज्योतिष। 4-समकालीन दृष्टि के दावेदार (विद्वानों) 5-बौद्धिक शोधों। 6-जोड़ना। 7-ईश्वरीय। 8-पहेलियों।

जुस्तुजू-ए-हक़ीक़त

ये चन्द इशारात हैं कि इख़्तिसार के तक़ाज़े और महल की तंग-नायी पर भी हवाल-ए-क़लम हुए, वर्ना शर्ह इस मामले की बहुत तूलानी है।

तू ख़ुद हदीसे मुफ़स्सल ब-ख़्वाँ अज़ीं मुज्मल

कम अज़ कम इन मुज्मल इशारात से इस बात का अन्दाज़ा कर लिया जा सकता है कि राह की मुश्किलातो-मवाने का क्या हाल है और किस तरह क़दम-क़दम पर पर्दों को हटाना और चप्पे-चप्पे पर रुकावटों से दोचार होना है। फिर रुकावटें किसी एक गोशे ही में नहीं हैं और मुश्किलात किसी एक दरवाज़े ही से नहीं आई हैं। बयक वक़्त हर वादी की पैमाइश और हर गोशे में नज़रो-काविश होनी चाहिए, तब कहीं जा कर हक़ीक़ते गुम-गश्ता[1] का सुराग़ मिल सकता है। जहाँ (4) तक मेरे इम्कान में था मैंने कोशिश की है कि इन मरहलों से उहदा-बरा रहूँ। मैं इस कोशिश में कहाँ तक कामयाब हुआ हूँ, इसका फ़ैसला मैं ख़ुद नहीं कर सकता, अलबत्ता ये कहने की जुरअत कर सकता हूँ कि क़ुरआन के मुतालओ-तदब्बुर की एक नई राह ज़रूर खुल गई है और अहले नज़र इस राह को उन तमाम राहों से मुख़्तलिफ़ पाएँगे जिन में आज तक क़दम-फ़रसाई करते रहे थे।

●●

1-खोई हुई।

तर्जुमानुल-क़ुरआन का मक़सद व नौइयत

क़ुरआन के दर्सो-मुतालआ की तीन मुख़्तलिफ़ ज़रूरतें हैं और मैंने उन्हें तीन किताबों में मुन्क़सिम[1] कर दिया है : मुक़द्दम-ए-तफ़्सीर, तफ़्सीरुल बयान और तर्जुमानुल-क़ुरआन। मुक़द्दम-ए-तफ़्सीर क़ुरआन के मक़ासिद व मतालिब पर उसूली मबाहिस का मज्मूआ है और कोशिश की गई है कि मतालिबे क़ुरआनी के जवामे व कुल्लियात[2] मुदव्वन हो जाएँ। तफ़्सीरुल बयान नज़रो-मुतालआ के लिए है और तर्जुमानुल-क़ुरआन, क़ुरआन की आलमगीर तालीमो-इशाअत के लिए।

आख़िरी किताब सबसे पहले शाय की जाती है, क्योंकि अपने मक़सद व नौइयत में सबसे ज़्यादा अहम और ज़रूरी है और फ़िल-हक़ीक़त तफ़्सीर व मुक़द्दमे के लिए भी अस्ली बुनियाद यही है।

इसकी तरतीब से मक़सूद ये है कि मतालिबे क़ुरआनी के फ़हमो-तदब्बुर के लिए एक ऐसी किताब तैयार हो जाए जिस में कुतुबे-तफ़्सीर[3] की सी तफ़्सीलात तो न हों, लेकिन वो सब कुछ हो जो क़ुरआन को ठीक-ठीक समझ लेने के लिए ज़रूरी है। इस ग़रज़ से जो उसलूब इख़्तियार किया गया है, उम्मीद है कि अहले नज़र उसकी मौज़ूनियत ब-यक नज़र महसूस कर लेंगे। पहले कोशिश की है कि क़ुरआन का तर्जुमा उर्दू में इस तरह मुरत्तब हो जाए कि अपनी वज़ाहत में किसी दूसरी चीज़ का मोहताज न रहे, अपनी तशरीहात ख़ुद अपने साथ रखता हो। फिर जा-बजा नोटों का

1-विभाजित। 2-समग्र तत्व। 3-तफ़्सीर (व्याख्या) वाली किताबें।

इज़ाफ़ा किया है जो सूरत के मतालिब की रफ़्तार के साथ-साथ बराबर चले जाते हैं और जहाँ कहीं ज़रूरत देखते हैं मज़ीद रहनुमाई के लिए नमूदार हो जाते हैं, ये क़दम-क़दम पर मतालिब की तफ़्सीर करते हैं, इज्माल[1] को तफ़्सील का रंग देते हैं, मक़ासिद व वुजूह से पर्दे उठाते हैं, दलाइल व शवाहिद को रौशनी में लाते हैं, अह्काम व नवाही को मुरत्तब व मुंज़बित करते हैं और ज़्यादा से ज़्यादा मुख़्तसर लफ़्ज़ों में ज़्यादा से ज़्यादा मआनी व मआरिफ़[2] का सरमाया फ़राहम करते जाते हैं। ये गोया क़ारि-ए-क़ुरआन के लिए तफ़क्कुर व तदब्बुर की रौशनी है जो ब-हुक्म :

"يسعى نورهم بين أيديهم وبأيمانهم" (12:57) इसके साथ-साथ चलती रहती है और कहीं भी इसका साथ नहीं छोड़ती (5)।

ये हक़ीक़त पेशे-नज़र रहे कि तर्जुमानुल-क़ुरआन के नोट, तशरीहो-वज़ाहत का मज़ीद[3] दर्जा हैं, वर्ना क़ुरआन का साफ़-साफ़ मतलब समझ लेने के लिए मत्न का तर्जुमा पूरी तरह किफ़ायत करता है। मैंने तजरिबे के लिए सूरः बक़रह का मुजर्रद[4] तर्जुमा एक पन्दरह बरस के लड़के को दिया जो उर्दू की आसान किताबें रवानी के साथ पढ़ लेता था, फिर हर मौक़े पर सवालात करके जांचा, जहाँ तक मतलब समझ लेने का तअ़ल्लुक़ है, वो एक मक़ाम पर भी न अटका और तमाम सवालों का जवाब देता गया। फिर एक दूसरे शख़्स पर तजरिबा किया जिसने बड़ी उम्र में लिखना पढ़ना सीखा है और अभी उसकी इस्तेदाद[5] इससे ज़्यादा नहीं कि उर्दू के रसाइल ब-आसानी पढ़ लेता था, ये तीन जगह तीन फ़ारसी लफ़्ज़ों पर अटका, लेकिन मतलब समझने में उसे भी कोई रुकावट पेश न

1-सूत्र, संक्षिप्त, अमूर्त। 2-बोध। 3-अतिरिक्त। 4-एकल, केवल। 5-सामर्थ्य।

आई। मैंने वो अल्फ़ाज़ बदल कर निस्बतन[1] ज़्यादा सहल अल्फ़ाज़ रख दिये।

नोटों की तरतीब का मामला नफ़्से तर्जुमे से कम मुश्किल न था। ये ज़ाहिर है कि इनके लिए एक महदूद मिक्दार[2] से ज़्यादा जगह निकल नहीं सकती थी और नोट, नोट न रहते अगर एक ख़ास मिक्दार से कम्मियत या तादाद में ज़्यादा हो जाते। लेकिन साथ ही ज़रूरी था कि कोई अहम मक़ाम तिश्ना न रह जाए और मक़ासिद व मतालिबे क़ुरआनी की तमाम मुहिम्मात वाज़ेह हो जाएँ, पस पूरी एहतियात के साथ ऐसा तरीक़े बयान इख़्तियार किया गया है कि लफ़्ज़ कम से कम हैं, लेकिन इशारात ज़्यादा से ज़्यादा समेट लिए गए हैं। जिस चीज़ की लोग कमी पाएँगे वो सिर्फ़ मतालिब का फैलाव है, नफ़्से मतालिब में कोई कमी महसूस न होगी। उनके हर लफ़्ज़ और हर जुम्ले पर जिस क़द्र ग़ौर किया जाएगा, मतालिब व मबाहिस के नए-नए दफ़्तर खुलते जाएँगे।

मसलन सूर: बक़रा की आयत इद्दते तलाक़ पर एक नोट है[3]। ''तलाक़ की इद्दत का एक मुनासिब ज़माना मुक़र्रर करके निकाह की अहमिय्यत, नसब के तहफ़्फ़ुज़ और औरत के निकाहे-सानी की सहूलतों का इन्तिज़ाम कर दिया गया''। ये निहायत मुख़्तसर जुम्ला है, लेकिन इसी में इद्दते तलाक़ के तअय्युन[4] की वो तीनों मसलहतें[5] वाज़ेह कर दी गई हैं जिन में से हर मसलहत की बहस तफ़्सीर के एक पूरे सफ़्हे में ब-मुश्किल आती। निकाह की अहमिय्यत चाहती थी कि ये रिश्ता ऐसा बन कर न रह जाए कि इधर ख़त्म हुआ और उधर अज़ सरे-नौ शुरू हो गया। हर दो रिश्तों के दरमियान कुछ न

1-अपेक्षाकृत। 2-सीमित मात्रा। 3-यह नोट तफ़्सीर के उस भाग में लिखा है जिस में सूर: नूर की तफ़्सीर की गई है। 4-निर्धारण। 5-निहित कारक।

कुछ फ़स्ल और इन्तिज़ार की हालत ज़रूर होनी चाहिए। नसब[1] का तहफ़्फ़ुज़[2] भी चाहता था कि इतना वक़्फ़ा[3] ज़रूर गुज़र जाए कि हमल का शुब्हा बाक़ी न रहे। लेकिन साथ ही इसकी रिआयत भी ज़रूरी थी कि औरत के निकाहे-सानी[4] के हुकूक़ में बेजा दस्त-अन्दाज़ी[5] न हो। पस क़ुरआन ने एक ऐसी मुद्दत ठहरा दी जिस से एक तरफ़ तो पहली और दूसरी मसलहत पूरी हो गई, दूसरी तरफ़ तीसरी मसलहत में भी ख़लल नहीं पड़ा, क्योंकि इब्तिदाई दो मसलहतों के लिए कम से कम मुद्दत है जो क़रार दी गई है। ये तमाम तश्रीहात नोट में नहीं आ सकती थीं और न ही आई हैं, लेकिन अस्ल मतलब पूरा-पूरा आ गया है। ज़रूरत सिर्फ़ इसकी है कि मुतालआ के वक़्त ग़ौरो-फ़िक्र का सरे-रिश्ता हाथ मे न छूटे।(6)

तफ़्सीर सूर: फ़ातिहा

पहली जिल्द की इब्तिदा में सूर: फ़ातिहा की तफ़्सीर का मुख़्तसर[6] भी शामिल कर गया है, क्योंकि सूर: फ़ातिहा की तफ़्सीर तर्जुम-ए-क़ुरआन के लिए उसका क़ुदरती मुक़द्दमा थी और ज़रूरी था कि कम अज़ कम ये मुक़द्दमा तिलावते तर्जुमे से पहले ज़ेहन-नशीन[7] हो जाए।

अलबत्ता ये तफ़्सीर सूर: फ़ातिहा का खुलासा है। इसमें फ़ैलाव समेट दिये हैं, तफ़्सीलात को जा-बज़ा मुख़्तसर कर दिया है। तम्हीद व तौतिये की क़िस्म की तमाम चीज़ें निकाल दी हैं, लेकिन

1-वंश। 2-सुरक्षा। 3-अंतराल। 4-दूसरा निकाह। 5-हस्तक्षेप। 6-निचोड़। 7-ध्यान में उतर जाए।

नफ़्से मतालिब में बजुज़ एक मक़ाम के कोई कमी नहीं की है। ये मक़ाम सिफ़ाते-इलाही[1] के तसव्वुर के मबाहिस का है। इसमें एक बड़ा हिस्सा सिफ़ाते-इलाही के उन मबाहिस का था जिन का तअल्लुक़ ज़्यादा-तर फ़लसफ़ा व कलाम के क़दीम मज़ाहिब व मबाहिस से है। नीज़ फ़र्दन-फ़र्दन[2] उन तमाम सिफ़ात पर नज़र डाली गई थी जो क़ुरआने हकीम में आए हैं। चूंकि यह हिस्सा आम मुतलआ और दिलचस्पी का न था, इसलिए तर्जुमानुल-क़ुरआन में इस की मौजूदगी ज़रूरत से ज़्यादा न महसूस हुई और उसको अलग कर दिया गया। (7)।

ख़ातिमा

आख़िर में चन्द अल्फ़ाज़ इस पूरे सिलसिल-ए-तर्जुमा व तफ़्सीर की निस्बत कह देना ज़रूरी हैं। कामिल[3] सत्ताइस बरस से क़ुरआन मेरे शबो-रोज़[4] के फ़िक्रो-नज़र का मौज़ू रहा है। इस की एक-एक सूरत, एक-एक मक़ाम, एक-एक आयत, एक-एक लफ़्ज़ पर मैंने वादियाँ क़ता की हैं और मरहलों पर मरहले तय किए हैं। तफ़ासीरे कुतुब का जितना मत्बूआ[5] व ग़ैर मत्बूआ ज़ख़ीरा मौजूद है, मैं कह सकता हूँ कि उसका बड़ा हिस्सा मेरी नज़र से गुज़र चुका है और उलूमे क़ुरआन के मबाहिस व मक़ालात[6] का कोई गोशा नहीं जिसकी तरफ़ से हत्तल-वसा[7] ज़ेहन ने तग़ाफ़ुल[8] और जुस्तुजू[9] ने तसाहुल[10] किया हो। इल्मो-नज़र की राहों में आजकल क़दीमो-जदीद[11] की तक़सीमें की जाती हैं, लेकिन मेरे लिए ये तक़सीमें भी

1-ईश्वर के गुण-विशेषताएं। 2-एक-एक करके। 3-पूरे। 4-रात-दिन। 5-प्रकाशित। 6-विषय और वार्ताओं। 7-यथासंभव। 8-लापरवाही। 9-तलाश। 10-सुस्ती। 11-प्राचीन-नूतन।

कोई तक़्सीम नहीं। जो कुछ क़दीम है वो मुझे वरसे में मिला और जो कुछ जदीद है उसके लिए अपनी राहें आप निकाल लीं। मेरे लिए वक़्त की जदीद राहें भी वैसी ही देखी-भाली हैं जिस तरह क़दीम राहों में गाम-फर्साई करता रहा हूँ :

रहा हूँ रिन्द भी मैं और पार्सा भी मैं
मेरी नज़र में हैं रिन्दानो-पार्सा इक एक (8)

ख़ानदान, तालीम और सोसाइटी के असरात ने जो कुछ मेरे हवाले किया था मैंने अव्वल रोज़ ही उस पर क़नाअ़त करने से इनकार कर दिया था और तक़्लीद की बन्दिशें किसी गोशे में भी रोक न हो सकीं और तहक़ीक़ की तिश्नगी ने किसी मैदान में भी साथ न छोड़ा :

हेच गह ज़ौक़े तलब अज़ जुस्तुजू बाज़म न दाश्त
दाना मी चीदम दराँ रोज़ी कि ख़िरमन दाश्तम

मेरे दिल का कोई यक़ीन ऐसा नहीं है जिस में शक के सारे कांटे न छुभ चुके हों और मेरी रूह का कोई एतिक़ाद ऐसा नहीं है जो इनकार की सारी आज़माइशों में से न गुज़र चुका हो। मैंने ज़हर के घूंट भी हर जाम से पिये हैं और तिर्याक़ के नुस्ख़े भी हर दारुश्शिफ़ा[1] के आज़माए हैं। मैं जब प्यासा था तो मेरी लबे-तिश्नगियाँ[2] दूसरों की तरह न थीं और जब सैराब[3] हुआ तो मेरी सैराबी का सरे-चश्मा भी शाहराहे-आ़म पर न था।

राही कि ख़िज़्र दाश्त ज़-सर चश्मा दूर बूद
लबे तिश्नगी ज़-राहे दिगर बुर्दह ऐम मा

1-दवाख़ाना। 2-तृष्णा। 3-तृप्त।

इस तमाम अ़र्से की जुस्तुजू व तलब के बाद क़ुरआन को जैसा कुछ और जितना कुछ समझ सका हूँ, मैं ने इस किताब के सफ़्हों पर फ़ैला दिया है (9) :

सुबक ज़-जाए नगीरी कि बस गराँ घरस्त
मताए मन कि नसीबश मबाद अर्ज़ानी (10)

مَا كَانَ حَدِيثًا يُّفْتَرٰى وَلٰكِنْ تَصْدِيقَ الَّذِى بَيْنَ يَدَيْهِ وَتَفْصِيلَ كُلِّ شَىْءٍ وَّهُدًى وَّرَحْمَةً لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ ۝ (12 : 111)

अबुल कलाम

16/नवम्बर सन् 1930 ई०

डिस्ट्रिक्ट जेल, मेरठ

दीबाचा तब्अ़े-सानी

आज़्मूदेम बज़ोर मी इम्साल न बूद
क़दही दाश्त रवम अज़ बाद-ए-पारीना मा

इन्सान के नक़्स और दर-मांदगी की सबसे बड़ी दलील ये है कि उसके काम कभी जाम-ए-तक्मील से आरास्ता नहीं हो सकते। वो आज एक काम करके उठता है और समझता है कि उसे मुकम्मल कर चुका, मगर फिर दूसरे दिन देखता है तो ख़ुद उसकी निगाह की जांच बदल जाती है और मालूम होता है कि तरह-तरह की ख़ामियाँ रह गई थीं। हर अहले क़लम जो अपने पिछले आसार पर नज़र डालेगा इस क़ौल[1] की सदाक़त[2] मालूम कर लेगा।

मैंने तर्जुमानुल-क़ुरआन जिल्द अव्वल पर अब कई साल के बाद नज़र डाली तो यही मामला पेश आया। नतीजा ये निकला कि अज़ सरे-नौ पूरी तफ़्सीर और तर्जुमे की नज़रे सानी करनी पड़ी और मामले ने एक दूसरा ही आबो-रंग पैदा कर दिया।

इस सिलसिले में हस्बेज़ैल तबदीलियाँ ख़ुसूसियत के साथ क़ाबिले-ज़िक्र[3] हैं :

1 - तफ़्सीर सूर: फ़ातिहा में जा-बजा नये मतालिब का इज़ाफ़ा किया गया जो तब्अ़े-अव्वल[4] में नज़र-अंदाज़ कर दिये गए थे। इन इज़ाफ़ों से अब तफ़्सीर की मिक़्दार तक़रीबन डेवढ़ी हो गई है।

बड़ा इज़ाफ़ा क़ुरआन के ''तसव्वुरे इलाही'' के मब्हस में किया

1-कथन। 2-सच्चाई। 3-उल्लेखनीय। 4-पहला संस्करण।

गया है।

सिफ़ाते इलाही का मसअला एक निहायत दक़ीक़ और पेचीदा मसअला है, इसके बहसो-नज़र की सरहद एक तरफ़ मा बादत्तबइय्यात[1] (Metaphysics) से जा मिली है, दूसरी तरफ़ मज़हब से, और दोनों ने यक्साँ तौर पर उसे अपने हलक़-ए-फ़िक्र[2] का मौज़ू तसव्वुर किया है। यही वजह है कि इल्मो-नज़र के हर दौर में उलम-ए-मज़ाहिब[3] से ज़्यादा फ़लसफ़ियों की काविशों ने इसमें हिस्सा लिया है और हिन्दुस्तान, यूनान, असकंदरया और क़ुरूने वुस्ता[4] के फ़लसफ़ियाना मबाहिस का एक बड़ा ज़ख़ीरा फ़राहम हो गया। मुसलमानों में जब इल्मे-तौहीद[5] व कलाम की बहसों ने सर उठाया तो इसी मस्अले में सबसे ज़्यादा रद्दो-कद हुई और मुख़्तलिफ़ मज़ाहिब पैदा हो गए। अस्हाबे-हदीस[6] और अशाइरा[7] का सबसे बड़ा इख़्तिलाफ़ इसी दरवाज़े से आया था।

ये मसअला भी मिन्जुम्ला[8] उन मसअलों के है जो तालिब इल्मी के ज़माने में मेरे लिए सख़्त शुकूको-ख़लजान[9] का बाइस हुए थे और मुद्दतों हैरान व सर-गश्ता[10] रहा था। बिल-आख़िर जब हक़ीक़ते हाल मुन्कशिफ़ हुई तो मालूम हुआ कि मुतकल्लिमीन की रहनुमाई इस राह में कुछ सूदमन्द नहीं हो सकती, बल्कि मन्ज़िले मक़सूद से और ज़्यादा दूर कर देती है। यक़ीनो-तमानीनत की अगर राह है तो वही है जो ज़वाहिरे क़ुरआन ने इख़्तियार की है और जिस से मुत्तबिईन सलफ़[11] मुन्हरिफ़[12] होना पसंद नहीं करते थे।

1-अभौतिकशास्त्र। 2-चिंतन-क्षेत्र। 3-धर्म-गुरू, धर्मशास्त्रियों। 4-मध्य काल। 5-एकेश्वरवाद। 6-हदीस जानने वालों। 7-धर्म विधि विद्वानों। 8-समेत। 9-संदेह-संशय। 10-परेशान, संत्रस्त। 11-पहले के। 12-हटना।

चंदाँकि दस्तो-पा ज़दम आशुफ़्ता-तर शुदम
साकिन शुदम मियान-ए-दरिया कनार शुद

इस जुस्तुजू व तलब ने बिल-आख़िर जिन नतीजों तक पहुँचाया था वो बिल-इख़्तिसार[1] इस मक़ाम पर वाज़ेह कर दिये गए हैं।

फ़लसफ़ा व कलाम में ये मबाहिस निहायत पेचीदा और फ़न्नी मुस्तलिहात[2] की गिरहों में उलझे हुए हैं। मैं ने कोशिश की है कि इन गिरहों को खोल दूँ। मैं समझता हूँ कि अब ये मब्हस इस दर्जा वाज़ेह हो गया है कि जो हज़रात इस्लामी उलूम के फ़न्नी और मुस्तलिहाती तरीक़ों से आश्ना नहीं हैं वो भी इस में दिलचस्पी ले सकेंगे। जहाँ कहीं फ़लसफ़ा व कलाम की अ़रबी मुस्तलिहात भी दे दी गई हैं, ताकि मौजूदा ज़माने के फ़लसफ़ियाना मबाहिस से ज़ौक़ रखने वालों को फ़हमे मतालिब[3] में दुश्वारी पेश न आए।

2 - "तसव्वुरे इलाही" के मब्हस में मज़ाहिबे आ़लम के एतिक़ादी तसव्वुरों का भी ज़िक्र आ गया था। लेकिन तब्ए़-अव्वल में सिर्फ़ इशारात से काम लिया गया, क्योंकि दायर-ए-बहस को ज़्यादा फैलाना मन्ज़ूर न था। लेकिन अब इस मक़ाम पर दोबारा नज़र डाली गई तो महसूस हुआ कि मब्हस तिश्ना[4] रह गया है और ज़रूरी है कि रिश्त-ए-बयान को एक ख़ास हद तक बढ़ने दिया जाए। चुनांचे ये हिस्सा अज़ सरे-नौ लिखा गया और जिस हद तक महल का मुक़्तज़ा इजाज़त देता था शर्हो-तफ़्सील की बाग ढीली छोड़ दी गई।

1-संक्षेप में। 2-शब्दावली। 3-मतलब समझने में। 4-अतृप्त।

3 - तब्अ़े-अव्वल में सिर्फ़ अब्वाब की तक़्सीम काफ़ी समझी गई थी, अब जा-बजा हाशिये के उ़न्वान भी बढ़ा दिये गए हैं। इस इज़ाफ़े से तमाम मतालिब इस तरह मुन्ज़बित हो गए कि ब-यक नज़र उनका खुलासा मालूम कर लिया जा सकता है।

4 - पूरे तर्जुमे पर नज़रे-सानी की गई और ये अस्ल पेशे नज़र रही कि ज़्यादा से ज़्यादा वज़ाहत के साथ सरे-रिश्त-ए-ईजाज़ भी हाथ से न छूटे। नीज़ जहाँ तक मत्न[1] का लफ़्ज़ी इत्तिबा किया जा सकता है उसे क़ायम रखा जाए। जिन हज़रात की नज़र से पिछली तबाअ़त का तर्जुमा गुज़र चुका है वो अब इसका मुतालआ़ करेंगे तो हर दूसरी तीसरी सतर में कोई न कोई तब्दीली उन्हें ज़रूर महसूस होगी।

5 - तर्जुमे के तश्रीही नोटों में भी जा-बजा इज़ाफ़े किए गए हैं।

ब-हैसियत मज्मूई ये तबाअ़त पिछली तबाअ़त से अपनी खुसूसियात में इस दर्जा मुख़्तलिफ़ हो गई है कि मैं ख़याल करता हूँ जिन हज़रात की नज़र से पिछली तबाअ़त गुज़र चुकी है वो भी इससे बेनियाज़[2] नहीं हो सकते। वो नक़्शे अव्वल था ये नक़्शे सानी[3] है।

अबुल कलाम

क़ैदख़ाना, क़िला अहमद नगर

-7/ फ़रवरी, सन् 1940 ई०

1-मूल पाठ। 2-बेपरवाह, अनभिज्ञ। 3-दूसरा।

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मुक़द्दमा

(फ़ातिहतुल-किताब) (11)

मुक़द्दमे के पांचवें बाब में क़ुरआने हकीम के तर्ज़े-नुज़ूल और तरतीबो-इन्ज़िबात की बहस तुम पढ़ चुके हो और ये हक़ीक़त तुम पर वाज़ेह हो चुकी है कि क़ुरआने हकीम की एक तरतीब वक़्ती थी और एक दाइमी[1]। वक़्ती तरतीब वो थी जो उसके जस्ता-जस्ता हस्बे ज़रूरत नुज़ूल में मलहूज़ रही और दाइमी वो थी जिसके मुताबिक़ वो ब-शक्ले ''अल-किताब'' मुरत्तब व मुदव्वन होता रहा। यही अल-किताब है जो इस वक़्त हमारे पास मौजूद है और ठीक-ठीक वैसा ही मुरत्तब व मुनज़्ज़म है जैसा कि वह्ये इलाही ने उसको मुरत्तब किया था। लेकिन साथ ही उसकी तरतीबे नुज़ूल की तारीख़ भी ज़ाय नहीं हुई। उसको भी हम मालूम कर सकते हैं और उसी की हिफ़ाज़त के लिए सहाबा व ताबईने किराम ने अपनी रिवायात व तालीम में ''इल्मे तारीख़े नुज़ूल व शाने नुज़ूल'' को महफ़ूज़ रखा है।

इन दोनों तरतीबों के मक़सदों में इख़्तिलाफ़ था। पहली तरतीब इस लिए थी ताकि एक महदूद[2] व मख़्सूस जमाअत को तालीम दे कर तमाम दुनिया की तालीमो-तरबियत के लिए तैयार

1-शाश्वत। 2-सीमित।

किया जाए। पस जैसी उनकी हालत थी और जिस तरह दर्जा ब-दर्जा उनकी इस्तेदाद[1] तरक़्क़ी करती जाती थी, उसी तरह यके बाद दीगरे उनको सबक़ भी दिये जाते थे। लेकिन दूसरी तरतीब का मक़सद किसी महदूद जमाअ़त और मख़्सूस वक़्त से तअ़ल्लुक़ नहीं रखता था, बल्कि वो हमेशा के लिए तमाम नौअ़े इन्सानी की तालीमो-हिदायत के लिए एक किताबे मुबीन[2] की शक्ल इख़्तियार करना चाहती थी, इसलिए ज़रूरी था कि पहली तरतीब से वो मुख़्तलिफ़ हो और तलबा की एक ख़ास जमाअ़त के लिए दर्से-उलूम की जो तरतीब मदरसे के अन्दर इख़्तियार की गई है वो एक मुस्तक़िल उलूम की तरतीबे इल्मी में आ कर बिल्कुल बदल जाए।

चुनांचे हम देखते हैं कि क़ुरआने हकीम की किताबी तरतीब, तरतीबे दर्स यानी तरतीबे नुज़ूल से मुख़्तलिफ़ है और अक्सर वो सूरतें पहले नज़र आती हैं जो बाद में नाज़िल हुईं। आख़िरी पारों की अक्सर सूरतें मक्की हैं, यानी आग़ाज़े अहद[3] में नाज़िल हुई हैं, लेकिन अब उन्हीं सूरतों पर किताबे इलाही ख़त्म होती है। सूर: बक़रह हिज्रत[4] के बाद नाज़िल हुई, लेकिन अब सूर: फ़ातिहा के बाद इसी से "अल-किताब" शुरू हुई है।

लेकिन इस एतिबार से सूर: फ़ातिहा एक अ़जीब सूरत है जो हर तरतीब में पहली है और उसकी अव्वलिय्यत हर जगह यक्साँ तौर पर मुम्ताज़ नज़र आती है। वो पहला सबक़ है जो दर्स-गाहे इलाही में "अल-मुअ़्मिनूनल अव्वलून[5]" को दिया गया और पहला

1-क्षमता। 2-खुली किताब। 3-इस्लामी व्यवस्था (शासन) के शुरू में। 4-पैग़म्बर और उनके साथियों का मक्का से मदीना कूच कर जाना। 5-पहले-पहले ईमान लाने वालों।

बयान है जो हमेशा के लिए "अल-किताब" में भी पहले रखा गया, यानी नुज़ूल के एतिबार से भी वही पहली सूरत है जिस को सहीफ़-ए-इलाही का सबसे पहला सफ़्हा मिला। वह्ये इलाही के मस्तूर व महजूब चेहरे ने जब सर-ज़मीने फ़ारान में अपना नक़ाब उलटा तो उसके जमाले हक़ीक़त का अव्वलीन नज़्ज़ारा इसी सूर: फ़ातिहा में था और फिर यही सूरत हमेशा के लिए पहली सूरत क़रार पाई कि कुरए-अर्ज़ी[1] पर नौए-इन्सानी जब कभी जुस्तुजूए हक़ीक़त में बेक़रार होगी तो सबसे पहले यही जल्व-ए-हक़ उसके सामने आएगा।

सिर्फ़ तरतीब दर्सो-नुज़ूल और तरतीबे किताब ही पर मौक़ूफ़ नहीं, आगे चलकर तुम को मालूम होगा कि काइनाते तालीम[2] व सआदते इन्सानी[3] में जो कुछ है उसमें सबसे पहली हक़ीक़त यही सूरत और इसी सूरत की सात आयतें हैं। अगर वो एक सफ़र है तो उसकी पहली मन्ज़िल यही है, अगर वो एक जमाल[4] है तो उसका पहला नज़्ज़ारा यही है, अगर वो एक नग़म-ए-हक़ीक़त[5] है तो उसका पहला तराना इसी से उठता है, अगर वो एक वक़्त है तो उसका पहला दिन इसी से शुरू होता है, अगर वो एक दरख़्त है तो उसका अव्वलीन तुख़्म[6] इसी में है और अगर वो एक दायर-ए-सआदत[7] है तो उसका नुक़्ता इसके सिवा और कोई नहीं। ग़रज़ कि नौए-इन्सानी[8] की सआदत और काइनाते-अर्ज़ी[9] की इर्शादो-हिदायत[10] में जो कुछ भी है उसमें जिस तरह और जिस शक्ल में देखोगे, इसी सूरत की नुमूद हर लिहाज़ से पहली नज़र आएगी।

1-पृथ्वी। 2-शिक्षा-जगत। 3-मानवीय सदाशयता। 4-सौंदर्य। 5-सत्य-गीत। 6-बीज। 7-सत्य का दायरा। 8-मानव जाति। 9-पार्थिव जगत। 10-उपदेश।

यही वजह है कि मोमिन[1] की हयाते ईमानी[2] का पहला दिन यही है। उसके साज़े फ़ित्रत का पहला नग़मा इसीके अन्दर से उठता है, उसके दायर-ए-इल्मो-अमल का नुक़्त-ए-सआदत इसी की सात आयतें हैं। वो जब सफ़रे हक़ीक़त शुरू करता है तो उसका पहला क़दम यही होता है, वो चलता है तो उसको पहली मन्ज़िल यही पेश आती है, बोलता है तो पहली आवाज़ यही निकलती है, मांगता है तो पहली तलब इसी में होती है, और इश्क़े-हक़ में रोता है तो चश्मे हक़ीक़त से पहला आंसू यही टपकता है। यानी उसकी हयाते सआदत[3] में जो कुछ है उसमें पहली और अव्वल चीज़ यही है और इसके सिवा जो कुछ है, सब इसके बाद है, इसी से है और इसी के लिए है।

तुम आगे चलकर मालूम करोगे कि इसकी अव्वलिय्यत की महकम व यक़ीनी हक़ीक़त एक क़ानूने फ़ित्री[4] व नामूसे इलाही[5] है जो कभी नहीं टूट सकता और फ़ित्रते इलाहिया का कोई अमल टूटने के लिए नहीं है। ये इसलिए पहली नहीं है कि इसको पहली चीज़ ठहराना चाहिए और कहना चाहिए कि ये पहली है, बल्कि इसलिए कि नौए-इन्सानी की फ़ित्रते सालिहा[6] की पहली आवाज़ यही है और जब कभी इन्सानी फ़ित्रत हर तरह की मसनूई[7] व ख़ारिजी[8] कदूरतों[9] और आलूदगियों[10] से पाक हो कर अपनी अस्ल व हक़ीक़त की राह में नमूदार होगी तो उसके अन्दर से पहली सदा यही उठेगी। इन्सान बिल-फ़ित्रत इसके लिए मज्बूर है कि हर्फ़ों और आवाज़ों के अन्दर जब कभी मआनी हक़ीक़त और तसव्वुराते सहीह-ए-फ़ित्रिया की

1-ईमान वाला। 2-ईमानी ज़िन्दगी। 3-सदजीवन। 4-प्राकृतिक विधान। 5-ईश्वरीय क़ानून। 6-सद् वृत्ति। 7-बनावटी। 8-बाहरी। 9-मिलावटों, गंदगियों। 10-प्रदूषणों

तर्जुमानी करे और लफ़्ज़ों के अन्दर और सदाओं के साथ जब कभी अपने ख़ुदा को पुकारे तो उसकी सबसे पहली और अस्ली आवाज़ वही हो जो सूर: फ़ातिहा की सात आयतों के अन्दर से निकल सकती है। इसके सिवा इन्सान की फ़ित्रते सालिहा और कुछ नहीं कह सकती और अगर कहेगी तो वो उसकी सच्ची और हक़ीक़ी आवाज़ न होगी, बल्कि गुमराहियों की एक बनावट, आलूदगियों की एक नापाकी कदूरतों की एक अंधियारी और ज़ंगों और गुबारों की एक सन्नाई तैरगी होगी जो फ़ित्रते सालिहा की सालेह व बे-मेल सदाओं की जगह तरह-तरह की बनावटी आवाज़ों का शोर मचाएगी।

और फिर नौऐ-इन्सानी की अस्ली और पहली आवाज़ ये कैसे न हो जबकि तुम थोड़ी देर में मालूम कर लोगे कि काइनाते इन्सानी और उसकी ख़िल्क़त[1] व वुजूद में से जो कुछ है सब की फ़ित्री और पहली आवाज़ यही है :

وَاِنْ مِّنْ شَىْءٍ اِلَّا يُسَبِّحُ بِحَمْدِهٖ وَلٰكِنْ لَّا تَفْقَهُوْنَ تَسْبِيْحَهُمْ ؕ (١٧: ٤٤)

और दुनिया में कोई चीज़ नहीं जो ख़ुदा की हम्द[2] न करती हो, मगर तुम उनकी हम्दो-सना पर गौर नहीं करते और न ही समझते। (17: 44)

दायरा जिस नुक्त-ए-नज़र से शुरू होता है उसी पर ख़त्म भी हो जाता है। इसकी पहली और आख़िरी मन्ज़िलें एक ही हैं, इसलिए आगे चलकर तुम ये भी पाओगे कि जिस तरह सूर: फ़ातिहा सबसे पहली हक़ीक़त है इसी तरह सबसे आख़िरी भी वही है। जिस तरह वो इब्तिदा है इसी तरह उसके सिवा इन्तिहा भी और कोई

1-सृजन, कृत्य। 2-स्तुति, प्रशंसा।

नहीं। जिस तरह वो आग़ाज़ है इसी तरह उसके अन्दर इत्माम[1] व इकमाल[2] भी है, जिस तरह वो एक बीज है जो सबसे पहले दरख़्त के सिलसिल-ए-अमलियात[3] में नमूदार हुआ इसी तरह दरख़्त का सबसे आख़िरी ज़ुहूर[4] भी वही है, क्योंकि दरख़्त ने सबसे पहला काम यही किया कि अपनी शाख़ों में बीज का फल लगाया। पस नौअे-इन्सानी की सआदत जिस तरह सूर: फ़ातिहा से शुरू होती है इसी तरह उस पर ख़त्म भी हो जाती है। मोमिन की हिदायत की इब्तिदा भी यही है और कमाल भी यही है। ये एक बीज है और इसलिए दरख़्त की इब्तिदा व इन्तिहा जो कुछ है और उसके अन्दर जो कुछ भी हो सकता है, सब कुछ उसीके अन्दर है। इसीलिए एक मुस्लिम ज़िन्दगी यानी फ़ित्रे सालिहा की एक बे-मेल व ख़ालिस रूह सब कुछ भूल जाती है, मगर सूर: फ़ातिहा को नहीं भूल सकती, इसके साज़े ज़िन्दगी से शबो-रोज़ यही नग़्म-ए-हक़ीक़त बुलन्द होता रहता है। जिस तरह उसकी सुब्ह का पहला नग़्मा यही है, इसी तरह उसकी रात का आख़िरी तराना भी यही है, सुब्ह के आफ़्ताब का चेहरा देखना उस पर हराम है, जब तक वो सूर: फ़ातिहा के अन्दर से अपने ख़ुदा को न पुकार ले, और रात की राहत व सुख के बिस्तर पर उसका जिस्म चैन नहीं पा सकता जब तक सूर: फ़ातिहा की सदाओं के साथ अपने महबूब व महमूद[5] से इश्क़ न कर ले, सूरज निकलता है तो मोमिन के लिए सूर: फ़ातिहा का पयाम लाता है, डूबता है तो उसी की वलवला-अंगेज़ी होती है। चिड़या सुब्ह के वक़्त चहचहाती और शाम के वक़्त अपना बसेरा ढूँढती है और हक़ीक़त फ़रामोश इन्सान भी ऐसा ही करता है। पर मोमिन वो है

1-सम्पन्न, समापन। 2-पूर्णता। 3-कर्मो की शृंखला। 4-प्रकटन। 5-प्रशंसनीय, स्तुत्य

जो सुब्ह की सफ़ेदी देखते ही ख़ुद को पुकारता और सूरज को डूबता देखते ही उसके इश्क़ की रूह और नग़-ए-फ़ातिहा के पाक तरानों से मामूर हो जाता है।

يذكرني طلوع الشمس صخرا
واذكره لكل غروب شمسي

पस उसका दिन शुरू होता है तो फ़ातिहा से और ख़त्म भी होता है तो फ़ातिहा पर।

चुनांचे यही वजह है कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसका नाम "फ़ातिहतुल-किताब" रखा और इस तरह इसकी हक़ीक़ते अव्वलिय्यत को इसके नाम ही से वाज़ेह कर दिया :

उस शख़्स की नमाज़ ही न हुई जिसने नमाज़ में फ़ातिहतुल किताब यानी सूर: फ़ातिहा को न पढ़ा।
(बुख़ारी व मुस्लिम, अ़न उबादा बिन सामित)

لاصلوة لمن لم يقرأ فيها بفاتحة الكتاب
(بخاری و مسلم
عن عبادة بن الصامت)

इसी तरह दारे क़ुत्नी और तिर्मिज़ी की हदीस आगे आएगी जिस में मिन्जुमला दीगर औसाफ़ के एक वस्फ़ इसका ये भी फ़र्माया कि वो "फ़ातिहतुल-किताब" है। चुनांचे इसी लिए यही वस्फ़ इसका सबसे बड़ा और सबसे पहला क़रार पाया और ज़्यादा-तर इसी नाम से आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम (रज़ियल्लाहु अ़न्हुम) ने इसे पुकारा।

अ़रबी में 'फ़त्ह' का लुग्वी इत्लाक़[1] दरअस्ल मुश्किलों, बंदिशों

1-शब्दकोशीय, क्रियान्वयन या प्रयोग।

और रुकावटों के दूर हो जाने पर होता है जैसा कि इमामे राग़िब ने लिखा है "अल-फ़त्ह: इज़ालतुल-इग़लाकि व इश्कालि" यानी फ़त्ह बंदिशों और मुश्किलों का दूर होना है। चूंकि बंदिशों के दूर होने और मुश्किलों के छट जाने में खुल जाने का मफ़्हूम है, इसलिए इसका इत्लाक़ हर उस हालत पर होने लगा जो खुलने के बाद ही नुमायाँ हुई और इसलिए सबसे पहले नुमायाँ हुई। बंद दरवाज़ा खुल गया तो ये दरवाज़े का फ़त्ह होना है, लड़ाई में कामयाबी नमूदार हुई और रुकावटें दूर हो गईं तो ये लड़ाई की फ़त्ह है, ग़म दूर हो गया और राहत शुरू हुई तो ये फ़त्हे ग़मो-अलम है। ग़रज़ कि "फ़त्ह" के मअ़ना में अस्ली हक़ीक़ते लुग़वी तो खुलने की है, लेकिन चूंकि खुलने के बाद मा-बाद भी सबसे पहले नमूदार हुई है इसलिए आग़ाज़ो-इब्तिदा का एक मफ़्हूम भी उसका एक जुज़ हो गया है और उसके तमाम इस्तेमालात में नज़र आता है।

इसी फ़त्ह से फ़ातिहा है, यानी वो चीज़ जिस से कोई शय खुले और शुरू हो :

فاتحة كل شئ مبدؤه الذى يفتح به ما بعده

हर शय का फ़ातिहा उसका मब्दा है यानी जिस से वो शुरू हुई है और मा बाद उस चीज़ का उस मब्दे से खुलता है।

(مفردات امام راغب)

(मुफ़रदात इमाम राग़िब)

अब ग़ौर करो कि इस सूरत का नाम "फ़ातिहा" यानी "फ़ातिहतुल-किताब" है। लफ़्ज़ फ़त्ह के मफ़्हूमे लुग़वी में बंदिश का दूर होना, खुलना और शुरू होना है और इन तमाम इस्तेमालाते लफ़्ज़ के एतिबार से यही सूरत "फ़ातिहा" है। वह्ये इलाही खुली

और बंदिश दूर हुई तो सबसे पहले यही सूरत नमूदार हुई और तमाम कलामुल्लाह[1] इसके मा बाद है। दरसगाहे वह्ये इलाही ने उम्मते मुस्लिमा के पहले गिरोह को तालीमे किताबो-हिकमत दे कर तैयार करना चाहा तो सबसे पहला सबक़ और दर्स यही था जिस से सिलसिल-ए-अस्बाक़[2] शुरू हुआ। फिर "अल-किताब" की दाइमी[3] तरतीब में भी क़ुरआने हकीम का मब्दा यही है, यानी क़ुरआन के खुलते ही सबसे पहले उसका जमाले इल्म नज़र-अफ़्रोज़ होता है और सब कुछ उसके बाद है। नीज़ ख़ुद का जिस क़द्र कलाम दुनिया में आया और जो कुछ क़ुरआने हकीम में है वो सबका सब सूर: फ़ातिहा ही से खुलता है और सबके लिए यही सूरत नुक़्त-ए-आग़ाज़ व इफ़्तिताह[4] है। (इस आख़िरी वस्फ़े फ़ातिहिय्यत की तशरीह आगे आएगी)।

इसके बाद इसकी अमली फ़ातिहिय्यत व अव्वलिय्यत का सिलसिला शुरू हुआ है। फ़ित्रते सालिहा[5] यानी मोमिन व मुस्लिम इन्सान की ज़िन्दगी हो हम देखते हैं कि उसके लिए हर तरह के इफ़्तिताहों और इब्तिदाओं का नुक़्ता यही है। वो जब खुलती है तो उस में सबसे पहले सूर: फ़ातिहा ही नज़र आता है और वो जो कुछ करता है उसमें अव्वलीन नुमूद इसी सूरत की हक़ीक़त की होती है। अगर तुम सब्र करोगे तो ज़्यादा वज़ाहत के साथ इस हक़ीक़त को मालूम करोगे। लेकिन सरे-दस्त इस क़द्र समझ लेना काफ़ी है कि इन्सान की रोज़ाना ज़िन्दगी का आग़ाज़ सुब्ह से होता और रात के पहले पहर पर ख़त्म हो जाता है, सो मोमिन की हर सुब्ह इसी सूरत से शुरू से होती है और इसी पर ख़त्म होती है।

1-अल्लाह का कलाम। 2-सबक़ों का सिलसिला। 3-पुरानी। 4-आरंभ-बिन्दु व उद्घाटन। 5-सद प्रवृत्ति।

और ये जो कुछ कहा गया सो महज़ क़यास व तख़्मीन नहीं है, बल्कि ख़ुद अहादीस व अहकामे नबविय्या[1] (अ़ला साहिबिहस्सलातु वस्सलाम) की तसरीहात से मालूम होता है कि मोमिन के हर काम का इफ़्तिताह सूर: फ़ातिहा ही की हक़ीक़त से होना चाहिए। चुनांचे उस मशहूर हदीस को अपने सामने लाओ जिस को अस्हाबे सिहाह़ व सुनन ने बकसरत मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से रिवायत किया है, लेकिन राविये अव्वल सबके हज़रत अबू हुरैरह हैं :

كل امر ذى بال لم يبدأ فيه بالحمد فهو ابتر

जो काम हम्दे इलाही से शुरू नहीं किया गया तो उसमें कामयाबी नहीं है।

ये इब्ने माजा व अबू दाऊद के अल्फ़ाज़ हैं, लेकिन इब्नुल अ़रबी और बग़वी वग़ैरा की रिवायात में "बिल-हम्दि लिल्लाहि" है यानी हर काम को अल-हम्दु लिल्लाह से शुरू करना चाहिए। और इमामे नसाई की रिवायत में "كل كلام لا يبدأ فيه بحمد لله فهو اجذم *कुल्ल कलामिन ला यब्दउ फ़ीही बिहम्दिल्लाहि फ़हुव अज्ज़म*" है। बाज़ रिवायतों में "अक़्तअ़" भी आया है। नीज़ बाज़ रिवायतों में "अल-हम्दु" की जगह "बिस्मिल्ला-हिर्रह्मानिर्रहीमि" है, यानी "बिस्मिल्ला-हिर्रह्मानिर्रहीमि" से जो काम शुरू न किया जाए वो अब्तर है।

सो अब देखो कि इस हदीस से किस तरह साबित हो रहा है कि मोमिन के तमाम कामों को इसी सूरत की हक़ीक़त से शुरू होना चाहिए। इस सूरत की अव्वलीन हक़ीक़त "हम्दे इलाही[2]" है। पस फ़रमाया कि हर काम का इफ़्तिताह "अल-हम्दु लिल्लाह" से होना

1-नबी के आदेशों। 2-अल्लाह की तारीफ़, स्तुति।

चाहिए। इसकी पहली आयत "बिस्मिल्ला-हिर्रह्मानिर्रहीमि" है। पस फ़रमाया कि हर काम को बिस्मिल्लाह से शुरू किया जाए। दोनों रिवायतों में इफ़्तिताहे आमाल हक़ीक़ते फ़ातिहा ही से है। और सच ये है कि मोमिन के ख़साइस[1] व इम्तियाज़ात में अव्वलीन चीज़ यही है कि वो जो कुछ करता है अल्लाह के नाम से करता है और उसी से ज़िन्दगी के हर शोबे को शुरू करके अपने तयें सिर्फ़ अल्लाह ही के लिए मख़्सूस कर देता है।

इसी तरह उन तमाम अहादीस को अपने सामने लाओ जिन में मुख़्तलिफ़ आमाले-मुक़द्दसा[2] के मुतअ़ल्लिक़ ब-तसरीह फ़रमाया गया है कि बिस्मिल्लाह से शुरू करो और बिस्मिल्लाह सूर: फ़ातिहा ही की पहली आयत है, हत्ताकि बाज़ अइम्म-ए-हदीस[3] व फ़िक़ह[4] के नज़दीक वुज़ू करने से पहले बिस्मिल्लाह का पढ़ना वाजिब है। और इमामे अहमद (रह०) ने मर्फ़ूअ़न रिवायत किया है कि उस शख़्स का वुज़ू ही नहीं होता जो अल्लाह के नाम से वुज़ू शुरू न करे। जिन अइम्मा ने नीयत को शर्ते वुज़ू क़रार दिया है उनकी नज़र इसी दक़ीक़ नुक्ते पर गई।

फिर सूर: फ़ातिहा की इफ़्तिताही ख़ुसूसियत किस तरह नुमायाँ हो जाती है जब क़ुरआने हकीम से मालूम होता है कि अंबिया-ए-किराम[5] (अ़लैहिमुस्सलाम) ने भी अपने आमाले-मुहिम्मा[6] को हमेशा सूर: फ़ातिहा ही की पहली आयत से शुरू किया है। हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने कश्ती पर क़दम रखा तो फ़रमाया: بِسْمِ اللّٰهِ مَجْرٖىهَا وَمُرْسٰىهَا बिस्मिल्लाहि मजरेहा व मुर्साहा" हज़रत

1-विशेषताओं। 2-अच्छे, पवित्र काम। 3-हदीस के विद्वानों। 4-इस्लामी धर्म विधि। 5-सम्माननीय पैग़म्बरों। 6-महत्वपूर्ण कार्यों।

सुलैमान अ़लैहिस्सलाम ने मलिक-ए-सबा को ख़त लिखा तो इसी से शुरू किया : بسم الله الرحمن الرحيم "बिस्मिल्ला-हिर्रह्‌मानिर्रहीमि" और अहादीस की बकसरत तसरीहात से ये तो तुम्हें मालूम ही है कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपने तमाम कामों को इसी अव्वलीन आयते फ़ातिहा से शुरू करते थे।

पस इन बयानात से वाज़ेह हुआ कि ये सूरत हर लिहाज़ से "फ़ातिह" है और फ़ातिहिय्यत और इब्तिदा हर हैसियत से इसी के लिए है। यही वजह है कि इसका नाम "फ़ातिहा" क़रार पाया।

फ़ातिहतुल-किताब बहैसियते नुज़ूल

अलबत्ता इस तारीख़ी हक़ीक़त को कि जिस तरह तरतीब "अल-किताब" में ये सूरत पहली है इसी तरह तरतीब दर्सो-नुज़ूल में भी पहली है, किसी क़द्र ज़्यादा वज़ाहत के साथ साफ़ हो जाना चाहिए।

तुमको मालूम हो चुका है कि क़ुरआने हकीम तेईस साल के अ़र्से में जस्ता-जस्ता नाज़िल हुआ है। तारीख़ नुज़ूले क़ुरआन में उस ज़माने को दो हिस्सों में मुन्क़सिम[1] कर दिया गया है। पहला हिस्सा इब्तिदाई ज़माने का है जो हिज्रत पर ख़त्म हो जाता है और "अ़हदे मक्की" कहलाता है। दूसरा दौर हिज्रते मदीना से शुरू होता है और आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के विसाल फ़रमाने तक क़ायम रहता है, इसको "मदनी" कहते हैं। पस क़ुरआने हकीम की जो सूरतें पहले इब्तिदाई अ़हद में नाज़िल हुई हैं वो "मदनी" हैं। मक्की और मदनी से मक़सूद महज़ उन सूरतों के नुज़ूल का वतन नहीं है, बल्कि हिज्रत से पहले और बाद दो अ़हदों में से किसी एक

1-विभाजित।

अ़हद का होना है। अंबिया-ए-किराम अ़लैहिमुस्सलाम के आमाले-इज्तिमाइय्या[1] का पहला दौर दावतो-तब्लीग़ होता है, दूसरा वस्ती अ़हद हिज्रत, तीसरा फ़ैसलए हक़ व बातिल[2] और ज़ुहूरे-अम्रे-इलाही[3]। पस चूंकि हिज्रते नबवी पर पहला दौर ख़त्म होता था और नया दौर शुरू होता था, इसलिए वह्ये इलाही की तारीख़ को भी इन्हीं दो बड़े दौरों में तक़सीम करके महफ़ूज़ रखा गया और फ़िल-हक़ीक़त तारीख़े नुज़ूल के लिए इससे बेहतर तक़सीमे अ़हद नहीं हो सकती थी। यही वजह है कि उलमा-ए-फ़न ने फ़ैसला कर दिया है कि मदनी सूरतों से मुराद ये नहीं है कि सर-ज़मीने मदीना ही में नाज़िल हुई हों, बल्कि हिज्रत के बाद जो सूरतें उतरीं वो सबकी सब मदनी हैं। अगर फ़त्हे मक्का के बाद अस्ना-ए-क़ियाम मक्का में भी कोई आयत उतरी है तो वो भी अपने अ़हद के लिहाज़ से मदनी ही है अगर्चे सर-ज़मीने मदीना में नहीं उतरी।

सूरः फ़ातिहा मक्की है

पस सूरः फ़ातिहा के मुतअ़ल्लिक़ पहला सवाल ये पैदा होता है कि ये मक्की है या मदनी, यानी पहले अ़हद में नाज़िल हुई है या दूसरे अ़हद में।

इसका जवाब ख़ुद क़ुरआने हकीम में मौजूद है। सूरः हिज्र में जो बिल-इत्तिफ़ाक़ मक्की है, अल्लाह तआ़ला ने सूरः फ़ातिहा के मुतअ़ल्लिक़ ख़ुद फ़रमाया है कि वो नाज़िल हो चुकी है :

और बिला शुब्हा हम ने तुझको सात चीज़ें दीं, बार-बार दोहराई	وَلَقَدْ اٰتَيْنٰكَ سَبْعًا مِّنَ الْمَثَانِيْ

1-सामूहिक कार्यों। 2-सत्य व असत्य का निर्णय। 3-ईश्वरीय बातों का प्रकटन।

जाने वाली और क़ुरआने अज़ीम। (10: 87)	وَالْقُرْاٰنَ الْعَظِيْمَ ○ (٨٧:١٠)

अहादीसे-सहीहा व आसारे सहाबा जिन को आगे चल कर तुम पढ़ोगे बतलाते हैं कि इस आयत में "सात चीज़ों" से मुराद सूरः फ़ातिहा की सात आयतें हैं और "मसानी" इसी का वस्फ़ है कि वो हर रोज़ नमाज़ो में बार-बार दोहराई जाती हैं और मोमिन कभी भी उसके बार-बार दोहराने से नहीं थकता।

इससे साबित हो गया कि सूरः फ़ातिहा क़तअ़न मक्की है, क्योंकि अगर मक्के में सूरः हिज्र से पहले नाज़िल न हो चुकी थी तो ख़ुदा-ए-तआ़ला ने इसका ज़िक्र सूरः हिज्र में क्यों कर फ़रमाया?

चुनांचे हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास, अबू मैसरा, हसन, क़तादा और अबुल आ़लिया वग़ैरा किबारे सहाबा व ताबई़न रज़ियल्लाहु अ़न्हुम का यही मज़हब है और हज़रत अ़ली अ़लैहिस्सलाम ने भी इसी की तसरीह की है :

हज़रत अ़ली अ़लैहिस्सलाम से मन्क़ूल है कि सूरः फ़ातिहा मक्का में उतरी। (अस्बाबुन-नुज़ूल लिल-वाहिदी, पृष्ठ: 12)	عن علی علیه السلام قال نزلت فاتحة الکتاب بمکة ـ (اسباب النزول للواحدی ص:١٢)

बिल-उमूम तमाम उ़लमा व मुफ़स्सिरीन मुहक़्क़िक़ीन की जमाअ़त इसी तरफ़ गई है। हाफ़िज़ सुयूती ने इत्क़ान में लिखा है :

अक्सर इसपर हैं कि ये मक्की है, बल्कि ये भी आया है कि यही सबसे पहले उतरी। (पृ: 24)	الأكثرون على انها مكية بل ورد انها أول ما نزل (ص:٢٤)

मुतक़द्दिमीन व मुतअख़्ख़िरीन में इमाम इब्ने जरीर और हाफ़िज़ इब्ने कसीर जैसे अइम्म-ए-तफ़्सीर[1] बिल-हदीस का भी यही मज़हब है और इन दोनों के बाद किसी और क़ौलो-क़ाल, क़यास व राय की तरफ़ ग़ौर्तिना करने की ज़रूरत नहीं।

लेकिन बहस को साफ़ कर देने के लिए बेहतर होगा कि जिन लोगों को सूरः फ़ातिहा के मदनी होने का ख़याल हुआ है, उनके दलाइल पर भी नज़र डाल ली जाए। उन लोगों का इस्तिदलाल ये है कि बाज़ सहाबा व ताबईन के मुतअ़ल्लिक़ मुफ़स्सिरीन ने तसरीह कर दी है कि सूरः फ़ातिहा को मदनी क़रार देते थे। चुनांचे हाफ़िज़ इब्ने कसीर लिखते हैं :

और कहा गया है कि मदनी है। ये क़ौल अबू हुरैरह, मुजाहिद, अ़ता और ज़ोहरी का है।	وقيل مدنية ۔ قاله ابوهريرة ومجاهد عطا بن يسار والزهرى ۔

हमारे मुफ़स्सिरीन मुतअख़्ख़िरीन इस इख़्तिलाफ़ मे इस क़द्र मुतअस्सिर हुए कि उन्होंने दोनों क़ौलों को जमा करने की कोशिश की और ये क़ियास कर लिया कि सूरः फ़ातिहा दो मर्तबा नाज़िल हुई होगी। एक बार मक्के में जबकि नमाज़ फ़र्ज़ हुई और एक बार मदीने में जबकि क़िब्ला बैतुल-मुक़द्दस की जगह ख़ान-ए-काबा क़रार पाया। बिला शुब्हा ये तत्बीक़[2] की उम्दा सूरत थी और ये बात भी कुछ अ़जीब नहीं है कि सूरः फ़ातिहा दो मर्तबा नाज़िल हुई हो, क्यों कि सआ़दते इन्सानी का पहला सबक़ भी वही है और आख़िरी भी वही। लेकिन अफ़सोस है कि इसका कोई सबूत हमारे सामने नहीं

1-व्याख्याकारों, टीका विद्वानों। 2-रूपांतरण, अनुकूलन।

है। किसी सहाबी और ताबई ने इसकी तसरीह नहीं की और महज़ क़ियासात की बिना पर हम नुज़ूले क़ुरआन की तारीख़ क़रार नहीं दे सकते।

बाज़ों ने कहा कि सूर: फ़ातिहा मक्की भी है और मदनी भी है, निस्फ़ मक्के में उतरी और निस्फ़ मदीने में, मगर वो ये भूल गए कि सूर: हिज्र मक्के में उतरी है और उसमें सूर: फ़ातिहा की साढ़े तीन आयतों की जगह सात आयतों का ज़िक्र है।

हक़ीक़त ये है कि तत्बीक़े इख़्तिलाफ़ के लिए इन तकल्लुफ़ात[1] की ज़रूरत ही नहीं। थोड़े से ग़ौर के बाद बिल्कुल वाज़ेह हो जाता है कि मदनी होने की रिवायात में कोई क़ुव्वत[2] ऐसी नहीं है कि उनको एक मुस्तक़िल मज़हब क़रार दे कर बहस की जाए।

सबसे पहली चीज़ ये है कि सहाब-ए-किराम में से भी किसी ने इसको मदनी क़रार दिया है या नहीं, क्योंकि इसके मक्की होने के मुतअ़ल्लिक़ हज़रत अ़ली और हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा जैसे अजिल्ल-ए-सहाबा[3] व मुफ़स्सिरीन की तसरीहात मौजूद हैं। हाफ़िज़ इब्ने कसीर और इब्ने अ़तिया ने हज़रत अबू हुरैरह (रज़ि०) का नाम लिखा है। अव्वल तो तफ़्सीरे क़ुरआन के बारे में बमुक़ाबिल-ए-हज़रत अ़ली और हज़रत इब्ने अ़ब्बास के उनके क़ौल को ज़्यादा वज़नी नहीं क़रार दिया जा सकता। सानियन[4] ये भी मुश्तबह[5] है कि वाक़ई हज़रत अबू हुरैरह का ये मज़हब था भी या नहीं। दरअस्ल ये राय ताबईन में हज़रत मुजाहिद की है और उन्हीं से ज़्यादा-तर मशहूर हुई है। वो हज़रात अबू हुरैरह से रिवायत

1-औपचारिकताओं, प्रयासों। 2-शक्ति। 3-बड़े सहाबियों। 4-दूसरे, दूसरी बात। 5-संदिग्ध।

करते हैं जिस को तबरानी ने अवसत में नक़ल किया है कि :

عن مجاهد عن ابی هريرة ان ابليس رنّ حين انزلت فاتحة الكتاب وانزلت بالمدينة ۔ (اتقان : ص : ٢٥)	मुजाहिद ने हज़रत अबू हुरैरह से रिवायत की है कि शैतान चीख़ उठा जब सूर: फ़ातिहा नाज़िल हुई और वो मदीना में उतरी। (इत्क़ान, पृष्ठ: 25)

लेकिन हाफ़िज़ सुयूती "इत्क़ान" में लिखते हैं :

ويحتمل أن الجملة الأخيرة مدرجة من قول مجاهد ۔ (ص : ٢٥)	और इसका एहतमाल[1] है कि आख़िरी जुम्ला मुजाहिद के क़ौल से दाख़िले रिवायत हो गया हो। (पृष्ठ: 25)

यानी बहुत मुमकिन है कि हज़रत अबू हुरैरह का क़ौल सिर्फ़ इसी क़द्र हो कि "ان ابليس رنّ" और आख़िर में इतना टुकड़ा कि "और वो मदीने में उतरी" ख़ुद मुजाहिद की जानिब से हो।

रहा ये अम्र कि हज़रत मुजाहिद का मज़हब ऐसा क्यों था तो जब सहाबा का मज़हब हमें मालूम हो गया तो ये अम्र चन्दाँ लाइके एतिना नहीं मालूम होता है कि इस बारे में उन्हें सहव हो गया या किसी वजह से इश्तिबाह में पड़ गए। वाहिदी "अस्बाबुन-नुज़ूल" में मुजाहिद की राय नक़ल करके लिखते हैं :

قال الحسين بن الفضل لكل عالم هفوة وهذه بادرة عن	हुसैन इब्नुल फ़ज़ल ने कहा कि हर आलिम के अक़्वाल[2] में एक न एक बात लग़व[3] होती है

1-गुंजाइश, संभावना। 2-कथनों। 3-त्रुटिपूर्ण।

مجاهد لأنه تفرد بهذا القول والعلماء على خلافة ۔ و مما يقطع به على انها مكية قوله تعالى : ولقد اتينك سبعًا ۔ الخ

(ص: ١٢)

और मुजाहिद का ये क़ौल भी ऐसा ही है और उनकी ज़ात से ऐसी ग़लती का होना तअ़ज्जुब-अंगेज़ है, तमाम उलमा इसके ख़िलाफ़ कहते हैं, तन्हा उनकी यह राय है। सूर: हिज्र में मौजूद है "व लक़द् आतय्नाक सब्अ़म मिनल्-मसानी" पस क़तई तौर पर इसका मक्की होना साबित हो गया।

(पृष्ठ : 12)

इमाम वाहिदी के इस बयान से ये भी मालूम हो गया कि सूर: फ़ातिहा के मदनी होने की निस्बत सिर्फ़ मुजाहिद ही का ये मज़हब है, क्योंकि हुसैन बिन फ़ज़ल ने "तफ़र्रद बिही" का लफ़्ज़ कहा है, पस ये कहना इस बारे में दो मज़हब हैं किसी तरह सहीह नहीं। तमाम सहाबा व उलमा का मज़हब एक ही है और वो यही है कि सूर: फ़ातिहा मक्की है। सिर्फ़ एक शख़्स यानी हज़रत मुजाहिद का क़ौल ख़िलाफ़ है। बाज़ और नाम भी अगर हमारे सामने आ जाते हैं तो वो ग़ालिबन उन्हीं के क़ौल से मुतअस्सिर हुए हैं।

मक्की अ़हद की पहली सूरत

अब इसके बाद दूसरा सवाल ये सामने आया है कि मक्की सूरतों में भी सबसे पहली सूरत कौन-सी है, सूर: फ़ातिहा, जिस को पहला होना चाहिए या कोई और सूरत?

इसके मुतअ़ल्लिक़ उलमा-ए-फ़न के हस्बे-ज़ैल अक़्वाल हैं :

1 - इमाम बुख़ारी ने "बदउल्-वह्यि" में हज़रत आ़इशा रज़ियल्लाहु तआ़ला अन्हा से एक मुफ़स्सल रिवायत नक़ल की है कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर पहले क्यों कर वह्य नाज़िल हुई। हज़रत आ़इशा फ़रमाती हैं कि सबसे पहले रूया-ए-सादिक़ा शुरू हुए, फिर आप ने ख़िल्वत व गोशा-नशीनी इख़्तियार की। ग़ारे हिरा में आप अक्सर जाते और रात भी वहीं बसर करते यहाँ तक कि नूरे हक़ ज़ाहिर हुआ :

وجاء الملك فيه فقال : اقرأ قال رسول الله صلى الله عليه وسلم ما أنا بقارى .... فقال " اِقْرَأْ بِاسْمِ رَبِّكَ الَّذِىْ خَلَقَ " الخ -

और अल्लाह के फ़िरिश्ते ने ज़ाहिर हो कर कहा "इक़रअ्" यानी पढ़! आप ने फ़रमाया कि मैं पढ़ा हुआ नहीं हूँ, क्यों कर पढ़ूं ? आप फ़रमाते हैं कि इसी तरह उसने तीन बार कहा, आख़िरी बार कहा "इक़रअ् बिस्मिरब्बिकल्-लज़ी ख़-ल-क़" अपने परवरदिगार के नाम से पढ़ जिसने पैदा किया।

इसी हदीस को इमाम मुस्लिम ने भी लिया है और नीज़ ब-इख़्तिलाफ़ जुज़्इय्याते अल्फ़ाज़ हाकिम, तबरानी और बैहक़ी वग़ैरा से भी मरवी है। इस हदीस से इस्तिदलाल[1] किया गया है कि सबसे पहली सूरत जो नाज़िल हुई है वो सूरः इक़रअ् है। और चूंकि इमाम बुख़ारी ने "कैफ़ का-न बदउल-वह्यि" (वह्य क्यों कर शुरू हुई)

1-तर्क लेना।

का बाब इसी हदीस की बिना पर क़ायम किया है इसलिए साबित होता है कि इमाम साहब का मज़हब भी यही था। अक्सर मुहद्दिसीन और उलमा का यही मज़हब है और बकसरत ताबईन व अइम्मा से मन्क़ूल है। मुजाहिद और ज़ोहरी के अक़्वाल हाफ़िज़ सुयूती ने नक़ल किए हैं (इत्क़ान : 53)।

दूसरा क़ौल ये है कि सबसे पहले "सूरः मुद्दस्सिर" नाज़िल हुई। इमाम बुख़ारी व मुस्लिम ने अबू सलमा बिन अ़ब्दुर रहमान से रिवायत किया है कि उन्होंने कहा :

سألت جابر بن عبدالله : أى القران أنزل قبل ؟ قال " يَا يُّهَاالْمُدَّثِّرُ" قلت : أو "اِقْرَأْ بِاسْمِ رَبِّكَ " ؟ قال : أحدثكم ما حدثنا به رسول الله صلى الله عليه وسلم ، قال صلى الله عليه وسلم : انى جاورت بحراء فلما قضيت جوارى نزلت فاستبطنت بطن الوادى فنوديت فنظرت امامى وخلفى وعن يمينى وعن

मैंने जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह से पूछा कि क़ुरआन में से कौन सी चीज़ पहले उतरी? कहा: "या अय्युहल्-मुद्दस्सिर" मैंने कहा : या अय्युहल्-मुद्दस्सिर या इक़रअ् बिस्मि रब्बि-क? जाबिर ने कहा मैं तुम से वही कहता हूँ जो हम से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बयान किया है। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैंने ग़ारे हिरा में क़ियाम किया, जब मेरा ज़मान-ए-क़ियाम ख़त्म हुआ तो वहाँ से निकला और वादी में से गुज़रने लगा, मैंने सुना कि मुझे कोई पुकार रहा है, मैं ने अपने

شمالی۔ فلم أر أحدا ..... ثم نوديت فرفعت رأسی فاذا هو علی العرش فی الهواء يعنی جبريل فأخذتنی رجفة فأتيت خديجة فأمرتهم فدثرونی فأنزل الله " يٰأَيُّهَا الْمُدَّثِّرُ قُمْ فَأَنْذِرْ "

(مسلم)

सामने, पीछे, दाहिने, बाएँ नज़र डाली लेकिन कोई नज़र नहीं आया। इसी तरह तीन बार आवाज़ सुनी, फिर मैं ने ऊपर सर उठाया तो क्या देखता हूँ कि वो हवा में एक कुरसी पर बैठा है, यानी जिब्रील, ये देख कर मुझपर सख़्त इज़्तराब[1] तारी हुआ। मैं ख़दीजा के पास आया और कहा कि मुझे कपड़ा उढ़ा दो, चुनांचे उन्हों ने ऐसा ही किया, इस पर अल्लाह ने उतारा "या अय्युहल्-मुद्दस्सिरु क़ुम् फ़-अन्ज़िर" (मुस्लिम)

3 - तीसरा क़ौल ये है कि सबसे पहले "बिस्मिल्लाहिर-रह्मानिर्रहीम" नाज़िल हुई। इमाम वाहदी ने इकरिमा और हसन का क़ौल नक़ल किया है कि :

اول ما نزل من القرآن " بسم الله الرحمن الرحيم"

(اسباب النزول : ٦)

सबसे पहली चीज़ जो क़ुरआन से उतरी वो "बिस्मिल्लाहिर-रह्मानिर्रहीम" है।

(अस्बाबुन-नुज़ूल : 6)

4 - चौथा क़ौल ये है कि सबसे पहले सूर: फ़ातिहा नाज़िल हुई। इमाम वाहदी ने अबू मैसरा से रिवायत किया है कि इब्तिदा में

1-घबराहट।

आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक आवाज़ को सुनते जो उन का नाम लेकर पुकारा करती थी। जब आप ने उस सदा के जवाब में लब्बैक[1] कहा तो उसने कहा :

कह "अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आलमीन" चुनांचे आख़िर सूरत तक सूर: फ़ातिहा उसने पढ़ा दी। (अस्बाबुन-नुज़ूल: 12)	قل " الحمد لله رب العلمين" حتى فرغ من فاتحة الكتاب - (اسباب النزول : ۱۲)

इसके बाद इमाम वाहदी लिखते हैं :

"وهذا قول على بن ابى طالب" और ये क़ौल हज़रत अ़ली अ़लैहिस्सलाम का है।

इमाम बैहक़ी ने भी दलाइल में इस रिवायत को नक़ल किया है, मगर लिखा है कि हदीस मुर्सल है अलबत्ता रावी तमाम सिक़ह हैं। साहिबे कश्शाफ़ ने इस क़ौल को अक्सर मुफ़स्सिरीन का मज़हब लिखा है :

और अक्सर मुफ़स्सिरीन इस तरफ़ गए हैं कि सबसे पहले सूर: फ़ातिहा उतरी।	واكثر المفسرين الى أن اول سورة نزلت فاتحة الكتاب-

मगर हाफ़िज़ इब्ने हजर अ़सक़लानी ने कश्शाफ़ के बयान से इनकार किया है, क्योंकि हज़रत आ़इशा रज़ि० की रिवायत आग़ाज़े वह्य के ख़िलाफ़ है, और लिखा है कि अक्सर का यही मज़हब है कि सबसे पहले "इक़रअ्" नाज़िल हुई।

इस आख़िरी क़ौल की निस्बत एक रिवायत और मेरी नज़र से

1-तत्परता, स्वीकृति का सम्बोधन / हां, हाज़िर हूँ।

गुज़री है जो साहिबे तफ़्सीर नीशापूरी ने सूर: फ़ातिहा की तफ़्सीर में लिखी है :

قد صح عن النبی صلی اللہ علیہ وسلم فی حدیث ابی بن کعب انہا من اول ما نزل من القرا ن و انہا السبع المثانی -

(برحاشیہ طبری - ۱ : ۷۲)

बिला शुब्हा उबय बिन काब की हदीस में आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से ये क़ौल साबित हो चुका है कि सूर: फ़ातिहा ही क़ुरआन में से पहली चीज़ है जो नाज़िल हुई और वही अस्सबउ़ल-मसानी है

(बर-हाशिया तबरी- 1: 72)

लेकिन मुफ़स्सिर मौसूफ़ का ये क़ौल उनकी नावाक़फ़ियते-फ़न्ने हदीस[1] और तसाहुले नक़्लो-रिवायत[2] पर शाहिद[3] है और इस अम्र का एक बय्यिन[4] सबूत है कि मुफ़स्सिरीन मुतअख़्ख़िरीन का ये तबक़ा फ़न्ने हदीस से किस क़द्र ना-आश्ना है और अगर एक शख़्स इन लोगों पर एतमाद कर ले तो वो कैसी सख़्त ग़लतियों में अपने आप को ग़र्क़ पाएगा।

इस इबारत को पढ़ कर हर शख़्स यही समझेगा कि हज़रत उबय बिन काब ने कोई रिवायत नक़्ल की है और इसमें साफ़-साफ़ मौजूद है कि क़ुरआन में से पहली चीज़ जो उतरी वो सूर: फ़ातिहा है, हालाँकि असलियत इसके बिल्कुल ख़िलाफ़ है, तमाम कुतुबे सिहाह[5] में हज़रत उबय बिन काब की कोई रिवायत ऐसी नहीं जिस में ये मौजूद हो कि ''انہا اول ما نزل من القرآن'' (यानी क़ुरआन की सबसे पहले नाज़िल होने वाली सूरत, सूर: फ़ातिहा है।) और न

1-हदीस शास्त्र में अज्ञानता 2-रिवायत लिखने में शिथिलता, असतर्कता। 3-साक्ष्य। 4-खुला। 5-सहीह हदीसों की किताबों।

आम मजामे व अस्फ़ारे-हदीस[1] में कोई रिवायत इस मज़्मून की मिल सकती है।

बिला-शुब्हा उबय बिन काब की एक मुफ़स्सल[2] रिवायत फ़ज़ीलते[3] फ़ातिहा के मुतअ़ल्लिक़ मौजूद है जिसको अस्हाबे सिहाह व मसानीद[4] ने बिल-इत्तिफ़ाक़ रिवायत किया है और जिस में आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि सूरः फ़ातिहा अस-सब्उल-मसानी है। लेकिन इस रिवायत में ये कहीं भी नहीं है कि सूरः फ़ातिहा सबसे पहले उतरी।

इसी एक वाक़िए से अन्दाज़ा कर लेना चाहिए कि इन मुफ़स्सिरीन मुतअख़्ख़िरीन की रिवायाते मुन्दरज-ए-तफ़्सीर का क्या हाल है।

इनके अ़लावा आ़म्म-ए-मुफ़स्सिरीन[5] के और भी मुख़्तलिफ़ अक़्वाल हैं। मगर ये मसअला फ़न्ने हदीस की मालूमात से तअ़ल्लुक़ रखता है और इस बारे में मुफ़स्सिरीने महज़ के अक़्वाल क़ाबिले एतिना नहीं।

तत्बीक़े रिवायात

अब हमको कोशिश करनी चाहिए कि इन तमाम रिवायात पर नज़र डालें और किसी तशफ़्फ़ी-बख़्श हक़ीक़त तक पहुँच सकें।

सबसे पहला सवाल ये सामने आता है कि क़ुरआने हकीम के आग़ाज़े वह्य व तन्ज़ील[6] के मुतअ़ल्लिक़ इस क़द्र मुख़्तलिफ़ अक़्वाल व रिवायात क्यों हैं और क्या इससे ये नतीजा नहीं निकलता कि

1-हदीस के सामान्य संकलनों। 2-विस्तृत। 3-बड़ाई, श्रेष्ठता। 4-सहीह व प्रामाणित हदीसें बयान करने वाले सहाबियों। 5-व्याख्याकारों के सामान्य वर्ग। 6-वह्य के अवतरण व आरंभ।

तारीख़ तन्ज़ीले क़ुरआन की इब्तिदा मुतहक़्क़क़[1] व वाज़ेह नहीं है।

लेकिन हमारे नज़दीक ऐसा एतिराज़ करना महज़ तक़सीरे नज़र व अदमे ज़ौक़े फ़न्न का नतीजा होगा। ब-ज़ाहिर अगर्चे इन रिवायात में इख़्तिलाफ़ नज़र आता है मगर फ़िल-हक़ीक़त कोई इख़्तिलाफ़ नहीं है। सब एक ही हक़ीक़त को वाज़ेह कर रही हैं और इन चारों क़ौलों में से कोई क़ौल भी ऐसा नहीं जो अस्लन ग़लत हो। मुतअख़्ख़िरीन की एक आम ग़लती ये है कि वो तत्बीक़ व तह्क़ीक़े रिवायाते मुख़्तलिफ़ा की कोशिश बहुत कम करते हैं और अगर एक अदना-सा इख़्तिलाफ़ भी दो बयानों में नज़र आ जाता है तो फ़ौरन कह उठते हैं कि ये दो मुख़्तलिफ़ मज़ाहिब व अक़्वाल हैं। अ़लल-ख़ुसूस[2] फ़न्ने हदीस में तो इस तरह का तसाहुल[3] उमूमन किया गया है और तमाम उलूम से ज़्यादा ख़तरनाक है।

हक़ीक़त इंबिआ़से वह्य

सबसे पहले ये समझ लेना चाहिए कि इस मसअले के समझने में उमूमन एक बुनियादी ग़लती हो जाती है और जब तक वो ग़लती साफ़ न हो जाए, हक़ीक़त वाज़ेह नहीं हो सकती। एक चीज़ है क़ुरआने हकीम की पहली सूरत जो साहिबे क़ुरआन पर नाज़िल हुई और एक चीज़ है सबसे पहली वह्य जिससे सिलसिल-ए-तन्ज़ीले वह्य शुरू हुआ। ये दो मुख़्तलिफ़ चीज़ें हैं, लेकिन बहुत-से इसमें फ़र्क़ नहीं करते और इसलिए जब कभी इन दोनों मुख़्तलिफ़ हालतों के मुतअ़ल्लिक़ मुख़्तलिफ़ बयान नज़र आते हैं तो इस धोके में पड़ जाते हैं कि एक ही हक़ीक़त के मुतअ़ल्लिक़ दो मुख़्तलिफ़ बयानात हैं।

1-सत्य पर आधारित। 2-विशेषतया। 3-ढिलाई, लापरवाही।

मरातिब अरब-ए-ज़ुहूर

हज़राते अंबिया-ए-किराम अलैहिमुस्सलाम की हयाते मुक़द्दसए नुबुव्वत[1] के मुख़्तलिफ़ मराहिल[2] व मरातिब[3] हैं और एक मुरत्तब व मुनज़्ज़म[4] सिलसिल-ए-उरूज[5] के साथ वो यके-बाद दीगरे हर मन्ज़िल से गुज़रते हुए आख़िरी मन्ज़िल तक पहुँचते हैं। इनमें से हर मक़ाम और मन्ज़िल के लिए ख़ास-ख़ास हालात व वारिदात हैं और क़ुरआने हकीम ने इन सबकी तशरीह की है।

नुबुव्वत एक बीज है जो अंबिया की सर-ज़मीने क़ल्ब[6] में वदीअत[7] किया जाता है और वो अन्दर ही अन्दर नशो-नुमा[8] पाता और मुख़्तलिफ़ इब्तिदाई मरातिबे नशो-इंबिसात[9] से गुज़रता जाता है, यहाँ तक कि वो वक़्त आता है जब उसकी क़ुव्वते नशो-बस्त[10] हद्दे कमाल[11] तक पहुँच जाती है और उसकी शाखें उभरने और फैलने के लिए एक फ़िज़ा-ए-वसीअ[12] को ढूंढती हैं। उस वक़्त उसकी क़ुव्वते नशो का उभार बेक़रार हो-हो कर ज़ोर मारता और उभरने के लिए जोश खाता है। पस ज़मीन शक़[13] होती है और मख़्फ़ी[14] क़ुव्वते नशो अपने उभरने की राह निकाल लेती है। उसके बाद इशाअतो-ज़ुहूर का दौर आता है और उसकी फैली हुई शाखों से ज़मीन की बालाई[15] सतह घिर जाती है।

या मर्तब-ए-नुबुव्वत के लिए ज़ुहूर के पहले इन्तिज़ारो-बुलूग़ की एक रात होती है जिसके घंटे यके-बाद दीगरे गुज़र जाते हैं और

1-ईशदूतत्व। 2-चरण। 3-दर्जे, श्रेणियां। 4-व्यवस्थित। 5-पराकाष्ठा को पहुँचने का क्रम। 6-अंतः करण की धरती। 7-बोया। 8-पोषण, विकसित होना। 9-फलने-फूलने की श्रेणियों। 10-विकसित होने की क्षमता। 11-पूर्णता की सीमा। 12-विस्तृत वातावरण 13-फटती। 14-छुपी हुई। 15-ऊपरी।

रात तेज़ी के साथ बढ़ती है ताकि जल्द ख़त्म हो और सुब्ह की नुमूद शुरू हो जाए। पस ऐसा होता है कि सबसे पहले आफ़्ताब नहीं आता बल्कि आफ़्ताब[1] के तुलू[2] होने के आसार आते हैं और तुम देखते हो कि उफ़ुक़[3] पर आहिस्ता-आहिस्ता सफ़ेदी फैलने लगती है। ये सफ़ेदी बढ़ने लगती है और इसके बढ़ने के साथ ही तारीकी[4] का पर्दा भी जल्द-जल्द चाक होने लगता है, हत्ताकि ज़ुहूरे इज्लाले-आफ़्ताब[5] का वक़्ते मौऊद आ जाता है और मश्रिक़[6] की जानिब से रौशनियों और नूरानियतों का तख़्ते दरख़्शाँ[7] यका-यक तुलू हो जाता है। फिर उस तुलू के बाद भी मुख़्तलिफ़ मदारिज हैं और रौशनी मुतअ़द्दिद तदरीजी मन्ज़िलों से गुज़र कर आख़िरी मर्तबए ज़ुहूर तक पहुँचती है, सबसे पहले सिर्फ़ एक रौशन चेहरा नज़र आता है, फिर वो ऊँचा होता है और उसकी हल्की-हल्की शुआएँ[8] बुलन्द मीनारों और बाला ख़ानो की छतों पर पड़ने लगती हैं, नीचे की ज़मीनें उससे महरूम रहती हैं, फिर उसकी शुआएँ ज़्यादा बुलन्द और तेज़ होने लगती हैं और वो वक़्त आ जाता है जब ज़मीन का तमाम बाला व पस्त हिस्सा रौशनी को देख लेता है। ये चाश्त का वक़्त होता है, उसके बाद आख़िरी मर्तब-ए-कमाल निस्फ़ुन-नहार का वक़्त है, उस वक़्त सूरज का क़हरे हरारत और एलाने तजल्ली आख़िरी दर्जे तक पहुँच जाता है। तक्मीले-हरारत[9] के लिहाज़ से उसकी गरमी ज़मीन के एक एक ज़र्रे तक पहुँच जाती है, उसकी चमक का कोई आँख हरीफ़ाना[10] मुक़ाबला नहीं कर सकती और तक्मीले नूरानियत व तजल्ली के लिहाज़ से उस वक़्त ये हाल होता है कि एक तरफ़ ग़ार[11] और तह-ख़ाने तक दिन के वुजूद की शहादत देने लगते हैं,

1-सूर्य। 2-उदय। 3-क्षितिज। 4-अंधेरा। 5-सूर्य के तेजत्व। 6-पश्चिम। 7-चमकता हुआ। 8-किरणों। 9-ताप की पूर्णता। 10-प्रतिद्वंद्वात्मक। 11-गुफा।

दूसरी तरफ़ निहायत कम बसारत[1] वाली बीमार और धुंदली आँखें भी रौशनी को पा लेती हैं और ठोकर से बच जाती हैं। अलबत्ता अंधा हर हाल में नहीं देखेगा। उसके लिए निस्फ़ शब[2] की तारीकी, सुब्ह की सफ़ेदी, चाश्त की नूरानियत और निस्फ़ुन-नहार[3] की तजल्ली सब यक्साँ हैं :

سوآءٌ علیهم ءانذرتهم ام لم تنذرهم لا یؤمنون ۝ ختم اللّٰه علی قلوبهم وعلی سمعهم وعلی ابصارهم غشاوةٌ (٢:٦)

पस पहले रात होती है और सुब्ह का इन्तिज़ार, फिर इन्फ़लाक़े सुब्ह होता है, यानी सियाही फटती है और सफ़ेदी उसके अन्दर से फूट कर नुमायाँ होने लगती है, फिर ज़ुहूरे फ़ज्र है, यानी सुब्ह आ गई और सूरज का जमाले पिन्हाँ[4] बेनक़ाब होने लगा, फिर मर्तब-ए-ज़ुहा है, यानी सूरज अच्छी तरह नुमायाँ हो गया और धूप फ़ैलने लगी उसके बाद दिन है जबकि सूरज की तजल्ली-ए-कमाल मर्तब-ए-ज़ुहूरो-मुलतान तक पहुँच जाती है।

इसी तरह ज़ुहूरे आफ़्ताबे नुबुव्वत व इहाताए व सुलताने दीने इलाही के लिए भी बित्तरतीब चार मन्ज़िलें होती हैं जो अंबिया-ए-किराम अ़लैहिमुस्सलाम को पेश आती हैं और जिन की तरफ़ सूर: वश्-शम्स, वज़्ज़ुहा और सूर: फ़ज्र वग़ैरा में इशारा किया गया है और जिसकी हक़ीक़त हज़रत आ़इशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा की रिवायत में " فکان لایری رؤیا الا جاءت مثل فلق الصبح " से बिल्कुल वाज़ेह हो जाती है। पस पहले इन्तिज़ार की रात है जिसके घंटे यके-बाद दीगरे गुज़र जाते हैं ताकि जल्द से जल्द सुब्ह को पालें। ये वो

1-दृष्टि-क्षमता। 2-रात। 3-दोपहर। 4-छुपा हुआ प्रताप तेज़।

ज़माना है जो इंबिआसे वह्य यानी वह्ये इलाही के आने से पहले का ज़माना होता है और ऐसी हालत होती है जिसको बीज के अन्दर ही अन्दर नशो-नुमा पाने से भी तश्बीह दी जा सकती है। उसके बाद मर्तबए इन्फ़िलाक़ सुब्ह का है जबकि की इन्तिज़ार की रात ख़त्म हो जाती है मगर तुलूए आफ़्ताब के आने में अभी कुछ देर बाक़ी होती है, ये वक़्त अजीबो-ग़रीब क़िस्म का होता है जिसके समझने के लिए हमको सिर्फ़ तसव्वुरे सहीह व बालिग़ से काम लेना चाहिए, हम लफ़्ज़ों में उसके लिए कुछ नहीं पा सकते।

हक़ीक़ते इन्बिआस

शायद उस हालत का एक ख़फ़ीफ़[1] तसव्वुर हमको यूँ हासिल हो सके कि हम दुनिया के इन्क़लाबाते माद्दिया पर नज़र डालें, हम देखते हैं कि इब्तिदा में एक मवाद ब-तदरीज तैयार होता और पकता है, फिर जब उसकी तैयारी मुकम्मल हो चुकती है तो उस पर एक सख़्त हैजानी और इल्तिहाबी हालत तारी होती है। यानी उसके अन्दर एक शदीद भड़क और बेक़रारी पैदा हो जाती है और चाहती है कि तमाम हाइल पर्दों को चाक-चाक कर दे और उभर कर फट उठे। इस इल्तिहाब का नतीजा इन्फ़िजार होता है, यानी बिल-आख़िर माद्दा फट उठता है और अपने दौरे नुमू व ज़ुहूर को ख़त्म कर देता है।

इसी से आलमे रूहानियत[2] व क़ुदसियात के वारिदात के लिए एक नाक़िस मिसाल का काम लो, मर्तब-ए-नुबुव्वत के ज़ुहूर का वक़्त भी जब बिल्कुल क़रीब आ जाता है तो क़ुव्वते इलाहिय्य-ए-

1-हल्का-सा। 2-आत्मिक जगत।

नबविय्या की तक्मील उभरने और ज़ाहिर हो जाने के लिए खौलने और जोश मारने लगती है। और उसी का नतीजा है कि इस मर्तबे में पहुँच कर अंबिया-ए-किराम अ़लैहिमुस्सलाम पर एक सख़्त इल्तिहाबी इरादा तारी हो जाता है और ग़ैर नफ़्सानी इज़्तराब और एक पाको-मुनज़्ज़ह बेक़रारी से उनकी रूहे मुक़द्दस मामूर हो जाती है। अगर मर्तब-ए-नुबुव्वत एक बीज है तो ये वो वक़्त होता है जब उसकी क़ुव्वते नशो-नुमा का बुलूग़े कामिल ज़मीन को शक़ करके उभर आने के लिए बेक़रार हो जाता है। अगर वो एक क़ुव्वत है तो ये वो वक़्त होता है जब मख़्फ़ी ताक़त बिल्कुल कामिल व मुस्तैद हो कर उस फव्वारे की तरह जिसका बालाई मन्फ़ज़ न खोला गया हो, फट उठने और निकल आने के लिए खौलने और उबलने लगती है। अगर वो उफ़ुक़ हक़ीक़तो-इलाहिय्यत का एक तुलूए नूरानियत है तो ये वो वक़्त होता है जब शबे इन्तिज़ार ख़त्म हो चुकी होती है और जिस जमाले सुब्ह के लिए रात बेक़राराना व वालिहाना दौड़ती आई थी उसको बिल्कुल क़रीब पा कर सूरज के लिए इज़्तराब करती और उसके चेहर-ए-दरख़्शाँ के लिए तड़पती और बेक़रार हो जाती है।

पस उस वक़्त हज़राते अंबिया-ए-किराम अ़लैहिमुस्सलाम पर एक बेख़ुदाना इज़्तराब व इल्तिहाबे इश्क़ की-सी हालत तारी हो जाती है। वो एक ग़ैर मालूम हक़ीक़त के लिए बेक़रार, एक ग़ैर मतअ़य्यन[1] माशूक़ की जुस्तुजू में सर-गर्दां और एक ग़ैर मुफ़्हम इन्किशाफ़[2] व इन्बिआ़स की फ़िक्र में डूब जाते हैं, उनकी रूहानियते नुबुव्वत उस वक़्त बेक़रार हो-हो के और तड़प-तड़प के किसी ग़ैर

1-अनजान। 2-अज्ञात रहस्योद घाटन।

मुतअ़य्यन हक़ीक़त को ढूँढने और पुकारने लगती है और उनका इज़्तराब यक-सर एक सदा-ए-जुस्तुजू[1] और दावते सवाल होता है कि ऐ वो कि आने वाला, निकलने वाला और तुलू हो जाने वाला है! तू कहाँ है और क्यों अपने चेहरे पर से नक़ाब नहीं उलट देता और क्यों अपने जमाले दरख़्शाँ से ज़ुल्मतों और अंधयारियों को दूर नहीं कर देता?

जब कुछ दिनों तक जिसको हिकमते इलाही ने क़रार दे दिया है ये इज़्तराबाना हालत तारी हो चुकती है तो फिर पर्दों के हटने, तारीकियों के यक-सर शक़ हो जाने, बदलियों के यक-क़लम छट जाने और आसारे सुब्ह के नहीं बल्कि ख़ुद वुजूदे सुब्ह के तुलू हो जाने का अचानक वक़्त आ जाता है और उसके ज़ुहूर के लिए ये इज़्तराबी और इल्तिहाबी हालत बिल्कुल इस तरह मुहर्रिक[2] व दाई हो जाती है जिस तर एक आ़शिक़ की इन्तिहाई बेक़रारियाँ माशूक़ के बेताबाना निकल आने के लिए या किसी मुस्तैद मवाद का शिद्दते इल्तिहाब उसके इन्फ़िजार व इन्शिक़ाक़ के लिए या मौसम की सख़्त गरमी और उमस आसमान पर बदलियों के छा जाने और बाराने रहमत के उबल पड़ने के लिए।

सो उस वक़्त ऐसा होता है कि इज़्तराब व इल्तिहाब हद दर्जे तक पहुँच जाता है और इसलिए वह्ये इलाही भी अपनी पहली नुमूद में तस्कीन व तसल्ली की सदा बन कर चमकती है और सबसे पहले उस ग़ैर मुतअ़य्यन इश्क़ो-तलब को एक मुतअ़य्यन यक़ीनो-मारिफ़त के मर्तबे में लाती है और इश्क़ को माशूक़, तलब को मतलूब और पुकार को जवाब मिल जाता है। फिर फ़ेलो-इन्फ़िआ़ल[3], जज़्बो-

1-तलाश की आवाज़। 2-सक्रिय। 3-क्रिया-प्रतिक्रिया।

इन्जिज़ाब[1], असरो-तअस्सुर[2] दोनों बाहम जुड़ जाते और मिल जाते हैं और सुब्ह की सफ़ेदी बढ़ते-बढ़ते मर्तबए् "ज़ुहा" तक और फिर "वन-नहारि इज़ा तजल्ला" तक पहुँच जाती है।

दूसरे लफ़्ज़ों में इफ़्तिताहे वह्य का ये पहला मर्तबा होता है जो इसलिए् होता है ताकि दरवाज़े के खुलने का एलान करे और शख़्से-आज़मे-रिसालत[3] को आइंदा आने वाले कामों के लिए् तालीम दे कर तैयार कर दे। अगर वुजूदे नुबुव्वत का रिश्ता इन्सानों से एक मुअ़ल्लिम[4] वुजूद का है तो ये गोया वह्य का वो अव्वलीन ज़ुहूर होता है जो इन्सानों की तालीम के लिए् अभी मुअ़ल्लिम को नहीं भेजना चाहता बल्कि ख़ुद मुअ़ल्लिम पर सर-चश्मए्-इल्म को खोलता है।

सो यही वो मर्तब-ए्-ज़ुहूर के क़ुर्ब[5] की बेचैनी और बेक़रारी थी जिस ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को वादि-ए्-सैना के कोहो-बयाबान में एक पाक और मलकूती[6] सर-गर्दानी बख़्शी थी और वो एक ग़ैर मुतअ़य्यन मतलूब के इश्क़ में बग़ैर इसके कि जिहत और राह को मुक़र्रर करें, वालिहाना व बेताबाना निकल खड़े हुए् थे। फिर यही वो इज़्तराबे ज़ुहूर और इल्तिहाबे नुमूदे नुबुव्वत था जो ज़ुहूरे वह्य से पहले आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हयाते मुक़द्दसा में नज़र आता है और जिस ने तमाम अ़लाइक़े दुन्यावी[7] से यक-सर किनाराकशी कराके आप को ग़ारे हिरा के एक ऐसे गोशे में मोतकिफ़[8] करा दिया था जहाँ दुनिया और दुनिया वालों की सदाएँ

1-आकर्षण-प्रत्याकर्षण। 2-प्रभाव, क्रिया-प्रतिक्रिया। 3-वह महान व्यक्ति जिसको ईशदूतत्व की ज़िम्मेदारी दी गई। 4-शिक्षक। 5-पीड़ा। 6-भव्य, दैवीय। 7-सांसारिक सरोकारों। 8-एकांत स्थित।

नहीं पहुँच सकती थीं। वो पाक घबराहट और वो मुनज़्ज़ह बेक़रारी जो आप की रूहे मुक़द्दस पर तारी होती थी, जो रुक-रुक कर उभरती और ठहर-ठहर के बढ़ती थी और जो इस हद तक पहुँच गई थी कि कभी तो "قد خشيت على" से इसकी ताबीर की गई है और कभी "يتردى من رؤوس شواهق الجبال" (12) मे, सो ये तमाम वारिदात[1] इसी मक़ाम की तर्जुमानी करते हैं और फिर यही वो वारिद-ए-मुक़द्दस-ए-नुबुव्वत जिसकी तरफ़ " ووجدك ضالاً فهدى " में इशारा किया गया है और इसी का नतीजा है जिस से कभी "دثروني دثروني" की सदा उठी है और कभी "زملوني زملوني" की।

अब अस्ल मक़सूद की तरफ़ तवज्जोह करो। ये इज़्तराब अपने अन्दर एक निहायत क़वी व ताक़तवर दाइय-ए-वह्य[2] रखता है और इसलिए जब तलब की बेक़रारी हद दर्जे तक पहुँच जाती है तो मतलूब का चेहरा भी तस्कीनो-तसल्ली के लिए अचानक बेनक़ाब हो जाता है। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम पर ये आलम तारी था तो यका-यक उन्होंने वादि-ए-ऐमन के बुक़-ए-मुबारका[3] में एक रौशनी की चमक देखी और उसके अन्दर से पुकार उठी कि ऐ मूसा! तुम जिस हक़ीक़ते ग़ैर मुतअय्यना के (मुतालाशी हो) वो भी तुम्हें ढूँढ रही है और वक़्त आ गया है कि वह्ये इलाही तुमको (इख़्तियार) कर ले :

पस जब मूसा क़रीब आए तो उन्होंने निदा सुनी : " ऐ मूसा! मैं हूँ तुम्हारा परवरदिगार क़ुद्दूस, पा-बरहना[4] हो कर आओ।	فَلَمَّآ أَتٰهَا نُوْدِيَ يٰمُوْسٰى ۞ إِنِّيْٓ أَنَا رَبُّكَ فَاخْلَعْ نَعْلَيْكَ ۚ إِنَّكَ بِالْوَادِ الْمُقَدَّسِ طُوًى ۞

1-घटनाएं। 2-वह्य के प्रति आमंत्रण भाव। 3-पवित्र झाड़ी। 4-नंगे पांव।

وَأَنَا اخْتَرْتُكَ فَاسْتَمِعْ لِمَا يُوحَىٰ إِنَّنِي أَنَا اللَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا أَنَا فَاعْبُدْنِي وَأَقِمِ الصَّلَوٰةَ لِذِكْرِي إِنَّ السَّاعَةَ آتِيَةٌ أَكَادُ أُخْفِيهَا لِتُجْزَىٰ كُلُّ نَفْسٍ بِمَا تَسْعَىٰ ○

(٢٠: ١١-١٥)

तुम्हें मालूम हो कि मैंने तुमको अपनी सदाक़त की तब्लीग़ व दावत के लिए मुन्तख़ब कर लिया है। पस जो कुछ तुम पर वह्य किया जाता है उसको सुनो और उस की तरफ़ मुतवज्जह हो जाओ। मैं ही ख़ुदा-ए-वाहिद जुल-जला हूँ, मेरे सिवा और कोई नहीं, मेरी ही बन्दगी करो और मेरे ही ज़िक्र के लिए नमाज़ को क़ायम करो। बिला शुब्हा फ़ैसला करने वाला दिन आने वाला है। हम उस घड़ी को पोशीदा रखने वाले हैं ताकि हर इन्सान अपने उन आमाल का नतीजा पा ले जिनके लिए वो कोशिश करता है। (20: 11-15)

पस ये अव्वलीन निदा-ए-हक़ जो हज़रत मूसा (अ़ला नबिय्यिना व अ़लैहिस्सलाम) ने सुनी, वह्ये इलाही का सबसे पहला इन्किशाफ़[1] था और जो सिर्फ़ इसलिए था ताकि बंद दरवाज़ा खुल जाए और शख़्से नुबुव्वत अपने सामने अपने क़रारदादा और तयशुदा कामों को पा ले। ये मुअ़ल्लिमे हक़ के लिए तालीम का अव्वलीन इफ़्तिताह था।

1-प्रकटन, उद्घाटन।

ठीक-ठीक इसी अव्वलीन सदाए. हक़ के मुक़ाबले में वो वारिद-ए- नुबुव्वत है जो आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ग़ारे हिरा की गोशा नशीनी के अय्यामे मुबारका में तारी हुआ। जिस तरह वहाँ तक्मीले वक़्त ने एक इज़्तराब व इल्तिहाबे रूहानी हज़रत मूसा पर तारी कर दिया था उसी तरह यहाँ भी वक़्ते ज़ुहूर के क़ुर्ब ने एक मुक़द्दस व पाक बेक़रारी शख़्से अक़्दस[1] व आज़मे नुबुव्वत[2] पर तारी कर दी और देखो कि आबादी का क़ियाम तर्क करके और दुन्यवी अ़लाइक़ से किनाराकश हो कर एक पहाड़ के ग़ार को अपनी रूहानियत का मम्कन[3] बनाया। जिस तरह वहाँ दाइय-ए-नुबुव्वत का इज़्तराब बिल-आख़िर ज़ुहूर सिलसिल-ए-वह्य के लिए (मुहर्रिक) हुआ, उसी तरह यहाँ भी इश्क़े ज़ुहूर की भड़क और इस्तेजाले[4] नुमूद की मलकूती शोरिश इंबिआ़से वह्य की बारिश के लिए तलब की प्यास बनी। और फिर जिस तरह वहाँ रौशनियों के अन्दर से निदा उठी थी उसी तरह यहाँ भी नामूसे अकबर[5] ने ज़ाहिर हो कर सिलसिल-ए-वह्य के अव्वलीन मर्तब-ए-तालीम को शुरू किया। वहाँ सिर्फ़ आवाज़ थी और सिर्फ़ चिंगारियों की नुमूद, क्योंकि मर्तब-ए-मूसवी[6] इतने ही हक़ का मुतहम्मिल[7] था। पर यहाँ निदाए. महज़[8] और नुमूदे नूर की जगह ख़ुद नामूसे अकबर ने अपने वुजूद को ज़ाहिर किया, क्योंकि मर्तब-ए-मुहम्मदी का मक़ाम दूसरा था, व लॅ-निअ़म मा क़ील :

मूसा ज़ होश रफ़्त ब-यक पर-तौ सिफ़ात
तू ऐ़ने ज़ात मी निगरी दर तबस्सुमी

1-पवित्र मानव। 2-महान नबी। 3-घर। 4-तेज़। 5-महान फ़रिश्ता। 6-मूसा का दर्जा। 7-सहने योग्य। 8-मात्र आवाज़।

عَلَّمَهٗ شَدِيْدُ الْقُوٰى ۝ ذُوْ مِرَّةٍ فَاسْتَوٰى ۝ وَهُوَ بِالْاُفُقِ الْاَعْلٰى ۝
ثُمَّ دَنَا فَتَدَلّٰى ۝ فَكَانَ قَابَ قَوْسَيْنِ اَوْ اَدْنٰى ۝ (53 : 5-9)

सो जिस तरह वहाँ अव्वलीन मुख़ाब-ए-वह्य यूँ हुआ था कि "اَنَا اخْتَرْتُكَ فَاسْتَمِعْ لِمَا يُوْحٰى" मैं ने तुझे दावते हक़ और तब्लीगे़ हुक्मे इलाही के लिए इख़्तियार कर लिया है, तू मेरे पैग़ामों और हुक्मों को सुन ताकि दुनिया वालों को पहुँचा सके, उसी तरह यहाँ अव्वलीन मुख़ातिबा यूँ हुआ कि मलए आला का नामूसे अकबर ज़ाहिर हुआ और उसने कहा "اِقْرَأْ" पढ़ और पढ़ना और बयान करना शुरू कर। फिर उसके बाद मर्तब-ए-हुक्मे इन्ज़ार आया तो निदा उठी "قُمْ فَاَنْذِرْ" तू चादर ओढ़ कर लिपटा हुआ है हालाँकि तमाम आ़लमे इन्सानियत जमाले दीदार के लिए बेताब है। उठ कि इन्तिज़ार का वक़्त ख़त्म हो गया और डरा कि डराने का वक़्त आ गया।

इंबिआ़से वह्य व तन्ज़ीले सुवर

इस तम्हीदी बयान से तुम पर वाज़ेह हो गया होगा कि जब कभी अंबिया-ए-किराम अ़लैहिमुस्सलाम पर तन्ज़ीले वह्य[1] का सिलसिला शुरू होता है तो इब्तिदा में सिलसिल-ए-वह्य के खुलने और मुख़ातब-ए-इलाही के शुरू होने की अव्वलीन मन्ज़िल नमूदार होती है और ये गोया ख़ुद वुजूदे नुबुव्वत की ताली का पहला मर्तबा होता है। उसके बाद जब पर्दे उठ जाते हैं और शख़्से नुबुव्वत का रब्तो-इलाक़ा[2] अ़लामे वह्य से क़ायम हो जाता है तो सिलसिला आगे बढ़ता है और हुक्मे इन्ज़ारो-तालीम क़ौम व उम्मत को पहुँचता

1-वह्य उतरने का। 2-सम्पर्क।

है। उसके बाद फिर जब तक अल्लाह की हिकमत[1] चाहती है इस सिलसिले को जारी रखती है।

नीज़ तुम पर ये अम्र भी वाज़ेह हो गया होगा कि एक चीज़ है वह्य व मुख़ातब-ए-इलाही का शुरू होना और एक चीज़ है अहकामो-अवामिर व वसाइरे इलाहिय्या की तन्ज़ीलो-तरतीब, दोनों को मिला नहीं देना चाहिए।

अब हम मसअल-ए-अव्वलिय्यते-नुज़ूले-क़ुरआन[2] की तरफ़ मुतवज्जह होते हैं। तमाम रिवायात व दलाइल पर ग़ौर करने से मालूम होता है कि सबसे पहले वह्य व मुख़ातब-ए-इलाही का जो इफ़्तिताह हुआ वो हुक्म "इक़रअ्" से हुआ, यानी हुक्म हुआ कि वह्य इलाही को पढ़ना शुरू करो, जब आप ऐसा कर चुके तो हुक्मे तब्लीग़ हुआ "क़ुम फ़अन्ज़िर" उठो और फ़रामीन[3] इलाही को लोगों तक पहुँचाओ, पस आप उठे, जब उठे तो सबसे पहली सूरत जो क़ुरआन और "अल-किताब" में से आप पर उतारी गई, जो तमाम क़ुरआन व वह्ये इलाही का ख़ुलासा और दीने इलाही की हक़ीक़ते जामिआ और सलाते-इलाही[4] की अस्ल व असास थी और जिसके बग़ैर दावते इस्लाम और तालीमे उम्मत मुसल्लमा हो ही नहीं सकती थी, वो सूर: फ़ातिहा है, यानी पहली सूरत जिससे तन्ज़ील व तालीम भी शुरू हुई और तरतीब "अल-किताब" भी।

इस सिलसिले में 'اِقْرَأْ بِاسْمِ رَبِّكَ الَّذِی خَلَقَ' ब-मन्ज़िला उस अव्वलीन सदा के है जो वादि-ए-ऐमन में اَنَا اخْتَرْتُكَ فَاسْتَمِعْ لِمَا یُوْحٰی के लफ़्ज़ों में सुनाई दी थी और 'یٰۤاَیُّهَا الْمُدَّثِّرُ قُمْ فَاَنْذِرْ' बिल्कुल वैसा

1-प्रज्ञा, विज़डम। 2-कुरआन के सर्वप्रथम अवतरित होने वाले अंश का मसला। 3-आदेश। 4-ईश्वर की प्रार्थना।

ही हुक्म है जैसा कि हज़रत मूसा को हुआ था :

फ़िरऔन की तरफ़ दावते हक़ लेकर जाओ, उसने बड़ी ही सरकशी की है। "اِذْهَبْ اِلٰى فِرْعَوْنَ اِنَّهٗ طَغٰى"

हज़रत मूसा की दावत बनू इस्राईल की निजात और मुक़ाबल-ए-फ़िरऔन के लिए मख़्सूस[1] थी, इसलिए हुक्मे इन्ज़ार में फ़िरऔन का ख़ास तौर पर ज़िक्र किया गया, लेकिन दाइये इस्लाम की दावत तमाम कुर-ए-अर्ज़ी[2] और नौअ़े इन्सानी[3] की निजात[4] और तमाम फ़राइना[5] व नमारिद-ए-आ़लम[6] के मुक़ाबले के लिए थी, इसलिए हुक्मे इन्ज़ार में किसी ख़ास क़ौम और शख़्स का नाम नहीं लिया गया, बल्कि आ़म तौर पर अ़लल-इत्लाक़ फ़रमाया: ''कुम फअन्ज़िर'' उठो और डराओ।

ये अम्र कि नुज़ूले ''इक़रअ्'' महज़ इफ़्तिताहे वह्य है न कि नुज़ूले सूरत, मुतअ़द्दिद वुजूह से बिल्कुल वाज़ेह है। सबसे पहले इस पर ग़ौर करो कि हज़रत आ़इशा की रिवायते मुन्दरजा बुख़ारी में है कि हज़रत जिब्रील ने अपने अव्वलीन ज़ुहूर में तीन बार सिर्फ़ ''इक़रअ्'' कहा और आख़िरी बार ''मा लम यअ़लम'' तक यानी इब्तिदा की चार आयतों तक पढ़ाया। इससे साफ़ ज़ाहिर होता है कि ये पूरी सूरत का नुज़ूल न था, बल्कि सिर्फ़ इब्तिदाई टुकड़ा था। फिर इस पर ग़ौर करना चाहिए कि इब्तिदा की इन चार आयतों का मतलब क्या है :

اِقْرَاْ بِاسْمِ رَبِّكَ الَّذِىْ خَلَقَ ٥ خَلَقَ الْاِنْسَانَ مِنْ عَلَقٍ ٥ اِقْرَاْ

1-विशेष तौर पर। 2-विश्व। 3-मानव जाति। 4-मुक्ति। 5-फिरऔनी। 6-संसार के नमरूदों (दुष्टों)।

وَرَبُّكَ الْأَكْرَمُ الَّذِي عَلَّمَ بِالْقَلَمِ o عَلَّمَ الْإِنسَانَ مَا لَمْ يَعْلَمْ o

इन आयतों में सिर्फ़ आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मुख़ातिब करके पढ़ने का हुक्म दिया गया है और अल्लाह तआ़ला के उस फ़ज़्लो-करम और हिकमतो-तालीम की तरफ़ तवज्जोह दिलाई है जो एक उम्मी[1] से तमाम आ़लमे इन्सानियत की तालीम का काम ले सकती है, नीज़ इल्म व मर्तब-ए-इल्म को ज़ाहिर किया है। पस ये आयतें अगर्चे आगे चल कर एक सूरत की इब्तिदा क़रार पायीं, लेकिन मअ़नन[2] महज़ वह्ये इलाही का इफ़्तिताह था और इसमें वह्य की पढ़ने, बाबे इल्म व तअ़ल्लुम[3] के खुलने और मुस्तइद-कार[4] हो जाने का हुक्म दिया गया था।

ये पहली मन्ज़िल थी जो आप को पेश आई। जब आप पढ़ चुके और इलाक़ा व रब्ते वह्य क़ायम हो गया तो मर्तब-ए-तब्लीग़ो रिसालत का ज़ुहूर हुआ और दूसरा हुक्म आया कि अब काम शुरू कर दो, यानी "क़ुम फ़अन्ज़िर" ये भी किसी सूरत का नाज़िल होना नहीं था, बल्कि सिर्फ़ इफ़्तिताहे वह्य के बाद काम के शुरू कर देने का हुक्म। चुनांचे इसी रिवायते हज़रत जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह में जिस के आख़िरी टुकड़े को इमाम बुख़ारी ने भी "कैफ़ कान बद्उल-वह्यि" में लिया है, ये तसरीह मौजूद है :

فَقُلْتُ زَمِّلُونِي زَمِّلُونِي
فَأَنْزَلَ اللّٰهُ " يَا أَيُّهَا الْمُدَّثِّرُ "
إِلَىٰ قَوْلِهِ

पस मैंने ख़दीजा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से कहा: मुझे कपड़े में लपेट दो, मुझे लपेट दो। इस पर अल्लाह ने नाज़िल किया

1-निरक्षर, बेपढ़ा। 2-अर्थ की दृष्टि से। 3-पढ़ने-पढ़ाने। 4-तैयार।

"या अय्युहल-मुद्दस्सिर" से "फ़ह्जुर" तक। "فَاهْجُرْ"۔

यानी आग़ाज़े-सूर-ए-मुद्दस्सिर में से सिर्फ़ इस क़द्र नाज़िल किया कि :

يٰۤاَيُّهَا الْمُدَّثِّرُ ۝ قُمْ فَاَنْذِرْ ۝ وَرَبَّكَ فَكَبِّرْ ۝ وَثِيَابَكَ فَطَهِّرْ ۝ وَالرُّجْزَ فَاهْجُرْ ۝

ऐ कपड़ा ओढ़ कर पड़ जाने वाले! उठ और लोगों को अज़ाबे इलाही से डरा, अपने पर्वरदिगार की किबरियाई[1] का एलान कर, अपनी रूह को पाको-मुनज़्ज़ह कर[2] (13) और बद-आमाल[3] क़ौम की गंदगियों से अलग हो जा।

पस ज़ाहिर है कि इन आयतों में भी सिर्फ़ हुक्मे इन्ज़ारो-तब्लीग़ है जो इफ़्तिताहे वह्य और क़ियामे राब्ता व इलाक़ा मब्द-ए-तन्ज़ील के बाद दूसरी मन्ज़िल थी। क़ुरआने हकीम के तालीमी हिस्से में से ये कोई चीज़ नहीं है और ये अहकाम ख़ुद ज़ाहिर कर रहे हैं कि अभी काम शुरू नहीं किया गया है, काम करने वाले को मुस्तैद किया जा रहा है।

चुनांचे क़ुदमा में से भी बाज़ अरबाबे नज़र ने इस हक़ीक़त को वाज़ेह किया है। हज़रत जाबिर की रिवायत और हज़रत आइशा की रिवायत में तत्बीक़ देते हुए हाफ़िज़ सुयूती रहमतुल्लाह अलैह लिखते हैं :

1-बड़ाई, महिमा। 2-पाक-साफ़। 3-बुरे कर्म करने वाली।

और बाज़ ने यूँ तत्बीक़ दी है कि सबसे पहली चीज़ जो नुबुव्वत के लिए उतरी "इक़रअ्" है और सबसे पहली चीज़ जो रिसालत के लिए नाज़िल हुई वो "या अय्युहल्-मुद्दस्सिर" है। (इत्क़ान: 54)	وعبر بعضهم عن هذا بقوله أول ما نزل للنبوة " اقْرَأْ " وأول ما نزل للرسالة " يَاأَيُّهَا الْمُدَّثِّرُ " (اتقان: ٥٤)

और इससे भी ज़्यादा रौशन राय वो है जो बाज़ मुहक़्क़िक़ीन व अरबाबे नज़र की निस्बत से अबू उमामा बिन नक़्क़ाश ने नक़ल की है और मवाहिबे लदुन्नियह में क़स्तलानी ने भी इससे इस्तिदलाल किया है, हैसु क़ाल (जैसा कि कहा) :

इक़रअ् के नुज़ूल में मक़ानुबुव्वत का हुसूल और मुद्दस्सिर के नुज़ूल में रिसालत का, यानी डराने और बशारत देने का। इसके नुज़ूल को "इक़रअ्" के बाद ही होना था, क्योंकि सूर: इक़रअ् में ख़िल्क़ते इन्सानी के उन मुख़्तलिफ़ दौरों का ज़िक्र किया गया है जिन का तअ़ल्लुक़ ख़ल्क़[1], तालीमो-रुश्द[2] और इर्तिक़ा-ए-फ़हमो-इदराक[3] से	كان في نزول "اقرأ" نبوته وفي نزول "مدثر" ارسالة بالنذارة والبشارة ـ وهذا قطعا متأخر عن الأول ، لأنه لما كانت سورة "اقرا" متضمنة لذكر اطوار الادمي من الخلق والتعليم والافهام ناسب ان تكون اول سورة

1-सृष्टि, सृजन। 2-शिक्षा-विवेक। 3-बोध व समझ का विकास।

انـزلـت ـ وهـذا هـو الترتيب الطبيعى وهـو ان يـذكـر سبحانه مـا أسداه الى نبيه من الـعلم والـفـهـم والـحـكـمة والـنبوة ٠ ٠ ٠ ٠ ثـم يأمـر بان يقوم فينذر عباده ـ

(مواهب : ١/٤٤)

है। पस ज़रूरी था कि वही आयतें पहले नाज़िल होतीं और सिलसिल-ए-इल्मो-तअ़ल्लुम को उनकी तन्ज़ील से शुरू किया जाता। ये एक तरतीब तबीई सिलसिल-ए-वह्य की है कि सबसे पहले अल्लाह तआ़ला उस इल्मो-हिकमत और नुबुव्वत के मक़ामात का ज़िक्र करे जिनके लिए उसने शख़्से नुबुव्वत को चुन लिया है और फिर उसके बाद उस चीज़ की इत्तिला दे जिसके लिए ये मरातिब उसको अ़ता किए गए हैं।

(मवाहिब: 1/44)

ये अक़्वाल देख कर मुझे निहायत ख़ुशी हुई। जिन बुज़ुर्गों का ये क़ौल है यक़ीनन उनका यही मक़सूद था कि इफ़्तिताहे वह्ये तन्ज़ील में बित्तरतीब दो मन्ज़िलें पेश आती हैं : पहला मर्तबा ये होता है कि वुजूदे नुबुव्वत को वह्ये इलाही अपनी जानिब मुख़ातिब करे और उससे इलाक़-ए-वह्य क़ायम किया जाए, इसको उन्होंने नुबुव्वत से ताबीर किया। दूसरी मन्ज़िल ये है कि जब राब्ता क़ायम हो गया तो अब काम के शुरू कर देने का हुक्म दिया गया, ये रिसालत है, यानी अहकामे इलाही की तब्लीग़ और इन्सानों तक हुक्मे ख़ुदा को पहुँचाना।

लेकिन अब तक अस्ली काम शुरू नहीं हुआ है। अस्ली काम क्या है? इन्ज़ार और बशारत, यानी आमाले-बद[1] के नताइज से डराना और आमाले-सालिहा[2] व क़बूले-हक़[3] के नताइजे-हसना[4] की ख़बर देना। नीज़ एक उममे-सालिहा[5] को तालीम व तज़्किय-ए-नुबुव्वत से तैयार कर देना और उनको वह्ये इलाही से किताबो-हिकमत का बतदरीज दर्स देना। जब वुजूदे मुअ़ल्लिम ख़ुद तालीम पा कर मुस्तैद हो गया जैसा कि "عَلَّمَ الْإِنسَانَ مَا لَمْ يَعْلَمْ" के अ़लीम व हकीम ने उसको पढ़ा दिया और फिर जब उसको हुक्म भी मिल गया कि अब तुम पढ़ाने के लिए तैयार हो गए हो, काम शुरू कर दो, यानी "क़ुम फ़अन्ज़िर" तो उसने एक तरफ़ इन्ज़िरो-बशारत का काम शुरू किया और दूसरी तरफ़ उम्मते मुस्लिमा को पढ़ाना और तालीमे किताबो हिकमत से तैयार करना। सो जब ऐसा हो चुका तो सबसे पहला दर्स, सबसे पहला सबक़, सबसे पहली तालीम जो दी गई वो सूर: "फ़ातिहा" का जामे व मानें[6] दर्स था और इन्हीं सात आयतों की तालीम थी कि फ़ातिहिय्यते आमाल व तालीमात सिर्फ़ इन्हीं के लिए है।

ये वो हक़ीक़ते ज़ुहूर व इंबिआ़से वह्य है जिसके मालूम करने के बाद तमाम रिवायात जमा हो जाती हैं और कोई इख़्तिलाफ़ बाक़ी नहीं रहता :

1 - इमाम बुख़ारी की रिवायत "كيف كان بدأ الوحي कैफ़ कान बद्उल-वह्यि" सबसे ज़्यादा मुस्तनद व मोतबर रिवायत है जो इस बारे में हम तक पहुँची है और तक़रीबन तमाम अइम्म-ए-फ़न[7]

1-बुरे कामों। नेक काम। 3-सत्य स्वीकृति। 4-सद परिणाम। 5-अच्छी क़ौम। 6-सम्पूर्ण व सार्थक। 7-इस विधा के विद्वानों।

ने इसको क़बूल किया है। ये बिल्कुल सहीह है, लेकिन इसमें सिर्फ़ बदए-वह्य यानी इन्फ़िलाक़े सुब्हे वह्य की ख़बर दी गई है, ये मुख़ातब-ए-वह्य का आग़ाज़ है और जिन-जिन सहाबा व ताबईन से अव्वलिय्यते इक़रअ्[1] मन्क़ूल[2] है सब ने इफ़्तिताहे वह्य ही की बिना पर इक़रअ् को अव्वलीन चीज़ क़रार दिया है।

2 - दूसरी रिवायात सूरः मुद्दस्सिर के मुतअ़ल्लिक़ हैं, बाज़ मुतअख़्ख़िरीन ने इनको एक दूसरा मज़हब क़रार दिया है, लेकिन फ़िल-हक़ीक़त इनमें और हज़रत आइशा की रिवायत में कोई इख़्तिलाफ़ नहीं। अ़ब्दुर रहमान बिन सलमा ने हज़रत जाबिर से पूछा है कि सबसे पहले कौन-सी चीज़ उतरी ? उन्होंने जवाब दिया कि "मुद्दस्सिर" लेकिन साइल[3] सुन चुका था कि पहला ख़िताब "इक़रअ्" है, इसलिए उसने फिर पूछा कि "इक़रअ्" या "मुद्दस्सिर"? हज़रत जाबिर ने कहा कि मैं वही कहता हूँ जो आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मैंने सुना है। फिर आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इर्शाद नक़ल किया है कि मैंने हज़रत जिब्रील को फ़िज़ा में देखा और घर पहुँच कर ख़दीजा से कहा कि मुझे चादर उढ़ा दो। इस पर ये आयत उतरी "या अय्युहल-मुद्दस्सिर"। ये भी बिल्कुल सहीह है, लेकिन इसमें सिर्फ़ इब्तिदा का इतना हिस्सा रह गया है कि हज़रज जिब्रील के अव्वलीन मुशाहदे में "इक़रअ्" का हुक्म हुआ और उसके बाद दूसरे मुशाहदे[4] के बाद "या अय्युहल-मुद्दस्सिर" उतरी। चुनांचे इसी रिवायत में आँहज़रत फ़रमाते हैं कि जब मैंने ऊपर निगाह उठाई तो क्या देखता हूँ कि "वही मौजूद है" यानी जिब्रील मौजूद हैं। वो का इशारा वाज़ेह करता है कि ये

1-इक़रअ की प्रथमता। 2-कही गई। 3-सवाल करने वाले। 4-साक्ष्य, प्रकटन।

मुशाहदा पहला नहीं है, अगर पहला होता तो इशारे से काम न लेते।

अस्ल ये है कि सिलसिल-ए-वाक़िआत को सामने रखने के बाद ये दोनों रिवायतें जमा हो जाती हैं। सबसे पहले जब फ़िरिश्तए इलाही जुहूर हुआ तो उसने कहा "इक़रअ्" उसके बाद भी आप ने ग़ारे हिरा का एतिकाफ़ बराबर जारी रखा। कुछ अर्से के बाद फिर आपने देखा कि वही मलक[1] फ़िज़ा में मौजूद है। ये देख कर आप पर इज़्तराब तारी हुआ और आपने कहा "दस्सिरूनी" उसके बाद "या अय्युहल-मुद्दस्सिर" नाज़िल हुई।

हमने जो रिवायत नक़ल की है वो सहीह मुस्लिम के बाब "बद्उल-वह्यि" में है, लेकिन इसी रिवायत को इमाम बुख़ारी ने "कैफ़ कान बद्उल-वह्यि" में हज़रत आइशा की रिवायत के बाद दर्ज किया है और इस तक़दीम[2] व ताख़ीरे-इन्दराज[3] से वाज़ेह कर दिया है कि पहला वाक़िआ "इक़रअ्" का और दूसरा "मुद्दस्सिर" का है। इससे तमाम इख़्तिलाफ़ दूर हो गया। इमाम बुख़ारी की यही दिक़्क़ते नज़र[4], हुस्ने इस्तिंबात, क़ुव्वते अख़्ज़ो-इस्तिदलाल, ख़ूबि-ए-तरतीबो-तक़सीम[5] और फ़ज़्ले मख़्सूस तब्वीबो-तराजिम[6] है जो उनको तमाम अइम्मा व मुज्तहिदीने फ़न में मुम्ताज़ करता है और जिस क़द्र काविश करते जाइये उसकी ख़ूबियाँ खुलती और बढ़ती जाती हैं।

रही ये बात कि हज़रत जाबिर ने ये क्यों फ़रमाया कि सबसे पहले "मुद्दस्सिर" उतरी तो शारिहीने सहीहैन[7] ने इस पर मुतअद्दिद

1-फ़िरिश्ता। 2-प्रस्तुति। 3-उद्धरण। 4-सूक्ष्म दृष्टि। 5-संकलन-वर्गीकरण की विशेषता। 6-लेखन-अनुवाद विशेष दक्षता। 7-सहीह हदीस-पुस्तकों के व्याख्याकारों।

पहलुओं से नज़र डाली है और हाफ़िज़ सुयूती ने तत्बीक़ की पांच सूरतें नक़ल की हैं। हाफ़िज़ हजर लिखते हैं कि हज़रत जाबिर का मक़सूद अव्वलिय्यत से ये था कि "इक़रअ्" का नुज़ूल तो महज़ वह्य का इफ़्तिताह था, किसी सबब की बिना पर नाज़िल नहीं हुई, इस सिलसिले की ये पहली चीज़ है। ये सूरते तत्बीक़ हमारे बयान के लिए एक मज़ीद ताईद है, क्योंकि हमारे नज़दीक भी "इक़रअ्" का नुज़ूल महज़ इफ़्तिताहे वह्य और तालीमे शख़्से मुअ़ल्लिम है। ताहम बेहतरीन जवाब वही है जिसको हाफ़िज़ सुयूती ने भी मान लिया है, यानी आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने आग़ाज़े वह्य के वाक़िआ़त बयान फ़रमाते हुए उस टुकड़े को बयान किया जो इफ़्तिताहे वह्य के बाद वह्य का दूसरा नुज़ूल है। हज़रत जाबिर ने ख़याल किया कि इसी से सिलसिल-ए-वह्य शुरू हुआ होगा। पस ये उनका इज्तिहाद[1] है न कि जुज़्ए रिवायत[2]। उनकी रिवायत को हज़रत आ़इशा की रिवायत से मोअख़्ख़र रख कर हम सहीह तरतीब पैदा कर लेते हैं। (इत्क़ान: 45)

3 - इसके बाद वो रिवायतें सामने आती हैं जिनसे मालूम होता है कि बाज़ अजिल्ल-ए-ताबईन[3] मसलन हसन और इकरमा का ये बयान था कि सबसे पहले "बिस्मिल्लाहिर-रह्मानिर्रहीम" उतरी तो ये भी बिल्कुल दुरुस्त है और ठीक-ठीक अस्ल मक़सूद की मोअय्यिद। सबसे पहली सूरत जो नाज़िल हुई और सबसे पहली तालीम जो वह्ये इलाही ने इन्सानों को दी वो सूर: फ़ातिहा है और "बिस्मिल्लाहिर-रह्मानिर्रहीम" सूर: फ़ातिहा ही की पहली आयत है। पस जिन ताबईन का ये क़ौल है वो दरअसल यही कह रहे हैं

1-मौलिक, निजी निष्कर्ष। 2-रिवायत का अंश। 3-बड़े अनुयायियों।

कि सबसे पहले सूर: फ़ातिहा उतरी, क्योंकि उसकी अव्वलीन आयत बिस्मिल्लाह है। इसको कोई अलाहिदा मज़हब क़रार देना सहीह नहीं।

4 - उसके बाद चौथा क़ौल है और वो ये है कि सबसे पहले सूर: फ़ातिहा नाज़िल हुई और मुन्दरजा बाला तश्रीह के बाद इस क़ौल में और इब्तिदा की तीनों रिवायतों में कोई इख़्तिलाफ़ बाक़ी नहीं रहता। बिला-शुब्हा ये हक़ है और इन्किशाफ़े वह्य व हुक्मे इन्ज़ारो-तालीम के बाद सबसे पहली सूरत जो नाज़िल हुई है और जिसके सिवा कोई सूरत पहली नहीं हो सकती थी, वो फ़ातिहतुल-किताब ही है। यही मज़हब हज़रत अ़ली अ़लैहिस्सलाम का भी था।

इस तमाम बयान के बाद तुम पर वाज़ेह हो गया होगा कि आग़ाज़े वह्य व अव्वले नुज़ूल के मुतअ़ल्लिक़ तमाम रिवायतों में और हज़राते सहाबा व ताबईन रिज़्वानुल्लाहि अ़लैहिम ....

(अजमल - एडीटर)

नोट : ये मुक़द्दमा इसी तरह ना मुकम्मल हालत में जनाब ख़ाँ साहब ने रवाना फ़रमाया है जिसके बारे में मौसूफ़ का वज़ाहती बयान मुल्हिक़ात में सफ़्हा न०: 675 पर देखिए। (म)

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
1	इन्तिसाब	मौलाना हकीम फ़ज़्लुर रहमान साहब सवाती (उम्र 70 साल) अफ़ग़ानिया यूनानी फ़ार्मेसी आम्बोर (मदरास) से रिसाला बुरहान देहली बाबत दिसम्बर 1959 ई० में लिखते हैं कि " ये बुज़ुर्ग मौलाना दीन मुहम्मद क़ंधारी थे। उलूम व मआरिफ़े इस्लामिया के फ़ाज़िल[1] थे। इस इन्तिसाब में उन्हीं की तरफ़ इशारा है। क़ंधार में 1927 ई० में इन्तक़ाल[2] कर गए और मौलाना की तफ़्सीर देखने का उन्हें इत्तिफ़ाक़ नहीं हुआ। उनका ये सफ़र ज़्यादा-तर पाप्याद[3] था। (अजमल)
2	37	जंगे यूरोप के ज़माने में जो मोवक़्क़त अहकाम नाफ़िज़ किए गए थे उनमें एक ऑर्डीनेन्स "डिफ़ेन्स ऑफ़ इंडिया" के नाम से मशहूर हुआ था, ये ऑर्डीनेन्स हुकूमते हिन्द और मक़ामी हुकूमतों को इख़्तियार देता था कि बग़ैर अदालती कार्रवाई के जिस को चाहें हिन्दुस्तान या हिन्दुस्तान के किसी सूबे से जिला वतन कर दें या नज़र-बन्द कर दें।
3	41	ये काग़ज़ात मुझे रिहाई के बाद

1-विद्वान। 2-देहांत। 3-पैदल।

हाशिया न०	सफ़हा न०	इबारत हाशिया
		1920 ई० में वापस मिले। रिहाई के बाद जब मैंने मुतालबा किया तो कई माह तक कोई नतीजा नहीं निकला। उस ज़माने में सूबाए बिहार के गवर्नर लॉर्ड सिन्हा थे। मुझ में और उनमें उस वक़्त से शनासाई[1] थी जब सन 1909 ई० में वो हुकूमते हिन्द के एगज़ीक्यूटिव कॉउन्सिल के मेम्बर हुए थे। वो इलाज के लिए कलकत्ता आए और एक दोस्त के यहाँ इत्तिफ़ाक़न मुलाक़ात हो गई। मैंने ये वाक़िआ उनसे बयान किया, उन्होंने हुकूमते हिन्द से ख़तो-किताबत की और दो हफ़्ते के बाद तमाम काग़ज़ात मुझे वापस मिल गए।
4	66	''जहाँ तक .... करते रहे थे'' इस फ़िक़रे का ये हिस्सा पहले एडीशन में नहीं है। (म)
5	68	तर्जुमा व तफ़्सीर की मअ़नवी मुश्किलात की तरह उसकी सुवरी[2] मुश्किलात भी थीं और इस राह का दूसरा मरहला ये था कि उन्हें हल किया जाए। उन मुश्किलात की शर्ह भी तूलानी है। तर्जुमानुल-क़ुरआन के ख़ातिमे में

1-जान-पहचान। 2-काल्पनिक।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		क़ुरआन के फ़ारसी, उर्दू और यूरोप के1920 ई० में वापस मिले, रिहाई के बाद जब तराजिम पर तब्सिरा किया गया है। इससे अन्दाज़ा किया जा सकेगा कि इस मरहले की मुश्किलात क्या-क्या थीं और वो क्या अस्बाब हैं जिनकी वजह से आज तक क़ुरआन के तराजिम में वज़ाहत और दिल-नशीनी पैदा न हो सकी। (एडीशन: 1, सफ़्हा: 73) म
6	70	**तफ़्सीरुल-बयान :** तफ़्सीरुल-बयान के लिए पिछली तरतीब मैंने अब तर्क कर दी है, क्योंकि मैं महसूस करता हूँ कि मुसलसल तफ़्सीर का क़दीम तरीक़ा मौजूदा ज़माने में आम मुतालआ के लिए मौज़ूँ नहीं है। एक ग़ैर मुरत्तब और ग़ैर मुन्क़सिम सिलसिले की ग़ैर मामूली दराज़ी अक्सर तबाए पर शाक़ गुज़रती है। अब मैं चाहता हूँ कि तफ़्सीर इस सूरत में मुरत्तब हो जाए कि इसी तर्जुमानुल-क़ुरआन के हर तर्जुम-ए-सूरत पर एक मुक़द्दमा या दीबाचे का इज़ाफ़ा कर

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		दिया जाए। तर्जुमे की वज़ाहत पहले से मौजूद है, नोटों की तश्रीहात जा-बजा रौशनी डाल ही रही है, ज़रूरत सिर्फ़ एक मज़ीद दर्जे-ए-बहसो-नज़र की है, वो हर सूरत के दीबाचे से पूरी हो जाएगी और ब-हैसियत मज्मूई तफ़्सीर के मतालिब इस तरह मुरत्तब और मुन्क़सिम रहेंगे कि मुसलसल तफ़्सीर का इन्तिशारे मतालिब[1] महसूस नहीं होगा। तर्जुमानुल-क़ुरआन को मैं ने दो मुतवस्सित[2] जिल्दों से ज़्यादा बढ़ने नहीं दिया है। अल-बयान के दीबाचों के इज़ाफ़े के बाद ज़्यादा से ज़्यादा चार जिल्दें हो जाएंगी। लेकिन इन चार जिल्दों में वो सब कुछ आ जाएगा जो तरतीबे क़दीम में शायद दस, ग्यारह जिल्दों की ज़ख़ामत में भी न आता। तफ़्सीर का जिस क़द्र क़दीम[3] मुसव्वदा बच रहा है, दोस्तों का इसरार है कि उसे भी अलाहिदा किताब की सूरत में शाय कर दिया जाए। जूँ-ही तर्जुमानुल-क़ुरआन से मैं फ़ारिग़

1-अर्थ में बिखराव या ढीलापन। 2-औसत दर्जे की। 3-पुरानी तरह के संकलनों।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		हुआ, सूरतों के दीबाचों की तरतीब पर मुतवज्जह हो गया, साथ ही मुक़द्दमए तफ़्सीर की तरतीब भी जारी है। (एडीशन: 1, सफ़्हा: 47) म
7	71	अस्ल तफ़्सीर की ज़ख़ामत[1] इस ख़ुलासे से डेवढ़ी समझनी चाहिए। तफ़्सीरुल बयान में वो सूर: फ़ातिहा का दीबाचा होगी और अपनी तफ़्सीली शक्ल में आ जाएगी। (एडीशन: 1, सफ़्हा: 75) म
8	72	हाली का ये शे'र दीवान में यूँ दर्ज है : *रहा हूँ रिन्द भी ऐ शैख़, पारसा भी मैं* *मेरी निगाह में है रिन्दो-पारसा एक-एक*
9	73	तर्जुमानुल-क़ुरआन,अल-बयान, मुक़द्दमए तफ़्सीर। (एडीशन :1, सफ़्हा: 76)
10	73	मेरा यक़ीन है कि मुसलमानों की ज़िंदगी व सआदत के लिए सर-चश्मए हयात हक़ीक़ते क़ुरआनी का इंबिआस है और मैंने कोशिश की है इसके फ़हमो-बसीरत का दरवाज़ा उनपर खुल जाए। मैं तर्जुमानुल-क़ुरआन शाय करते हुए महसूस करता हूँ कि इस बारे में जो कुछ मेरा फ़र्ज़ था, तौफ़ीक़े इलाही की

1-मोटापा, आकार।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		दस्त-यारी से मैंने अदा कर दिया, अब इसके बाद जो कुछ है वो मुसलमानों का फ़र्ज़ है और ये अल्लाह के हाथ है कि उन्हें अदाए फ़र्ज़ की तौफ़ीक़ दे : हदीसे इश्क़ो-मस्ती ज़ मन बशुनौ न अज़ वाइज़ कि बा जामो-सुबू हर शब क़रीने माह व परवेनम (एडीशन: 1, सफ़्हा: 76)
11	79	यहाँ से लेकर अस्ल तफ़्सीर सूरः फ़ातिहा तक मुक़द्दमा अल-बयान के बारहवें बाब का एक हिस्सा है। चूंकि सूरः फ़ातिहा के मुतअ़ल्लिक़ एक अहम बहस तारीख़े नुज़ूल और अव्वले नुज़ूल व इंबिआ़से वह्य की थी और ये बहस मुक़द्दमे में ब-तफ़्सील लिखी जा चुकी थी, इसलिए मुनासिब मालूम हुआ कि तफ़्सीरे फ़ातिहा के साथ मुक़द्दमे का वो टुकड़ा भी शाय कर दिया जाए। (मिन्हु) हज़रत आ़इशा की मशहूर हदीस आग़ाज़े वह्य की तरफ़ इशारा है जिसको इमाम बुख़ारी ने किताबुत-ताबीर में और दीगर अइम्म-ए-हदीस ने भी बकसरत रिवायत किया है।
12	111	हज़रत आ़इशा रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हा फ़रमाती हैं कि इब्तिदा-ए-वह्य

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		के ज़माने में जो मुख़्तलिफ़ हालात व वारिदात आप पर तारी हुए हैं, मिन-जुम्ला उनके एक हालत ये थी कि जब वह्ये इलाही शुरू हो कर कुछ अ़र्से के लिए रुक गई तो आपका हुज़्नो-इज़्तराब हद दर्जे तक पहुँच गया और कई बार ऐसा हुआ कि शिद्दते इज़्तराब में आप ने चाहा कि पहाड़ से अपने को गिरा दें। जो लोग मक़ामे नुबुव्वत के इन वारिदात व हालात की हक़ीक़त पर नज़र नहीं रखते, जिनकी तशरीह हम कर चुके हैं, वो अहादीसे सहीहा में इस क़िस्म के बयानात को देख कर घबरा जाते हैं और कहते हैं कि एक नबी की शान से इस क़द्र कमज़ोरी का ज़ुहूर बईद[1] है और इसलिए बेहतर है कि आग़ाज़े वह्य की रिवायतों को मौक़ूफ़[2] क़रार दे कर उनकी तज़्ईफ़ कर दी जाए: *क़िस्सा कोतह शुद वगर न दर्दे सर बिस्यार बूद* लेकिन हक़ीक़त ये है कि ये कमज़ोरी

1-मेल नहीं खाता। 2-हटाने योग्य।

हाशिया न०	सफ़हा न०	इबारत हाशिया
		नहीं है बल्कि क़ुव्वते अज़ीमए नबविय्या के ऐसे शवाहिदे बय्यिना[1] और आसारे सादिक़ा हैं जिन से अक़्ल सहीह बसीरत व बुरहान पाती है और जिनके अन्दर नज़रे हक़ व सादिक़ के लिए निशानियों और सदाक़तों की बड़ी ही नाक़ाबिले इनकार रौशनी है। ये कोई जिस्मानी कमज़ोरी और नफ़्सानी इज़्तराब नहीं है जो एक नबी की शान से बईद हो। ये रूह का वो मुक़द्दस और मलकूती इज़्तराब है जो अगर न हो तो एक नबी के नबी होने के लिए कोई दलील बाक़ी नहीं रहती। गो ये हक़ीक़त ज़्यादा तफ़्सील की मोहताज है, लेकिन कि जो तश्रीह बतौर इशारे के कर दी गई है वो फ़हमे मक़सूद के लिए काफ़ी होगी। फिर ये भी वाज़ेह रहे कि बुख़ारी की ये रिवायत इस दर्जा मरतब-ए-शोहरत व क़बूल तक पहुँच चुकी है और इस क़द्र कसरत से यकेबाद दीगरे तमाम तबक़ाते उम्मत ने इसकी तस्दीक़ो-तौसीक़ की है कि इमाम बुख़ारी के वुजूद से इनकार करना आसान है, मगर इस रिवायत से

1-खुले साक्ष्य।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		इनकार करना मुमकिन नहीं। रहा इस रिवायत का मौकूफ़ होना तो इसे भी हम तस्लीम नहीं करते। मअ़नन इसमें रफ़अ़ मौजूद है और हज़रत आ़इशा के ज़ाती इज्तहाद के इन्दराज की कोई अ़लामत नहीं। अगर हज़रत आ़इशा बावजूद इस क़ुर्बो-इत्तिसाल के जो आप को हासिल था, आग़ाज़ वह्य जैसे अहम वाक़िअ़े को महफ़ूज़ नहीं रख सकतीं तो फिर फ़न्ने शहादत[1] का दुनिया में ख़ातिमा हो चुका। लुत्फ़ ये है कि ये शुब्हा नया नहीं है बल्कि पहले भी हो चुका है और इन्सानों के अक्सर शुब्हात व ज़ुनून नये नहीं होते। हाफ़िज़ इब्ने हजर अ़स्क़लानी ने इसी रिवायत की तशरीह में मुहद्दिस इस्माईली का एक क़ौल नक़ल किया है, वो लिखते हैं कि मुहद्दिसीन पर बाज़ तान करने वाले एतिराज़ करते हैं कि : كيف يجوز لنبي ان يرتاب في نبوته حتى يرجع الى ورقة .... وحتى يوفي بذروة جبل ليلقي منها نفسه۔ الخ (फ़त्हुल-बारी, जिल्द: 12, सफ़्हा: 317)

1-साक्ष्य विधा।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		फिर मुहद्दिस मौसूफ़ ने इसका जवाब दिया है, मगर इसमें शक नहीं कि उन का जवाब तशफ़्फ़ी-बख़्श नहीं। हक़ीक़त वही है जो हम लिख चुके हैं। ये इज़्तराबे ज़ुहूर व इस्तेजाले नुमूदो-इल्तिहाब व इन्फ़िजारे क़ुव्वते नबविय्या व शिद्दते इश्क़ो-शग़फ़ हुसूले वह्य व मुख़ातब-ए-इलाही है और इसके सिवा और कुछ नहीं। इन वारिदाते मुक़द्दसा से मक़ामे नुबुव्वत और शख़्से अक़दसे नुबुव्वत की कमाले तम्दीक़ होती है। हाश कि जिस्मानी व नफ़्सानी कमज़ोरी का नतीजा हो या महज़ बशरी ज़ोफ़े तबा[1] का जैसा कि शारिहीने बुख़ारी और क़स्तलानी वग़ैरा ने लिखा है।
13	118	हम ने " وَثِيَابَكَ فَطَهِّرْ " का तर्जुमा किया है। अल्लामा इब्ने क़य्यिम ने अग़ासतुल-लहफ़ान में लिखते हैं : तमाम मुहक़्क़िक़ीन का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि यहाँ " ثِيَابَكَ " (सियाब-क) से मक़सूद कपड़ा नहीं है बल्कि क़ल्ब है।

1-मानवीय स्वभाव की दुर्बलता।

تفسیر "اُمُّ القُرآن"

तफ़सीर "उम्मुल-क़ुरआन"

यानी

تفسیر سورۂ فاتحہ

तफ़सीर सूर-ए-फ़ातिहा

١ـ اَلْفَاتِحَةُ

अल-फ़ातिहा

सूर: फ़ातिहा मक्की है और इसमें सात आयतें हैं

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

अल्लाह के नाम से जो रह्मान और रहीम है

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۝ مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ ۝ اِيَّاكَ نَعْبُدُ وَ اِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ ۝ اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ ۝ صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ ۝ غَيْرِ الْمَغْضُوْبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّآلِّيْنَ ۝

हर तरह की सताइश₁ (1) अल्लाह ही के लिए हैं जो तमाम काइनाते खिल्क़त₂ का परवर्दिगार है (2)। जो रहमत वाला है और जिसकी रहमत तमाम मख़्लूक़ात₃ को अपनी बख़्शिशों₄ से माला-माल कर रही है[2]। जो उस दिन का मालिक है जिस दिन कामों का बदला लोगों के हिस्से में आएगा[3] (3) (ख़ुदाया!) हम सिर्फ़ तेरी ही बन्दगी करते हैं और सिर्फ़ तू ही है जिससे (अपनी सारी एहतियाजों में) मदद मांगते हैं[4] (4)। (ख़ुदाया!) हम पर (सआदत की) सीधी राह खोल दे[5]। वो राह जो उन लोगों की राह हुई जिन पर तू ने इनाम किया[6]। उनकी नहीं जो फिटकारे गए और न उनकी जो राह से भटक गए[7] (5)।

नोट: क़ौसैन में जो नम्बरात हैं वो हवाशी के हैं और ऊपर की 3 लाइनों में हुरूफ़ के नीचे जो 4 नम्बर लगे हैं वो इस हाशिये के हैं।

1-स्तुति, प्रशंसा। 2-सृष्टि जगत। 3-सृष्टियों। 4-अनुकंपा-अनुदानों।

تفسیر سورۂ فاتحہ

तफ़्सीर सूर-ए-फ़ातिहा

(1)

सूरत की अहमिय्यत और ख़ुसूसियात

ये क़ुरआन की सबसे पहली सूरत है, इसलिए "फ़ातिहतुल-किताब" के नाम से पुकारी जाती है। जो बात ज़्यादा अहम होती है, क़ुदरती तौर पर पहली और नुमायाँ जगह पाती है। ये सूरत क़ुरआन की तमाम सूरतों में ख़ास अहमिय्यत रखती है, इसलिए क़ुदरती तौर पर इसकी मौज़ूँ जगह क़ुरआन के पहले सफ़्हे ही में क़रार पाई। चुनांचे ख़ुद क़ुरआन ने इसका ज़िक्र ऐसे अल्फ़ाज़ में किया है जिससे इसकी अहमिय्यत का पता चलता है :

ऐ पैग़म्बर! ये वाक़िआ है कि हम ने तुम्हें सात दोहराई जाने वाली चीज़ें अता फ़रमाईं और क़ुरआने अज़ीम ! (15: 87)	ولقد اٰتینٰك سبعا من المثانی والقرآن العظیم ۝ (۱۵ : ۸۷)

अहादीस व आसार[1] से ये बात साबित हो चुकी है कि इस आयत में "सात दोहराई जाने वाली चीज़ों" से मक़सूद यही सूरत है, क्योंकि ये सात आयतों का मज्मूआ है और हमेशा नमाज़ में दोहराई जाती हैं। यही वजह है कि इस सूरत को "अस्सब्उल-मसानी" भी

1-मूल स्रोतों।

कहते हैं (6)।

अहादीस व आसार में इसके दूसरे नाम भी आए हैं जिन से इसकी ख़ुसूसियात का पता चलता है, मसलन उम्मुल-क़ुरआन, अल-काफ़ियह, अल-कन्ज़, असासुल-क़ुरआन (7)।

अ़रबी में "उम्म" का इत्लाक़ तमाम ऐसी चीज़ों पर होता है जो एक तरह की जामइय्यत[1] रखती हों या बहुत-सी चीज़ों में मुक़द्दम और नुमायाँ हों या फिर कोई ऐसी ऊपर की चीज़ हो जिसके नीचे उसके बहुत-से तवाबे[2] हों। चुनांचे सर के दरमियानी हिस्से को उम्मुर-रअ्स कहते हैं क्योंकि वो दिमाग़ का मर्कज़ है। फ़ौज के झंडे को उम्म कहते हैं, क्योंकि तमाम फ़ौज उसी के नीचे जमा होती है। मक्का को उम्मुल-क़ुरा कहते हैं, क्योंकि ख़ान-ए-काबा और हज की वजह से अ़रब की तमाम आबादियों के जमा होने की जगह थी। पस इस सूरत को उम्मुल-क़ुरआन कहने का मतलब ये हुआ कि ये एक ऐसी सूरत है जिस में मतालिबे क़ुरआनी की जामइय्यत और मर्कज़िय्यत है या जो क़ुरआन की तमाम सूरतों में अपनी नुमायाँ और मुक़द्दम जगह रखती है।

असासुल-क़ुरआन के मअ्ना हैं क़ुरआन की बुनियाद। अल-काफ़ियह के मअ्ना हैं ऐसी चीज़ जो किफ़ायत करने वाली हो। अल-कन्ज़, ख़ज़ाने को कहते हैं।

अ़लावा-बरीं एक से ज़्यादा हदीसें मौजूद हैं जिन से मालूम होता है कि इस सूरत के ये औसाफ़[3] अ़हदे नुबुव्वत[4] में आ़म तौर पर मशहूर थे। एक हदीस में है कि आँहज़रत (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) ने उबय बिन काब को ये सूरत तल्क़ीन की और फ़रमाया

1-सम्पूर्णता, समग्रता। 2-पीछे चलने वाले। 3-विशेषताएं। 4-नबी के ज़माने में।

"इसके मिस्ल कोई सूरत नहीं" एक दूसरी रिवायत (8) में इसे "सबसे बड़ी सूरत" और "सबसे बेहतर सूरत" भी फ़रमाया है।

सूरः फ़ातिहा में दीने हक़ के तमाम मक़ासिद का ख़ुलासा मौजूद है

चुनांचे इस सूरत के मतालिब पर नज़र डालते ही ये बात वाज़ेह हो जाती है कि इसमें और क़ुरआन के बक़िया हिस्से में इज्माल और तफ़्सील का-सा तअ़ल्लुक़ पैदा हो गया है। यानी क़ुरआन की तमाम सूरतों में दीने हक़ के जो मक़ासिद ब-तफ़्सील बयान किए गए हैं, सूरः फ़ातिहा में उन्हीं का ब-शक्ले इज्माल[1] बयान मौजूद है। अगर एक शख़्स क़ुरआन में से और कुछ न पढ़ सके, सिर्फ़ इस सूरत के मतालिब ज़ेहन-नशीन कर ले, जब भी वो दीने हक़ और ख़ुदा परस्ती के बुनियाद मक़ासिद मालूम कर लेगा और यही क़ुरआन की तमाम तफ़्सीलात का मा-हसल[2] है।

अ़लावा बरीं जब इस पहलो पर ग़ौर किया जाए कि सूरत का पैराया दुआइया[3] है और इसे रोज़ाना इबादत का एक लाज़िमी जुज़ क़रार दिया गया है तो इसकी ये ख़ुसूसियत और ज़्यादा नुमायाँ हो जाती है और वाज़ेह हो जाता है कि इस इज्मालो-तफ़्सील में बहुत बड़ी मस्लहत[4] पोशीदा थी। मक़सूद ये था कि क़ुरआन के मुफ़स्सल बयानात का एक मुख़्तसर और सीधा-सादा ख़ुलासा भी हो जिसे हर इन्सान ब-आसानी ज़ेहन-नशीन कर ले और फिर हमेशा अपनी दुआओं और इबादतों में दोहराता रहे। ये उसकी दीनी ज़िन्दगी का

1-विस्तार को संक्षिप्त में केन्द्रित कर देना। 2-प्राप्य। 3-प्रार्थना, प्रार्थनापूर्ण। 4-अर्थ-पूर्ण रहस्य।

दस्तूरे-अ़मल[1], ख़ुदा परस्ती के अ़क़ाइद का खुलासा और रूहानी तसव्वुरात का नसबुल-ऐ़न[2] होगा। यही वजह है कि क़ुरआन ने इस सूरत का ज़िक्र करते हुए "سبعًا من المثاني" (सात दोहराई जाने वाली चीज़ें) कह कर इसकी खुसूसियत की तरफ़ इशारा कर दिया, यानी हमेशा दोहराए जाने और विर्द[3] रखने में इसके नुज़ूल की हिक्मत पोशीदा है। कोई शख़्स कितना ही नादान और अन-पढ़ हो, लेकिन इन चार सतरों का याद कर लेना और इनका सीधा-सादा मतलब समझ लेना उसके लिए कुछ दुश्वार नहीं हो सकता। अगर एक इन्सान इससे ज़्यादा क़ुरआन में से कुछ न पढ़ सका, जब भी उसने दीने हक़ का बुनियादी सबक़ हासिल कर लिया। यही वजह है कि हर मुसलमान के लिए इस सूरत का सीखना और पढ़ना नागुज़ीर[4] हुआ और नमाज़ की दुआ इस के सिवा कोई न हो सकी कि 'لا صلاة إلا بفاتحة الكتاب' (सहीहैन) (9) (यानी सूर: फ़ातिहा पढ़े बग़ैर नमाज़ होती ही नहीं) और इसी लिए सहाब-ए-किराम इसे "सूरतुस-सलात" के नाम से पुकारते थे, यानी वो सूरत जिसके बग़ैर नमाज़ नहीं पढ़ी जा सकती। एक इन्सान इससे ज़्यादा क़ुरआन में से जिस क़द्र पढ़े और सीखे, मज़ीद[5] मअ़रिफ़त व बसीरत[6] का ज़रिया होगा, लेकिन इससे कम कोई चीज़ नहीं हो सकती।

दीने हक़ का मा-हसल (10)

दीने हक़ का तमाम-तर मा-हसल क्या है? जिस क़द्र ग़ौर किया जाएगा, इन चार बातों से बाहर कोई बात दिखाई न देगी :

(1) ख़ुदा की सिफ़ात का ठीक-ठीक तसव्वुर। इसलिए कि

1-कर्म-विधान। 2-उद्देश्य। 3-बार-बार पढ़ने, मंत्रोच्चार। 4-अपरिहार्य। 5-और ज़्यादा। 6-दृष्टि बोध।

इन्सान को ख़ुदा-परस्ती[1] की राह में जिस क़द्र ठोकरें लगी हैं, सिफ़ात ही के तसव्वुर में लगी हैं।

(2) क़ानूने मजाज़ात का एतिक़ाद है। यानी जिस तरह दुनिया में हर चीज़ का एक ख़ास्सा[2] और क़ुदरती तासीर है, इसी तरह इन्सानी आमाल के भी मअ़नवी ख़्वास और नताइज हैं। नेक अ़मल का नतीजा अच्छाई है, बुरे का बुराई।

(3) मअ़ाद का यक़ीन। यानी इन्सान की ज़िन्दगी इसी दुनिया में ख़त्म नहीं हो जाती, इसके बाद भी ज़िन्दगी है और जज़ा का मामला पेश आने वाला है।

(4) फ़लाहो-सअ़ादत[3] की राह और उसकी पहचान।

सूर: फ़ातिहा का उस्लूबे बयान (11)

अब ग़ौर करो इन बातों का खुलासा इस सूरत में किस ख़ूबी के साथ जमा कर दिया गया है! एक तरफ़ ज़्यादा से ज़्यादा मुख़्तसर हत्ताकि गुने हुए अल्फ़ाज़ हैं, दूसरी तरफ़ ऐसे जचे तुले अल्फ़ाज़ कि उनके मआ़नी से पूरी वज़ाहत और दिल-नशीनी पैदा हो गई है। साथ ही निहायत सीधा-सादा बयान है, किसी तरह का पेचो-ख़म नहीं, किसी तरह का उलझाव नहीं।

ये बात याद रखनी चाहिए कि दुनिया में जो चीज़ हत्ताकि ज़्यादा हक़ीक़त से क़रीब होती है, उतनी ही ज़्यादा सहल और दिल-नशीन भी होती है। और ख़ुद फ़ित्रत का ये हाल है कि किसी गोशे में भी उलझी हुई नहीं है। उलझाव जिस क़द्र भी पैदा होता है

1-ईशभक्ति। 2-गुर्ण-धर्म। 3-सत्य और सफलता (कठिनाइयों, द्वंद्वों से मुक्ति)।

बनावट और तकल्लुफ़ से पैदा होता है। पस जो बात सच्ची और हक़ीक़ी होगी ज़रूरी है कि सीधी-सादी और दिल-नशीन भी हो। दिल-नशीनी की इन्तहा ये है कि जब कभी कोई ऐसी बात तुम्हारे सामने आ जाए, तो ज़हेन को किसी तरह की अजनबिय्यत महसूस न हो, वो इस तरह क़बूल कर ले गोया पेशतर[1] से समझी बूझी हुई थी। उर्दू के एक शाइर ने इसी हक़ीक़त की तरफ़ इशारा किया है :

देखना तक़रीर की लज़्ज़त कि जो उसने कहा
मैं ने ये जाना कि गोया ये भी मेरे दिल में है

अब ग़ौर करो! जहाँ तक इन्सान की ख़ुदा परस्ती और ख़ुदा-परस्ती के तसव्वुरात का तअ़ल्लुक़ है, इससे ज़्यादा सीधी-सादी बातें और क्या हो सकती हैं जो इस सूरत में बयान की गई हैं, और फिर इससे ज़्यादा सहल और दिल-नशीन उस्लूबे-बयान[2] क्या हो सकता है? सात छोटे-छोटे बोल हैं, हर बोल चार पांच लफ़्ज़ों से ज़्यादा का नहीं, और हर लफ़्ज़ साफ़ और दिल-नशीं मआ़नी का नगीना है जो इस अंगूठी में जड़ दिया गया है। अल्लाह को मुख़ातिब करके उन सिफ़तों से पुकारा गया है जिन का जल्वा शबो-रोज़ इन्सान के मुशाहदे में आता रहता है, अगर्चे वो अपनी जिहालत[3] व ग़फ़्लत[4] से उन में ग़ौरो-तफ़क्कुर[5] नहीं करता। फिर उसकी बन्दगी का इक़रार है, उसकी मददगारियों का एतिराफ़ है और ज़िन्दगी की लग़ज़िशों[6] से बच कर सीधी राह लग जाने की तलबगारी है। कोई मुश्किल ख़याल नहीं, कोई अनोखी बात नहीं, कोई अ़जीबो-ग़रीब राज़ नहीं। अब कि हम बार-बार ये सूरत पढ़ते रहते हैं और सदियों से इसके

1-पहले। 2-वर्णन-शैली। 3-अज्ञानता। 4-विस्मरण, भुलावा, लापरवाही। 5-सोच-विचार। 6-बुराइयों।

मतालिब नौऐ़ इन्सानी के सामने हैं, ऐसा मालूम होता है गोया हमारे दीनी तसव्वुरात की एक बहुत ही मामूली-सी बात है। लेकिन यही मामूली बात जिस वक़्त दुनिया के सामने नहीं आई थी, इससे ज़्यादा कोई ग़ैर मामूली और नाक़िबले हल बात भी न थी, दुनिया में हक़ीक़त और सच्चाई की हर बात का यही हाल है। जब तक सामने नहीं आती, मालूम होता है इससे ज़्यादा मुश्किल बात कोई नहीं। जब सामने आ जाती है तो मालूम होता है इससे ज़्यादा साफ़ और सहल बात और क्या हो सकती है? उर्फ़ी ने यही हक़ीक़त एक दूसरे पैराय में बयान की है :

हर कस ना शनासन्द-ए-राज़ अस्त व गर ना
ईं-हा हमा राज़स्त कि मालूम अ़वाम अस्त

(12) दुनिया में जब कभी वह्ये इलाही की हिदायत नुमुदार हुई है उसने ये नहीं किया है कि इन्सानों को नई-नई बातें सिखा दी हों, क्योंकि ख़ुदा परस्ती के बारे में कोई अनोखी बात सिखाई ही नहीं जा सकती। उसका काम सिर्फ़ ये रहा है कि इन्सानों के विज्दानी अ़क़ाइद[1] को इल्म व एतिराफ़ की ठीक-ठीक ताबीर[2] बता दे और यही सूरः फ़ातिहा की खुसूसियत है। इस सूरत ने नौऐ़ इन्सानी के विज्दानी तसव्वुरात एक ऐसी ताबीर से संवार दिये कि हर अ़क़ीदा हर फ़िक्र, हर जज़्बा, अपनी शक्लो-नौइय्यत में नमूदार हो गया और चूंकि ये ताबीर हक़ीक़ते हाल की सच्ची ताबीर है इसलिए जब कभी एक इन्सान रास्तबाज़ी के साथ इस पर ग़ौर करेगा, बेइख़्तियार पुकार उठेगा कि इसका हर बोल और हर लफ़्ज़ उसके दिलो-दिमाग़ की क़ुदरती आवाज़ है !

1-अवचेतन व अंतः करण की आस्थाओं। 2-खुलासा, अर्थ।

दीने-हक़ की मुहिम्मात

फिर देखो! अगर्चे अपनी नौइय्यत में वो इससे ज़्यादा कुछ नहीं है कि एक ख़ुदा-परस्त इन्सान की सीधी-सादी दुआ है, लेकिन किस तरह उसके हर लफ़्ज़ और हर उस्लूब से दीने हक़ का कोई न कोई अहम मक़सद वाज़ेह हो गया है और किस तरह उसके अल्फ़ाज़ निहायत अहम मआनी व दक़ाइक़[1] की निगरानी कर रहे हैं :

1 - ख़ुदा के तसव्वुर के बारे में इन्सान की एक बड़ी ग़लती ये रही है कि इस तसव्वुर को मुहब्बत की जगह ख़ौफ़ो-दहशत की चीज़ बना लेता था। सूर: फ़ातिहा के सबसे पहले अल्फ़ाज़ ने इस गुमराही का इज़ाला कर दिया।

इसकी इब्तिदा "हम्द" के एतिराफ़ से होती है। "हम्द" सनाए जमील को कहते हैं, यानी अच्छी सिफ़तों की तारीफ़ करने को। सनाए जमील उसी की की जा सकती है जिस में ख़ूबी व जमाल हो। पस "हम्द" के साथ ख़ौफ़ो-दहशत का तसव्वुर जमा नहीं हो सकता। जो ज़ात महमूद होगी वो ख़ौफ़नाक नहीं हो सकती।

फिर "हम्द" के बाद ख़ुदा की आलमगीर[2] रुबूबियत[3], रहमत[4] और अदालत[5] का ज़िक्र किया है और इस तरह सिफ़ाते इलाही की एक ऐसी मुकम्मल शबीह खींच दी है जो इन्सानों को वो सब कुछ दे देती है जिसकी इन्सानियत के नशो-इर्तिक़ा के लिए ज़रूरत है और उन तमाम गुमराहियों से महफ़ूज़ कर देती है जो इस

1-बारीकियों। 2-जगत व्यापी। 3-पालना। 4-कृपा। 5-न्यायशीलता।

राह में उसे पेश आ सकती हैं (13)।

2 - "رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ रब्बिल-आलमीन" में ख़ुदा की आलमगीर रुबूबियत का एतिराफ़ है जो हर फ़र्द, हर जमाअत, हर क़ौम, हर मुल्क, हर गोश-ए-वुजूद[1] के लिए है, और इसलिए ये एतिराफ़[2] उन तमाम तंग-नज़रियों[3] का ख़ातिमा कर देता है जो दुनिया की मुख़्तलिफ़ क़ौमों और नस्लों में पैदा हो गई थीं और हर क़ौम अपनी जगह समझने लगी थी कि ख़ुदा की बरकतें और सआदतें सिर्फ़ उसी के लिए हैं, किसी दूसरी क़ौम का उनमें हिस्सा नहीं।

3 - "مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ मालिकि यौमिद्दीनि" में "अद्दीनि" का लफ़्ज़ जज़ा[4] के क़ानून का एतिराफ़ है और जज़ा को "दीन" के लफ़्ज़ से ताबीर करके ये हक़ीक़त वाज़ेह कर दी है कि जज़ा इन्सानी आमाल के क़ुदरती नताइज व ख़वास हैं। ये बात नहीं है कि ख़ुदा का ग़ज़ब[5] व इन्तिक़ाम बन्दों को अज़ाब देना चाहता हो, क्योंकि "अद्दीनि" के मअ़ना बदले व मुकाफ़ात के हैं।

4 - रुबूबियत और रहमत के बाद "मालिकि यौमिद्दीनि" के वस्फ़ ने भी ये हक़ीक़त आश्कारा कर दी कि अगर काइनात में सिफ़ाते रहमतो-जमाल के साथ क़हरो-जलाल भी अपनी नुमूद रखती हैं तो ये इस लिए नहीं कि परवरदिगारे आलम में ग़ज़बो-इन्तिक़ाम है बल्कि इसलिए है कि वो आदिल[6] है और उसकी हिकमत ने हर चीज़ के लिए उसका एक ख़ास्सा और नतीजा मुक़र्रर

1-अस्तित्व-क्षेत्र। 2-स्वीकार। 3-संकुचित दृष्टियों। 4-बदला, प्रतिफल। 5-प्रकोप। 6-न्यायप्रिय।

कर दिया है। अ़दल मनाफ़ि-ए-रहमत[1] नहीं है बल्कि ऐ़न रहमत है।

5 - "इबादत" के लिए नहीं कहा कि "نَعْبُدُ नअ़बुदु" बल्कि कहा "اِيَّاكَ نَعْبُدُ इय्याक नअ़बुदु" यानी ये नहीं कहा कि "तेरी इबादत करते हैं" बल्कि हस्र के साथ कहा "तेरी ही इबादत करते हैं" और फिर उसके साथ "وَاِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ व इय्याक नस्तई़नु" कह कर "इस्तिआ़नत[2]" का भी उसी हस्र के साथ ज़िक्र कर दिया। इस उस्लूबे बयान ने तौहीद के तमाम मक़ासिद पूरे कर दिये और शिर्क[3] की सारी राहें बंद कर दीं।

6 - सआ़दत व फ़लाह की राह को "اَلصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ अस्सिरातल-मुस्तक़ीम" यानी सीधी राह से ताबीर किया जिससे ज़्यादा बेहतर और क़ुदरती ताबीर नहीं हो सकती, क्योंकि कोई नहीं जो सीधी राह और टेढ़ी राह में इम्तियाज़ न रखता हो और पहली राह का ख़्वाहिशमंद न हो।

7 - फिर उसके लिए एक ऐसी सीधी-सादी और जानी-बूझी शिनाख़्त[4] बता दी जिसका इज़्आ़न[5] क़ुदरती तौर पर हर इन्सान के अन्दर मौजूद है और जो महज़ एक ज़ेहनी तारीफ़ होने की जगह एक मौजूदो-मशहूद हक़ीक़त नुमायाँ कर देती है, यानी वो राह जो इनाम याफ़्ता इन्सानों की राह है। कोई मुल्क, कोई क़ौम, कोई ज़माना, कोई फ़र्द हो, लेकिन इन्सान हमेशा देखता है कि ज़िन्दगी की दो राहें यहाँ साफ़ मौजूद हैं। एक राह कामयाब इन्सानों की राह है, एक नाकाम इन्सानों की। पस एक वाज़ेह और आश्कारा बात के लिए

1-कृपा का विरोधी। 2-मदद चाहना। 3-अनेकेश्वरवाद। 4-पहचान। 5-यक़ीन, आकांक्षा।

सबसे बेहतर अ़लामत यही हो सकती थी कि उसकी तरफ़ उंगली उठा दी जाए, इससे ज्यादा कुछ कहना एक मालूम बात को मज्हूल[1] बना देना था।

चुनांचे यही वजह है कि इस सूरत के लिए दुआ़ का पैराया इख़्तियार किया गया है, क्योंकि अगर तालीम व अम्र का पैराया इख़्तियार किया जाता तो इसकी नौइयत की सारी तासीर जाती रहती। दुआ़इयह उस्लूब हमें बताता है कि हर रास्तबाज़ इन्सान की जो ख़ुदा परस्ती की राह में क़दम उठाता है, सदा-ए-हाल क्या होनी चाहिए? ये गोया ख़ुदा परस्ती के फ़िक्रो-विज्दान का सरे-जोश[2] है जो एक तालिबे सादिक़[3] की ज़बान पर बेइख़्तियार[4] उबल पड़ता है।

1-अज्ञेय, दुरूह। 2-उत्प्रेरणा। 3-सच्चा तलबगार। 4-अनायास।

(2)

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ

अल्-हम्दु लिल्लाहि

حمد हम्द

अ़रबी में "हम्द" के मअ़ना सनाए जमील के हैं, यानी अच्छी सिफ़तें बयान करने के। अगर किसी की बुरी सिफ़तें बयान की जाएं तो ये "हम्द" न होगी। हम्द पर अलिफ़-लाम है, यह इस्तिग़राक़[1] के लिए भी हो सकता है, जिन्स के लिए भी, पस "अल्-हम्दु लिल्लाहि" के मअ़ना ये हुए कि हम्दो-सना में से जो कुछ और जैसा कुछ भी कहा जा सकता है वो सब अल्लाह के लिए है, क्योंकि ख़ूबियों और कमालों में से जो कुछ भी है सब उसी से है और उसी में है और अगर हुस्न[2] मौजूद है तो निगाहे इश्क़[3] क्यों न हो, और अगर महमूदियत[4] जल्वा-अफ़रोज़[5] है तो ज़बाने हम्दो-सताइश[6] क्यों ख़ामोश रहे ?

आईन-ए-मा रवी तुरा अ़क्स पज़ीर अस्त
गर तू ना नुमाई गुनह अज़ जानिबे मा नेस्त

"हम्द" से सूरत की इब्तिदा क्यों की गई? इसलिए की मअ़रिफ़ते इलाही की राह में इन्सान का पहला तअस्सुर[7] यही है,

---

1-यानी जो अपने अर्थ अनुसार सर्वव्यापक हो। 2-सौंदर्य। 3-आकर्षित होने वाली या प्रेम करने वाली दृष्टि। 4-स्तुत्य। 5-साक्षात उपस्थित। 6-स्तुति व अनुशंसा की ज़बान। 7-प्रभाव, प्रतिक्रिया।

यानी जब कभी एक सादिक़ इन्सान इस राह में क़दम उठाएगा तो सबसे पहली हालत जो उसके फ़िक्रो-विज्दान[1] पर तारी होगी वो क़ुदरती तौर पर वही होगी जिसे यहाँ तहमीदो-सताइश[2] से ताबीर[3] किया गया है।

इन्सान के मअ़रिफ़ते हक़ की राह क्या है? क़ुरआन कहता है, सिर्फ़ एक ही राह है और वो ये है कि काइनाते ख़िल्क़त[4] में तफ़क्कुर[5] व तदब्बुर[6] करे, मस्नूआ़त का मुतालआ़ उसे सानेअ़ तक पहुँचा देगा:

ٱلَّذِينَ يَذْكُرُونَ ٱللَّهَ قِيَامًا وَقُعُودًا وَعَلَىٰ جُنُوبِهِمْ وَيَتَفَكَّرُونَ فِى خَلْقِ ٱلسَّمَٰوَٰتِ وَٱلْأَرْضِ (3: 191)

अब फ़र्ज़ करो एक तालिबे सादिक़[7] इस राह में क़दम उठाता है और काइनाते ख़िल्क़त के मज़ाहिर[8] व आसार का मुतालआ़ करता है तो सबसे पहला असर जो उसके दिलो-दिमाग़ पर तारी होगा वो क्या होगा? वो देखेगा कि ख़ुद उसका वुजूद और उसके वुजूद से बाहर की हर चीज़ एक सानिअ़े हकीम और मुदब्बिरे क़दीर[9] की कार-फ़र्माइयों की जल्वागाह है और उसकी रुबूबियत और रहमत का हाथ एक-एक ज़र्रा-ए-ख़िल्क़त[10] में साफ़ नज़र आ रहा है। पस क़ुदरती तौर पर उसकी रूह जोशे सताइश और मह्वियते जमाल से मामूर हो जाएगी[11], वो बे इख़्तियार पुकार उठेगा कि:

1-चिंतन व अवचेतन। 2-स्तुति-अनुशंसा। 3-व्यक्त। 4-सृष्टि-जगत। 5-चिंतन-मनन। 6-सृष्ट्य, निर्मित वस्तुओं। 7-सत्य का अभिलाषी। 8-अ़लामतों, निशानियों। 9-सब कुछ जानने-समझने वाला महान रचनाकार। 10-सृष्टि-कण। 11-उसकी आत्मा भव्य सौंदर्य के प्रेम में आसक्त और उसके स्तुति भाव के अतिरेक से विह्वल हो जाएगी।

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ! अल्-हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आलमीन "सारी हम्दो- सताइश उसी के लिए जो अपनी कार-फ़रमाई[1] के हर गोशे में सर-चश्म-ए-रहमतो-फ़ैज़ान[2] और मअ़्न-ए-हुस्नो-कमाल[3] है !

इस राह में फ़िक्रे इंसानी की सबसे बड़ी गुमराही ये रही है कि उसकी नज़रें मस्नूआ़त[4] के जल्वों में महव[5] हो कर रह जातीं, आगे बढ़ने की कोशिश न करतीं, वो पर्दों के नक़्शो-निगार को देख कर बेख़ुद हो जाता मगर उसकी जुस्तुजू न करता जिस ने अपने जमाले सन्अ़त[6] पर ये दिल-आवेज़[7] पर्दे डाल रखे हैं। दुनिया में मज़ाहिरे फ़ित्रत[8] की परस्तिश की बुनियाद इसी कोताह[9] नज़री से पड़ी पस " اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ अल-हुम्दु लिल्लाहि" का एतिराफ़[10] इस हक़ीक़त का एतिराफ़ है कि काइनाते हस्ती का तमाम फ़ैज़ानो-जमाल ख़्वाह किसी गोशे और किसी शक्ल में हो, सिर्फ़ एक सानिअ़े हक़ीक़ी की सिफ़तों ही का ज़ुहूर है। इसलिए हुस्नो-जमाल के लिए जितनी भी शेफ़्तगी[11] हो, ख़ूबी व कमाल के लिए जितनी भी मदहत-तराज़ी होगी, बख़्शिशो-फ़ैज़ान का जितना भी एतिराफ़ होगा, मस्नूअ़ व मख़्लूक़ के लिए नहीं होगा, सानिअ़ व ख़ालिक़ के लिए होगा :

عبارتنا شتّى وحسنك واحد وكلٌّ الى ذاك الجمال يشير!

اَللّٰه अल्लाह

नुज़ूले क़ुरआन से पहले अ़रबी में "اَللّٰه अल्लाह" का लफ़्ज़

1-सृजनशीलता। 2-कृपा-अनुकंपा का स्रोत। 3-सौंदर्य और सम्पूर्णता का मूल। 4-बनावटी चीज़ें। 5-आसक्त। 6-शिल्प-सौंदर्य, सृष्टि-रूप। 7-आकर्षक। 8-प्रकृति की दृश्य चीज़ें। 9-त्रुटिपूर्ण। 10-स्वीकार। 11-महिमागान।

ख़ुदा के लिए बतौर इस्मे-ज़ात के मुस्तामल[1] था, जैसा कि शुअ़रा-ए-जाहिलय्यत[2] के कलाम से ज़ाहिर है, यानी ख़ुदा की तमाम सिफ़तें इसकी तरफ़ मंसूब की जाती थीं, ये किसी ख़ास सिफ़त के लिए नहीं बोला जाता था। क़ुरआन ने भी यही लफ़्ज़ बतौर इस्मे-ज़ात[3] के इख़्तियार किया और तमाम सिफ़तों[4] की इसकी तरफ़ निस्बत[5] कर दी।

और अल्लाह के लिए हुस्नो-ख़ूबी के नाम हैं (यानी सिफ़तें हैं) पस चाहिए कि उसे उन सिफ़तों के साथ पुकारो। (7:180)	وَلِلّٰهِ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى فَادْعُوْهُ بِهَا - (١٨٠:٧)

क़ुरआन ने यह लफ़्ज़ महज़ इसलिए इख़्तियार किया कि लुग़त की मुताबक़त का मुक़्तज़ा यही था या इससे भी ज़्यादा कोई मअ़नवी मौज़ूनियत इसमें पोशीदा है ?

जब हम इस लफ़्ज़ की मअ़नवी दलालत[6] पर ग़ौर करते हैं तो मालूम होता है इस ग़रज़ के लिए सबसे ज़्यादा मौज़ूँ लफ़्ज़ यही था।

नौअ़े इन्सानी के दीनी तसव्वुरात का एक क़दीम अ़हद जो तारीख़ की रौशनी में आया है मज़ाहिरे फ़ित्रत की परस्तिश[7] का अ़हद है। इसी परस्तिश ने ब-तदरीज अस्नाम-परस्ती[8] की सूरत इख़्तियार की। अस्नाम-परस्ती का लाज़िमी नतीजा ये था कि मुख़्तलिफ़ ज़बानों में बहुत से अल्फ़ाज़ देवताओं के लिए पैदा हो गए

1-प्रयुक्त। 2-अज्ञानता काल के कवियों। 3-व्यक्ति बोधक। 4-विशेषताओं, विशेषणें। 5-प्रतिबद्ध। 6-अर्थगत तर्क। 7-पूजा। 8-मूर्ति-पूजा।

और जूँ-जूँ परस्तिश की नौइयत में वुस्अ़त[1] होती गई, अल्फ़ाज़ का तनव्वो[2] भी बढ़ता गया। लेकिन चूंकि ये बात इन्सान की फ़ित्रत के ख़िलाफ़ थी कि एक ऐसी हस्ती के तसव्वुर से ख़ालियुज़्-ज़ेहन रहे जो सबसे आला और सबको पैदा करने वाली हस्ती है, इसलिए देवताओं की परस्तिश के साथ एक सबसे बड़ी और सब पर हुक्मराँ हस्ती का तसव्वुर भी कमो-बेश हमेशा मौजूद रहा। और इसलिए जहाँ बेशुमार अल्फ़ाज़ देवताओं और उनकी माबूदाना[3] सिफ़तों के लिए पैदा हो गए, वहाँ कोई न कोई लफ़्ज़ ऐसा भी ज़रूर मुस्तामल रहा जिसके ज़रिये उस अन-देखी और आला-तरीन[4] हस्ती की तरफ़ इशारा किया जाता था।

चुनांचे सामी ज़बान के मुतालआ़ से मालूम होता है कि हुरूफ़[5] व अस्वात[6] की एक ख़ास तरकीब है जो माबूदियत के मअ़ना में मुस्तामल रही है और इब्रानी, सुर्यानी, आरामी, कल्दानी, हिम्यरी और अ़रबी वग़ैरा तमाम ज़बानों में इसका ये लुग़वी[7] ख़ास्सा पाया जाता है। ये ه ، لام ، الف अलिफ़, लाम् और ह, का माद्दा है और मुख़्तलिफ़ शक्लों में मुश्तक़[8] हुआ है, कलदानी व सुर्यानी का 'अलाहिया' इबरानी का 'अलूह' और अ़रबी का 'इलाह' इसी से है और बिला-शुब्हा यही 'इलाह' है जो हर्फ़े तारीफ़[9] के इज़ाफ़े के बाद 'अल्लाह' हो गया है और तारीफ़ ने उसे सिर्फ़ ख़ालिक़े काइनात[10] के लिए मख़्सूस कर दिया है।

लेकिन अगर 'अल्लाह' 'इलाह' से है तो 'इलाह' के मअ़ना क्या हैं ? उलमा-ए-लुग़त[11] व इश्तिक़ाक़ के मुख़्तलिफ़ अक़्वाल[12]

1-विस्तार। 2-नवीनता। 3-उपास्यात्मक। 4-सबसे बड़ी। 5-अक्षरों। 6-स्वरों। 7-शाब्दिक, शब्दकोशीय। 8-निकला है। 9-अर्थात 'अल्'। 10-जगत का सृष्टा। 11-शब्दकोश के विद्वानों। 12-कथन।

हैं, मगर सबसे ज़्यादा क़वी क़ौल ये मालूम होता है कि इसकी अस्ल[1] 'अ-ल-हुन' है और 'अ-ल-हुन' के मअ़ना तहय्युर[2] और दरमांदगी[3] के हैं। बाज़ों ने इसे 'व-ल-हुन' से माख़ूज़ बताया है और इसके मअ़ना भी यही हैं। पस ख़ालिक़े काइनात के लिए ये लफ़्ज़ इस्म[4] क़रार पाया कि इस बारे में इन्सान जो कुछ जानता और जान सकता है वो अ़क्ल के तहय्युर और इदराक की दरमांदगी के सिवा और कुछ नहीं है। वो जिस क़द्र भी उस ज़ाते मुत्लक़ की हस्ती में ग़ौरो-ख़ौज़ करेगा उसकी अ़क्ल की हैरानी और दरमांदगी बढ़ती ही जाएगी, यहाँ तक कि वो मालूम कर लेगा कि उसकी राह की इब्तिदा भी इज्ज़ो- हैरत से होती है और इन्तिहा भी इज्ज़ो-हैरत[5] ही है :

ऐ बरूँ अज़ वहम व क़ालो-क़ीले मन
ख़ाक बर फ़र्क़े मन व तम्सीले मन

अब ग़ौर करो! ख़ुदा की ज़ात के लिए इन्सान की ज़बान से निकले हुए लफ़्ज़ों में इससे ज़्यादा मौज़ूँ लफ़्ज़ और कौन-सा हो सकता है? अगर ख़ुदा को उसकी सिफ़तों से पुकारना है तो बिला शुब्हा उसकी सिफ़तें बेशुमार हैं, लेकिन अगर सिफ़ात से अलग हो कर उसकी ज़ात की तरफ़ इशारा करना है तो वो इसके सिवा क्या हो सकता है कि एक मुतहय्यर कर देने वाली ज़ात है और जो कुछ उसकी निस्बत कहा जा सकता है वो इज्ज़ो-दरमांदगी के एतिराफ़ के सिवा कुछ नहीं है। फ़र्ज़ करो, नौअ़े इन्सानी ने इस वक़्त तक ख़ुदा की हस्ती या ख़िल्क़ते काइनात की असलियत के बारे में जो कुछ

1-मूल, धातू, उद्गम। 2-चकित होना, आजिज़ होना। 3-असमंजस, उलझन। 4-नाम। 5-असमर्थता व विस्मय।

सोचा और समझा है, वो सब कुछ सामने रख कर हम एक मौज़ूँ से मौज़ूँ लफ़्ज़ को तज्वीज़[1] करना चाहें तो वो क्या होगा? इससे ज़्यादा और इससे बेहतर और कोई लफ़्ज़ तज्वीज़ किया जा सकता है ?

यही वजह है कि जब कभी इस राह में इरफ़ानो-बसीरत[2] की कोई बड़ी से बड़ी बात कही गई वो यही थी कि ज़्यादा से ज़्यादा ख़ुद-रफ़्तगियों[3] का एतिराफ़ किया गया और इदराक का मुन्तहा-ए-मर्तबा[4] यही क़रार पाया कि इदराक की ना-रसाई[5] का इदराक हासिल हो जाए। उरफ़ा[6] के दिलो-ज़बान की सदा हमेशा यही रही कि "رَبِّ زِدْنِي فِيكَ تَحَيُّرًا रब्बि ज़िद्नी फ़ीक तहय्युरन" (14) और हुकमा[7] की हिकमतो-दानिश[8] का फ़ैसला भी हमेशा यही हुआ कि :

"मालूमम शुद कि हेच मालूम न शुद"

चूंकि ये इस्म ख़ुदा के लिए बतौर इस्मे ज़ात के इस्तेमाल में आया, इसलिए क़ुदरती तौर पर उन तमाम सिफ़तों पर हावी हो गया जिनका ख़ुदा की ज़ात के लिए तसव्वुर किया जा सकता है। अगर हम ख़ुदा का तसव्वुर उसकी किसी सिफ़त के साथ करें, मसलन "الرب अर्रब" या "الرحيم अर्रहीम" कहें तो ये तसव्वुर सिर्फ़ एक ख़ास सिफ़त ही में महदूद होगा, यानी हमारे ज़हेन में एक ऐसी हस्ती का तसव्वुर पैदा हो जाएगा जिस में रुबूबियत या रहमत है। लेकिन जब हम "الله अल्लाह" का लफ़्ज़ बोलते हैं तो फ़ौरन हमारा ज़हेन एक ऐसी हस्ती की तरफ़ मुन्तक़िल[9] हो जाता है जो उन तमाम सिफ़ाते हुस्नो-कमाल से मुत्तसिफ़ है जो उसकी निस्बत बयान किए गए हैं और जो उसमें होनी चाहिएँ।

1-सुझाव। 2-ज्ञान-बोध। 3-अंतिम पराकाष्ठा। 4-आख़िरी पहुँच। 5-न पहुँचने। 6-ज्ञान को उपलब्ध लोगों। 7-ज्ञानियों-विद्वानों। 8-सूझबूझ व ज्ञान। 9-परिवर्तित।

(3)

رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ
रब्बिल-आ़लमीन
رُبُوبيت रुबूबियत

"حمد हम्द" के बाद बित्तरतीब[1] चार सिफ़तें बयान की गई हैं :

'رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ रब्बिल-आ़लमीन' 'الرَّحْمٰنِ अर्रहमान' 'الرَّحِيْم अर्रहीम' 'مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ मालिकि यौमिद्दीन'। चूंकि 'अर्रहमान' और "अर्रहीम" का तअ़ल्लुक़ एक ही सिफ़त के दो मुख़्तलिफ़ पहलुओं से है, इसलिए दूसरे लफ़्ज़ों में इन्हें यूँ ताबीर किया जा सकता है कि रुबूबियत, रहमत, अ़दालत तीन सिफ़तों का ज़िक्र किया गया है।

'इलाह' की तरह 'रब्ब' भी सामी ज़बानों का एक कसीरुल इस्तेमाल[2] माद्दा है। इबरानी, सुर्यानी और अ़रबी तीनों ज़बानों में इसके मअ़ना पालने के हैं और चूंकि परवरिश की ज़रूरत का एहसास इन्सानी ज़िन्दगी के बुनियाद एहसासात में से है, इसलिए इसे भी क़दीम-तरीन सामी ताबीरात में से समझना चाहिए। फिर चूंकि मुअ़ल्लिम[3], उस्ताद और आक़ा किसी न किसी एतिबार से परवरिश करने वाले ही होते हैं, इसलिए इसका इत्लाक़ इन मअ़नों में भी होने

1-क्रमश। 2-बहुत ज़्यादा प्रयुक्त होने वाला। 3-गुरू, शिक्षक।

लगा। चुनांचे इब्रानी और आरामी का "रब्बी" और "रबाह" परवरिश कुनिन्दा, मुअ़ल्लिम और आक़ा तीनों मअ़ना रखता था और क़दीम मिस्री और ख़ालिदी ज़बान का एक लफ़्ज़ "राबू" भी इन्हीं मअ़ना में मुस्तामल हुआ है और उन मुल्कों की क़दीम-तरीन सामी वहदत[1] की ख़बर देता है (15)।

बहरहाल अ़रबी में "रुबूबियत" के मअ़ना पालने के हैं, लेकिन पालने को उसके वसीअ़ और कामिल मअ़नों में लेना चाहिए, इसी लिए बाज़ अइम्म-ए-लुग़त ने इसकी तारीफ़ इन लफ़्ज़ों में की है : "هو انشاء الشیء حالاً فحالاً الی حدالتمام हुव इन्शाउश-शय हालन फहालन इला हद्दित्तमाम" (16), यानी किसी चीज़ को यके- बाद दीगरे उसकी मुख़्तलिफ़ हालतों और ज़रूरतों के मुताबिक़ इस तरह नशो-नुमा देते रहना कि अपनी हद्दे कमाल[2] तक पहुँच जाए। अगर एक शख़्स भूके को खाना खिला दे या मोहताज को रुपया दे दे तो ये उसका करम होगा, जूद होगा, एहसान होगा, लेकिन वो बात न होगी जिसे रुबूबियत कहते हैं। रुबूबियत के लिए ज़रूरी है कि परवरिश और निगहदाश्त का एक जारी और मुसलसल एहतिमाम[3] हो और एक वुजूद को उसकी तक्मील व बुलूग़ के लिए वक़्तन फ़-वक़्तन जैसी कुछ ज़रूरतें पेश आती रहें, उन सबका सरो-सामान होता रहे। नीज़ जरूरी है कि ये सब कुछ मुहब्बत व शफ़क़्क़त के साथ हो, क्योंकि जो अ़मल मुहब्बत व शफ़क़्क़त के आ़तिफ़े से ख़ाली होगा, रुबूबियत नहीं हो सकता।

रुबूबियत का एक नाक़िस[4] नमूना हम उस परवरिश में देख सकते हैं जिसका जोश माँ की फ़ित्रत में वदीअ़त कर दिया गया है।

1-एकता। 2-पूर्णता की सीमा। 3-व्यवस्था। 4-निकृष्ट, छोटा-सा।

बच्चा जब पैदा होता है तो महज़ गोश्त-पोस्त का एक मुतहर्रिक[1] लोथड़ा होता है और ज़िन्दगी और नुमू की जितनी क़ुव्वतें भी रखता है सब की सब परवरिश व तरबियत की मोहताज होती हैं। ये परवरिश मुहब्बत व शफ़क़्क़त, हिफ़ाज़त व निगहदाश्त और बख़्शिश व इआनत का एक तूल-तवील सिलसिला है और उसको उस वक़्त तक जारी रहना चाहिए जब तक बच्चा अपने जिस्मो-ज़ेहन के हद्दे बुलूग़ तक न पहुँच जाए। फिर परवरिश की ज़रूरतें एक दो नहीं, बेशुमार हैं। उनकी नौइयत हमेशा बदलती रहती है और ज़रूरी है कि हर उम्र और हर हालत के मुताबिक़ मुहब्बत का जोश, निगरानी की निगाह और ज़िन्दगी का सरो-सामान मिलता रहे। हिकमते इलाही ने माँ की मुहब्बत में रुबूबियत के ये तमाम ख़द्दो-ख़ाल पैदा कर दिये हैं। ये माँ की रुबूबियत है जो पैदाइश के दिन से लेकर बुलूग़ तक बच्चे को पालती, संभालती और हर वक़्त और हर हालत के मुताबिक़ उसकी ज़रूरियाते परवरिश का सरो-सामान मुहैया करती रहती है।

जब बच्चे का मेदा दूध के सिवा किसी और ग़िज़ा का मुतहम्मिल[2] न था तो उसे दूध पिलाया जाता था। जब दूध से ज़्यादा क़वी[3] ग़िज़ा की ज़रूरत हुई तो वैसी ही ग़िज़ा दी जाने लगी। जब उसके पांव में खड़े होने की सकत न थी तो माँ उसे गोद में उठाए फिरती थी। जब खड़े होने के क़ाबिल हुआ तो उंगली पकड़ ली और एक-एक क़दम चलाने लगी। पस ये बात कि हर हालत और ज़रूरत के मुताबिक़ ज़रूरियात मुहैया होती रहीं और निगरानी व हिफ़ाज़त का एक मुसलसल एहतिमाम जारी रहा, ये वो सूरतेहाल

1-सक्रिय। 2-सहने-पचाने की क्षमता रखने वाला। 3-गरिष्ठ।

है जिससे रुबूबियत के मफ़्हूम[1] का तसव्वुर किया जा सकता है।

मजाज़ी[2] रुबूबियत की ये नाक़िस और महदूद मिसाल सामने लाओ और रुबूबियते इलाही की ग़ैर महदूद हक़ीक़त का तसव्वुर करो। उसके "رَبُّ الْعٰلَمِيْنَ रब्बुल आलमीन" के मअ़ना ये हुए कि जिस तरह उसकी ख़ालिक़ियत ने काइनाते हस्ती और उसकी हर चीज़ पैदा की है, इसी तरह उसकी रुबूबियत ने हर मख़्लूक़ की परवरिश का सरो-सामान भी कर दिया है और ये परवरिश का सरो- सामान एक ऐसे अ़जीबो-ग़रीब निज़ाम के साथ है कि हर वुजूद को ज़िन्दगी और बक़ा[3] के लिए जो कुछ मतलूब[4] था, वो सब कुछ मिल रहा है और इस तरह मिल रहा है कि हर हालत की रिआ़यत है, हर ज़रूरत का लिहाज़ है, हर तब्दीली की निगरानी है और हर कमी बेशी ज़ब्त में आ चुकी है। चींवटी अपने बिल में रेंग रही है, कीड़े मकोड़े कूड़े-करकट में मिले हुए हैं, मछलियाँ दरिया में तैर रही हैं, परिन्दे हवा में उड़ रहे हैं, फूल बाग़ में खिल रहे हैं, हाथी जंगल में दौड़ रहा है और सितारे फ़िज़ा में गर्दिश कर रहे हैं। लेकिन फ़ित्रत के पास सबके लिए यक्साँ तौर पर परवरिश की गोद और निगरानी की आँख है और कोई नहीं जो फ़ैज़ाने रुबूबियत से महरूम हो, अगर मिसालों की जुस्तुजू में थोड़ी-सी काविश जायज़ रखी जाए तो मख़्लूक़ात की बेशुमार क़िस्में ऐसी मिलेंगी जो इतनी हक़ीर और बेमिक़्दार हैं कि ग़ैर मुसल्लह[5] (17) आँख से हम उन्हें देख भी नहीं सकते। ताहम रुबूबियते इलाही ने जिस तरह और जिस निज़ाम के साथ हाथी जैसी जसीम[6] और इन्सान जैसी अ़क़ील[7]

1-भाव, आशय। 2-भौतिक, लौकिक। 3-विकास, प्रगति। 4-वांछित। 5-उपकरण की सहायता के बिना। 6-भारी, विशालकाय। 7-बुद्धिमान।

मख़्लूक़ के लिए सामाने परवरिश मुहैया कर दिया है, ठीक उसी तरह और वैसे ही निज़ाम के साथ उनके लिए भी ज़िन्दगी और बक़ा की हर चीज़ मुहैया की है और फिर ये जो कुछ भी है इन्सान के वुजूद से बाहर है। अगर इन्सान अपने वुजूद को देखे तो ख़ुद उसकी ज़िन्दगी और ज़िन्दगी का हर लम्हा रुबूबियते इलाही की करिश्मा-साज़ियों की एक पूरी काइनात है :

وَفِى الْاَرْضِ اٰيٰتٌ لِّلْمُوْقِنِيْنَ ۝ وَفِىْٓ اَنْفُسِكُمْ اَفَلَا تُبْصِرُوْنَ ۝

(۵۱: ۲۰-۲۱)

उन लोगों के लिए जो (सच्चाई पर) यक़ीन रखने वाले हैं, ज़मीन में (ख़ुदा की कार-फ़र्माइयों की) कितनी ही निशानियाँ हैं। और ख़ुद तुम्हारे वुजूद में भी, फिर क्या तुम देखते नहीं ? (51: 20-21)

निज़ामे रुबूबियत

लेकिन सामाने ज़िन्दगी की बख़्शाइश में और रुबूबियत के अ़मल में जो फ़र्क़ है उसे नज़र अन्दाज़ नहीं करना चाहिए। अगर दुनिया में ऐसे अ़नासिर[1], अ़नासिर की ऐसी तरकीब और अशिया[2] की ऐसी बनावट मौजूद है जो ज़िन्दगी और नशो-नुमा के लिए सूदमन्द है—तो महज़ उसकी मौजूदगी रुबूबियत से ताबीर नहीं की जा सकती। ऐसा होना क़ुदरते इलाही की रहमत है, बख़्शिश है, एहसान है, मगर वो बात नहीं जिसे रुबूबियत कहते हैं। रुबूबियत ये है कि हम देखते हैं दुनिया में सूदमन्द अशिया की मौजूदगी के साथ उनकी

1-तत्व। 2-वस्तुओं।

बख़्शिश व तक़्सीम का एक निज़ाम मौजूद है और फ़ित्रत सिर्फ़ बख़्शाती ही नहीं, बल्कि जो कुछ बख़्शाती है एक मुक़र्ररा इन्तिज़ाम और एक मुन्ज़बित[1] तरतीबो-मुनासबत[2] के साथ बख़्शाती है। इसी का नतीजा है कि हम देखते हैं हर वुजूद को ज़िन्दगी और बक़ा के लिए जिस-जिस चीज़ की ज़रूरत थी और जिस-जिस वक़्त और जैसी-जैसी मिक़्दार में ज़रूरत थी, ठीक-ठीक उसी तरह, उन्हीं वक़्तों में और उसी मिक़्दार में उसे मिल रही है और इस नज़मो-ज़ब्त से कारख़ान-ए-हयात चल रहा है।

पानी की बख़्शिश व तक़्सीम का निज़ाम

ज़िन्दगी के लिए पानी और रुतूबत[3] की ज़रूरत है। हम देखते हैं कि पानी के वाफ़िर ज़ख़ीरे हर तरफ़ मौजूद हैं। लेकिन अगर सिर्फ़ इतना ही होता तो ये ज़िन्दगी के लिए काफ़ी न था, क्योंकि ज़िन्दगी के लिए सिर्फ़ यही ज़रूरी नहीं कि पानी मौजूद हो, बल्कि ये भी ज़रूरी है कि एक ख़ास इन्तिज़ाम, एक ख़ास तरतीब और एक ख़ास मुक़र्ररा मिक़्दार के साथ मौजूद हो। पस ये जो दुनिया में पानी के बनने और तक़्सीम होने का एक ख़ास इन्तिज़ाम पाया जाता है और फ़ित्रत सिर्फ़ पानी बनाती ही नहीं, बल्कि एक ख़ास तरतीब व मुनासबत[4] के साथ बनाती और एक ख़ास अन्दाज़े के साथ बांटती रहती है तो यही रुबूबियत है और इसी से रुबूबियत के तमाम आमाल का तसव्वुर करना चाहिए। क़ुरआन कहता है कि ये अल्लाह की रहमत है जिस ने पानी जैसा जौहरे हयात पैदा कर दिया, लेकिन ये उसकी रुबूबियत है जो पानी को एक-एक बूंद करके

1-सुव्यवस्थित। 2-सुनियोजित अनुपात। 3-द्रव, तरल। 4-उपक्रम और अनुपात।

टपकाती, ज़मीन के एक-एक गोशे तक पहुँचाती, एक ख़ास मिक़्दार और हालत में तक़्सीम करती, एक ख़ास मौसम और महल में बरसाती और फिर ज़मीन के एक-एक तिश्ना ज़र्रे को ढूँढ-ढूँढ कर सैराब कर देती है :

وَاَنْزَلْنَا مِنَ السَّمَآءِ مَآءً ۢ بِقَدَرٍ فَاَسْكَنّٰهُ فِى الْاَرْضِ ۖ وَاِنَّا عَلٰى ذَهَابٍۢ بِهٖ لَقٰدِرُوْنَ ۝ فَاَنْشَاْنَا لَكُمْ بِهٖ جَنّٰتٍ مِّنْ نَّخِيْلٍ وَّاَعْنَابٍ ۘ لَكُمْ فِيْهَا فَوَاكِهُ كَثِيْرَةٌ وَّمِنْهَا تَاْكُلُوْنَ ۝

(۲۳: ۱۸-۱۹)

और (देखो !) हमने आसमान से एक ख़ास अन्दाज़े के साथ पानी बरसाया, फिर उसे ज़मीन में ठहराए रखा और हम इस पर भी क़ादिर हैं कि (जिस तरह बरसाया था उसी तरह) उसे वापस ले जाएँ। फिर (देखो!) इसी पानी से हमने खजूरों और अंगूरों के बाग़ पैदा कर दिये जिन में बेशुमार फल लगते हैं और इन्हीं से तुम अपनी गिज़ा भी हासिल करते हो। (23:18-19)

तक़्दीरे अशिया

यही वजह है कि क़ुरआन ने जा-बजा अशिया की क़द्र[1] और मिक़्दार[2] का ज़िक्र किया है, यानी इस हक़ीक़त की तरफ़ इशारा किया है कि फ़ित्रते काइनात जो कुछ बख़्शती है एक ख़ास अन्दाज़े के साथ बख़्शती है और ये अन्दाज़ा एक ख़ास क़ानून के मातहत ठहराया हुआ है।

1-अंदाज़ा। 2-मात्रा।

وَاِنْ مِّنْ شَیْءٍ اِلَّا عِنْدَنَا خَزَآئِنُهٗ وَمَا نُنَزِّلُهٗٓ اِلَّا بِقَدَرٍ مَّعْلُوْمٍ ۝ (۱۵:۲۱)

और कोई शय नहीं जिसके हमारे पास ज़ख़ीरे मौजूद न हों (लेकिन हमारा तरीक़े-कार ये है कि) जो कुछ नाज़िल करते हैं, एक मुक़र्ररा मिक़्दार में नाज़िल करते हैं। (15: 21)

وَكُلُّ شَیْءٍ عِنْدَهٗ بِمِقْدَارٍ ۝ (۱۳:۸)

और अल्लाह के नज़दीक हर चीज़ का एक अन्दाज़ा मुक़र्रर है। (13: 8)

اِنَّا كُلَّ شَیْءٍ خَلَقْنٰهُ بِقَدَرٍ ۝ (۵۴:۴۹)

हम ने जितनी चीज़ें भी पैदा कीं हैं एक अन्दाज़े के साथ पैदा की हैं। (54: 49)

ये क्या बात है कि दुनिया में सिर्फ़ यही नहीं है कि पानी मौजूद है, बल्कि एक ख़ास नज़्मो-तरतीब के साथ मौजूद है ? ये क्यों है कि पहले सूरज की शुआएँ समन्दर से डोल भर-भर कर फ़िज़ा में पानी की चादरें बिछा दें, फिर हवाओं के झोंके उन्हें हरकत में लाएँ और पानी की बूँदें बना कर एक ख़ास वक़्त और ख़ास महल में बरसा दें ? फिर ये क्यों है कि जब कभी पानी बरसे तो एक ख़ास तरतीब और मिक़्दार ही से बरसे और इस तरह बरसे कि ज़मीन की बालाई[1] सतह पर उसकी एक ख़ास मिक़्दार बहने लगे और अन्दरूनी हिस्सों तक एक ख़ास मिक़्दार में नमी पहुँचे? क्यों ऐसा हुआ कि पहले पहाड़ों की चोटियों पर बर्फ़ के तूदे जमते हैं, फिर मौसम की तब्दीली से पिघलने लगते हैं, फिर उनके पिघलने से पानी के सरचश्मे उबलने लगते हैं, फिर चश्मों से दरिया की जदवलें

1-ऊपरी।

बहने लगती हैं, फिर ये जदवलें[1] पेचो-ख़म खाती हुई दूर-दूर तक दौड़ जाती हैं और सैंकड़ों हज़ारों मीलों तक अपनी वादियाँ शादाब कर देती हैं ?

क्यों सब कुछ ऐसा ही हुआ ? क्यों ऐसा न हुआ कि पानी मौजूद होता मगर इस इन्तिज़ाम और तरतीब के साथ न होता?

क़ुरआन कहता है : इसलिए कि काइनाते हस्ती में रुबूबियते इलाही कारफ़र्मा है और रुबूबियत का मुक़्तज़ा यही था कि पानी इसी तरतीब से बने और इसी तरतीबो-मिक़्दार से तक़्सीम हो। ये रहमतो-हिकमत थी जिस ने पानी पैदा किया, मगर ये रुबूबियत है जो उसे इस तरह काम में लाई कि परवरिश और रखवाली की तमाम ज़रूरतें पूरी हो गईं।

اَللّٰهُ الَّـذِىْ يُـرْسِلُ الرِّيٰحَ فَـتُثِيْرُ سَحَابًا فَـيَبْسُطُهٗ فِى السَّمَآءِ كَيْفَ يَشَآءُ وَيَجْعَلُـهٗ كِسَفًا فَـتَرَى الْـوَدْقَ يَخْرُجُ مِنْ خِلٰلِهٖ فَاِذَآ اَصَابَ بِـهٖ مَنْ يَّشَآءُ مِنْ عِبَادِهٖٓ اِذَا هُمْ يَسْتَبْشِرُوْنَ ۝

(٤٨:٣٠)

ये अल्लाह की कारफ़र्माई है कि पहले हवाएँ चलती हैं, फिर हवाएँ बादलों को छेड़ कर हरकत में लाती हैं, फिर वो जिस तरह चाहता है उन्हें फ़िज़ा में फैला देता है और उन्हें टुकड़े-टुकड़े कर देता है, फिर तुम देखते हो कि बादलों में से मेंह निकल रहा है। फिर जिन लोगों को बारिश की ये बरकत मिलनी थी, मिल चुकती है तो वो अचानक ख़ुश-वक़्त हो जाते हैं। (30:48)

1-धाराएं।

अ़नासिरे हयात

फिर इस हक़ीक़त पर भी ग़ौर करो कि ज़िन्दगी के लिए जिन चीज़ों की सबसे ज़्यादा ज़रूरत थी, उन्हीं की बख़्शाइश सबसे ज़्यादा और आ़म है और जिन की ज़रूरत ख़ास-ख़ास हालतों और गोशों के लिए थी, उन्हीं में इख़्तिसास[1] और मक़ामियत[2] पाई जाती है। हवा सबसे ज़्यादा ज़रूरी थी, क्योंकि पानी और ग़िज़ा के बग़ैर कुछ अ़र्से तक ज़िन्दगी मुमकिन है, मगर हवा के बग़ैर मुमकिन नहीं। पस इसका सामान इतना वाफ़िर और आ़म है कि कोई जगह, कोई गोशा, कोई वक़्त नहीं जो इससे ख़ाली हो। फ़िज़ा में हवा का बेहद्दो-किनार समन्दर फैला हुआ है, जब कभी और जहाँ सांस लो, ज़िन्दगी का ये सबसे ज़्यादा ज़रूरी जौहर तुम्हारे लिए ख़ुद बख़ुद मुहैया हो जाएगा। हवा के बाद दूसरे दर्जे पर पानी है :

وجعلنا من الماء كل شيء حي (21: 30) इसलिए इसकी बख़्शाइश की फ़रावानी व उमूमियत हवा से कम मगर हर चीज़ से ज़्यादा है। ज़मीन के नीचे आबे शीरीं की सोतें बह रही हैं। ज़मीन के ऊपर भी हर तरफ़ दरिया रवाँ है। फिर इन दोनों ज़ख़ीरों के अ़लावा फ़िज़ाए आसमानी का भी कारख़ाना है जो शबो-रोज़ सर-गरमेकार रहता है। वो समन्दर का शोराबा खींचता है, उसे साफ़ो-शीरीं[3] बना कर जमा करता रहता है, फिर हस्बे ज़रूरत[4] ज़मीन के हवाले कर देता है। पानी के बाद ग़िज़ा[5] की ज़रूरियात थी। लिहाज़ा हवा और पानी से कम, मगर और तमाम चीज़ों से

1-विशिष्टाएं। 2-स्थानीयता। 3-साफ़ और मीठा। 4-आवश्यकतानुसार। 5-खाद्य, पोषण।

ज़्यादा इसका दस्तरख़्वाने करम भी ख़ुश्की और तरी में बिछा हुआ है और कोई मख़्लूक़ नहीं जिस के गर्दे-पेश उसकी ग़िज़ा का ज़ख़ीरा मौजूद न हो।

निज़ामे परवरिश

फिर सामाने परवरिश के इस आलमगीर निज़ाम पर ग़ौर करो जो अपने हर गोश-ए-अमल में परवरदिगी की गोद और बख़्शिशे हयात का सरे-चशमा है। ऐसा मालूम होता है गोया ये तमाम कारख़ाना सिर्फ़ इसी लिए बना है कि ज़िन्दगी बख़्शने और ज़िन्दगी की हर इस्तेदाद की रखवाली करे। सूरज इसलिए है कि रौशनी के लिए चिराग़ का और गरमी के लिए तन्नूर का काम दे और अपनी किरनों से डोल भर-भर कर समन्दर से पानी खींचता रहे। हवाएँ इसलिए हैं कि अपनी सर्दी और गर्मी से मत्लबा असरात पैदा करती रहें और कभी पानी के ज़र्रात जमा कर अब्र[1] की चादरें बिछा दें, कभी अब्र को पानी बना कर बारिश बना दें। ज़मीन इसलिए है कि नशो-नुमा के ख़ज़ानों से हमेशा मामूर[2] रहे और हर दाने के लिए अपनी गोद में ज़िन्दगी और हर पौधे के लिए अपने सीने में परवरदगी रखे। मुख़्तसर ये कि कारख़ानए हस्ती का हर गोशा सिर्फ़ इसी काम में लगा हुआ है, हर क़ुव्वत इस्तेदाद ढूँढ रही है और हर तासीर असर पज़ीरी के इन्तिज़ार में हैं। जूँ ही किसी वुजूद में बढ़ने और नशो-नुमा पाने की इस्तेदाद पैदा होती है, मअन तमाम कारख़ानए हस्ती उसकी तरफ़ मुतवज्जह हो जाता है। सूरज की तमाम कार-फ़रमाइयाँ, फ़िज़ा के तमाम तग़य्युरात[3], ज़मीन की तमाम क़ुव्वतें, अनासिर[4] की तमाम सरगर्मियाँ सिर्फ़ इस इन्तिज़ार में

1-बादल। 2-ओतप्रोत। 3-परिवर्तन, वैविध्य। 4-तत्वों।

रहती हैं कि कब चींवटी के अण्डे से एक बच्चा होता है और कब दहक़ान[1] की झोली से ज़मीन पर एक दाना गिरता है।

وَسَخَّرَ لَكُمْ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ جَمِيْعًا مِّنْهُ ۭ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّتَفَكَّرُوْنَ ۝

(١٣ : ٤٥)

और आसमानो-ज़मीन में जो कुछ भी है सबको अल्लाह ने तुम्हारे लिए मुसख़्ख़र[2] कर दिया है। बिला शुब्हा उन लोगों के लिए जो ग़ोरो-फ़िक्र करने वाले हैं, इस बात में (मअ़रिफ़ते हक़ीक़त[3] की) बड़ी निशानियाँ हैं! (45: 13)

निज़ामे रुबूबियत की वह्दत

सबसे ज़्यादा अ़जीब मगर सबसे ज़्यादा नुमायाँ हक़ीक़त निज़ामे रुबूबियत[4] की यकसानियत[5] और हम-आहंगी[6] है। यानी हर वुजूद की परवरिश का सरो-सामान जिस तरह और जिस उस्लूब पर किया गया है, वो हर गोशे में एक ही है और एक ही अस्ल व क़ाइदा रखता है। पत्थर का एक टुकड़ा तुम्हें गुलाब के शादाब और इत्र-बेज़[7] फूल से कितना ही मुख़्तलिफ़ दिखाई दे, लेकिन दोनों की परवरिश के उसूल व अहवाल पर नज़र डालोगे तो साफ़ नज़र आ जाएगा कि दोनों को एक ही तरीक़े से सामाने परवरिश मिला है और दोनें एक ही तरह पाले-पोसे जा रहे हैं। इन्सान का बच्चा और दरख़्त का पौधा तुम्हारी नज़रों में कितनी बेजोड़ चीज़ें हैं! लेकिन

1-किसान, खेती करने वाला। 2-उपयोग्य, कार्याधानी, लाभकारी, अवशोषणीय। 3-सत्य-बोध। 4-पालन-व्यवस्था। 5-सामनता। 6-तालमेल, तादात्म। 7-सुगंधित।

अगर इनकी नशो-नुमा के तरीक़ों को खोज लगाओगे तो देख लोगे कि क़ानूने परवरिश की यक्सानियत ने दोनों को एक ही रिश्ते में मुन्सलिक[1] कर दिया है। पत्थर की चटान हो या फूल की कली, इन्सान का बच्चा हो या चींवटी का अण्डा, सबके लिए पैदाइश है, और क़ब्ल[2] इसके कि पैदाइश ज़ुहूर में आए सामाने परवरिश मुहैया हो जाता है, फिर तफ़ूलियत[3] का दौर है और इस दौर की ज़रूरियात हैं। इन्सान का बच्चा भी अपनी तफ़ूलियत रखता है, दरख़्त के मौलूदे नबाती[4] के लिए भी तफ़ूलियत है, और तुम्हारी चश्मे-ज़ाहिरबीं के लिए कितना ही अ़जीब क्यों न हो, लेकिन पत्थर की चटान का तूदा भी अपनी-अपनी तफ़ूलियत रखता है। फिर तफ़ूलियत रुश्दो-बुलूग़[5] की तरफ़ बढ़ती है और जूँ-जूँ बढ़ती जाती है, उसकी रोज़-अफ़्ज़ूँ[6] हालत के मुताबिक़ यके-बाद दीगर सामाने परवरिश में भी तब्दीलियाँ होती जाती हैं, यहाँ तक कि हर वुजूद अपने सिन्ने कमाल तक पहुँच जाता है और जब सिन्ने कमाल[7] तक पहुँच गया तो अज़ सरे-नौ ज़ोफ़ो-इन्हितात का दौर शुरू हो जाता है फिर उस ज़ोफ़ो-इन्हितात[8] का ख़ातिमा भी सब के लिए एक ही तरह है। किसी दायरे में उसे मर जाना कहते हैं, किसी में मुरझा जाना और किसी में पामाल हो जाना। अल्फ़ाज़ मुतअ़द्दिद[9] हो गए मगर हक़ीक़त में तअ़द्दुद[10] नहीं हुआ।

ये अल्लाह की कार-फ़रमाई है कि उसने तुम्हें इस तरह पैदा किया कि पहले नातवानी[11] की हालत होती

اَللّٰهُ الَّذِىْ خَلَقَكُمْ مِّنْ ضُعْفٍ ثُمَّ جَعَلَ مِنْۢ بَعْدِ

1-प्रतिबद्ध, जोड़ा हुआ। 2-पूर्व। 3-शैशवकाल। 4-नवजात पौधा। 5-यौवन, विकास। 6-दिन-प्रतिदिन। की। 7-पूरी उम्र। 8-दुर्बलता-अवनति, पतन। 9-असंख्य। 10-अनेकता, वैविध्य। 11-दुर्बलता।

ضُعۡفٍ قُوَّةً ثُمَّ جَعَلَ مِنۡۢ بَعۡدِ قُوَّةٍ ضُعۡفًا وَّشَيۡبَةً ؕ يَخۡلُقُ مَا يَشَآءُ ۚ وَهُوَ الۡعَلِيۡمُ الۡقَدِيۡرُ ۝ (٣٠:٥٤)

फिर नातवानी के बाद क़ुव्वत आती है, फिर क़ुव्वत के बाद दोबारा नातवानी और बुढ़ापा होता है। वो जो कुछ चाहता है पैदा करता है। वो इल्म और क़ुदरत रखने वाला है। (30:45)

اَلَمۡ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ اَنۡزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً فَسَلَكَهٗ يَنَابِيۡعَ فِى الۡاَرۡضِ ثُمَّ يُخۡرِجُ بِهٖ زَرۡعًا مُّخۡتَلِفًا اَلۡوَانُهٗ ثُمَّ يَهِيۡجُ فَتَرٰٮهُ مُصۡفَرًّا ثُمَّ يَجۡعَلُهٗ حُطَامًا ؕ اِنَّ فِىۡ ذٰلِكَ لَذِكۡرٰى لِاُولِى الۡاَلۡبَابِ ۝

(٣٩:٢١)

क्या तुम नहीं देखते कि अल्लाह ने आसमान से पानी बरसाया, फिर ज़मीन में से उसके चश्मे रवाँ हो गए, फिर उसी पानी से रंग-बिरंग खेतियाँ लहलहा उठीं, फिर उन की नशो-नुमा में तरक़्क़ी हुई और पूरी तरह पक कर तैयार हो गईं। फिर (तरक़्क़ी के बाद ज़वाल तारी हुआ और) तुम देखते हो कि उन पर ज़र्दी छा गई, फिर बिल-आख़िर ख़ुश्क हो कर चूरा-चरा हो गईं। बिला शुब्हा दानिश्मंदों[1] के लिए इस सूरत में बड़ी ही इबरत है।

(39: 21)

जहाँ तक ग़िज़ा का तअ़ल्लुक़ है, हैवानात[2] में एक क़िस्म उन जानवरों की है जिनके बच्चे दूध से परवरिश पाते हैं और एक उनकी है जो आ़म ग़िज़ाओं से परवरिश पाते हैं। ग़ौर करो! निज़ामे

1-प्रबुद्ध लोगों। 2-प्राणी, जंतु।

रुबूबियत ने दोनों की परवरिश के लिए कैसा अजीब सरो-सामान मुहैया कर दिया है ! दूध से परवरिश पाने वाले हैवानात में इन्सान भी दाख़िल है। सबसे पहले इन्सान अपनी ही हस्ती का मुतालआ करे, जूँ ही वो पैदा होता है, उसकी ग़िज़ा अपनी ख़ासियतों, मुनासबतों और शर्तों के साथ ख़ुद-बख़ुद मुहैया हो जाती है, और ऐसी जगह से मुहैया होती है जो हालते तफ़ूलियत में उसके लिए सबसे क़रीब-तर और सबसे मौज़ूँ जगह है। माँ बच्चे को जोशे मुहब्बत में सीने से लगा लेती है और वहीं उसकी ग़िज़ा का सरे-चश्मा भी मौजूद होता है। फिर देखो ! इस ग़िज़ा की नौइयत और मिजाज़ में उसकी हालत दर्जा बदर्जा किस क़द्र लिहाज़ रखा गया है और किस तरह यके-बाद दीगरे उसमें तब्दीली होती रहती है ! इब्तिदा में बच्चे का मेदा इतना कमज़ोर होता है कि उसे बहुत ही हलके क़िवाम का दूध मिलने चाहिए। चुनांचे न सिर्फ़ इन्सान में बल्कि तमाम हैवानात में माँ का दूध बहुत ही पतले क़िवाम[1] का होता है, लेकिन जूँ-जूँ बच्चे की उम्र बढ़ती जाती है और मेदा क़वी[2] होता जाता है, दूध का क़िवाम भी बदलता जाता है और माइयत के मुक़ाबले में दुहनियत बढ़ती जाती है, यहाँ तक कि बच्चे का अ़हदे रिज़ाअ़त[3] पूरा हो जाता है और उसका मेदा आ़म ग़िज़ाओं के हज़्म करने की इस्तेदाद[4] पैदा कर लेता है। जूँ ही इसका वक़्त आता है माँ का दूध ख़ुश्क हो जाता है। ये गोया रुबूबियते इलाही का इशारा होता है कि अब इसके लिए दूध की ज़रूरत नहीं रही, अब वो हर तरह की ग़िज़ाएँ इस्तेमाल कर सकता है :

1-सांद्रता, गाढ़ापन, संसक्ति। 2-मज़बूत। 3-दूध पीने की अवधि। 4-क्षमता, सकत

और हमल[1] और दूध छुड़ाने की मुद्दत (कम से कम) 30 महीनों की है। (46: 15)

وَحَمْلُهٗ وَفِصٰلُهٗ ثَلٰثُوْنَ شَهْرًا (١٥ : ٤٦)

फिर रुबूबियते इलाही की इस कारसाज़ी पर ग़ौर करो कि किस तरह माँ की फ़ित्रत में बच्चे की मुहब्बत वदीअ़त कर दी गई है और किस तरह इस जज़्बे को तबीअ़ते बशरी[2] के तमाम जज़्बात में सबसे ज़्यादा पुर-जोश और सबसे ज़्यादा नाक़ाबिले-तस्ख़ीर[3] बना दिया गया है ! दुनिया की कौन-सी क़ुव्वत है जो इस जोश का मुक़ाबला कर सकती है जिसे माँ की ममता कहते हैं ? जिस बच्चे की पैदाइश उसके लिए ज़िन्दगी की सबसे बड़ी मुसीबत थी :

उसकी माँ ने उसे तकलीफ़ के साथ पेट में रखा और तकलीफ़ के साथ जना। (46: 15)

حَمَلَتْهُ اُمُّهٗ كُرْهًا وَّوَضَعَتْهُ كُرْهًا (١٥ : ٤٦)

उसकी मुहब्बत उसके अन्दर ज़िन्दगी का सबस बड़ा जज़्बा मुश्तइल[4] कर देती है। जब तक बच्चा सिन्ने बुलूग़ तक पहुँच जाता है वो अपने लिए नहीं, बल्कि बच्चे के लिए ज़िन्दा रहना चाहती है। ज़िन्दगी की कोई ख़ुद-फ़रामोशी[5] नहीं जो उस पर तारी न होती हो और राहतो-आसाइश[6] की कोई क़ुर्बानी नहीं जिससे उसे गुरेज़ हो। जब ज़ात जो फ़ित्रते इन्सानी का सबसे ज़्यादा ताक़तवर जज़्बा है और जिसके इफ़िआ़लात[7] के बग़ैर कोई मख़्लूक़ ज़िन्दा नहीं रह सकती, वो भी इस जज़्ब-ए-ख़ुद फ़रामोशी[8] के मुक़ाबले में मुज़्महिल[9] हो कर रह जाता है। ये बात कि एक माँ ने बच्चे के

1-गर्भ। 2-मानव-प्रवृत्ति। 3-अनियंत्रणीय, अपरिहार्य। 4-आंदोलित, उभारना। 5-आत्मविस्मरण। 6-आराम, सुख-चैन। 7-क्रियाशीलता। 8-आत्मविस्मरण का भाव। 9-फीका, धुंधला।

मज्नूनाना[1] इश्क़ में अपनी ज़िन्दगी क़ुर्बान कर दी, फ़ित्रते मादरी[2] का ऐसा मामूली वाक़िआ है जो हमेशा पेश आता रहता है और हम उसमें किसी तरह की ग़राबत[3] महसूस नहीं करते।

लेकिन फिर देखो ! कारसाज़े फ़ित्रत की ये कैसी करिश्मासाज़ी है कि जूँ-जूँ बच्चे की उम्र बढ़ती जाती है, मुहब्बते मादरी का ये शोला ख़ुद बख़ुद धीमा पड़ता जाता है और फिर एक वक़्त आता है जब हैवानात में तो बिल्कुल ही बुझ जाता है और इन्सान में भी इसकी गर्म-जोशियाँ बाक़ी नहीं रहतीं। ये इन्क़िलाब क्यों होता है? ऐसा क्यों है कि बच्चे के पैदा होते ही मुहब्बत का एक अज़ीम तरीन जज़्बा जुंबिश में आ जाए और फिर एक ख़ास वक़्त तक क़ायम रह कर ख़ुद बख़ुद ग़ायब हो जाए ? इसलिए कि ये निज़ामे रुबूबियत की कारफ़र्माई है और उसका मुक़्तज़ा भी था। रुबूबियत चाहती है कि बच्चे की परवरिश हो। उसने परवरिश का ज़रिया माँ के जज़्ब-ए- मुहब्बत में रख दिया। जब बच्चे की उम्र इस हद तक पहुँच गई कि माँ की परवरिश की एहतियाज बाक़ी न रही तो उस ज़रिये की भी ज़रूरत बाक़ी न रही। अब उसका बाक़ी रहना माँ के लिए बोझ और बच्चे के लिए रुकावट होता। बच्चे की एहतियाज का सबसे ज़्यादा नाज़ुक वक़्त उसकी नई-नई तफ़ूलियत[4] थी। इसलिए माँ की मुहब्बत में भी सबसे ज़्यादा जोश उसी वक़्त था। फिर जूँ-जूँ बच्चा बढ़ता गया, एहतियाज कम होती गई, इसलिए मुहब्बत की गर्म- जोशियाँ भी घटती गईं। फ़ित्रत ने मुहब्बते मादरी का दामन बच्चे की एहतियाजे परवरिश से बांध दिया था, जब एहतियाज ज़्यादा थी तो मुहब्बत की सरगरमी भी ज़्यादा थी, जब

1-दीवानावार। 2-मातृत्व। 3-कमी। 4-शैशवता।

एहतियाज कम हो गई तो मुहब्बत भी तग़ाफ़ुल करने लगी (18)।

जिन हैवानात के बच्चे अण्डों से पैदा होते हैं, उनकी जिस्मानी साख़्त और तबीअ़त दूध देने वाले हैवानात से मुख़्तलिफ़ होती है, इसलिए वो अव्वल दिन ही से मामूली ग़िज़ाएँ खा सकते हैं, बशर्ते कि खिलाने के लिए कोई शफ़ीक़[1] निगरानी मौजूद हो। चुनांचे तुम देखते हो कि बच्चा अण्डे से निकलते ही ग़िज़ा ढूँढने लगता है और माँ चुन-चुन कर उसके सामने डालती और मुँह में ले-ले कर खाने की तल्क़ीन करती है या ऐसा करती है कि ख़ुद खा लेती है मगर हज़म नहीं करती, अपने अन्दर नर्म और हल्का बना कर महफ़ूज़ रखती है और जब बच्चा ग़िज़ा के लिए मुँह खोलता है तो उसके अन्दर उतार देती है।

रुबूबियते मअ़्नवी

फिर इससे भी ज्यादा अ़जीबतर निज़ामे-रुबूबियत का मअ़्नवी पहलू है। ख़ारिज[2] में ज़िन्दगी और परवरिश का कितना ही सरो-सामान किया जाता, लेकिन वो कुछ मुफ़ीद नहीं हो सकता था अगर हर वुजूद के अन्दर इससे काम लेने की ठीक-ठीक इस्तेदाद न होती और उसके ज़ाहिरी[3] व बातिनी[4] क़ुवा[5] उसका साथ न देते। पस ये रुबूबियत ही का फ़ैज़ान[6] है कि हम देखते हैं हर मख़्लूक़ की ज़ाहिरी व बातिनी बनावट इस तरह की वाक़े हुई है कि उसकी हर क़ुव्वत उसके सामाने परवरिश की नौइयत के मुताबिक़ होती है और उसकी हर चीज़ उसे ज़िन्दा रहने और नशो-नुमा पाने में मदद देती है।

1-स्नेहिल, ममतामय। 2-प्रत्यक्षतः, ऊपरी तौर पर। 3-प्रत्यक्ष। 4-परोक्ष। 5-शक्तियां। 6-अनुकंपा, अनुग्रह।

ऐसा नहीं हो सकता कि कोई मख़्लूक़ अपने जिस्म व क़ुवा की ऐसी नौइयत रखती हो जो उसके हालाते परवरिश के मुक़्तज़यात[1] के ख़िलाफ़ हो। इस सिलसिले में जो हक़ाइक़ मुशाहदा[2] व तफ़क्कुर[3] से नुमायाँ होते हैं उनमें से दो बातें सबसे ज़्यादा नुमायाँ हैं, इसलिए जा-बजा क़ुरआने हकीम ने उनपर तवज्जोह दिलाई है। एक को वो तक़दीर[4] से ताबीर करता है, दूसरी को हिदायत[5] से।

तक़दीर

तक़दीर के मअ़ना अन्दाज़ा कर देने के हैं, यानी किसी चीज़ के लिए एक ख़ास तरह की हालत ठहरा देने के, ख़्वाह ये ठहराव कम्मियत[6] में हो या कैफ़ियत[7] में। चुनांचे हम देखते हैं कि फ़ित्रत ने हर वुजूद की जिस्मानी साख़्त[8] और मअ़नवी क़ुवा[9] के लिए एक ख़ास तरह का अन्दाज़ा ठहरा दिया है जिस से वो बाहर नहीं जा सकता और ये अन्दाज़ा ऐसा है जो उसकी ज़िन्दगी और नशो-नुमा के तमाम अहवालो-ज़ुरूफ़[10] से ठीक-ठीक मुनासबत रखता है।

وَخَلَقَ كُلَّ شَيْءٍ فَقَدَّرَهُ تَقْدِيرًا ○ (٢٥: ٢)

और उसने तमाम चीज़ें पैदा कीं फिर हर चीज़ के लिए (उसकी हालत और ज़रूरत के मुताबिक़) एक ख़ास अन्दाज़ा ठहराया! (25: 2)

ये क्या चीज़ है कि हर गर्दो-पेश में और उसकी पैदावार में हमेशा मुताबक़त[11] पाई जाती है और ये एक ऐसा क़ानूने ख़िल्क़त[12]

1-आवश्यकताओं, तक़ाज़ों। 2-अवलोकन। 3-चिंतन। 4-भाग्य। 5-मार्ग दर्शन। 6-न्यूनता। 7-अधिकता। 8-शारीरिक बनावट। 9-मानसिक क्षमता। 10-परिस्थियों, परिवेश। 11-अनुकूलता, सामंजस्य। 12-सृष्टि-नियम।

है जो कभी मुतग़ैयर[1] नहीं हो सकता? ये क्यों है कि हर मख़्लूक़ अपनी ज़ाहिरी व बातिनी बनावट में वैसी ही होती है जैसा उसका गर्दो-पेश[2] है और हर गर्दो-पेश वैसा ही होता है जैसी उसकी मख़्लूक़ात होती है? ये उस हकीमो-क़दीर[3] की ठहराई हुई तक़दीर है और उसने हर चीज़ की ख़िल्क़त और ज़िन्दगी के लिए ऐसा ही अन्दाज़ा मुक़र्रर कर दिया है। उसका ये क़ानूने तक़दीर सिर्फ़ हैवानात[4] व नबातात[5] ही के लिए नहीं है बल्कि काइनाते हस्ती की हर चीज़ के लिए है। सितारों का ये पूरा निज़ामे गर्दिश[6] भी उसी तक़दीर की हद-बन्दियों पर क़ायम है।

وَالشَّمْسُ تَجْرِیْ لِمُسْتَقَرٍّ لَّهَا ؕ ذٰلِكَ تَقْدِیْرُ الْعَزِیْزِ الْعَلِیْمِ ؕ

(٣٦:٣٨)

और (देखो) सूरज के लिए जो क़रारगाह ठहरा दी गई है वो उसी पर चलता है और ये अ़ज़ीज़[7] व अ़लीम[8] ख़ुदा की उसके लिए तक़दीर है।

(36: 38)

मख़्लूक़ात और उसके गर्दो-पेश की मुताबक़त का यही क़ानून है जिस ने दोनों में बाहम-दिगर[9] मुनासबत पैदा कर दी है और हर मख़्लूक़ अपने चारों तरफ़ वही पाती है जिस में उसके लिए परवरिश और नशो-नुमा का सामान मौजूद है। परिन्दे का जिस्म उड़ने वाला है, मछली का तैरने वाला, चारपायों का चलने वाला, हशरातुल-अर्ज़[10] का रेंगने वाला, इसलिए कि इनमें से हर नौअ़[11] का गर्दो-पेश वैसे ही जिस्म के लिए मौज़ूँ है जैसा उसे मिला है और

1-उल्लंघन, भंग, परिवर्तन। 2-परिवेश। 3-परम ज्ञानी व नियंता। 4-प्राणियों। 5-वनस्पतियों। 6-परिक्रमा-तंत्र। 7-परमशक्तिवान। 8-परम ज्ञानी, तत्वदर्शी। 9-पारस्परिक। 10-ज़मीन के कीड़ों। 11-जीव।

इसलिए कि इनमें से हर नौअ़ की जिस्मानी साख़्त वैसा ही गर्दो-पेश चाहती है जैसा गर्दो-पेश उसे हासिल है। दरिया में परिन्दे पैदा नहीं होता, इसलिए कि ये गर्दो-पेश उसके लिए मुफ़ीदे परवरिश नहीं। ख़ुश्की में मछलियाँ पैदा नहीं हो सकतीं, क्योंकि ख़ुश्की उनके लिए मौज़ूँ नहीं। अगर फ़ित्रत की इस तक़दीर के ख़िलाफ़ एक ख़ास गर्दो-पेश की मख़्लूक़ दूसरे क़िस्म के गर्दो-पेश में चली जाती है तो या तो वहाँ ज़िन्दा नहीं रहती या रहती है तो ब-तदरीज उसकी जिस्मानी साख़्त और तबीअ़त भी वैसी ही हो जाती है जैसी उस गर्दो-पेश में होनी चाहिए।

फिर इनमें से हर नौअ़ के लिए मक़ामी मोअस्सिरात[1] के मुख़्तलिफ़ गर्दो-पेश हैं और हर गर्दो-पेश का यही हाल है, सर्द आबो-हवा की पैदावार, सर्द आबो-हवा ही के लिए है, गर्म की गर्म के लिए, क़ुत्बे शिमाली[2] के क़ुर्बो-जवार[3] का रीछ ख़त्ते इस्तवा[4] के क़ुर्ब में नज़र नहीं आ सकता और मिन्तक़ए हार्रा[5] के जानवर मिन्तक़ए बारिदा[6] में मादूम[7] हैं।

हिदायत

हिदायत के मअ़ना राह दिखाने, राह पर लगा देने, रहनुमाई करने के हैं और इसके मुख़्तलिफ़ मरातिब[8] और अक़्साम[9] हैं, तफ़्सील आगे आएगी। यहाँ सिर्फ़ उस मर्तब-ए-हिदायत का ज़िक्र करना है जो तमाम मख़्लूक़ात पर उनकी परवरिश की राहें खोलता, उन्हें ज़िन्दगी की राह पर लगाता और ज़रूरियाते ज़िन्दगी की तलब व हुसूल में रहनुमाई करता है। फ़ित्रत की ये हिदायत रुबूबियत की

1-स्थानीय प्रभाव। 2-उत्तरीय ध्रुव। 3-आसपास। 4-बराबर में, सीध में। 5-धरती का गर्म क्षेत्र। 6-धरती का ठंडा क्षेत्र। 7-लुप्त, अप्राप्य। 8-दर्जे। 9-क़िस्में।

हिदायत है। और अगर हिदायत रुबूबियत की दस्तगीर न होती तो मुमकिन न था कि कोई मख़्लूक़ भी दुनिया के सामाने हयातो-परवरिश से फ़ायदा उठा सकती और ज़िन्दगी की सर-गर्मियाँ ज़ुहूर में आ सकतीं।

लेकिन रुबूबियते इलाही की ये हिदायत क्या है? क़ुरआन कहता है, ये विज्दान का फ़ित्री इल्हाम[1] और हवासो-इदराक[2] की क़ुदरती इस्तेदाद है। वो कहता है ये फ़ित्रत की वो रहनुमाई है जो हर मख़्लूक़ के अन्दर पहले विज्दान का इल्हाम बन कर नमूदार होती है, फिर हवासो-इदराक का चिराग़ रौशन कर देती है। ये हिदायत के मुख़्तलिफ़ मरातिब में से विज्दान और इदराक[3] की हिदायत के मरातिब हैं।

हिदायते विज्दान

विज्दान की हिदायत ये है कि हम देखते हैं हर मख़्लूक़ की तबीअत में कोई ऐसा अन्दरूनी इल्हाम मौजूद है जो उसे ज़िन्दगी और परवरिश की राहों पर ख़ुद बख़ुद लगा देता है और वो बाहर की रहनुमाई व तालीम की मोहताज नहीं होती। इन्सान का बच्चा हो या हैवान का, जूँही शिकमे-मादर[4] से बाहर आता है, ख़ुद बख़ुद मालूम कर लेता है कि उसकी ग़िज़ा माँ के सीने में है और जब पिस्तान[5] मुँह में लेता है तो जानता है कि उसे ज़ोर-ज़ारे से चूसना चाहिए। बिल्ली के बच्चों को हमेशा देखते हैं कि अभी-अभी पैदा हुए हैं, उनकी आँखें भी नहीं खुली हैं, लेकिन माँ जोशे मुहब्बत में उन्हें चाट रही है, वो उसके सीने पर मुँह मार रहे हैं। ये बच्चा

1-प्रकाशना, उत्प्रेरणा। 2-विवेक-चेतना। 3-अवचेतन और चेतन। 4-मां के पेट। 5-स्तन।

जिस ने आ़लमे हस्ती में अभी-अभी क़दम रखा है, जिसे ख़ारिज के मोअस्सिरात ने अभी छुआ तक नहीं, किस तरह मालूम कर लेता है कि उसे पिस्तान में मुँह में लेना चाहिए और उसकी ग़िज़ा का सरे-चश्मा यहीं है ? वो कौन-सा फ़िरिश्ता है जो उस वक़्त उसके कान में फूंक देता है कि इस तरह अपनी ग़िज़ा हासिल कर ले ? यक़ीनन वो विज्दानी हिदायत का फ़िरिश्ता है और यही विज्दानी हिदायत है जो क़ब्ल इसके कि हवासो-इदराक की रौशनी नमूदार हो, हर मख़्लूक़ को उसकी परवरिश व ज़िन्दगी की राहों पर लगा देती है।

तुम्हारे घर में पली हुई बिल्ली ज़रूर होगी, तुम ने देखा होगा कि बिल्ली अपनी उम्र में पहली मर्तबा हामिला[1] हुई है, इस हालत का उसे पिछला कोई तजुर्बा हासिल नहीं, ताहम[2] उसके अन्दर कोई चीज़ है जो उसे बता देती है कि तैयारी व हिफ़ाज़त की सर-गर्मियाँ शुरू कर देनी चाहिएँ। जूँही वज़्अे-हमल[3] का वक़्त आता है, ख़ुद बख़ुद उसकी तवज्जोह हर चीज़ की तरफ से हट जाती है और किसी महफ़ूज़ गोशे की जुस्तुजू शुरू कर देती है। तुम ने देखा होगा कि मुज़्तरिबुल-हाल[4] बिल्ली मकान का एक-एक कोना देखती फिरती है, फिर वो ख़ुद बख़ुद एक सबसे महफ़ूज़ और अ़लाहिदा गोशा छांट लेती है और वहाँ बच्चा देती है। फिर यका-यक उसके अन्दर बच्चे की हिफ़ाज़त की तरफ़ से एक मज्हूल ख़तरा पैदा हो जाता है और वो यके-बाद दीगरे अपनी जगह बदलती रहती है। ग़ौर करो! ये कौन-सी क़ुव्वत है जो बिल्ली के अन्दर ख़याल पैदा कर देती है कि महफ़ूज़ जगह तलाश करे, क्योंकि अ़न्क़रीब ऐसी जगह की उसे

1-गर्भवति। 2-फिर भी। 3-प्रसव, गर्भ गिरा होना। 4-परेशान हाल।

ज़रूरत होगी? ये कौन-सा इल्हाम है जो उसे खबरदार कर देता है कि बिल्ला बच्चों का दुश्मन है और उनकी बू सूंघता फिरता है, इसलिए जगह बदलते रहना चाहिए ? बिला-शुब्हा ये रुबूबियते इलाही की विज्दानी हिदायत है जिस का इल्हाम हर मख़्लूक़ के अन्दर अपनी नुमूद रखता है और जो उनपर ज़िन्दगी और परवरिश की तमाम राहें खोल देता है।

हिदायते हवास

हिदायत का दूसरा मर्तबा हवास और मुदरिकाते ज़ेहनी[1] की हिदायत है और वो इस दर्जे वाज़ेह व मालूम है कि तशरीह की ज़रूरत नहीं। हम देखते हैं कि अगर्चे हैवानात उस जौहरे दिमाग़ से महरूम हैं जिसे फिक्रो-अक़्ल से ताबीर किया जाता है, ताहम फ़ित्रत ने उन्हें एहसासो-इदराक की वो तमाम क़ुव्वतें दे दी हैं जिनकी ज़िन्दगी व मईशत के लिए ज़रूरत थी और उनकी मदद से वो अपने रहने सहने, खाने पीने, तवालुदो-तनासुल और हिफ़ाज़तो-निगरानी के तमाम वज़ाइफ़ हुस्नो-ख़ूबी के साथ अंजाम देते हैं। फिर हवासो-इदराक की ये हिदायत हर हैवान के लिए एक ही तरह की नहीं है, बल्कि हर वुजूद को उतनी ही और वैसी ही इस्तेदाद दी गई है जितनी और जैसी इस्तेदाद उसके अहवालो-ज़ुरूफ़ के लिए ज़रूरी थी। चींवटी की क़ुव्वते शाम्मा[2] निहायत दूर-रस होती है, इसलिए कि उसी क़ुव्वत के ज़रिये वो अपनी ग़िज़ा हासिल कर सकती है। चील और उक़ाब की निगाह तेज़ होती है, क्योंकि अगर उनकी निगाह तेज़ न हो तो बुलन्दी में उड़ते हुए अपना शिकार देख न सकें। ये सवाल बिल्कुल ग़ैर ज़रूरी है कि हैवानात के हवास व

1-मानसिक चेतना। 2-सूंघने की शक्ति।

इदराक की ये हालत अव्वल दिन से थी या अहवालो-ज़ुरूफ़ की ज़रूरियात और क़ानूने मुताबक़त के मोअस्सिरात से बतदरीज ज़ुहूर में आई, इसलिए कि ख़्वाह कोई सूरत हो, बहरहाल फ़ित्रत की बख़्शी हुई इस्तेदाद है और नशो-इर्तक़ा[1] का क़ानून भी फ़ित्रत ही का ठहराया हुआ क़ानून है।

चुनांचे यही मर्तब-ए-हिदायत जिसको क़ुरआन ने रुबूबियते इलाही की "वह्य" से ताबीर किया है। अ़रबी में वह्य के मअ़ना मख़्फ़ी ईमा और इशारे के हैं। ये गोया फ़ित्रत की वो अन्दरूनी सरगोशी है जो हर मख़्लूक़ पर उसकी राहे अ़मल खोल देती है।

وَاَوْحٰى رَبُّكَ اِلَى النَّحْلِ اَنِ اتَّخِذِىْ مِنَ الْجِبَالِ بُيُوْتًا وَّمِنَ الشَّجَرِ وَمِمَّا يَعْرِشُوْنَ ۝ (١٦:٦٨)

और देखो ! तुम्हारे परवरदिगार ने शहद की मक्खी के दिल में ये बात डाल दी कि पहाड़ों में और दरख़्तों में और उन टट्टियों में जो इस ग़रज़ से बुलन्द की जाती हैं, अपने लिए छत्ते बनाए। (16: 68)

और यही वो रुबूबियते इलाही की हिदायत है जिस की तरफ़ हज़रत मूसा (अ़लैहिस्सलाम) की ज़बानी इशारा किया गया है। फ़िरऔ़न ने जब पूछा : فَمَنْ رَّبُّكُمَا يٰمُوْسٰى ؟ तम्हारा परवरदिगार कौन है? तो हज़रत मूसा ने कहा :

رَبُّنَا الَّذِىْٓ اَعْطٰى كُلَّ شَىْءٍ خَلْقَهٗ

हमारा परवरदिगार वो है जिसने हर चीज़ को उसकी बनावट दी फिर उस पर (ज़िन्दगी व

1-विकास।

मईशत की) राह खोल दी।

(20 :50)

ثُمَّ هَدٰى ○

(٥٠ : ٢٠)

और फिर यही वो हिदायत है जिसे दूसरी जगह "राहे अ़मल आसान कर देने" से भी ताबीर किया गया है :

مِنْ اَيِّ شَىْءٍ خَلَقَهٗ ○ مِنْ نُّطْفَةٍ خَلَقَهٗ فَقَدَّرَهٗ ○ ثُمَّ السَّبِيْلَ يَسَّرَهٗ ○

(٢٠-١٨ : ٨٠)

उसने इन्सान को किस चीज़ से पैदा किया? फिर उस (की तमाम ज़ाहिरी व बातिनी क़ुव्वतों) के लिए एक अन्दाज़ा ठहरा दिया, फिर उस पर (ज़िन्दगी व अ़मल की) राह आसान कर दी। (80: 18-20)

यही "ثُمَّ السَّبِيْلَ يَسَّرَهٗ" यानी "राहे अ़मल आसान कर देना" विज्दानो-इदराक की हिदायत है जो तक़दीर के बाद है, क्योंकि अगर फ़ित्रत की ये रहनुमाई न होती तो मुमकिन न था कि हम अपनी ज़रूरियाते ज़िन्दगी हासिल कर सकते।

आगे चल कर तुम्हें मालूम होगा कि क़ुरआन ने तक्वीने वुजूद के जो चार मर्तबे बयान किये हैं, उन में से तीसरा और चौथा मर्तबा यही तक़दीर और हिदायत का मर्तबा है। तख़्लीक़, तस्विया[1], तक़दीर, हिदायत :

اَلَّذِىْ خَلَقَ فَسَوّٰى ○ وَالَّذِىْ قَدَّرَ فَهَدٰى ○

(٣-٢ : ٨٧)

वो परवरदिगारे आ़लम जिस ने पैदा किया फिर उसे ठीक-ठीक दुरुस्त कर दिया। और जिस ने हर वुजूद के लिए एक अन्दाज़ा

1-ठीक व दुरुस्त करना।

ठहरा दिया फिर उस पर राहे
(अ़मल) खोल दी। (87: 2-3)

बराहीने क़ुरआनिया का मब्द-ए-इस्तिदलाल

चुनांचे यही वजह है कि क़ुरआन ने ख़ुदा की हस्ती और उसकी तौहीद व सिफ़ात पर जा-बजा निज़ामे रुबूबियत से इस्तिदलाल किया है और ये इस्तिदलाल उसके मुहिम्माते दलाइल में से है। लेकिन क़ब्ल इसके कि उसकी तशरीह की जाए, मुनासिब होगा कि क़ुरआन के तरीक़े इस्तिदलाल की बाज़ मबादियात[1] वाज़ेह कर दी जाएँ। क्योंकि मुख़्तलिफ़ अस्बाब से जिन की तशरीह का ये मौक़ा नहीं, मतालिबे क़ुरआनी का ये गोशा सबसे ज़्यादा महजूर हो गया है और ज़रूरत है कि अज़ सरे-नौ हक़ीक़ते गमुगश्ता[2] का सुराग़ लगाया जाए।

दावते तअ़क़्क़ुल

क़ुरआन के तरीक़े इस्तिदलाल का अव्वलीन मब्दा तअ़क़्क़ुल व तफ़क्कुर[3] की दावत है, यानी वो जा-बजा इस बात पर ज़ोर देता है कि इन्सान के लिए हक़ीक़त शनासी[4] की राह यही है कि ख़ुदा की दी हुई अ़क़्लो-बसीरत से काम ले और अपने वुजूद के अन्दर और अपने वुजूद के बाहर जो कुछ भी महसूस कर सकता है, उसमें तदब्बुर व तफ़क्कुर करे, चुनांचे क़ुरआन की कोई सूरत और सूरत का कोई हिस्सा नहीं जो तफ़क्कुर व तअ़क़्क़ुल की दावत से ख़ाली हो :

1-नियम, सिद्धांत, तरीक़ा। 2-खोई हुई हक़ीक़त, सच्चाई। 3-सोचने-विचारने। 4-सत्य को पहचानने।

وَفِى الْاَرْضِ اٰيٰتٌ لِّلْمُوْقِنِيْنَ ۝ وَفِىْٓ اَنْفُسِكُمْ اَفَلَا تُبْصِرُوْنَ ۝ (٥١ : ٢٠-٢١)

और यक़ीन रखने वालों के लिए ज़मीन में भी (मअ़्रिफ़ते हक़ की) निशानियाँ हैं और ख़ुद तुम्हारे वुजूद में भी, फिर क्या तुम देखते नहीं। (51: 20-21)

वो कहता है : इन्सान को अ़क्लो-बसीरत दी गई है, इसलिए वो इस क़ुव्वत को ठीक-ठीक इस्तिदलाल करने न करने के लिए जवाबदेह है :

اِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ اُولٰٓئِكَ كَانَ عَنْهُ مَسْئُوْلًا ۝ (١٧ : ٣٦)

यक़ीनन (इन्सान का) सुनना, देखना, सोचना, सब अपनी-अपनी जगह जवाबदेही रखते हैं! (17: 36)

वो कहता है : ज़मीन की हर चीज़ में, आसमान के हर मन्ज़र में, ज़िन्दगी के हर तग़य्युर में, फ़िक्रे इन्सानी के लिए मअ़्रिफ़ते हक़ीक़त की निशानियाँ हैं, बशर्ते कि वो ग़फ़्लतो-एराज़[1] में मुब्तला न हो जाए :

وَكَاَيِّنْ مِّنْ اٰيَةٍ فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ يَمُرُّوْنَ عَلَيْهَا وَهُمْ عَنْهَا مُعْرِضُوْنَ ۝ (١٢ : ١٠٥)

और आसमानो-ज़मीन में (मअ़्रिफ़ते हक़ की) कितनी ही निशानियाँ हैं, लेकिन (अफ़सोस इन्सान की ग़फ़्लत पर!) लोग उन पर गुज़र जाते हैं और नज़र उठा कर देखते तक नहीं! (12: 105)

1-बहकावे-भटकाव।

तख़्लीक़ बिल-हक़

अच्छा ! अगर इन्सान अक़्लो-बसीरत से काम ले और काइनाते ख़िल्क़त में तफ़क्कुर करे तो उस पर हक़ीक़त शनासी का कौन-सा दरवाज़ा खुलेगा ? वो कहता है : सबसे पहली हक़ीक़त जो उसके सामने नमूदार होगी वो तख़्लीक़ बिल-हक़[1] का आलमगीर और बुनियाद क़ानून है, यानी वो देखेगा कि काइनाते ख़िल्क़त और उसकी हर चीज़ की बनावट कुछ इस तरह की वाक़े हुई है कि हर चीज़ ज़ब्तो-तरतीब के साथ एक ख़ास निज़ाम व क़ानून में मुन्सलिक है और कोई शय नहीं जो हिकमतो-मस्लहत से ख़ाली हो। ऐसा नहीं है कि ये सब कुछ तख़्लीक़ बिल-बातिल[2] हो, यानी बग़ैर किसी मुअय्यन और ठहराए हुए मक़सदो-नज़्म के वुजूद में आ गया हो। क्योंकि अगर ऐसा होता तो मुमकिन न था कि इस नज़्म, इस यक्सानियत, इस दिक़्क़त के साथ उस की हर बात किसी न किसी हिकमतो- मस्लहत से बंधी हुई होती (19) :

خَلَقَ اللّٰهُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ ؕ اِنَّ فِیْ ذٰلِكَ لَاٰیَةً لِّلْمُؤْمِنِیْنَ ۝

(٢٩: ٤٤)

अल्लाह ने आसमानों को और ज़मीन को हिकमत और मस्लहत के साथ पैदा किया है और बिला-शुब्हा इस बात में अर्बाबे ईमान[3] के लिए (मअ़रिफ़ते हक़ की) एक बड़ी ही निशानी है! (29: 44)

1-सत्य (ईश्वर) पर आधारित सृष्टि। 2-असत्य (ईश्वरहित) सृष्टि। 3-विश्वास करने वालों।

"आले इमरान" की मशहूर आयत में उन अरबाबे दानिश की जो ज़मीनो-आसमान की ख़िल्क़त में तफ़क्कुर करते हैं, सदा-ए-हाल ये बताई है :

رَبَّنَا مَا خَلَقْتَ هٰذَا بَاطِلًا

(۳:۱۹۱)

ऐ हमारे परवरदिगार! ये सब कुछ तू ने इसलिए पैदा नहीं किया कि महज़ एक बेकार व अ़बस-सा[1] काम हो ! (3: 191)

दूसरी जगह "तख़्लीक़ बिल-बातिल" को तलउब से ताबीर किया है (20) "तलउब" यानी कोई काम खेल-कूद की तरह बग़ैर किसी माक़ूल ग़रज़ व मुद्दआ[2] के करना :

وَ مَا خَلَقْنَا السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَا لٰعِبِيْنَ ٥ مَا خَلَقْنٰهُمَا اِلَّا بِالْحَقِّ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ٥

(۴۴:۳۸-۳۹)

हम ने आसमानों और ज़मीन को और जो कुछ इनके दर्मियान है, महज़ खेल और तमाशा करते हुए नहीं पैदा किया है। हम ने इन्हें नहीं पैदा किया मगर हिकमतो-मस्लहत के साथ, मगर अक्सर इन्सान ऐसे हैं जो इस हक़ीक़त का इल्म नहीं रखते। (44: 38-39)

फिर जा-बजा इस "तख़्लीक़ बिल-हक़" की तशरीह की है। मसलन एक मक़ाम पर "तख़्लीक़ बिल-हक़" के इस पहलू पर तवज्जोह दिलाई है कि काइनात की हर चीज़ इफ़ादा व फ़ैज़ान के लिए है और फ़ित्रत चाहती है कि जो कुछ बनाए, इस तरह बनाए

1-निकृष्ट-सा। 2-लक्ष्य, आशय।

कि उसमें वुजूद और ज़िन्दगी के लिए नफ़ा और राहत हो :

خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ يُكَوِّرُ الَّيْلَ عَلَى النَّهَارِ وَيُكَوِّرُ النَّهَارَ عَلَى الَّيْلِ وَسَخَّرَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ ؕ كُلٌّ يَّجْرِىْ لِاَجَلٍ مُّسَمًّى اَلَا هُوَ الْعَزِيْزُ الْغَفَّارُ ○

(٣٩: ٥)

उसने आसमानों और ज़मीन को हिकमतो-मस्लहत के साथ पैदा किया है। उसने रात और दिन के इख़्तिलाफ़ और जुहूर का ऐसा इन्तिज़ाम कर दिया कि रात दिन पर लिपटी जाती है और दिन रात पर लिपटा आता है। और सूरज और चाँद दोनों को उसकी क़ुदरत ने मुसख़्ख़र कर रखा है। सब (अपनी-अपनी जगह) अपने मुक़र्ररा वक़्त तक के लिए गर्दिश कर रहे हैं। [सुनो! वो ग़ालिब और बख़्शने वाला है (21)।]

एक दूसरे मौक़े पर ख़ुसूसियत के साथ अजरामे समाविया[1] के इफ़ादा[2] व फ़ैज़ान पर तवज्जोह दिलाई है और उसे "तख़्लीक़ बिल-हक़" से ताबीर किया है :

هُوَ الَّذِىْ جَعَلَ الشَّمْسَ ضِيَآءً وَّالْقَمَرَ نُوْرًا وَّقَدَّرَهٗ مَنَازِلَ لِتَعْلَمُوْا عَدَدَ السِّنِيْنَ

वो (कारफ़र्मा-ए-क़ुदरत) जिसने सूरज को दरख़्शान्दा[3] और चाँद को रौशन बनाया और फिर चाँद की गर्दिश के लिए मन्ज़िलें ठहरा दीं ताकि तुम बरसों की

1-आकाशीय पिंडों। 2-उपयोगिता। 3-प्रकाशवान।

وَالْحِسَابَ مَا خَلَقَ اللّٰهُ ذٰلِكَ اِلَّا بِالْحَقِّ ۚ يُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ ۝ (١٠:٥)

गिनती और (औक़ात[1] का) हिसाब मालूम कर लो। बिला-शुब्हा अल्लाह ने ये सब कुछ पैदा नहीं किया मगर हिकमतो-मस्लहत के साथ। वो उन लोगों के लिए जो जानने वाले हैं, (इल्मो-मअ्रिफ़त की) निशानियाँ अलग-अलग करके वाज़ेह कर देता है। (10: 5)

एक और मौके पर फ़ित्रत के जमालो-ज़ेबाई[2] की तरफ़ इशारा किया है और उसे "तख़्लीक़ बिलहक़" से ताबीर किया है, यानी फ़ित्रते काइनात में तहसीनो-आराइश का क़ानून काम कर रहा है जो चाहता है जो कुछ बने, ऐसा बने कि उसमें हुस्नो-जमाल और ख़ूबी व कमाल हो :

خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَ الْاَرْضَ بِالْحَقِّ وَصَوَّرَكُمْ فَاَحْسَنَ صُوَرَكُمْ (٦٤:٣)

उसने आसमानों और ज़मीन को हिकमतो-मस्लहत के साथ पैदा किया और तुम्हारी सूरतें बनाईं तो निहायत हुस्नो-ख़ूबी के साथ बनाईं। (64: 3)

इसी तरह वो क़ानूने मजाज़ात पर (यानी जज़ा[3] व सज़ा[4] के क़ानून पर) भी इसी "तख़्लीक़ बिलहक़" से इस्तिशहाद करता है। तुम देखते हो कि दुनिया में हर चीज़ कोई न कोई ख़ास्सा और नतीजा रखती है और तमाम ख़्वास और नताइज लाज़िमी और

1-समय। 2-सौंदर्य व सुसज्जा। 3-बदला, प्रतिफल। 4-दंड।

अटल हैं। फिर क्यों कर मुमकिन है कि इन्सान के आमाल में भी अच्छे और बुरे ख़्वास और नताइज न हों और वो क़तई और अटल न हों। जो क़ानूने फ़ित्रत, दुनिया की हर चीज़ में अच्छे बुरे का इम्तियाज़ रखता है, क्या इन्सान के आमाल में इस इम्तियाज़ से ग़ाफ़िल हो जाएगा ?

أَمْ حَسِبَ الَّذِيْنَ اجْتَرَحُوا السَّيِّاٰتِ اَنْ نَّجْعَلَهُمْ كَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ سَوَآءً مَّحْيَاهُمْ وَمَمَاتُهُمْ ۚ سَآءَ مَا يَحْكُمُوْنَ ۝ وَخَلَقَ اللّٰهُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ وَلِتُجْزٰى كُلُّ نَفْسٍ ۢ بِمَا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ ۝ (٤٥: ٢١-٢٢)

जो लोग बुराइयाँ करते हैं, क्या वो समझते हैं हम उन्हें उन लोगों जैसा कर देंगे जो ईमान लाए और जिनके आमाल अच्छे हैं, यानी दोनों बराबर हो जाएँ ज़िन्दगी में भी और मौत में भी। (अगर उन लोगों के फ़हमो-दानिश[1] का फ़ैसला यही है तो) क्या ही बुरा उनका फ़ैसला है और हक़ीक़त ये है कि अल्लाह ने आसमानों को और ज़मीन को हिकमतो-मस्लहत के साथ पैदा किया है और इसलिए पैदा किया है कि हर जान अपनी कमाई के मुताबिक़ बदला पा ले और ऐसा नहीं होगा कि उनके साथ ना इन्साफ़ी हो। (45: 21-22)

1-बुद्धि-विवेक।

मआ़द, यानी मरने के बाद की ज़िन्दगी पर भी उससे जा-बजा इस्तिशहाद किया है। काइनात में हर चीज़ कोई न कोई मक़्सद और मुन्तहा रखती है, पस ज़रूरी है कि इन्सानी वुजूद के लिए भी कोई न कोई मक़्सद और मुन्तहा हो। यही मुन्तहा आख़िरत की ज़िन्दगी है, क्योंकि ये तो हो नहीं सकता कि काइनाते अर्ज़ी की ये बेहतरीन मख़्लूक़ सिर्फ़ इसी लिए पैदा की गई हो कि पैदा हो और चन्द दिन जी कर फ़ना हो जाए :

اَوَلَمْ يَتَفَكَّرُوْا فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ مَا خَلَقَ اللّٰهُ السَّمٰوٰتِ وَ الْاَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَآ اِلَّا بِالْحَقِّ وَاَجَلٍ مُّسَمًّى ط وَاِنَّ كَثِيْرًا مِّنَ النَّاسِ بِلِقَآءِ رَبِّهِمْ لَكٰفِرُوْنَ ٥

(٨ :٣٠)

क्या इन लोगों ने कभी अपने दिल में इस बात पर ग़ौर नहीं किया कि अल्लाह ने आसमानों और ज़मीन को और जो कुछ इनके दरमियान है, महज़ बेकार व अ़बस नहीं बनाया है, ज़रूरी है कि हिकमतो-मस्लहत के साथ बनाया हो, और उसके लिए एक मुक़र्ररा वक़्त ठहरा दिया हो। अस्ल ये है कि इन्सानों में बहुत से लोग ऐसे हैं जो अपने परवरदिगार की मुलाक़ात से यक-क़लम मुन्किर[1] हैं। (30: 8)

मब्द-ए-इस्तिदलाल

ग़रज़ कि क़ुरआन का मब्द-ए-इस्तिदलाल[2] ये है कि :

1-इन्कार करने वाले। 2-तर्क-सिद्धांत।

1 - उसके नुज़ूल[1] के वक़्त दीनदारी और ख़ुदा परस्ती के जिस क़द्र आ़म तसव्वुरात[2] मौजूद थे वो न सिर्फ़ अ़क़्ल की आमेज़श[3] से ख़ाली थे, बल्कि उनकी तमामतर बुनियाद ग़ैर अ़क़्ली अ़क़ाइद पर आ कर ठहर गई थी। लेकिन इसने ख़ुदा परस्ती के लिए अ़क़्ली तसव्वुर पैदा किया।

2 - उसकी दावत की तमामतर बुनियाद तअ़क़्कुल व तफ़क्कुर पर है और वो खुसूसियत के साथ काइनाते ख़िल्क़त के मुतालओ-तफ़क्कुर की दावत देता है।

3 - वो कहता है : काइनाते ख़िल्क़त के मुतालओ़-तफ़क्कुर से इन्सान पर तख़्लीक़ बिलहक़ की हक़ीक़त वाज़ेह हो जाती है, यानी वो देखता है कि इस कारख़ान-ए-हस्ती की कोई चीज़ नहीं जो किसी ठहराए हुए मक़्सद और मस्लहत से ख़ाली हो और किसी बालातर[4] क़ानूने ख़िल्क़त के मातहत ज़ुहूर में न आई हो। यहाँ जो चीज़ भी अपना वुजूद रखती है एक ख़ास नज़्मो-तरतीब के साथ हिकमतों और मस्लहतों के आ़लमगीर सिलसिले में बंधी हुई है।

4 - वो कहता है : जब इन्सान इन मक़ासिद व मसालेह पर ग़ौर करेगा तो इरफ़ाने हक़ीक़त की राह ख़ुद बख़ुद उस पर खुल जाएगी और जेहलो-कोरी[5] की गुमराहियों से निजात पाएगा।

बुरहाने रुबूबियत

चुनांचे इस सिलसिले में उसने मज़ाहिरे काइनात के जिन मक़ासिदो-मसालेह से इस्तिदलाल किया है उनमें सबसे ज़्यादा आ़म इस्तिदलाल "रुबूबियत" का इस्तिदलाल है ओर इसी लिए हम उसे

1-अवतरण। 2-अवधारणाएं। 3-मेल। 4-बड़ी, मानवेतर। 5-अज्ञानता।

बुरहाने रुबूबियत से ताबीर कर सकते हैं। वो कहता है : काइनात के तमाम आमालो-मज़ाहिर का इस तरह वाके़ होना कि हर चीज़ परवरिश करने वाली और हर तासीर ज़िन्दगी बख़्शने वाली है और फिर एक ऐसे निज़ामे रुबूबियत[1] का मौजूद होना जो हर हालत की रिआयत करता और हर तरह की मुनासबत[2] मलहूज़[3] रखता हो, हर इन्सान को विज्दानी तौर पर यक़ीन दिला देता है कि एक परवरदिगारे आ़लम[4] हस्ती मौजूद है और वो उन तमाम सिफ़तों से मुत्तसिफ़[5] है जिन के बग़ैर निज़ामे रुबूबियत का ये कामिल और बे-ऐ़ब कारख़ाना वुजूद में नहीं आ सकता था।

वो कहता है : क्या इन्सान का विज्दान ये बावर कर सकता है कि निज़ामे रुबूबियत का ये पूरा कारख़ाना ख़ुद बख़ुद वुजूद में आ जाए और कोई ज़िन्दगी, कोई इरादा, कोई हिकमत उसके अन्दर कारफ़र्मा न हो ? क्या ये मुमकिन है कि इस कारख़ान-ए-हस्ती की हर चीज़ में एक बोलती हुई परवरदिगारी और एक उभरी हुई कारसाज़ी मौजूद न हो ? फिर क्या ये महज़ एक अन्धी बहरी फ़ित्रत, बेजान माद्दा और बेहिस इलेक्ट्रोन Electrone के ख़्वास हैं जिन से परवरदिगारी व कारसाज़ी का ये पूरा कारख़ाना ज़ुहूर में आ गया है और अ़क्ल और इरादा रखने वाली कोई हस्ती मौजूद नहीं ?

परवरदिगारी मौजूद है मगर कोई परवरदिगार मौजूद नहीं ? कारसाज़ी मौजूद है मगर कोई कारसाज़ मौजूद नहीं ! रहमत मौजूद है मगर कोई रहीम नहीं ! हिकमत मौजूद है मगर कोई हकीम मौजूद नहीं ! सब कुछ मौजूद है मगर कोई मौजूद नहीं ! अ़मल

1-पालनहारी (ईश्वरीय) व्यवस्था। 2-अनुकूलता। 3-ध्यान रखना। 4-जगत-पालनहार। 5-गुण सम्पन्न।

बग़ैर किसी आ़मिल के, नज़्म[1] बग़ैर किसी नाज़िम[2] के, क़ियाम[3] बग़ैर किसी क़य्यूम[4] के, इमारत बग़ैर किसी मेमार के, नक़्श बग़ैर किसी नक़्क़ाश के, सब कुछ किसी ग़ैर मौजूद के ! नहीं, इन्सान की फ़ित्रत कभी ये बावर नहीं कर सकती। उसका विज्दान पुकारता है कि ऐसा होना मुमकिन नहीं। उसकी फ़ित्रत अपनी बनावट में एक ऐसा सांचा ले कर आई है जिस में यक़ीनो-ईमान ही ढल सकता है, शक और इनकार की उसमें समाई नहीं।

क़ुरआन कहता है : ये बात इन्सान के विज्दानी इज़्आ़न के ख़िलाफ़ है कि वो निज़ामे रुबूबियत का मुतालआ़ करे और एक "रब्बुल-आ़लमीन" हस्ती का यक़ीन उसके अन्दर जाग न उठे। वो कहता है : एक इन्सान ग़फ़लत की सरशारी और सरकशी के हैजान में हर चीज़ से इनकार कर सकता है, लेकिन अपनी फ़ित्रत से इनकार नहीं कर सकता। वो हर चीज़ के ख़िलाफ़ जंग कर सकता है लेकिन अपनी फ़ित्रत के ख़िलाफ़ हथियार नहीं उठा सकता। वो जब अपने चारों तरफ़ ज़िन्दगी और परवरदिगारी का एक आ़लमगीर कारख़ाना फैला हुआ देखता है तो उसकी फ़ित्रत की सदा क्या होती है? उसके दिल के एक-एक रेशे में कौन-सा एतिक़ाद[5] समाया होता है? क्या यही नहीं होता कि एक परवरदिगार हस्ती मौजूद है और ये सब कुछ उसी की करिशमा-साज़ियाँ[6] हैं ?

ये याद रखना चाहिए कि क़ुरआन का उस्लूबे बयान ये नहीं है कि नज़री मुक़द्दमात और ज़ेहनी मुसल्लमात की शक्लें तरतीब दे फिर उस पर बहसो-तक़रीर करके मुख़ातिब को रद्दो-तस्लीम[7] पर

1-व्यवस्था। 2-व्यवस्थापक। 3-नित्य। 4-नियंता। 5-आस्था-विश्वास। 6-वैचारिक भूमिकाएं। 7-इनकार-स्वीकार।

मजबूर करे। उसका तमामतर ख़िताब इन्सान के फ़ित्री विज्दान व ज़ौक़[1] से होता है। वो कहता है: ख़ुदा परस्ती का जज़्बा इन्सानी फ़ित्रत का ख़मीर है। अगर एक इन्सान इससे इनकार करने लगता है तो ये उसकी ग़फ़्लत है और ज़रूरी है कि उसे ग़फ़्लत से चौंका देने के लिए दलीलें पेश की जाएँ, लेकिन ये दलील ऐसी नहीं होनी चाहिए जो महज़ ज़ेहनो-दिमाग़ में काविश पैदा कर दे, बल्कि ऐसी होनी चाहिए जो उसके निहाँख़ान-ए-दिल[2] पर दस्तक दे दे और उसका फ़ित्री विज्दान बेदार[3] कर दे। अगर उसका विज्दान बेदार हो गया तो फिर इस्बाते मुद्दआ के लिए बहसो-तक़रीर की ज़रूरत न होगी, ख़ुद उसका विज्दान ही उसे मुद्दआ[4] तक पहुँचा देगा। यही वजह है कि क़ुरआन ख़ुद इन्सान की फ़ित्रत ही से इन्सान पर हुज्जत लाता है :

بَلِ الْإِنْسَانُ عَلٰى نَفْسِهٖ بَصِيْرَةٌ ۙ وَّلَوْ اَلْقٰى مَعَاذِيْرَهٗ ؕ

(١٥-١٤ :٧٥)

बल्कि इन्सान का वुजूद ख़ुद उसके ख़िलाफ़ (यानी उसकी कज अन्देशियों के ख़िलाफ़) हुज्जत है, अगर्चे वो (अपने विज्दान के ख़िलाफ़) कितने ही उज़्र बहाने तराश लिया करे। (75: 14-15)

और इसी लिए वो जा-बजा फ़ित्रते इन्सानी को मुख़ातिब करता है और उसकी गहराइयों से जवाब तलब करता है :

قُلْ مَنْ يَّرْزُقُكُمْ مِنَ السَّمَآءِ

[ऐ पैगम्बर! इनसे कहो: (22)] वो कौन है जो आसमान (में

1-अभिरुचि। 2-अंतर्मन। 3-जागृत। 4-लक्ष्य, साध्य।

फैले हुए कारख़ान-ए-हयात) से और ज़मीन (वुस्अ़त में पैदा होने वाले सामाने रिज़्क़) से तुम्हें रोज़ी बख़्श रहा है ? वो कौन है जिस के क़ब्ज़े में तुम्हारा सुनना और देखना है? वो कौन है जो बेजान से जानदार को और जानदार से बेजान को निकालता है, और फिर वो कौन-सी हस्ती है जो ये तमाम कारख़ान-ए-ख़िल्क़त इस नज़्मो-निगरानी के साथ चला रही है? (ऐ पैग़म्बर !) यक़ीनन वो (बेइख़्तियार) बोल उठेंगे: अल्लाह है, (उसके सिवा कौन हो सकता है?) अच्छा तुम इनसे कहो : जब तुम्हें इस बात से इनकार नहीं तो फिर ये क्यों है कि ग़फ़लत व सरकशी से नहीं बचते? हाँ, बेशक ये अल्लाह ही है जो तुम्हारा परवरदिगार बरहक़[1] है। और जब ये हक़ है तो हक़ के ज़ुहूर[2] के बाद उसे न मानना गुमराही

وَالْاَرْضِ ط اَمَّنْ يَّمْلِكُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ وَمَنْ يُّخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَيُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْحَيِّ ط وَمَنْ يُّدَبِّرُ الْاَمْرَ ط فَسَيَقُوْلُوْنَ اللّٰهُ ج فَقُلْ اَفَلَا تَتَّقُوْنَ ٥ فَذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمُ الْحَقُّ ج فَمَاذَا بَعْدَ الْحَقِّ اِلَّا الضَّلٰلُ ج فَاَنّٰى تُصْرَفُوْنَ ٥

(١٠ : ٣١-٣٢)

1-सच्चा। 2-सत्य उद्घाटित होने के बाद।

नहीं तो और क्या है? (अफ़सोस तुम्हारी समझ पर) तुम (हक़ीक़त से मुँह फिराए) कहाँ जा रहे हो? (10: 31-32)

एक दूसरे मौक़े पर फ़रमाया :

اَمَّنْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَاَنْزَلَ لَكُمْ مِّنَ السَّمَآءِ مَآءً ۚ فَاَنْۢبَتْنَا بِهٖ حَدَآئِقَ ذَاتَ بَهْجَةٍ ۚ مَا كَانَ لَكُمْ اَنْ تُنْۢبِتُوْا شَجَرَهَا ۚ ءَاِلٰـهٌ مَّعَ اللّٰهِ ؕ بَلْ هُمْ قَوْمٌ يَّعْدِلُوْنَ ۝ اَمَّنْ جَعَلَ الْاَرْضَ قَرَارًا وَّجَعَلَ خِلٰلَهَآ اَنْهٰرًا وَّجَعَلَ لَهَا رَوَاسِىَ وَجَعَلَ بَيْنَ الْبَحْرَيْنِ حَاجِزًا ؕ ءَاِلٰـهٌ مَّعَ اللّٰهِ ؕ بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ۝

(٢٧: ٦٠-٦١)

वो कौन है जिस ने आसमानों और ज़मीन को पैदा किया और जिस ने आसमानों से तुम्हारे लिए पानी बरसाया, फिर उस आबपाशी से ख़ुशनुमा बाग़ उगा दिये, हालाँकि तुम्हारे बस की ये बात न थी कि इन बाग़ों के दरख़्त उगाते। क्या इन कामों को करने वाला अल्लाह के साथ कोई दूसरा माबूद[1] भी है? (अफ़सोस इन लोगों की समझ पर ! हक़ीक़ते हाल कितनी ही ज़ाहिर हो) मगर ये वो लोग हैं जिनका शेवा ही कजरवी है। अच्छा बाताओ! और कौन है जिसने ज़मीन को (ज़िन्दगी व मईशत का) ठिकाना बना दिया, उसके दरमियान नहरें जारी कर दीं, उस (की दुरुस्तगी) के लिए

1-उपास्य, पूज्य।

पहाड़ बुलन्द कर दिये, दो दरियाओं में (यानी दरिया और समन्दर में ऐसी) दीवार हाइल कर दी (कि दोनों अपनी-अपनी जगह महदूद रहते हैं) क्या अल्लाह के साथ कोई दूसरा भी है? (अफ़सोस कितनी वाज़ेह बात है) मगर इन लोगों में अक्सर ऐसे हैं जो नहीं जानते।

اَمَّنْ يُّجِيْبُ الْمُضْطَرَّ اِذَا دَعَاهُ وَيَكْشِفُ السُّوْٓءَ وَيَجْعَلُكُمْ خُلَفَآءَ الْاَرْضِ ؕ ءَاِلٰـهٌ مَّعَ اللّٰهِ ؕ قَلِيْلًا مَّا تَذَكَّرُوْنَ ۝ اَمَّنْ يَّهْدِيْكُمْ فِىْ ظُلُمٰتِ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ وَمَنْ يُّرْسِلُ الرِّيٰحَ بُشْرًاۢ بَيْنَ يَدَىْ رَحْمَتِهٖ ؕ ءَاِلٰـهٌ مَّعَ اللّٰهِ ؕ تَعٰلَى اللّٰهُ عَمَّا يُشْرِكُوْنَ ۝

अच्छा बतलाओ! वो कौन है जो बेक़रार दिलों की पुकार सुनता है जब वो (हर तरफ़ से मायूस हो कर) उसे पुकारने लगते हैं और उनका दुख-दर्द टाल देता है और वो कि उसने तुम्हें ज़मीन का जानशीन बनाया है ? क्या अल्लाह के साथ कोई दूसरा भी है? (अफ़सोस तुम्हारी ग़फ़लत पर!) बहुत कम ऐसा होता है कि तुम नसीहत-पज़ीर हो ! ▬

(अच्छा बताओ) वो कौन है जो सहराओं[1] और समन्दरों की तारीकियों[2] में तुम्हारी रहनुमाई[3]

1-रेगिस्तान। 2-अंधेरों। 3-मार्ग दर्शन।

करता है? वो कौन है जो बाराने-रहमत[1] से पहले ख़ुशख़बरी देने वाली हवाएँ चला देता है? क्या अल्लाह के साथ कोई दूसरा भी माबूद है? (हरगिज़ नहीं) अल्लाह की ज़ात उस साझे से पाक व मुनज़्ज़ा है जो ये लोग उसकी माबूदियत में ठहरा रहे हैं।

اَمَّنْ يَّبْدَؤُا الْخَلْقَ ثُمَّ يُعِيْدُهٗ وَمَنْ يَّرْزُقُكُمْ مِّنَ السَّمَآءِ وَالْاَرْضِ ؕ ءَاِلٰهٌ مَّعَ اللّٰهِ ؕ قُلْ هَاتُوْا بُرْهَانَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ۝

(٢٧: ٦٠-٦٤)

अच्छा बताओ! वो कौन है जो मख़्लूक़ात[2] की पैदाइश शुरू करता है और फिर उसे दोहराता है और वो कौन है जो आसमानो-ज़मीन के कारख़ानहा-ए-रिज़्क़ से तुम्हें रोज़ी दे रहा है? क्या अल्लाह के साथ कोई दूसरा माबूद भी है? (ऐ पैग़म्बर!) इनसे कहो अगर तुम (अपने रवैये में) सच्चे हो (और इन्सानी अक़्लो-बसीरत की इस आ़लमगीर शहादत[3] के ख़िलाफ़ तुम्हारे पास कोई दलील है) तो अपनी दलील पेश करो। (27: 60-64)

1-बारिश। 2-सृजित अस्तित्वों। 3-जगतव्यापी साक्ष्य।

इन सवालात में से हर सवाल अपनी जगह एक मुस्तक़िल दलील है, क्योंकि इन में से हर सवाल का सिर्फ़ एक ही जवाब हो सकता है और वो फ़ित्रते इन्सानी का आलमगीर और मुसल्लमा इज़्आन है। हमारे मुतकल्लिमों[1] की नज़र इस पहलू पर न थी, इस लिए क़ुरआन का उस्लूबे इस्तिदलाल उन पर वाज़ेह न हो सका और दूर-दराज़ गोशों में भटक गए।

बहरहाल, क़ुरआन के वो बेशुमार मक़ामात जिन में काइनाते हस्ती के सरो-सामाने परवरिश और निज़ामे रुबूबियत की कारसाज़ियों का ज़िक्र किया गया है, दरअसल इसी इस्तिदलाल पर मब्नी[2] हैं।

فَلْيَنْظُرِ الْاِنْسَانُ اِلٰى طَعَامِهٖٓ ۝ اَنَّا صَبَبْنَا الْمَآءَ صَبًّا ۝ ثُمَّ شَقَقْنَا الْاَرْضَ شَقًّا ۝ فَاَنْۢبَتْنَا فِيْهَا حَبًّا ۝ وَّعِنَبًا وَّقَضْبًا ۝ وَّزَيْتُوْنًا وَّنَخْلًا ۝ وَّحَدَآئِقَ غُلْبًا ۝ وَّفَاكِهَةً وَّاَبًّا ۝ مَّتَاعًا لَّكُمْ وَلِاَنْعَامِكُمْ ۝

(٨٠: ٢٧-٣٢)

इन्सान अपनी ग़िज़ा पर नज़र डाले (जो शबो-रोज़[3] उसके इस्तेमाल में आती रहती है)। हम पहले ज़मीन पर पानी बरसाते हैं, फिर उसकी सतह शक़ कर देते हैं, फिर उसकी रूईदगी से तरह-तरह की चीज़ें पैदा कर देते हैं। अनाज के दाने, अंगूर की बेलें, खजूर के ख़ोशे, सब्ज़ी, तरकारी, जैतून का तेल, दरख़्तों के झुण्ड, क़िस्म-क़िस्म के मेवे, तरह-तरह का चारा, (और ये सब कुछ किसके लिए?) तुम्हारे फ़ायदे के लिए

1-धर्मशास्त्रियों, धार्मिक प्रवक्ताओं। 2-आधारित। 3-दिन-रात।

और तुम्हारे जानवरों के लिए !

(80: 27-32)

इन आयात में "فَلْيَنْظُرِ الْاِنْسَانُ" के ज़ोर पर ग़ौर करो। इन्सान कितना ही ग़ाफ़िल हो जाए और कितना ही एराज़ करे, लेकिन दलाइले हक़ीक़त की वुस्अत[1] और हमागीरी का ये हाल है कि किसी हाल में भी उससे ओझल नहीं हो सकतीं। एक इन्सान तमाम दुनिया की तरफ़ से आँखें बंद कर ले, लेकिन बहरहाल अपनी शबो-रोज़ की ग़िज़ा की तरफ़ से तो आँखें बंद नहीं कर सकता। जो ग़िज़ा उसके सामने धरी है, उसी पर नज़र डाले। ये क्या है? गेहूँ का दाना है। अच्छा ! गेहूँ का एक दाना अपनी हथेली पर रख लो और उसकी पैदाइश से लेकर उसकी पुख़्तगी और तक्मील तक के तमाम अहवालो-ज़ुरूफ़ पर ग़ौर करो। क्या ये हक़ीर-सा[2] एक दाना भी वुजूद में आ सकता था अगर तमाम कारख़ान-ए-हस्ती एक ख़ास नज़्मो-तरतीब के साथ इसकी बनावट में सरगर्म न रहता? और अगर दुनिया में एक ऐसा निज़ामे रुबूबियत मौजूद है तो क्या ये हो सकता है कि रुबूबियत रखने वाली हस्ती मौजूद न हो ?

सूर: नह्ल में यही इस्तिदलाल एक दूसरे पैराए में नमूदार हुआ है :

وَاِنَّ لَكُمْ فِى الْاَنْعَامِ لَعِبْرَةً ؕ
نُسْقِيْكُمْ مِّمَّا فِىْ بُطُوْنِهٖ مِنْۢ
بَيْنِ فَرْثٍ وَّدَمٍ لَّبَنًا خَالِصًا

और (देखो! ये) चारपाए (जिन्हें तुम पालते हो) इन में तुम्हारे लिए ग़ौर करने और नतीजा निकालने की कितनी इबरत है? इनके जिस्म से हम ख़ून व

1-सत्य के तर्क की व्यापकता। 2-तुच्छ-सा।

سَآئِغًا لِّلشّٰرِبِيْنَ ○ وَمِنْ ثَمَرٰتِ النَّخِيْلِ وَالْاَعْنَابِ تَتَّخِذُوْنَ مِنْهُ سَكَرًا وَّرِزْقًا حَسَنًا ○ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِّقَوْمٍ يَّعْقِلُوْنَ ○

कसाफ़त[1] के दरमियान दूध पैदा कर देते हैं जो पीने वालों के लिए बेगुलो-ग़श[2] मशरूब होता है। (इसी तरह) खजूर और अंगूर के फल और अच्छी गिज़ा दोनों तरह की चीज़ें हासिल करते हो। बिला-शुब्हा इस बात में अरबाबे अक्ल के लिए (रुबूबियते इलाही की) बड़ी निशानी है!

وَاَوْحٰى رَبُّكَ اِلَى النَّحْلِ اَنِ اتَّخِذِىْ مِنَ الْجِبَالِ بُيُوْتًا وَّمِنَ الشَّجَرِ وَمِمَّا يَعْرِشُوْنَ ○ ثُمَّ كُلِىْ مِنْ كُلِّ الثَّمَرٰتِ فَاسْلُكِىْ سُبُلَ رَبِّكِ ذُلُلًا ؕ يَخْرُجُ مِنْۢ بُطُوْنِهَا شَرَابٌ مُّخْتَلِفٌ اَلْوَانُهٗ فِيْهِ شِفَآءٌ لِّلنَّاسِ ؕ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِّقَوْمٍ يَّتَفَكَّرُوْنَ ○ (٢٣)

(٦٩-٦٦:١٦)

और फिर देखो! तुम्हारे परवरदिगार ने शहद की मक्खी की तबीअत में ये बात डाल दी कि पहाड़ों में और दरख़्तों में और उन टट्टियों में जो इस ग़रज़ से बुलन्द कर दी जाती हैं, अपने लिए घर बनाए, फिर हर तहर के फूलों से रस चूसे, फिर अपने परवरदिगार के ठहराए हुए तरीक़ों पर कामिल फरमांबर्दारी[3] के साथ गामज़न[4] हो (चुनांचे तुम देखते हो कि) उसके जिस्म से मुख़्तलिफ़ रंगों का रस निकलता है जिस में

1-मलिनता, गंदगी। 2-साफ-सुथरा। 3-सम्पूर्ण-समर्पित। 4-आगे बढ़ना, प्रशस्त।

इंसान के लिए शिफ़ा[1] है बिला-शुब्हा इस बात में उन लोगों के लिए जो ग़ौरो-फ़िक्र करते हैं (रुबूबियते इलाही की अजाइब आफ़रीनियों[2] की) बड़ी ही निशानी है !(23) (16:66-69)

जिस तरह उसने जा-बजा ख़िल्क़त से इस्तिदलाल किया है, यानी दुनिया में हर चीज़ मख़्लूक़ है, इसलिए ज़रूरी है कि ख़ालिक़ भी हो, इसी तरह वो रुबूबियत से भी इस्तिदलाल करता है, यानी दुनिया में हर चीज़ मरबूब[3] है, इसलिए ज़रूरी है कि कोई रब भी हो, और दुनिया में रुबूबियत कामिल और बेदाग़ है, इसलिए ज़रूरी है कि वो रब्बे कामिल और बे-ऐब हो।

ज़्यादा वाज़ेह लफ़्ज़ों में इसे यूँ अदा किया जा सकता है कि हम देखते हैं दुनिया में हर चीज़ ऐसी है कि उसे परवरिश की एहतियाज है और उसे परवरिश मिल रही है। पस ज़रूरी है कि कोई परवरिश करने वाला भी मौजूद हो, ये परवरिश करने वाला कौन है ? यक़ीनन वो नहीं हो सकता जो ख़ुद पर्वरदा और मोहताजे पर्वर्दिगारी हो, क़ुरआन में जहाँ कहीं इस तरह के मुख़ातिबात[4] हैं जैसा कि सूर: वाक़िआ की मन्दरजा-ज़ैल आयत में है, वो इसी इस्तिदलाल पर मब्नी है :

أَفَرَءَيْتُم مَّا تَحْرُثُونَ ○ ءَأَنتُمْ تَزْرَعُونَهُۥٓ أَمْ نَحْنُ ٱلزَّٰرِعُونَ ○

अच्छा! तुमने इस बात पर ग़ौर किया कि जो कुछ तुम काश्तकारी करते हो, उसे तुम

1-निरोग्य, स्वास्थ्य। 2-चमत्कृत करने वाले अद्भुत कारनामों। 3-पालनशील। 4-सम्बोधन।

لَوْ نَشَآءُ لَجَعَلْنٰهُ حُطَامًا فَظَلْتُمْ تَفَكَّهُوْنَ ○ اِنَّا لَمُغْرَمُوْنَ ○ بَلْ نَحْنُ مَحْرُوْمُوْنَ ○

उगाते हो या हम उगाते हैं? अगर हम चाहें तो उसे चूरा-चूरा कर दें और तुम सिर्फ़ ये कहने के लिए रह जाओ कि "अफ़सोस! हमें तो इस नुक़्सान का तावान ही देना पड़ेगा बल्कि हम तो अपनी मेहनत के सारे फ़ायदों ही से महरूम हो गए।"

اَفَرَءَيْتُمُ الْمَآءَ الَّذِيْ تَشْرَبُوْنَ ○ ءَاَنْتُمْ اَنْزَلْتُمُوْهُ مِنَ الْمُزْنِ اَمْ نَحْنُ الْمُنْزِلُوْنَ ○ لَوْ نَشَآءُ جَعَلْنٰهُ اُجَاجًا فَلَوْلَا تَشْكُرُوْنَ ○ اَفَرَءَيْتُمُ النَّارَ الَّتِيْ تُوْرُوْنَ ○ ءَاَنْتُمْ اَنْشَاْتُمْ شَجَرَتَهَا اَمْ نَحْنُ الْمُنْشِئُوْنَ ○ نَحْنُ جَعَلْنٰهَا تَذْكِرَةً وَّمَتَاعًا لِّلْمُقْوِيْنَ ○

(٥٦: ٦٣_٧٣)

अच्छा ! तुमने ये बात भी देखी कि ये पानी जो तुम्हारे पीने में आता है उसे कौन बरसाता है? तुम बरसाते हो या हम बरसाते हैं? अगर हम चाहें तो इसे (समन्दर के पानी की तरह) कड़वा कर दें, फिर क्या इस नेमत के लिए ज़रूरी नहीं है कि तुम शुक्रगुज़ार हो? अच्छा! तुम ने ये बात भी देखी है कि ये आग जो तुम सुलगाते हो, इसके लिए लकड़ी तुमने पैदा की है या हम पैदा कर रहे हैं? हमने इसे यादगार और मुसफ़िरों के लिए फ़यादेबख़्श[1] बनाया।

(56: 63-73)

1-लाभदायक।

निज़ामे रुबूबियत से तौहीद पर इस्तिदलाल

इसी तरह वो निज़ामे रुबूबियत से तौहीदे-इलाही[1] पर इस्तिदलाल करता है। जो रब्बुल आलमीन तमाम काइनात की परवरिश कर रहा है और जिसकी रुबूबियत का एतिराफ़ तुम्हारे दिल के एक-एक रेशे में मौजूद है, उसके सिवा कौन इसका मुस्तहिक़[2] हो सकता है कि बन्दगी व नियाज़ का सर उसके आगे झुकाया जाए?

يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ اعْبُدُوْا رَبَّكُمُ الَّذِىْ خَلَقَكُمْ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ۝ الَّذِىْ جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ فِرَاشًا وَّالسَّمَآءَ بِنَآءً وَّاَنْزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً فَاَخْرَجَ بِهٖ مِنَ الثَّمَرٰتِ رِزْقًا لَّكُمْ ۚ فَلَا تَجْعَلُوْا لِلّٰهِ اَنْدَادًا وَّاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝

(٢: ٢١-٢٢)

ऐ अफ़रादे नस्ले इन्सानी[3]! अपने परवरदिगार की इबादत करो, उस परवरदिगार की जिसने तुम्हें पैदा किया और उन सबको भी पैदा किया जो तुम से पहले गुज़र चुके हैं, और इसलिए पैदा किया ताकि तुम बुराइयों से बचो। वो परवरदिगारे आलम जिसने तुम्हारे लिए ज़मीन फ़र्श की तरह बिछा दी और आसमान छत की तरह बना दिया और आसमान से पानी बरसाया, फिर उससे तरह-तरह के फल पैदा कर दिये ताकि तुम्हारे लिए रिज़्क़ का सामान हो। पस (जब ख़ालिक़िय्यत उसी की ख़ालिक़िय्यत है और

1-एकउपास्यवाद, एकेश्वरवाद। 2-अधिकारी। 3-ऐ मानवजाति के लोग।

रुबूबियत उसी की रुबूबियत है तो) ऐसा न करो कि किसी दूसरी ज़ात को उसका हमपल्ला ठहराओ, और तुम इस हक़ीक़त से बेख़र नहीं हो। (2: 21-22)

या मसलन सूर: फ़ातिर में है :

يَـٰٓأَيُّهَا ٱلنَّاسُ ٱذْكُرُوا۟ نِعْمَتَ ٱللَّهِ عَلَيْكُمْ ۚ هَلْ مِنْ خَـٰلِقٍ غَيْرُ ٱللَّهِ يَرْزُقُكُم مِّنَ ٱلسَّمَآءِ وَٱلْأَرْضِ ۚ لَآ إِلَـٰهَ إِلَّا هُوَ ۖ فَأَنَّىٰ تُؤْفَكُونَ ۝

(٣٥: ٣)

ऐ अफ़रादे नस्ले इंसानी! अल्लाह ने अपनी जिन नेमतों से तुम्हें फ़ैज्याब किया है उनपर ग़ौर करो! क्या अल्लाह के सिवा कोई दूसरा भी ख़ालिक़ है जो तुम्हें ज़मीन और आसमान की बख़्शाइशों[1] से रिज़्क़ दे रहा है, नहीं, कोई माबूद नहीं है मगर उसी की एक ज़ात! [फिर तुम (उससे रू-गर्दानी[2] करके) किधर बहके चले जा रहे हो। (24)] (35: 3)

निज़ामे रुबूबियत से वह्यो-रिसालत की ज़रूरत पर इस्तिदलाल

इसी तरह वो निज़ामे रुबूबियत के आमाल से इन्सानी सआदत[3] व शक़ावत[4] के मअ़नवी क़वानीन और वह्यो-रिसालत की ज़रूरत पर भी इस्तिदलाल करता है। जिस रब्बुल आलमीन ने

1-वरदानों, प्रतिदानों। 2-मुंह फेर कर। 3-सुख, शुभ। 4-दुख, अशुभ।

तुम्हारी परवरिश के लिए रुबूबियत का ऐसा निज़ाम क़ायम कर रखा है, क्या मुमकिन है कि उसने तुम्हारी रूहानी फ़लाहो-सआ़दत[1] के लिए कोई क़ानून, कोई निज़ाम, कोई क़ाइदा मुक़र्रर न किया हो? जिस तरह तुम्हारे जिस्म की ज़रूरतें हैं इसी तरह तुम्हारी रूह की भी ज़रूरतें है। फिर क्यों कर मुमकिन है कि जिस्म की नशो-नुमा के लिए तो उसके पास सब कुछ हो, लेकिन रूह की नशो-नुमा के लिए उसके पास कोई परवरदिगारी न हो?

अगर वो रब्बुल आ़लमीन है और उसकी रुबूबियत के फ़ैज़ान का ये हाल है कि हर ज़र्रे के सैराबी और हर चींवटी के लिए कार-साज़ी रखती है तो क्यों कर बावर[2] किया जा सकता है कि इन्सान की रूहानी सआ़दत के लिए उसके पास कोई सर-चश्मगी न हो? उसकी परवरदिगारी अज्साम[3] की परवरिश के लिए आसमान से पानी बरसाए लेकिन अरवाह[4] की परवरिश के लिए एक क़तर-ए-फ़ैज़[5] भी न रखे, तुम देखते हो कि जब ज़मीन शादाबी से महरूम हो कर मुर्दा हो जाती है तो ये उसका क़ानून है कि बाराने रहमत नमूदार होती है और ज़िन्दगी की बरकतों से ज़मीन के एक-एक ज़र्रे को माला-माल कर देती है। फिर क्या ये ज़रूरी नहीं कि जब आ़लमे इन्सानियत हिदायतो-सआ़दत की शादाबियों से महरूम हो जाए तो उसकी बाराने रहमत नमूदार हो कर एक-एक रूह को पयामे ज़िन्दगी पहुँचा दे? रूहानी सआ़दत की ये बारिश क्या है? वो कहता है: वह्ये इलाही है। तुम इस मन्ज़र पर कभी मुतअ़ज्जिब[6] नहीं होते कि पानी बरसा और मुर्दा ज़मीन ज़िन्दा हो गई। फिर इस बात पर क्यों चौंक उठो कि वह्ये इलाही ज़ाहिर हुई और मुर्दा रूहों में

1-कल्याण व भलाई। 2-मानना, स्वीकार करना। 3-जिस्मों। 4-रूहों। 5-करुणा का कण। 6-आश्चर्यचकित।

ज़िन्दगी की जुंबिश[1] पैदा हो गई ?

حٰمٓ ○ تَنۡزِيۡلُ الۡكِتٰبِ مِنَ اللّٰهِ الۡعَزِيۡزِ الۡحَكِيۡمِ ○ اِنَّ فِى السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضِ لَاٰيٰتٍ لِّلۡمُؤۡمِنِيۡنَ ○ وَفِىۡ خَلۡقِكُمۡ وَمَا يَبُثُّ مِنۡ دَآبَّةٍ اٰيٰتٌ لِّقَوۡمٍ يُّوۡقِنُوۡنَ ○

ये अल्लाह की तरफ़ से किताब (हिदायत) नाज़िल की जाती है जो अज़ीज़ और हकीम है। बिला शुब्हा ईमान रखने वालों के लिए आसमानों और ज़मीन में (मअ्रिफ़ते हक़ की) बेशुमार निशानियाँ हैं। नीज़ तुम्हारी पैदाइश में और उन चारपायों में जिन्हें उसने ज़मीन पर फैला रखा है, अरबाबे यक़ीन[2] के लिए बड़ी ही निशानियाँ हैं।

وَاخۡتِلَافِ الَّيۡلِ وَالنَّهَارِ وَمَا اَنۡزَلَ اللّٰهُ مِنَ السَّمَآءِ مِنۡ رِّزۡقٍ فَاَحۡيَا بِهِ الۡاَرۡضَ بَعۡدَ مَوۡتِهَا وَتَصۡرِيۡفِ الرِّيٰحِ اٰيٰتٌ لِّقَوۡمٍ يَّعۡقِلُوۡنَ ○ تِلۡكَ اٰيٰتُ اللّٰهِ نَتۡلُوۡهَا عَلَيۡكَ بِالۡحَقِّ ۚ فَبِاَىِّ حَدِيۡثٍ ۢ بَعۡدَ اللّٰهِ وَاٰيٰتِهٖ يُؤۡمِنُوۡنَ ○

(٤٥: ١-٦)

इसी तरह रात और दिन के यके बाद दीगर आते रहने में और उस सरमाय-ए-रिज़्क़ में जिसे वो आसमान से बरसाता है और ज़मीन मरने के बाद फिर जी उठती है और हवाओं के रद्दो-बदल में, अरबाबे दानिश के लिए बड़ी ही निशानियाँ हैं। (ऐ पैग़म्बर!) ये अल्लाह की आयतें है जो फ़िल-हक़ीक़त हम तुम्हें सुना रहे हैं। फिर अल्लाह और उसकी आयतों के बाद कौन-सी

1-हलचल। 2-विश्वास करने वालों।

बात रह गई है जिसे सुन कर ये लोग ईमान लाएँगे? (45: 1-6)

सूर: अनआ़म में उन लोगों का जो वह्ये इलाही के नुज़ूल पर मुतअ़ज्जिब होते हैं, इन लफ़्ज़ों में ज़िक्र किया गया है :

وَمَاقَدَرُوا اللّٰهَ حَقَّ قَدْرِهٖ اِذْ قَالُوْا مَا اَنْزَلَ اللّٰهُ عَلٰى بَشَرٍ مِّنْ شَىْءٍ ط (٦: ٩١)

और अल्लाह के कामों की उन्हें जो क़द्र-शनासी[1] करनी थी, यक़ीनन उन्होंने नहीं की जब उन्होंने ये बात कही कि अल्लाह ने अपने किसी बन्दे पर कोई चीज़ नाज़िल नहीं की। (6: 91)

फिर तौरात और क़ुरआन के नुज़ूल के ज़िक्र के बाद हस्बेज़ैल बयान शुरू हो जाता है :

اِنَّ اللّٰهَ فَالِقُ الْحَبِّ وَالنَّوٰى ط يُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَمُخْرِجُ الْمَيِّتِ مِنَ الْحَيِّ ط ذٰلِكُمُ اللّٰهُ فَاَنّٰى تُؤْفَكُوْنَ ٥

यक़ीनन ये अल्लाह ही की कारफ़रमाई है कि वो दाने और गुठली को शक़[2] करता है (और उससे हर चीज़ का दरख़्त पैदा कर देता है) वो ज़िन्दा को मुर्दा चीज़ से निकालता और मुर्दा को ज़िन्दा अशिया से निकालने वाला है। हाँ! वही तुम्हारा ख़ुदा है, फिर तुम (उससे रू-गर्दानी करके) किधर को बहके चले जा रहे हो?

1-क़द्र करना, महत्व आंकना। 2-फाड़ना, तोड़ना।

فَالِقُ الْاِصْبَاحِ ۚ وَجَعَلَ الَّيْلَ سَكَنًا وَّالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ حُسْبَانًا ۭ ذٰلِكَ تَقْدِيْرُ الْعَزِيْزِ الْعَلِيْمِ ۝

हाँ वही (पर्द-ए-शब[1] को चाक करके) सुब्ह की रौशनी नमूदार करने वाला है, वही है जिसने रात को राहत व सुकून का ज़रिया बना दिया और वही है कि उसने सूरज और चाँद की गर्दिश[2] इस दुरुस्तगी के साथ क़ायम कर दी कि हिसाब का मेयार[3] बन गई। ये उस अ़ज़ीज़ व अ़लीम का ठहराया हुआ अन्दाज़ा है।

وَهُوَ الَّذِيْ جَعَلَ لَكُمُ النُّجُوْمَ لِتَهْتَدُوْا بِهَا فِيْ ظُلُمٰتِ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ ۭ قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ ۝

(٦: ٩٥-٩٧)

और (फिर देखो!) वही है जिसने तुम्हारे लिए सितारे पैदा कर दिये ताकि ख़ुश्की व तरी की तारीकियों में उनसे रहनुमाई पाओ। बिला-शुब्हा उन लोगों के लिए जो जानने वाले हैं हमने दलीलें खोल-खोल कर बयान कर दी हैं! (6: 95-97)

यानी जिस परवरदिगारे आ़लम की रुबूबियतो-रहमत का ये तमाम फ़ैज़ान शबो-रोज़ देख रहे हो, क्या ये मुमकिन नहीं कि वो तुम्हारी जिस्मानी परवरिश व हिदायत के लिए तो ये सब कुछ करे, लेकिन तुम्हारी रूहानी परवरिश व हिदायत के लिए उसके पास कोई सरो-सामान न हो? वो ज़मीन की मौत को ज़िन्दगी से बदल देता

1-रात का पर्दा। 2-चक्कर लगाना, परिक्रमा। 3-स्तर, मानक।

है। फिर क्या तुम्हारी रूह की मौत को ज़िन्दगी से नहीं बदल देगा? वो सितारों की रौशन अ़लामतों से ख़ुश्की व तरी की ज़ुल्मतों में रहनुमाई करता है, क्यों कर मुमकिन है कि तुम्हारी रूहानी ज़िन्दगी की तारीकियों में वो रहनुमाई की कोई रौशनी न हो? तुम, जो कभी इस पर मुतअ़ज्जिब नहीं होते कि ज़मीन पर खेत लहलहा रहे हैं और आसमान में तारे चमक रहे हैं, क्यों इस बात पर मुतअ़ज्जिब होते हो कि ख़ुदा की वह्य नौअ़े इन्सानी की हिदायत के लिए नाज़िल हो रही है? अगर तुम्हें तअ़ज्जुब होता है तो ये इस बात का नतीजा है कि तुम ने ख़ुदा को उसकी सिफ़तों[1] में इस तरह नहीं देखा है जिस तरह देखना चाहिए। तुम्हारी समझ में ये बात तो आ जाती है कि वो एक चींवटी की परवरिश के लिए ये पूरा कारख़ान-ए-हयात सरगर्म रखे, मगर ये बात समझ में नहीं आती कि नौअ़े इन्सानी की हिदायत के लिए सिलसिल-ए-वह्यो-तन्ज़ील क़ायम हो।

निज़ामे रुबूबियत से वुजूदे मआ़द पर इस्तिदलाल

इसी तरह वो आमाले रुबूबियत से मआ़द[2] और आख़िरत पर भी इस्तिदलाल करता है। जो चीज़ जितनी ज़्यादा निगरानी और एहतिमाम से बनाई जाती है उतनी ही ज़्यादा क़ीमती इस्तेमाल और अहम मक़्सद भी रखती है। और बेहतर सन्नाअ़[3] वही है जो अपनी सन्अ़तगरी[4] का बेहतर इस्तेमाल और मक़्सद रखता हो। पस इन्सान जो कुर-ए-अर्ज़ी की बेहतरीन मख़्लूक़ और उसके तमाम सिलसिलए ख़िल्क़त का ख़ुलासा है और जिसकी जिस्मानी और मअ़नवी नशो-

1-गुण-विशेषताओं। 2-बाद का जीवन। 3-रचनाकार। 4-कारीगरी, सृजनत्व।

नुमा के लिए फ़ित्रते काइनात ने इस क़द्र एहतिमाम किया है, क्यों कर मुमकिन है कि महज़ दुनिया की चन्द-रोज़ा ज़िन्दगी के लिए ही बनाया गया हो और कोई बेहतर इस्तेमाल और बुलन्दतर मक़्सद न रखता हो? और फिर अगर ख़ालिक़े काइनात 'रब' है और कामिल[1] दर्जे की रुबूबियत रखता है तो क्यों कर बावर किया जा सकता है कि उसने अपने एक बेहतरीन मरबूब यानी परवरदा हस्ती को महज़ इसलिए बनाया हो कि मोहमल[2] और बेनतीजा छोड़ दे :

اَفَحَسِبْتُمْ اَنَّمَا خَلَقْنٰكُمْ عَبَثًا وَّاَنَّكُمْ اِلَيْنَا لَا تُرْجَعُوْنَ ० فَتَعٰلَى اللّٰهُ الْمَلِكُ الْحَقُّ ۚ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ رَبُّ الْعَرْشِ الْكَرِيْمِ ०

(٢٣: ١١٥-١١٦)

क्या तुमने ऐसा समझ रखा है कि हमने तुम्हें बग़ैर किसी मक़्सद व नतीजे के पैदा किया है और तुम हमारी तरफ़ लौटने वाले नहीं हो? अल्लाह जो इस काइनाते हस्ती का हक़ीक़ी हुक्मराँ है, इससे बहुत बुलन्द है कि एक बेकार व अ़बस फ़े'ल[3] करे। कोई माबूद नहीं है मगर वो जो (जहाँदारी के) अ़र्शे बुज़ुर्ग[4] का परवरदिगार है।

(23: 115-116)

हमने ये मतलब उसी सादा तरीक़े पर बयान कर दिया जो क़ुरआन के बयानो-ख़िताब का तरीक़ा है, लेकिन यही मतलब इल्मी बहस व तक़्रीर के पैराए में यूँ बयान किया जा सकता है कि वुजूदे इन्सानी कुर-ए-अर्ज़ी[5] के सिलसिल-ए-ख़िल्क़त[6] की आख़िरी और

1-चरम। 2-निरर्थक। 3-कार्य। 4-सर्वोच्च सिंहासन। 5-पृथ्वी। 6-सृजन-श्रृंखला।

आला-तरीन[1] कड़ी है। और अगर पैदाइशे-हयात[2] से लेकर इन्सानी वुजूद की तक्मील[3] तक की तारीख़ पर नज़र डाली जाए तो एक नाक़ाबिले शुमार मुद्दत के मुसलसल नशो-इरतिक़ा[4] की तारीख़ होगी। गोया फ़ित्रत ने लाखों करोड़ों बरस की कारफर्माई व सन्नाई से कुर-ए-अर्ज़ी पर जो आला-तरीन वुजूद तैयार किया है, वो इन्सान है !

माज़ी[5] के एक नुक्त-ए-बईद[6] का तसव्वुर करो! जब हमारा ये कुरा[7] सूरज के मुल्तहब[8] कुरे से अलग हुआ था, नहीं मालूम कितनी मुद्दत इसके ठंडे और मोतदिल होने में गुज़र गई और ये इस क़ाबिल हुआ कि ज़िन्दगी के अनासिर[9] इसमें नशो-नुमा पा सकें! इसके बाद वो वक़्त आया जब इसकी सतह पर नशो-नुमा की सबसे पहली दाग़बेल पड़ी और फिर नहीं मालूम कितनी मुद्दत के बाद ज़िन्दगी का वो अव्वलीन बीज वुजूद में आ सका जिसे प्रोटोप्लाज़्म Protoplasm के लफ़्ज़ से ताबीर किया जाता है! फिर हयाते उज़्वी[10] की नशो-नुमा का दौर शुरू हुआ और नहीं मालूम कितनी मुद्दत इस पर गुज़र गई कि इस दौर ने बसीत[11] से मुरक्कब[12] तक और अदना[13] से आला[14] दर्जे तक तरक़्क़ी की मन्ज़िलें तय कीं ! यहाँ तक कि हैवानात[15] की इब्तिदाई कड़ियाँ ज़ुहूर में आईं और फिर लाखों बरस इसमें निकल गए कि ये सिलसिल-ए-इरतिक़ा[16] वुजूदे इन्सानी तक मुर्तफ़ा[17] हुआ ! फिर इन्सान के जिस्मानी ज़ुहूर के बाद उसके ज़ेहनी इरतिक़ा का सिलसिला शुरू हुआ और एक तूल-तवील मुद्दत

1-सर्वोत्तम। 2-जीवन के जन्म। 3-सम्पूर्ण विकास। 4-विकास। 5-अतीत। 6-दूरस्थ बिंदु। 7-गोला, पिंड। 8-जलते हुए। 9-तत्व। 10-जैविक (आर्गेनिक) जीवन। 11-सरल। 12-यौगिक। 13-तुच्छ। 14-उत्कृष्ट। 15-जीवों। 16-विकास-श्रृंखला। 17-चलता रहा।

इस पर गुज़र गई ! बिल-आख़िर हज़ारों बरस के इज्तिमाई और ज़ेहनी इरतिक़ा के बाद वो इन्सान ज़ुहूर-पज़ीर हो सका जो क़ुरए अर्ज़ी के तारीख़ी अ़हद[1] का मुतमद्दिन[2] और अ़क़ील इन्सान है !

गोया ज़मीन की पैदाइश से लेकर तरक़्क़ी याफ़्ता इन्सान की तक्मील तक जो कुछ गुज़र चुका है और जो कुछ बनता-संवरता रहा है वो तमामतर इन्सान की पैदाइशो-तक्मील ही की सरगुज़िश्त[3] है !

सवाल ये है कि जिस वुजूद की पैदाइश के लिए फ़ित्रत ने इस दर्जा एहतिमाम किया है, क्या ये सब कुछ सिर्फ़ इसलिए था कि वो पैदा हो, खाए, पिये और मर कर फ़ना हो जाए ?

فَتَعٰلَى اللّٰهُ الْمَلِكُ الْحَقُّ ۚ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ رَبُّ الْعَرْشِ الْكَرِيْمِ ۝

(23 : 116)

क़ुदरती तौर पर यहाँ एक दूसरा सवाल भी पैदा हो जाता है, अगर वुजूदे हैवानी अपने माज़ी में हमेशा यके-बाद दीगरे मुतग़ैयर[4] होता और तरक़्क़ी करता रहा है तो मुस्तक़्बिल में भी ये तग़ैयुर[5] व इरतिक़ा क्यों जारी न रहे? अगर इस बात पर हमें बिल्कुल तअ़ज्जुब नहीं होता कि माज़ी में बेशुमार सूरतें मिटीं और नई ज़िन्दगियाँ ज़ुहूर में आईं तो इस बात पर क्यों तअ़ज्जुब हो कि मौजूदा ज़िन्दगी का मिटना भी बिल्कुल मिट जाना नहीं है, इसके बाद भी एक आलातर सूरत और ज़िन्दगी है ?

क्या इन्सान ख़याल करता है कि वो मोहमल छोड़ दिया जाएगा

اَيَحْسَبُ الْاِنْسَانُ اَنْ يُّتْرَكَ

1-ऐतिहासिक काल । 2-सभ्य । 3-कहानी । 4-परिवर्तित । 5-परिवर्तन ।

سُدًى ٥ اَلَمْ يَكُ نُطْفَةً مِّنْ مَّنِيٍّ يُّمْنٰى ٥ ثُمَّ كَانَ عَلَقَةً فَخَلَقَ فَسَوّٰى ٥

(٧٥: ٣٦-٣٨)

(और इस ज़िन्दगी के बाद दूसरी ज़िन्दगी न होगी) ? क्या इस पर ये हालत नहीं गुज़र चुकी है कि पैदाइश से पहले नुत्फ़ा था, फिर नुत्फ़ा से अलक़ा हुआ (यानी जोंक की सी शक्ल हो गई) फिर अलक़ा से (उसका डील-डौल) पैदा किया गया, फिर (डील-डौल को) ठीक-ठीक दुरुस्त किया गया! (75:36-38)

सूर: ज़ारियात में तमामतर "दीन" यानी जज़ा का बयान है :

اِنَّمَا تُوْعَدُوْنَ لَصَادِقٌ ٥ وَّاِنَّ الدِّيْنَ لَوَاقِعٌ ٥ (51 : 5-6)

और फिर इस पर आमाले रुबूबियत से यानी हवाओं के चलने और पानी बरसने के मोअस्सिरात से इस्तिशहाद किया गया है :

وَالذّٰرِيٰتِ ذَرْوًا ٥ فَالْحٰمِلٰتِ وِقْرًا ٥ فَالْجٰرِيٰتِ يُسْرًا ٥ فَالْمُقَسِّمٰتِ اَمْرًا ٥ (51 :1-4)

फिर आसमान और ज़मीन की बख़्शाइशों पर और ख़ुद वुजूदे इन्सानी की फ़िरिश्तानी शहादतों पर तवज्जोह दिलाई है :

وَفِى الْاَرْضِ اٰيٰتٌ لِّلْمُوْقِنِيْنَ ٥ وَفِىْٓ اَنْفُسِكُمْ ۚ اَفَلَا تُبْصِرُوْنَ ٥ وَفِى السَّمَآءِ رِزْقُكُمْ وَمَا تُوْعَدُوْنَ ٥

इसके बाद फ़रमाया :

فَوَرَبِّ السَّمَآءِ وَالْاَرْضِ

आसमान और ज़मीन के रब की क़सम (यानी आसमानो-ज़मीन

إِنَّهُ لَحَقٌّ مِّثْلَ مَآ أَنَّكُمْ تَنطِقُونَ ٥

(٥١: ٢٠-٢٣)

के परवरदिगार की परवरदिगारी की शहादत दी गई है) कि बिला-शुब्हा वो मामला (यानी जज़ा व सज़ा का मामला) हक़ है, ठीक इसी तरह जिस तरह ये बात हक़ है कि तुम गोयाई रखते हो। (51: 20-23)

इस आयत में इस्बाते-जज़ा के लिए ख़ुदा ने ख़ुद अपने वुजूद की क़सम खाई है, लेकिन "रब" के लफ़्ज़ से अपने आप को ताबीर किया है। अरबी में क़सम का मतलब ये होता है कि किसी बात पर किसी बात से शहादत लाई जाए। पस मतलब ये हुआ कि परवरदिगारे आलम की परवरदिगारी शहादत दे रही है कि ये बात हक़ है। ये शहादत क्या है? वही रुबूबियत की शहादत है। अगर दुनिया में परवरिश मौजूद है, परवरदा मौजूद है, और इसलिए परवरदिगार भी मौजूद है तो मुमकिन नहीं कि जज़ा का मामला भी मौजूद न हो और वो बग़ैर किसी नतीजे के इन्सान को छोड़ दे। चूंकि लोगों की नज़र इस हक़ीक़त पर न थी, इसलिए इस आयत में क़सम और मक़्समबिही का रब्त सहीह तौर पर मुतअय्यन[1] न कर सके।

क़ुरआने हकीम के दलाइल व बराहीन पर ग़ौर करते हुए ये अस्ल हमेशा पेशे नज़र रखनी चाहिए कि उसके इस्तिदलाल का तरीक़ा मन्तिक़ी बहसो-तक़रीर का तरीक़ा नहीं है जिसके लिए चन्द दर चन्द मुक़द्दिमात की ज़रूरत होती है और फिर इस्बाते मुद्दआ की शक्लें तरतीब देनी पड़ती हैं। बल्कि वो हमेशा बराहेरास्त[2] तल्क़ीन[3]

1-तय। 2-सीधे-सीधे। 3-निर्देश, हिदायत।

का क़ुदरती और सीधा-सादा तरीक़ा इख़्तियार करता है। उमूमन उसके दलाइल उसके उस्लूबे बयान व ख़िताब में मुज़्मर होते हैं। वो या तो किसी मतलब के लिए उस्लूबे ख़िताब ऐसा इख़्तियार करता है कि उसी से इस्तिदलाल की रौशनी नमूदार हो जाती है या फिर किसी मतलब पर ज़ोर देते हुए कोई एक लफ़्ज़ ऐसा बोल जाता है कि उसकी ताबीर[1] ही उसकी दलील में मौजूद होती है और ख़ुद बख़ुद मुख़ातिब का ज़हेन दलील की तरफ़ फिर जाता है। चुनांचे इसकी एक वाज़ेह मिसाल यही सिफ़ते रुबूबियत का जा-बजा इस्तेमाल है। जब वो ख़ुदा की हस्ती का ज़िक्र करता हुआ उसे "रब" के लफ़्ज़ से ताबीर करता है तो ये बात कि वो "रब" है, जिस तरह उसकी एक सिफ़त ज़ाहिर करती है इसी तरह उसकी दलील भी वाज़ेह कर देती है। वो "रब" है और ये वाक़िआ है कि उसकी रुबूबियत तुम्हें चारों तरफ़ से घेरे हुए और ख़ुद तुम्हारे दिल के अन्दर घर बनाए हुए है, फिर क्यों कर तुम जुरअत कर सकते हो कि उसकी हस्ती का इनकार करो ! वो रब है और रब के सिवा कौन हो सकता है जो तुम्हारी बन्दगी व नियाज़ का मुस्तहिक़ हो ?

चुनांचे क़ुरआन के वो तमाम मक़ामात जहाँ इस तरह के मुख़ातिबात हैं कि :

يَاَيُّهَا النَّاسُ اعْبُدُوْا رَبَّكُمْ (2: 21) ، اُعْبُدُوا اللّٰهَ رَبِّىْ وَرَبَّكُمْ (5:72,117)، اِنَّ اللّٰهَ رَبِّىْ وَرَبُّكُمْ فَاعْبُدُوْهُ (3: 51) ، ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ فَاعْبُدُوْهُ (10: 3) ، اِنَّ هٰذِهٖٓ اُمَّتُكُمْ اُمَّةً وَّاحِدَةً وَّ اَنَا رَبُّكُمْ

1-ख़ुलासा।

فَاعْبُدُوْنِ (21: 92) ، قُلْ اَتُحَاجُّوْنَنَا فِي اللّٰهِ وَهُوَ رَبُّنَا وَرَبُّكُمْ

वग़ैरहा (2: 139)

तो इन्हें मुजर्रद अम्रो-ख़िताब ही नहीं समझना चाहिए, बल्कि वो ख़िताबो-दलील दोनों हैं, क्योंकि "रब" के लफ़्ज़ ने बुरहाने रुबूबियत की तरफ़ ख़ुद बख़ुद रहनुमाई कर दी है। अफ़सोस है हमारे मुफ़स्सिरों की नज़र इस हक़ीक़त पर न थी, क्योंकि मन्तिक़ी इस्तिदलाल[1] के इस्तिग़राक़[2] ने उन्हें क़ुरआन के तरीक़े इस्तिदलाल से बेपरवा कर दिया था। नतीजा ये निकला कि उन मक़ामात के तर्जुमे और तफ़्सीर में क़ुरआन के उस्लूबे बयान की हक़ीक़ी रूह वाज़ेह न हो सकी और इस्तिदलाल का पहलू तरह-तरह की तौजीहात[3] में गुम हो गया।

● ❋ ●

1-बौद्धिक तर्क शैली। 2-प्रभाव, पराभाव। 3-प्रवृत्तियों, अभिप्रायों, व्याख्या शैलियों।

(4)

اَلرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

अर्रहमानिर्रहीमि

"اَلرَّحْمٰن अर्रहमान" और "اَلرَّحِيْم अर्रहीम" दोनों रहम से हैं। अ़रबी में "रहमत" अ़वातिफ़[1] की ऐसी रिक़्क़तो-नरमी[2] को कहते हैं जिससे किसी दूसरी हस्ती के लिए एहसान व शफ़्क़त का इरादा जोश में आ जाए। पस रहमत में मुहब्बत, शफ़्क़त, फ़ज़्ल, एहसान, सबका मफ़्हूम दाख़िल है और मुजर्रद[3] मुहब्बत, लुत्फ़ और फ़ज़्ल से ज़्यादा वसीअ़ और हावी है।

अगर्चे ये दोनों इस्म[4] रहमत से हैं, लेकिन रहमत के दो मुख़्तलिफ़ पहलुओं को नुमायाँ करते हैं। अ़रबी में फअ़लान का बाब उमूमन ऐसी सिफ़ात के लिए इस्तेमाल किया जाता है जो महज़ सिफ़ाते आरिज़ा[5] होते हैं (25) जैसे प्यासे के लिए अ़त्शान, ग़ज़ब्ना के लिए ग़ज़्बान, सरासीमा के लिए हैरान, मस्त के लिए सक्रान। लेकिन फ़ईल के वज़न में सिफ़ाते क़ाइमा[6] का ख़ास्सा है, यानी उमूमन ऐसी सिफ़ात के लिए बोला जाता है जो जज़्बाते-अ़वारिज़[7] होने की जगह सिफ़ाते क़ाइमा होते हैं (26), मसलन करीम करम करने वाला, अ़ज़ीम बड़ाई रखने वाला, अ़लीम इल्म रखने वाला, हकीम हिकमत रखने वाला। पस "अर्रहमान" के मअ़ना ये हुए कि वो ज़ात जिस में रहमत है और "अर्रहीम" के मअ़ना ये हुए कि वो ज़ात जिस में न सिर्फ़ रहमत है बल्कि जिससे हमेशा रहमत का

1-चैतन्यता, संवेदना। 2-स्नेह व अनुग्रहभाव। 3-अमूर्त, एब्सट्रैक्ट। 4-नाम, शब्द। 5-अस्थायी गुण। 6-स्थायी गुण-भाव। 7-अस्थायी भाव।

ज़ुहूर होता रहता है और हर आन व हर लमहा तमाम काइनाते ख़िल्क़त उससे फ़ैज़याब हो रही है।

रहमत को दो अलग-अलग इस्मों से क्यों ताबीर किया गया? इसलिए कि क़ुरआन ख़ुदा के तसव्वुर का जो नक़्शा ज़ेहन-नशीन करना चाहता है, उसमें सबसे ज़्यादा नुमायाँ और छाई हुई सिफ़त रहमत ही की सिफ़त है, बल्कि कहना चाहिए कि तमामतर रहमत ही है :

और मेरी रहमत दुनिया की हर चीज़ को घेरे हुए है। (7: 156)

وَرَحْمَتِىْ وَسِعَتْ كُلَّ شَىْءٍ ط (٧:١٥٦)

पस ये ज़रूरी था कि ख़ुसूसियत के साथ उसकी सिफ़ती[1] और फ़े'ली[2] दोनों हैसियतें वाज़ेह कर दी जाएँ, यानी उसमें रहमत है, क्यों कि वो "अर्रहमान" है और सिर्फ़ इतना ही नहीं बल्कि हमेशा उससे रहमत का ज़ुहूर भी हो रहा है, क्योंकि "अर्रहमान" के साथ वो "अर्रहीम" भी है।

रहमत

लेकिन अल्लाह की रहमत क्या है? क़ुरआन कहता है: काइनाते हस्ती में जो कुछ भी ख़ूबी व कमाल है वो इसके सिवा कुछ नहीं कि रहमते इलाही का ज़ुहूर है।

जब हम काइनाते हस्ती के आमालो-मज़ाहिर[3] पर ग़ौर करते हैं तो सबसे पहली हक़ीक़त जो हमारे सामने नुमायाँ होती है वो उसका निज़ामे रुबूबियत है, क्योंकि फ़ित्रत से हमारी पहली शनासाई[4] रुबूबियत ही के ज़रिये होती है। लेकिन जब इल्मो-इदराक

1-गुणात्मक। 2-क्रियात्मक। 3-कार्यों व प्रदर्शनों। 4-पहचना, परिचय।

की राह मे चन्द क़दम आगे बढ़ते हैं तो देखते हैं कि रुबूबियत से भी एक ज़्यादा वसीअ़ और आ़म हक़ीक़त यहाँ कारफर्मा है और रुबूबियत भी उसी के फ़ैज़ान का एक गोशा है।

रुबूबियत और उसका निज़ाम क्या है? काइनाते हस्ती की परवरिश है। लेकिन काइनाते हस्ती में सिर्फ़ परवरिश ही नहीं है, परवरिश से भी एक ज़्यादा बनाने, संवारने और फ़ायदा पहुँचाने की हक़ीक़त काम कर रही है। हम देखते हैं कि उसकी फ़ित्रत में बनाव है, उसके बनाव में ख़ूबी है, उसके मिज़ाज में एतिदाल[1] है, उसके अफ़आ़ल में ख़्वास हैं, उसकी सूरत में हुस्न है, उसकी सदाओं में नग़मा है, उसकी बू में इत्र-बेज़ी है और उसकी कोई बात नहीं जो इस कारख़ाने की तामीरो-दुरुस्तगी के लिए मुफ़ीद न हो। पस ये हक़ीक़त जो अपने बनाव और फ़ैज़ान में रुबूबियत से भी ज़्यादा वसीअ़ और आ़म है, क़ुरआन कहता है कि रहमत है और ख़ालिके काइनात[2] की रहमानियत और रहीमियत का ज़ुहूर है।

तामीर व तह्सीने काइनात रहमते इलाही का नतीजा है

ज़िन्दगी व हरकत का ये आ़लमगीर कारख़ाना वुजूद ही में न आता, अगर अपने हर फे़'ल में बनने, बनाने, संवरने, संवारने और हर तरह बेहतर व अस्लह[3] होने का ख़ास्सा न रखता। फ़ित्रते काइनात में ये ख़ास्सा क्यों है? इसलिए कि बनाव हो, बिगाड़ न हो, दुरुस्तगी हो बरहमी[4] न हो, लेकिन क्यों ऐसा हुआ कि फ़ित्रत बनाए और संवारे, बिगाड़े और उलझाए नहीं? ये क्या है कि जो कुछ होता

1-संतुलन। 2-जगत-सृष्टा। 3-सुधरी हुई। 4-विघटन, तोड़-फोड़।

है, दुरुस्त और बेहतर ही होता है, ख़राब और बदतर नहीं होता? इन्सान के इल्मो-दानिश की काविशें आज तक ये उक़्दा हल न कर सकीं। फ़लसफ़-ओ-नज़र[1] का क़दम जब कभी इस हद तक पहुँचा, दम-बख़ुद[2] होकर रह गया। लेकिन क़ुरआन कहता है: ये इसलिए है कि फ़ित्रते काइनात में रहमत है और रहमत का मुक़्तज़ा यही है कि ख़ूबी और दुरुस्तगी हो, बिगाड़ और ख़राबी न हो।

इन्सान के इल्मो-दानिश की काविशें बतलाती हैं कि काइनाते हस्ती का ये बनाव और संवार अ़नासिरे अव्वलिय्या[3] की तरकीब और तरकीब के एतिदाल व तस्विये का नतीजा है। माद्द-ए-आलम[4] की कम्मियत में भी एतिदाल है, कैफ़ियत में भी एतिदाल है। यही एतिदाल है जिससे सब कुछ बनता है और जो कुछ बनता है, ख़ूबी और कमाल के साथ बनता है। यही एतिदालो-तनासुब[5] दुनिया के तमाम तामीरी और ईजाबी हक़ाइक़[6] की अस्ल है। वुजूद, ज़िन्दगी, तन्दुरुस्ती, हुस्न, ख़ुशबू, नग़मा, बनाव और ख़ूबी के बहुत से नाम हैं, मगर हक़ीक़त एक ही है और वो एतिदाल है।

लेकिन फ़ित्रते काइनात में ये एतिदालो-तनासुब क्यों है? क्यों ऐसा हुआ कि अ़नासिर के दक़ाइक़[7] जब मिलें तो एतिदालो-तनासुब के साथ मिलें और माद्दे का ख़ास्सा यही ठहरा कि एतिदालो-तनासुब हो, इन्हिराफ़ो-तजावुज़[8] न हो? इन्सान का इल्म दम-बख़ुद और मुतहैयर है, लेकिन क़ुरआन कहता है: ये इसलिए हुआ कि ख़ालिक़े काइनात में रहमत है और इसलिए कि उसकी रहमत अपना ज़ुहूर भी रखती है। और जिसमें रहमत हो और उसकी रहमत ज़ुहूर भी

1-दर्शन व चिंतन। 2-स्तब्ध। 3-प्राथमिक तत्वों। 4-संसार के पदार्थों। 5-संतुलन-अनुपात। 6-शोधपरक सत्यों। 7-सूक्ष्मतर कण। 8-असंतुलित घालमेल।

रखती हो तो जो कुछ उससे सादिर[1] होगा उसमें ख़ूबी व बेहतरी ही होगी, हुस्नो-जमाल ही होगा, एतिदालो-तनासुब ही होगा, इसके ख़िलाफ़ कुछ नहीं हो सकता।

फ़लसफ़ा हमें बताता है कि तामीर और तहसीन[2] फ़ित्रते काइनात का ख़ास्सा है। ख़ास्स-ए-तामीर चाहता है कि बनाव हो, ख़ास्स-ए-तहसीन चाहता है कि जो कुछ बने, ख़ूबी व कमाल के साथ बने और ये दोनों ख़ास्से "क़ानूने ज़रूरत" का नतीजा हैं। काइनाते हस्ती के ज़ुहूरो-तक्मील के लिए ज़रूरत थी कि तामीर हो और ज़रूरत थी कि जो कुछ तामीर हो, हुस्नो-ख़ूबी के साथ तामीर हो। यही "ज़रूरत" बजाए-ख़ुद एक इल्लत हो गई और इसलिए फ़ित्रत से जो कुछ भी ज़ुहूर में आता है वैसा ही होता है जैसा होना ज़रूरी था।

लेकिन इस ता'लील[3] से भी ये उक़्दा हल नहीं हुआ, सवाल जिस मन्ज़िल में था उससे सिर्फ़ एक मन्ज़िल और आगे बढ़ गया। तुम कहते हो ये जो कुछ हो रहा है इसलिए है कि "ज़रूरत" का क़ानून मौजूद है। लेकिन सवाल ये है कि "ज़रूरत" का क़ानून क्यों मौजूद है? क्यों ये ज़रूरी हुआ कि जो कुछ ज़ुहूर में आए "ज़रूरत" के मुताबिक़ हो और "ज़रूरत" इसी बात की मुक़्तज़ी हुई कि ख़ूबी और दुरुस्तगी हो, बिगाड़ और बरहमी न हो? इन्सानी इल्म की काविशें इसका कोई जवाब नहीं दे सकतीं। एक मशहूर फ़लसफ़ी के लफ़्ज़ों में "जिस जगह से ये क्यों शुरू हो जाए, समझ जाओ कि फ़लसफ़े के ग़ौरो-ख़ौज़ की सरहद ख़त्म हो गई" लेकिन क़ुरआन इसी सवाल का जवाब देता है, वो कहता है: ये "ज़रूरत" रहमत

1-दर्शित, फलित। 2-शुभ-सुन्दर। 3-तर्क-वितर्क।

और फ़ज़्ल की "ज़रूरत" है। रहमत चाहती है कि जो कुछ जुहूर में आए, बेहतर हो और नाफ़े हो, और इसलिए जो कुछ जुहूर में आता है, बेहतर होता है और नाफ़े[1] होता है!

फिर ये हक़ीक़त भी वाज़ेह रहे कि दुनिया में ज़िन्दगी और बक़ा के लिए जिन चीज़ों की ज़रूरत है, जमालो-ज़ेबाइश[2] उनसे एक ज़ाइदतर फ़ैज़ान है और हम देख रहे हैं कि जमालो-ज़ेबाइश भी यहाँ मौजूद है। पस ये नहीं कहा जा सकता कि ये सब कुछ क़ानूने ज़रूरत ही का नतीजा है। ज़रूरत, ज़िन्दगी और बक़ा का सरो-सामान चाहती है, लेकिन ज़िन्दा और बाक़ी रहने के लिए जमालो-ज़ेबाइश की क्या ज़रूरत है? अगर जमालो-ज़ेबाइश भी यहाँ मौजूद है तो यक़ीनन ये फ़ित्रत का एक मज़ीद लुत्फ़ो-एहसान है और इससे मालूम होता है कि फ़ित्रत सिर्फ़ ज़िन्दगी ही नहीं बख़्शती, बल्कि ज़िन्दगी को हसीनो-लतीफ़[3] भी बनाना चाहती है। पस ये महज़ ज़िन्दगी की ज़रूरत का क़ानून नहीं हो सकता। ये उस ज़रूरत से भी कोई बालातर "ज़रूरत" है जो चाहती है कि रहमत और फ़ैज़ान हो। क़ुरआन कहता है: ये रहमत की "ज़रूरत" है। और रहमत का मुक़्तज़ा यही है कि वो सब कुछ जुहूर में आए जो रहमत से जुहूर में आना चाहिए:

قُلْ لِمَنْ مَّا فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ قُلْ لِلّٰهِ ؕ كَتَبَ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ ؕ (٦: ١٢)

[(ऐ पैग़म्बर ! इन लोगों से) पूछो [27)] आसमान और ज़मीन में जो कुछ है, वो किस के लिए है? (ऐ पैग़म्बर !) कह दे : अल्लाह के लिए है जिसने

1-लाभकर, उपादेय। 2-सौंदर्य-शोभा। 3-सुन्दर व कोमल।

وَرَحۡمَتِیۡ وَسِعَتۡ کُلَّ شَیۡءٍ ط
(۷: ۱۲)

अपने लिए ज़रूरी ठहरा लिया है कि रहमत हो और मेरी रहमत दुनिया की हर चीज़ को घेरे हुए है। (7: 156)

इफ़ादा व फ़ैज़ाने फ़ित्रत

इस सिलसिले में सबसे पहली हक़ीक़त जो हमारे सामने नुमायाँ होती है, वो काइनाते हस्ती और उसकी तमाम अशिया का इफ़ादा व फ़ैज़ान है। यानी हम देखते हैं कि फ़ित्रत के तमाम कामों में कामिल नज़्मो-यक्सानियत[1] के साथ मुफ़ीद और ब-कार-आमद[2] होने की ख़ासियत पाई जाती है। और अगर बहैसियत मज्मूई[3] देखा जाए तो ऐसा मालूम होता है गोया ये तमाम कारगाहे आ़लम सिर्फ़ इसी लिए बना है कि हमें फ़ायदा पहुँचाए और हमारी हाजत-रवाइयों का ज़रिया हो :

وسخر لکم ما فی السمٰوٰت وما فی الارض جمیعا منہ ط ان فی ذٰلک لاٰیٰت لقوم یتفکرون ۝
(۱۳ :٤٥)

और आसमानों और ज़मीन में जो कुछ भी है, वो सब अल्लाह ने तुम्हारे लिए मुसख़्ख़र कर दिया है (यानी उनकी क़ुव्वतें और तासीरें इस तरह तुम्हारे तसर्रुफ़[4] में दे दी गई हैं कि जिस तरह चाहो काम ले सकते हो) बिला-शुब्हा उन लोगों के लिए जो ग़ौरो-फ़िक्र करने वाले हैं, इस बात में (मअ़रिफ़ते-हक़

1-सुव्यवस्था व तारतम्यता। 2-सार्थक। 3-कुल मिला कर। 4-काम के लिए सौंपना

की) बड़ी ही निशानियाँ है !

(28) (45: 13)

हम देखते हैं कि काइनाते हस्ती में जो कुछ भी मौजूद है और जो कुछ भी ज़ुहूर में आता है, उसमें से हर चीज़ कोई न कोई ख़ास्सा रखती है और हर हादिसा की कोई न कोई तासीर है। और फिर हम ये भी देखते हैं कि ये तमाम ख़्वास व मोअस्सिरात[1] कुछ इस तरह वाक़े हुए हैं कि हर ख़ास्सा हमारी कोई न कोई ज़रूरत पूरी करता और हर तासीर हमारे लिए कोई न कोई फ़ैज़ान रखती है। सूरज, चाँद, सितारे, हवा, बारिश, दरिया, समन्दर, पहाड़, सबके ख़्वासो-फ़वायद हैं और सब हमारे लिए तरह-तरह की राहतों और असाइशों का सामान बहम पहुँचा रहे हैं :

اَللّٰهُ الَّذِىْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَاَنْزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً فَاَخْرَجَ بِهٖ مِنَ الثَّمَرٰتِ رِزْقًا لَّكُمْ وَسَخَّرَ لَكُمُ الْفُلْكَ لِتَجْرِىَ فِى الْبَحْرِ بِاَمْرِهٖ ۚ وَسَخَّرَ لَكُمُ الْاَنْهٰرَ ۚ وَسَخَّرَ لَكُمُ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ دَآئِبَيْنِ ۚ وَسَخَّرَ لَكُمُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ ۚ

ये अल्लाह ही की कारफ़रमाई है कि उसने आसमानों और ज़मीन को पैदा किया और आसमान से पानी बरसाया, फिर उसकी तासीर से तरह-तरह के फ़ल तुम्हारी ग़िज़ा के लिए पैदा कर दिये। इसी तरह उसने ये बात भी ठहरा दी है कि समन्दर में जहाज़ तुम्हारे ज़ेरे-फ़रमान[2] रहते और हुक्मे इलाही से चलते रहते हैं। और इसी तरह दरिया भी तुम्हारी कार-बरआरियों के

1-गुण व प्रभाव। 2-आदेशाधीन।

وَاٰتٰـكُمْ مِنْ كُلِّ مَا سَاَلْتُمُوْهُ ط وَاِنْ تَـعُـدُّوْا نِـعْـمَتَ اللّٰهِ لَا تُحْصُوْهَا ط اِنَّ الْاِنْسَانَ لَـظَلُوْمٌ كَـفَّـارٌ o

(١٤: ٣٢ـ٣٤)

लिए मुसख़्ख़र[1] कर दिये गए। और (फिर इतना ही नहीं बल्कि ग़ौर करो तो) सूरज और चाँद भी तुम्हारे लिए मुसख़्ख़र कर दिये गए हैं कि एक ख़ास ढंग पर गर्दिश में हैं और रात और दिन का इख़्तिलाफ़[2] भी (तुम्हारे फ़ायदे ही के लिए) मुसख़्ख़र है। ग़रज़े-कि जो कुछ तुम्हें मतलूब था, वो सब कुछ उसने अ़ता कर दिया। अगर तुम अल्लाह की नेमतें शुमार करनी चाहो तो वो इतनी हैं कि हरगिज़ शुमार न कर सकोगे। बिला-शुब्हा इन्सान बड़ा ही ना इन्साफ़, बड़ा ही ना शुक्रा है !
(14: 32-34)

ज़मीन को देखो ! उसकी सतह फलों और फूलों से लदी हुई है, तह में आबे-शीरीं की सूतें बह रही हैं, गहराई से चाँदी, सोना निकल रहा है, वो अपनी जसामत में अगर्चे मुदव्वर है, लेकिन उसका हर हिस्सा इस तरह वाक़े हुआ है कि मालूम होता है एक मुसत्तह फ़र्श बिछा दिया गया है :

اَلَّذِىْ جَعَلَ لَـكُمُ الْاَرْضَ

वो परवरदिगार जिसने तुम्हारे लिए ज़मीन इस तरह बना दी

1-बस में, अधीन, सुरक्षित। 2-भेद।

مَهْدًا وَّجَعَلَ لَكُمْ فِيهَا سُبُلًا لَّعَلَّكُمْ تَهْتَدُوْنَ ۝

(١٠:٤٣)

कि फ़र्श की तरह बिछी हुई है और उसमें क़त्ओ-मसाफ़त[1] की (हमवार) राहें पैदा कर दीं [ताकि तुम राह पाओ (29)] (43:10)

وَهُوَ الَّذِىْ مَدَّ الْاَرْضَ وَجَعَلَ فِيهَا رَوَاسِىَ وَاَنْهٰرًا ؕ وَمِنْ كُلِّ الثَّمَرَاتِ جَعَلَ فِيهَا زَوْجَيْنِ اثْنَيْنِ يُغْشِى الَّيْلَ النَّهَارَ ؕ اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّتَفَكَّرُوْنَ ۝

और ये उसी परवरदिगार की परवरदिगारी है कि उसने ज़मीन (तुम्हारी सुकूनत के लिए) फैला दी और उसमें पहाड़ों के लंगर डाल दिये और नहरें बहा दीं, नीज़ हर तरह के फलों की दो-दो क़िस्में पैदा कर दीं। और फिर ये उसी की कारफ़रमाई है कि (रात और दिन यक-बाद दीगरे आते रहते हैं और) रात की तारीकी दिन की रौशनी को ढांप लेती है। बिला-शुब्हा उन लोगों के लिए जो ग़ौरो-फ़िक्र करने वाले हैं इसमें (मअ़रिफ़ते हक़ीक़त की) बड़ी निशानियाँ है!

وَفِى الْاَرْضِ قِطَعٌ مُّتَجٰوِرٰتٌ وَّ جَنّٰتٌ مِّنْ اَعْنَابٍ وَّزَرْعٌ وَّنَخِيْلٌ صِنْوَانٌ وَّغَيْرُ صِنْوَانٍ

और (फिर देखो!) ज़मीन की सतह इस तरह बनाई गई है कि उसमें एक दूसरे से क़रीब (आबादी के) क़िल्आत[2] बन गए

1-यात्रा करने के लिए। 2-खंड।

يُسْقٰى بِمَآءٍ وَّاحِدٍ وَّنُفَضِّلُ بَعْضَهَا عَلٰى بَعْضٍ فِى الْاُكُلِ ؕ اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّعْقِلُوْنَ ○

(١٣: ٣-٤)

और अंगूरों के बाग़, ग़ल्ले की खेतियाँ, खजूरों के झुण्ड पैदा हो गए। इन दरख़्तों में बाज़ ज़्यादा टहनियों वाले हैं, बाज़ एकहरे और अगर्चे सबको एक ही तरह के पानी से सींचा जाता है, लेकिन फल एक तरह के नहीं, हमने बाज़ दरख़्तो को बाज़ पर फलों के मज़े में बरतरी दे दी। बिला-शुब्हा अरबाबे दानिश[1] के लिए इसमें (मअ़रिफ़ते हक़ीक़त की) बड़ी ही निशानियाँ हैं। (13: 3-4)

وَلَقَدْ مَكَّنّٰكُمْ فِى الْاَرْضِ وَجَعَلْنَا لَكُمْ فِيْهَا مَعَايِشَ ؕ قَلِيْلًا مَّا تَشْكُرُوْنَ ○

(٧: ١٠)

और (देखो!) हमने ज़मीन में तुम्हें ताक़त व तसर्रुफ़ के साथ जगह दी और ज़िन्दगी के तमाम सामान पैदा कर दिये, (मगर अफ़सोस) बहुत कम ऐसा होता है कि तुम (नेमते इलाही के) शुक्र-गुज़ार हो ! (7: 10)

समन्दर की तरफ़ नज़र उठाओ! उसकी सतह पर जहाज़ तैर रहे हैं, तह में मछलियाँ उछल रही हैं, क़अ़र में मरजान और मोती नशो-नुमा पा रहे हैं :

1-विवेक रखने वालों।

और (देखो!) ये उसी की कार-फ़रमाई है कि उसने समन्दर तुम्हारे लिए मुसख़्ख़र कर दिया ताकि अपनी ग़िज़ा के लिए तरो-ताज़ा गोश्त हासिल करे और ज़ेवर की चीज़ें निकालो जिन्हें (ख़ुशनुमाई के लिए) पहनते हो। नीज़ तुम देखते हो कि जहाज़ समन्दर में मौजें चीरते हुए चले जा रहे हैं और सेरो-सयाहत[1] के ज़रिए अल्लाह का फ़ज़्ल तलाश करो ताकि उसकी नेमत के शुक्र गुज़ार हो! (16: 14)	وَهُوَ الَّذِىْ سَخَّرَ الْبَحْرَ لِتَاْكُلُوْا مِنْهُ لَحْمًا طَرِيًّا وَّتَسْتَخْرِجُوْا مِنْهُ حِلْيَةً تَلْبَسُوْنَهَا ۚ وَتَرَى الْفُلْكَ مَوَاخِرَ فِيْهِ وَلِتَبْتَغُوْا مِنْ فَضْلِهٖ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ٥ (١٦:١٤)

हैवानात को देखो! ज़मीन के चारपाए, फ़िज़ा के परिन्दे, पानी की मछलियाँ, सब इसी लिए हैं कि अपने-अपने वुजूद से हमें फ़ायदा पहुँचाएँ। ग़िज़ा के लिए उनका दूध और गोश्त, सवारी के लिए उनकी पीठ, हिफ़ाज़त के लिए उनकी पासबानी, पहनने के लिए उनकी खाल और ऊन, बरतने के लिए उनके जिस्म की हड्डियाँ तक मुफ़ीद हैं।

और चारपाए पैदा कर दिये हैं जिन में तुम्हारे लिए जाड़े का सामान और तरह-तरह के	وَالْاَنْعَامَ خَلَقَهَا لَكُمْ فِيْهَا دِفْءٌ وَّمَنَافِعُ وَمِنْهَا تَاْكُلُوْنَ ٥

1-पर्यटन।

وَلَكُمْ فِيهَا جَمَالٌ حِينَ تُرِيحُونَ وَحِينَ تَسْرَحُونَ ۝ وَتَحْمِلُ أَثْقَالَكُمْ إِلَىٰ بَلَدٍ لَّمْ تَكُونُوا بَالِغِيهِ إِلَّا بِشِقِّ الْأَنفُسِ ۚ إِنَّ رَبَّكُمْ لَرَءُوفٌ رَّحِيمٌ ۝

मनाफ़े हैं, और उनसे तुम अपनी ग़िज़ा भी हासिल करते हो। जब उनके ग़ोल शाम को चर कर वापस आते हैं और जब चरागाहों के लिए निकलते हैं तो (देखो!) उनके मन्ज़र में तुम्हारे लिए ख़ुशनुमाई रख दी है। और उन्हीं में वो जानवर भी हैं जो तुम्हारा बोझ उठा कर उन (दूर-दराज़) शहरों तक पहुँचा देते हैं जहाँ तक तुम बग़ैर सख़्त मशक़्क़त के नहीं पहुँचा सकते थे। बिला शुब्हा तुम्हारा परवरदिगार बड़ा ही शफ़्क़त रखने वाला और साहिबे रहमत है।

وَالْخَيْلَ وَالْبِغَالَ وَالْحَمِيرَ لِتَرْكَبُوهَا وَزِينَةً ۚ وَيَخْلُقُ مَا لَا تَعْلَمُونَ ۝

(١٦: ٥-٨)

और (देखो!) घोड़े, ख़च्चर, गधे पैदा किए गए ताकि तुम उनसे सवारी का काम लो और ख़ुशनुमाई का भी मोजिब[1] हों। वो इसी तरह (तरह-तरह की चीज़ें) पैदा करता है जिन का तुम्हें इल्म नहीं।

(16: 5-8)

1-हेतु, ज़रिया, सबब।

وَاِنَّ لَكُمْ فِى الْاَنْعَامِ لَعِبْرَةً ؕ نُسْقِيْكُمْ مِّمَّا فِىْ بُطُوْنِهٖ مِنْۢ بَيْنِ فَرْثٍ وَّدَمٍ لَّبَنًا خَالِصًا سَآئِغًا لِّلشّٰرِبِيْنَ ۝

(١٦:٦٦)

और चारपायों के वुजूद में तुम्हारे लिए (फ़हमो-बसीरत की) बड़ी इबरत है। इन्हीं जानवरों के जिस्म में से हम ख़ून और कसाफ़तों के दरमियान दूध पैदा कर देते हैं जो पीने वालों के लिए बे-गुलो-ग़श[1] मशरूब[2] होता है। (16: 66)

وَاللّٰهُ جَعَلَ لَكُمْ مِّنْۢ بُيُوْتِكُمْ سَكَنًا وَّجَعَلَ لَكُمْ مِّنْ جُلُوْدِ الْاَنْعَامِ بُيُوْتًا تَسْتَخِفُّوْنَهَا يَوْمَ ظَعْنِكُمْ وَيَوْمَ اِقَامَتِكُمْ وَمِنْ اَصْوَافِهَا وَاَوْبَارِهَا وَاَشْعَارِهَا اَثَاثًا وَّمَتَاعًا اِلٰى حِيْنٍ ۝

(١٦:٨)

और (दिखो!) अल्लाह ने तुम्हारे घरों को तुम्हारे लिए सुकूनत की जगह बनाया, और (जो लोग शहरों में नहीं बसते, उनके लिए ऐसा सामान कर दिया कि) चारपायों की खाल के ख़ीमे बना दिये। सफ़र और इक़ामत, दोनों हालतों में उन्हें हल्का पाते हो। इसी तरह जानवरों की ऊन, रोएँ और बालों से तरह-तरह की चीज़ें पैदा कर-दीं जिनसे एक ख़ास वक़्त तक तुम्हें फ़ायदा पहुँचता है। (16: 8)

एक इन्सान कितनी ही महदूद और ग़ैर मुतमद्दिन[3] ज़िन्दगी रखता हो, लेकिन इस हक़ीक़त से बेख़बर नहीं हो सकता कि उसका

1-साफ़-सुथरी। 2-पेय। 3-सभ्यताहीन।

गर्दो-पेश उसे फ़ायदा पहुँचा रहा है। एक लकड़हारा भी अपने झोंपड़े में बैठा हुआ नज़र उठाता है तो गो अपने एहसास के लिए बेहतर ताबीर न पाए, लेकिन ये हक़ीक़त ज़रूर महसूस कर लेता है। वो जब बीमार होता है तो जंगल की जड़ी, बूटियाँ खा लेता है, धूप तेज़ होती है तो दरख़्तों के साये में बैठ जाता है, बेकार होता है तो पत्तों की सरसब्ज़ी और फूलों की ख़ुशनुमाई से आँखें सेंकने लगता है। फिर यही दरख़्त है जो अपनी शादाबी में उसे फल बख़्शते हैं, पुख़्तगी में लकड़ी के तख़्ते बन जाते हैं, कुहनगी में आग के शोले भड़का देते हैं। एक ही मख़्लूके नबाती[1] है जो अपने मन्ज़र से नुज़्हतो सुरूर बख़्शती है, अपनी बू से हवा को मोअत्तर[2] करती है, अपने फल में तरह-तरह की ग़िज़ाएँ रखती है, अपनी लकड़ी से सामाने तामीर मुहैया करती है और फिर ख़ुश्क हो जाती है तो उसके जलाने से आग भड़कती है, चूलहे गरम करती, मौसम को मोतदिल बनाती और अपनी हरारत से बेशुमार अशिया के पकने, पिघलने और तपने का ज़रिया बनती है :

ٱلَّذِى جَعَلَ لَكُم مِّنَ ٱلشَّجَرِ ٱلْأَخْضَرِ نَارًا فَإِذَآ أَنتُم مِّنْهُ تُوقِدُونَ ○

(٣٦: ٨٠)

(और देखो !) वो कारफ़रमाए क़ुदरत जिसने सरसब्ज़ दरख़्त से तुम्हारे लिए आग पैदा कर दी, अब तुम उसी से (अपने चूल्हों की) आग सुलगा लेते हो।

(36: 80)

और फिर ये वो फ़वाइद[3] हैं जो तुम्हें अपनी जगह महसूस हो रहे हैं, लेकिन कौन कह सकता है कि फ़ित्रत ने ये तमाम चीज़ें

1-वनस्पति रूपी सृष्टि। 2-सुगंधित। 3-फ़ायदे।

किन-किन कामों और किन-किन मसलहतों के लिए पैदा की हैं और कारफ़रमाए आलम कारगाहे हस्ती के बनाने और संवारने के लिए इनसे क्या-क्या काम नहीं ले रहा है ?

وَمَا يَعْلَمُ جُنُودَ رَبِّكَ إِلَّا هُوَ ط

(٧٤: ٣١)

और तुम्हारा परवरदिगार (इस कार-गाहे हस्ती की कार-फ़रमाइयों के लिए) जो फ़ौजें रखता है, उनका हाल उसके सिवा कौन जानता है?
(74: 31)

फिर ये हक़ीक़त भी पेशे नज़र रहे कि फ़ित्रत ने काइनाते हस्ती के इफ़ादा व फ़ैज़ान का निज़ाम कुछ इस तरह बनाया है कि वो बयक वक़्त हर मख़्लूक़ को यक्साँ तौर पर नफ़ा पहुँचाता और हर मख़्लूक़ की यक्साँ तौर पर रिआयत मलहूज़[1] रखता है। अगर एक इन्सान अपने आली शान महल में बैठ कर महसूस करता है कि तमाम कारख़ानए हस्ती सिर्फ़ उसी की कार-बरआरियों के लिए है तो ठीक इसी तरह एक चींवटी भी अपने बिल में कह सकती है कि फ़ित्रत की सारी कारफ़रमाइयाँ सिर्फ़ उसी की कार-बरआरियों के लिए हैं और कौन है जो इसे झुठलाने की जुर्अत कर सकता है? क्या फ़िल-हक़ीक़त सूरज इसलिए नहीं है कि उसके लिए हरारत बहम पहुँचाए? क्या बारिश इसलिए नहीं है कि उसके लिए रतूबत[2] मुहैया करे? क्या हवा इसलिए नहीं है कि उसकी नाक तक शकर की बू पहुँचाए? क्या ज़मीन इसलिए नहीं है कि हर मौसम और हर हालत के मुताबिक़ उसके लिए मक़ाम व मन्ज़िल बने? दरअसल फ़ित्रत की

1-ध्यान या लिहाज़ रखना। 2-आद्रता।

बख़्शाइशों का क़ानून कुछ ऐसा आ़म और हमागीर[1] वाक़े हुआ है कि वो एक ही वक़्त में, एक ही तरीक़े से, एक ही निज़ाम के तहत, हर मख़्लूक़ की निगहदाश्त[2] करता और हर मख़्लूक़ को यक्साँ तौर पर फ़ायदा उठाने का मौक़ा देता है, हत्ताकि हर वुजूद अपनी जगह महसूस कर सकता है कि ये पूरा कारख़ान-ए-आ़लम सिर्फ़ उसी की काम-जोइयों और असाइशों के लिए सरगर्मे-कार है :

وَمَا مِنْ دَآبَّةٍ فِى الْاَرْضِ وَلَا طٰٓئِرٍ يَّطِيْرُ بِجَنَاحَيْهِ اِلَّآ اُمَمٌ اَمْثَالُكُمْ ج (٦: ٣٨)

और ज़मीन के तमाम जानवर और (पर-दार) बाज़ुओं से उड़ने वाले तमाम परिन्द दरअसल तुम्हारी ही तरह उम्मतें हैं। (6: 38)

काइनात की तख़्रीब भी तामीर के लिए है

अलबत्ता ये हक़ीक़त फ़रामोश नहीं करनी चाहिए कि दुनिया आ़लमे कौनो-फ़साद[3] है। यहाँ हर बनने के साथ बिगड़ना है और सिमटने के साथ बिखरना, लेकिन जिस तरह संग-तराश का तोड़ना फोड़ना भी इसलिए होता है कि ख़ूबी व दिल आवेज़ी का एक पैकर तैयार कर दे, इसी तरह काइनाते आ़लम का तमाम बिगाड़ भी इसलिए है कि बनाव और ख़ूबी का फ़ैज़ान जुहूर में आए। तुम एक इमारत बनाते हो, लेकिन इस "बनाने" का मतलब क्या होता है? क्या यही नहीं होता कि बहुत सी बनी हुई चीज़ें "बिगड़" गईं? चटानें अगर न काटी जातीं, भट्टे अगर न सुलगाए जाते, दरख़्तों पर आरा अगर न चलता तो ज़ाहिर है इमारत का बनाव भी जुहूर में न

1-तादात्मपूर्ण। 2-देखरेख। 3-बनाव-बिगाड़।

आता। फिर ये राहतो-सुकून जो तुम्हें एक इमारत की सुकूनत से हासिल होता है, किस सूरतेहाल का नतीजा है? यक़ीनन उसी शोरो-शर और हंगाम-ए-तख़्रीब का, जो सरो-सामाने-तामीर की जद्दो-जोहद ने अ़रसे तक जारी रखा था। अगर तख़्रीब का ये शोरो-शर न होता तो इमारत का ऐशो-सुकून भी वुजूद में न आता। पस यही हाल फ़ित्रत की तामीरी सरगर्मियों का भी समझो। वो इमारते हस्ती का एक-एक गोशा तामीर करती रहती है, वो इस कारख़ाने का एक-एक कील, पुर्ज़ा ढालती रहती है, वो उसकी दुरुस्तगी और ख़ूबी की हिफ़ाज़त के लिए हर नुक़्सान का दफ़्इय्या[1] और हर फ़साद का इज़ाला[2] चाहती है। तामीर व दुरुस्तगी की यही सरगर्मियाँ है जो तुम्हें बाज़ औक़ात[3] तख़्रीबो-नुक़्सान की हौलनाकियाँ दिखाई देती हैं, हालाँकि यहाँ तख़्रीब[4] कब है? जो कुछ है तामीर ही तामीर है। समन्दर में तलातुम[5], दरिया में तुग़यानी[6], पहाड़ों में आतिश-फ़शानी[7], जाड़ों में बर्फ़बारी, गरमियों में समूम, बारिश में हंगाम-ए-अब्रो-बाद तुम्हारे लिए ख़ुशआइन्द मनाज़िर नहीं होते। लेकिन तुम नहीं जानते कि इनमें से हर हादिसा काइनाते हस्ती की तामीरो-दुरुस्तगी के लिए इतना ही ज़रूरी है जिस क़द्र दुनिया की कोई मुफ़ीद से मुफ़ीद चीज़ तुम्हारी निगाहों में हो सकती है। अगर समन्दर में तूफ़ान न उठते तो मैदानों को ज़िन्दगी व शादाबी के लिए एक क़तर-ए-बारिश मुयस्सर न आता, अगर बादल की गरज और बिजली की कड़क न होती तो बाराने रहमत का फ़ैज़ान भी न होता, अगर आतिश-फ़शाँ पहाड़ों की चोटियाँ न फटतीं तो ज़मीन के

1,2-भरपाई। 3-किसी-किसी समय। 4-ध्वंस। 5-ज्वारभाटा, तूफ़ान। 6-बाढ़। 7-ज्वालामुखी फूटना।

अन्दर का खौलता हुआ माद्दा इस कुरा की तमाम सतह पारा-पारा कर देता। तुम बोल उठोगे : ये माद्दा पैदा ही क्यों किया गया? लेकिन तुम्हें जानना चाहिए कि अगर ये माद्दा न होता तो ज़मीन की क़ुव्वते-नशो-नुमा[1] का एक ज़रूरी उन्सुर[2] मफ़्क़ूद[3] हो जाता। यही हक़ीक़त है जिस की तरफ़ क़ुरआन ने जा-बजा इशारात किए हैं, मसलन सूर: रूम में है:

وَمِنْ اٰيٰتِهٖ يُرِيْكُمُ الْبَرْقَ خَوْفًا وَّطَمَعًا وَّيُنَزِّلُ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً فَيُحْيٖ بِهِ الْاَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا ؕ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّعْقِلُوْنَ ۝

(٢٤:٣٠)

और (देखो!) उसकी क़ुदरतो-हिकमत की) निशानियों में से एक निशानी ये है कि बिजली की चमक और कड़क नमूदार करता है और उससे तुम पर ख़ौफ़ और उम्मीद दोनों की हालतें तारी हो जाती हैं। और आसमान से पानी बरसाता है और पानी की तासीर से ज़मीन मरने के बाद दोबारा जी उठती है। बिला-शुब्हा इस सूरतेहाल में उन लोगों के लिए जो अक़्लो-बीनश रखते हैं (हिकमते इलाही की) बड़ी ही निशानियाँ है! (30: 24)

जमाले फ़ित्रत

लेकिन फ़ित्रत के इफ़ादा व फ़ैज़ान की सबसे बड़ी बख़्शाइश

1-विकास-क्षमता। 2-तत्व। 3-अनियंत्रित, निष्क्रिय।

उसका आ़लमगीर हुस्नो-जमाल है। फ़ित्रत सिर्फ़ बनाती और संवारती ही नहीं बल्कि इस तरह बनाती और संवारती है कि उसके हर बनाव में हुस्नो-ज़ेबाई[1] और उसके हर ज़ुहूर में नज़र-अफ़्रोज़ी[2] की नुमूद पैदा हो गई है। काइनाते हस्ती को उसकी मज्मूई हैसियत में देखो या उसके एक-एक गोश-ए-ख़िल्क़त पर नज़र डालो, उसका कोई रुख़ नहीं जिस पर हुस्नो-रअ़नाई[3] ने एक नक़ाबे ज़ेबाइश[4] न डाल दी हो। सितारों का निज़ाम और उनकी सैरो-गर्दिश[5], सूरज की रौशनी और उसकी बू-क़लमूनी, चाँद की गर्दिश और उसका उतार चढ़ाव, फ़िज़ा-ए-आसमानी की वुस्अ़त[6] और उसकी नैरंगियाँ, बारिश का समाँ और उसके तग़ैयुरात, समन्दर का मन्ज़र और दरियाओं की रवानी, पहाड़ों की बुलन्दियाँ और वादियों का नशीब, हैवानात[7] के अज्साम[8] और उनका तनव्वो[9], नबातात[10] की सूरत-आराइयाँ और बाग़ो-चमन की रअ़नाइयाँ, फूलों की इत्र बेज़ी और परिन्दों की नग़मा-संजी[11], सुब्ह का चेहर-ए-ख़न्दाँ[12] और शाम का जल्व-ए-महजूब[13] ग़रज़ यह कि तमाम तमाशगाहे हस्ती हुस्न की नुमाइश और नज़र- अफ़्रोज़ी की जल्वागाह है और ऐसा मालूम होता है कि गोया इस पर्दे-ए-हस्ती के पीछे हुस्न अफ़्रोज़ी व जल्वा-आराई की कोई क़ुव्वत काम कर रही है जो चाहती है कि जो कुछ भी ज़ुहूर में आए, हुस्नो-ज़ेबाइश के साथ ज़ुहूर में आए, और कारख़ान-ए-हस्ती का हर गोशा निगाह के लिए बहिश्ते-राहतो-सुकून[14] बन जाए !

दरअसल काइनाते हस्ती का माय-ए-ख़मीर[15] ही हुस्नो-

1-सौंदर्य व शोभा। 2-सुदृश्यता। 3-सौंदर्य-रमणीकता। 4-शोभा की चादर। 5-परिक्रमा। 6-व्यापकता। 7-प्राणियों। 8-शरीर। 9-विविधता। 10-वनस्पति। 11-गीत-राग। 12-आलोकित चेहरा। 13-छुपा-छुपा रूप। 14-राहत व शांति का स्वर्ग। 15-मूल तत्व।

ज़ेबाइश है। फ़ित्रत ने जिस तरह उसके बनाव के लिए माद्दी अ़नासिर पैदा किए, इसी तरह उसकी ख़ूबरूई और रअ़नाई के लिए मअ़नवी अ़नासिर का भी रंगो-रोग़न आरास्ता कर दिया। रौशनी, रंग, ख़ुशबू और नग़मा हुस्नो-रअ़नाई के वो अज्ज़ा[1] हैं जिन से मश्शातए फ़ित्रत चेहर-ए-वुजूद की आराइश कर रही है।

मश्शाता रा ब-गो कि बर-अस्बाबे हुस्ने यार
चीज़े फ़ज़ूँ कुनद कि तमाशा ब-मा रसद

صُنْعَ اللّٰهِ الَّذِیْٓ اَتْقَنَ کُلَّ شَیْءٍ

(۲۷: ۸۸)

ये अल्लाह की कारीगरी है जिसने हर चीज़ ख़ूबी और दुरुस्तगी के साथ बनाई !

(27: 88)

ذٰلِكَ عٰلِمُ الْغَیْبِ وَالشَّهَادَةِ الْعَزِیْزُ الرَّحِیْمُ ۝ الَّذِیْٓ اَحْسَنَ کُلَّ شَیْءٍ خَلَقَهٗ

(۳۲: ۶-۷)

ये अल्लाह है, महसूसात[2] और ग़ैर महसूसात[3] का जानने वाला, ताक़त वाला, रहमत वाला जिसने जो चीज़ बनाई, हुस्नो-ख़ूबी के साथ बनाई !

(32: 6-7)

बुलबुल की नग़मा-संजी और ज़ाग़ो-ज़ग़न का शोरो-ग़ोग़ा

बिला-शुब्हा कारोबारे फ़ित्रत के बाज़ मज़ाहिर ऐसे भी हैं जिन में तुम्हें हुस्नो-ख़ूबी की कोई गीराई महसूस नहीं होती। तुम कहते होः क़ुमरी व बुलबुल की नग़मा-संजियों के साथ ज़ाग़ो-ज़ग़न[4]

1-अंग। 2-प्रत्यक्ष। 3-अप्रत्यक्ष। 4-चील-कौआ।

का शोरो-ग़ोग़ा[1] क्यों है? लेकिन तुम भूल जाते हो कि अर्ग़नूने हस्ती[2] का नग़मा किसी एक आहंग ही से नहीं बना है और न बनना चाहिए था। जिस तरह तुम्हारे आलाते मूसीक़ी[3] के पर्दे में ज़ेरो-बम[4] के तमाम आहंग[5] मौजूद होते हैं, इसी तरह साज़े-फ़ित्रत के तारों में भी उतार चढ़ाव के तमाम आहंग मौजूद हैं। उसमें हल्के से हल्के सुर भी हैं, जिनसे बारीक और सुरीली सदाएँ निकलती हैं, मोटे से मोटे सुर भी हैं जो बुलन्द से बुलन्द और भारी से भारी सदाएँ पैदा करते हैं। इन तमाम सुरों के मिलने से जो कैफ़ियत पैदा होती है, वही मूसीक़ी की हलावत है, क्योंकि तमाम चीज़ों की तरह मूसीक़ी की हक़ीक़त भी मुख़्तलिफ़ अज्ज़ा के इम्तिज़ाज[6] व तालीफ़ से पैदा होती है। ये नहीं हो सकता कि किसी एक ही सुर से नग़मे की हलावत पैदा हो जाए। अगर तुम बीन या सितार उठा कर सिर्फ़ उसके चढ़ाव का कोई एक पर्दा छेड़ दोगे, या प्यानों की भारी कुंजियों में से कोई एक कुंजी ही बजाने लगोगे तो ये नग़मा न होगा, भाँ-भाँ की एक करख़्त आवाज़ होगी, यही हाल मूसीक़ि-ए-फ़ित्रत के ज़ेरो-बम का भी है, तुम्हें कव्वे की काएँ-काएँ और चील की चीख़ में कोई दिलकशी महसूस नहीं होती, लेकिन मूसीक़ि-ए-फ़ित्रत की तालीफ़ के लिए जिस तरह कुमरी व बुलबुल का हल्का सुर ज़रूरी था, इसी तरह ज़ाग़ो-ज़ग़न का भारी और करख़्त सुर भी नागुज़ीर था। बुलबुल व कुमरी को इस सुरे गुम का उतार समझो और ज़ाग़ो-ज़ग़न को चढ़ाव :

बर अहले ज़ौक़ दर फ़ैज़े दर नमी बन्दद
नवाए बुलबुल अगर नेस्त सौते ज़ाग़ शनौ !

1-शोर, कर्कशता। 2-जीवन का वाद्य। 3-संगीत के वाद्ययंत्रों। 4-उतार-चढ़ाव। 5-सुर। 6-सामंजस्य।

تُسَبِّحُ لَهُ السَّمٰوٰتُ السَّبۡعُ وَالۡاَرۡضُ وَمَنۡ فِيۡهِنَّ ط

सातों आसमान और ज़मीन और जो कोई भी इनमें है, सब (बनावट की ख़ूबी और सन्अ़त के कमाल में) अल्लाह की बड़ाई और पाकी का (ज़बाने हाल से) एतिराफ़ कर रहे हैं।

وَاِنۡ مِّنۡ شَىۡءٍ اِلَّا يُسَبِّحُ بِحَمۡدِهٖ وَلٰـكِنۡ لَّا تَفۡقَهُوۡنَ تَسۡبِيۡحَهُمۡ ط اِنَّهٗ كَانَ حَلِيۡمًا غَفُوۡرًا ○

(١٧: ٤٤)

और (इतना ही नहीं बल्कि काइनाते ख़िल्क़त में) कोई चीज़ भी ऐसी नहीं जो (ज़बाने हाल से) उसकी तस्बीहो-तहमीद न कर रही हो मगर (अफ़सोस कि) तुम (अपने जहलो-ग़फ़्लत[1] से) इस तरान-ए-तस्बीह को समझते नहीं [बिला-शुब्हा वो बड़ा ही बुर्दबार, बड़ा ही बख़्शने वाला है। (30)] (17: 44)

फ़ित्रत की हुस्न अफ़रोज़ियाँ और रहमते इलाही की बख़्शिश

आओ चन्द लमहों के लिए फिर उन सवालात पर ग़ौर कर लें जो पहले गुज़र चुके हैं। फ़ित्रते काइनात की ये तमाम हुस्न अफ़्रोज़ियाँ और जल्वा आराइयाँ क्यों हैं? ये क्यों है कि फ़ित्रत हसीन है और जो कुछ उससे जुहूर में आता है वो हुस्नो-जमाल ही

1-अज्ञानता व भुलावा।

होता है? क्या ये मुमकिन न था कि कारख़ान-ए-हस्ती होता, लेकिन रंग की नज़र अफ़्रोज़ियाँ, बू की इत्र बेज़ियाँ, नग़मा की जांनवाज़ियाँ न होतीं? क्या ऐसा नहीं हो सकता था कि सब कुछ होता, लेकिन सब्ज़-ओ-गुल की रअ़नाइयाँ और कुमरी व बुलबुल की नग़मा संजियाँ न होतीं? यक़ीनन दुनिया अपने बनने के लिए इसकी मोहताज न थी कि तितली के परों में अ़जीबो-ग़रीब नक़्शो-निगार हों और रंग-बिरंग के दिलफ़रेब परिन्द दरख़्तों की शाख़ों पर चहचहा रहे हों। ऐसा भी हो सकता था कि दरख़्त होते मगर क़ामत[1] की बुलन्दी, फैलाव की मौज़ूनियत, शाख़ों की तरतीब, पत्तों की सबज़ी, फूलों की रंगा-रंगी न होती। फिर ये क्यों है कि तमाम हैवानात अपनी-अपनी हालत और गर्दे-पेश के मुताबिक़ डील-डौल की मौज़ूनियत और आज़ा का तनासुब ज़रूर ही रखें और कोई वुजूद ही न हो जो अपनी शक्लो-मन्ज़र में एक ख़ास तरह का मोतदिल पैमाना न रखता हो ?

इन्सानी इल्मो-नज़र की काविशें आज तक ये उक़्दा हल न कर सकीं कि यहाँ तामीर के साथ तहसीन क्यों है? मगर क़ुरआन कहता है कि ये सब कुछ इसलिए है कि ख़ालिके काइनात 'अर्रहमान' और 'अर्रहीम'' है, यानी उसमें रहमत है और उसकी रहमत अपना जुहूर ब-फ़े'ल भी रखती है। रहमत का मुक़्तज़ा यही था कि बख़्शिश हो, फ़ैज़ान हो, जूदो-एहसान हो। पस उसने एक तरफ़ तो हमें ज़िन्दगी और ज़िन्दगी के तमाम एहसासो-अ़वातिफ़ बख़्श दिये, जो ख़ुशनुमाई और बदनुमाई में इम्तियाज़ करते और ख़ूबी व जमाल से कैफ़ो-सुरूर हासिल करते हैं, दूसरी तरफ़ कारगाहे हस्ती को अपनी

1-क़द।

हुस्न आराइयों और जाँ-फ़ज़ाइयों[1] से इस तरह आरास्ता कर दिया कि उसका हर गोशा निगाह के लिए जन्नत, सामिआ[2] के लिए हलावत[3] और रूह के लिए सरमाय-ए-कैफ़ो-सुरूर[4] बन गया :

فَتَبَارَكَ اللّٰهُ اَحْسَنُ الْخَالِقِيْنَ ۝ (١٤:٢٣)

पस क्या ही बाबरकत ज़ात है अल्लाह की, बनाने वालों में सबसे ज़्यादा हुस्नो-ख़ूबी के साथ बनाने वाला ! (23 : 14)

क़ुदरत का ख़ुद-रो सामाने राहतो-सुरूर और इन्सान की नाशुक्री

हम ज़िन्दगी की बनावटी और ख़ुद-साख़्ता आसाइशों में इस दर्जा मुन्हमिक हो गए हैं कि हमें क़ुदरती राहतों पर ग़ौर करने का मौक़ा ही नहीं मिलता और बसा-औक़ात तो हम उनकी क़द्रो-क़ीमत के एतिराफ़ से भी इनकार कर देते हैं। लेकिन अगर चन्द लम्हों के लिए अपने आपको इस ग़फ़्लत से बेदार कर लें तो मालूम हो जाए कि काइनाते हस्ती का हुस्नो-जमाल फ़ित्रत की एक अज़ीम और बेपायाँ बख़्शिश है और अगर ये न होती या हम में इसका एहसास न होता तो ज़िन्दगी ज़िन्दगी न होती, नहीं मालूम क्या चीज़ हो जाती? मुमकिन है मौत की बद-हालियों का एक तसलसुल होता।

एक लम्हा के लिए तसव्वुर करो कि दुनिया मौजूद है, मगर हुस्नो-ज़ेबाई के तमाम जल्वों और एहसासात से ख़ाली है। आसमान है मगर फ़िज़ा की ये निगाह-परवर नीलगूनी नहीं है, सितारे हैं मगर उनकी दरख़्शंदगी व जहाँ-ताबी की ये जल्वा-आराई नहीं है, दरख़्त

1-चित्राकर्षणों। 2-सुनने की क्षमता। 3-सुरीला, सुर-संसार। 4-आनंद का स्रोत।

हैं मगर बग़ैर सबज़ी के, फूल हैं मगर बग़े रंगो-बू के, अशिया का एतिदाल, अज्साम का तनासुब, सदाओं का तरन्नुम, रौशनी व रंगत की बू-क़लमूनी, इनमें से कोई चीज़ भी वुजूद नहीं रखती, या यूँ कहा जाए कि हम में इनका एहसास नहीं है। ग़ौर करो! एक ऐसी दुनिया के साथ ज़िन्दगी का तसव्वुर कैसा भयानक और हौलनाक मन्ज़र पेश करता है? ऐसी ज़िन्दगी जिसमें न तो हुस्न का एहसास हो न हुस्न की जल्वा-आराई, न निगाह के लिए सुरूर हो न सामिआ के लिए हलावत, न जज़्बात की रिक़्क़त[1] हो न महसूसात की लताफ़त[2] यक़ीनन अज़ाब व जाँकाही की ऐसी हालत होती जिसका तसव्वुर भी हमारे लिए ना क़ाबिले बर्दाश्त है।

लेकिन जिस क़ुदरत ने हमें ज़िन्दगी दी, उसने ये भी ज़रूरी समझा कि ज़िन्दगी की सबसे बड़ी नेमत, यानी हुस्नो-ज़ेबाई की बख़्शिश से भी माला-माल कर दे। उसने एक हाथ से हमें हुस्न का एहसास दिया, दूसरे हाथ से तमाम दुनिया को जल्व-ए-हुस्न बना दिया। यही हक़ीक़त है जो हमें रहमत की मौजूदगी का यक़ीन दिलाती है। अगर पर्द-ए-हस्ती के पीछे सिर्फ़ ख़ालिक़िय्यत[3] ही होती, रहमत न होती, यानी पैदा करने या पैदा हो जाने की क़ुव्वत होती, मगर इफ़ादा व फ़ैज़ान का इरादा न होता तो यक़ीनन काइनाते-हस्ती में फ़ित्रत के फ़ज़्लो-एहसान का ये आलमगीर मुज़ाहरा भी न होता :

क्या तुमने कभी इस बात पर ग़ौर किया कि जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ	اَلَمْ تَرَوْا اَنَّ اللّٰهَ سَخَّرَ لَكُمْ مَّا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى

1-सूक्ष्मता। 2-कोमलता। 3-सृजनशीलता।

اَلْاَرْضِ وَاَسْبَغَ عَلَيْكُمْ نِعَمَهٗ ظَاهِرَةً وَّبَاطِنَةً ؕ وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يُّجَادِلُ فِى اللّٰهِ بِغَيْرِ عِلْمٍ وَّلَا هُدًى وَّلَا كِتٰبٍ مُّنِيْرٍ ۝

(٢٠ : ٣١)

ज़मीन में है, वो सब तुम्हारे लिए ख़ुदा ने मुसख़्ख़र कर दिया है और अपनी तमाम नेमतें ज़ाहिरी तौर पर भी और बातिनी तौर पर भी पूरी कर दी हैं। इन्सानों में कुछ लोग ऐसे हैं जो अल्लाह के बारे में झगड़ते हैं, बग़ैर इसके कि उनके पास कोई इल्म हो या हिदायत हो या कोई किताबे रौशन।
(31: 20)

इन्सानी तबीअ़त की ये आ़लमगीर कमज़ोरी है कि जब तक वो एक नेमत से महरूम नहीं हो जाता, उसकी क़द्रो-क़ीमत का ठीक-ठीक अन्दाज़ा नहीं कर सकता। तुम गंगा के किनारे बसते हो, इसलिए तुम्हारे नज़दीक ज़िन्दगी की सबसे ज़्यादा बेक़द्र चीज़ पानी है। लेकिन अगर यही पानी चौबीस घंटे तक मुयस्सर[1] न आए तो तुम्हें मालूम हो जाए इसकी क़द्रो-क़ीमत का क्या हाल है। यही हाल फ़ित्रत के फ़ैज़ाने जमाल का भी है। उसके आ़म और बेपर्दा जल्वे शबो-रोज़ तुम्हारी निगाहों के सामने से गुज़रते रहते हैं, इसलिए तुम्हें उनकी क़द्रो-क़ीमत महसूस नहीं होती। सुब्ह अपनी सारी जल्वा-आराइयों के साथ रोज़ आती है, इसलिए तुम बिस्तर से सर उठाने की ज़रूरत महसूस नहीं करते, चाँदनी अपनी सारी हुस्न-अफ़्रोज़ियों के साथ हमेशा निखरती रहती है, इसलिए तुम खिड़कियाँ

1-उपलब्ध होना, हासिल होना।

बंद करके सो जाते हो। लेकिन जब यही शबो-रोज़ के जल्वहा-ए-फ़ित्रत[1] तुम्हारी नज़रों से रू-पोश हो जाते हैं या तुम में उनके नज़्ज़ारा व सिमा की इस्तेदाद बाक़ी नहीं रहती तो ग़ौर करो उस वक़्त तुम्हारे एहसासात का क्या हाल होता है ? क्या तुम महसूस नहीं करते कि इनमें से हर चीज़ ज़िन्दगी की एक बे-बहा[2] बरकत और मईशत की एक अज़ीमुश्शान नेमत भी? सर्द मुल्कों के बाशिन्दों से पूछो, जहाँ साल का बड़ा हिस्सा अब्र-आलूद गुज़रता है, क्या सूरज की किरनों से बढ़कर भी ज़िन्दगी की कोई मुसर्रत हो सकती है? एक बीमार से पूछो जो नक़्लो-हरकत से महरूम, बिस्तरे मर्ज़ पर पड़ा है, वो बताएगा कि आसमान की साफ़ और नीलगूँ फ़िज़ा का एक नज़्ज़ारा राहतो-सुकून की कितनी बड़ी दौलत है! एक अन्धा जोकि पैदाइशी अन्धा न था, तुम्हें बता सकता है कि सूरज की रौशनी और बाग़ो-चमन की बहार देखे बग़ैर ज़िन्दगी बसर करना कैसी नाक़ाबिले बर्दाश्त मुसीबत है! तुम बसा-औक़ात ज़िन्दगी की मसनूई[3] आसाइशों[4] के लिए तरसते हो और ख़याल करते हो कि ज़िन्दगी की सबसे बड़ी नेमत चाँदी सोने का ढेर और जाहा-हशम की नुमाइश है, लेकिन तुम भूल जाते हो कि ज़िन्दगी की हक़ीक़ी मुसर्रतों का जो ख़ुद-रो सामान फ़ित्रत ने हर मख़्लूक़ के लिए पैदा कर रखा है, इससे बढ़ कर दुनिया की दौलतो-हश्मत कौन सा सामाने-निशात[5] मुहैया कर सकती है? और अगर इन्सान को वो सब कुछ मुयस्सर हो तो फिर उसके बाद क्या बाक़ी रह जाता है? जिस दुनिया में सूरज हर रोज़ चमकता हो, जिस दुनिया में सुब्ह हर रोज़ मुस्कुराती और शाम हर रोज़ पर्द-ए-शब में छुप जाती हो, जिसकी

1-प्रकृति के नज़्ज़ारे। 2-अमूल्य। 3-कृत्रिम। 4-सुख-वैभव। 5-सुख का साधन।

रातें आसमान की क़िन्दीलों से मुज़ैयन और जिसकी चाँदनी हुस्न अफ़्रोज़ियों से जहाँ- ताब रहती हो, जिसकी बहार सब्ज़-ओ-गुल से लदी हुई और जिसकी फ़स्लें लहलहाते हुए खेतों से गिराँ बार हों, जिस दुनिया में रौशनी अपनी चमक, रंग अपनी बू-क़लमूनी, ख़ुशबू अपनी इत्र-बेज़ी और मौसीक़ी अपना नग़मा व आहंग रखती हो, क्या इस दुनिया का कोई बाशिन्दा आसाइशे हयात से महरूम और नेमते मईशत से मुफ़्लिस हो सकता है? क्या किसी आँख के लिए जो देख सकती हो और किसी दिमाग़ के लिए जो महसूस कर सकता हो, एक ऐसी दुनिया में नामुरादी[1] व बदबख़्ती का गिला जाइज़ है, क़ुरआन ने जा-बजा इन्सान को इसके इसी कुफ़्राने-नेमत[2] पर तवज्जोह दिलाई है :

وَاٰتٰكُمْ مِّنْ كُلِّ مَا سَاَلْتُمُوْهُ ؕ وَاِنْ تَعُدُّوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ لَا تُحْصُوْهَا ؕ اِنَّ الْاِنْسَانَ لَظَلُوْمٌ كَفَّارٌ ۝

(١٤:٣٤)

और उसने तुम्हें वो तमाम चीज़ें दे दीं जो तुम्हें मतलूब थीं। और अगर अल्लाह की नेमतें शुमार करनी चाहो तो वो इतनी हैं कि कभी शुमार नहीं कर सकोगे। बिला-शुब्हा इंसान बड़ा ही नाइन्साफ़, बड़ा ही नाशुक्रा है! (14: 34)

जमाले मअ़नवी

फिर फ़ित्रत की बख़्शाइशे जमाल के इस गोशे पर भी नज़र डालो कि उसने जिस तरह जिस्मो-सूरत को हुस्नो-ज़ेबाई बख़्शी, इसी तरह उसकी मअ़नवियत[3] को भी जमाले मअ़नवी[4] से आरास्ता कर

1-दुर्भाग्य। 2-नेमत से इन्कार। 3-सार्थकता। 4-सार्थकता का सौंदर्य।

दिया। जिस्मो-सूरत का जमाल ये है कि हर वुजूद के डील-डौल और आज़ा-ओ-जवारेह[1] में तनासुब है, मअ़नवियत का जमाल ये है कि हर चीज़ की कैफ़ियत और बातिनी क़ुवा[2] में एतिदाल है। इसी कैफ़ियत के एतिदाल से ख़्वास और फ़वाइद पैदा हुए हैं और यही एतिदाल है जिसने हैवानात में इदराको-हवास की क़ुव्वतें बेदार कर दीं और फिर इन्सान के दर्जे में पहुँच कर जौहरे-अ़क़्लो-फ़िक्र का चिराग़ रौशन कर दिया :

وَاللّٰهُ اَخْرَجَكُمْ مِّنْۢ بُطُوْنِ اُمَّهٰتِكُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ شَيْئًا وَّجَعَلَ لَكُمُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ وَالْاَفْـِٕدَةَ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝

(٧٨ : ١٦)

और (देखो!) ये अल्लाह ही की कारफ़रमाई है कि तुम अपनी माँओं के शिकम से पैदा होते हो और किसी तरह की समझ-बूझ तुम में नहीं होती, लेकिन उसने तुम्हारे लिए देखने, सुनने के हवास बना दिये और सोचने की अ़क़्ल दे दी, ताकि उसकी नेमत के शुक्रगुज़र हो। (16: 78)

काइनाते हस्ती के अस्रारो-ग़वामिज़ बेशुमार हैं लेकिन रूहे हैवानी का जौहरे इदराक ज़िन्दगी का सबसे ज़्यादा ला-यंहल उक़्दा[3] है। हैवानात में कीड़े-मकोड़े तक हर तरह का एहसासो-इदराक रखते हैं और इन्सानी दिमाग़ के निहाँख़ाने[4] में अ़क़्लो-तफ़क्कुर का चिराग़ रौशन है। ये क़ुव्वते एहसास, ये क़ुव्वते इदराक, ये क़ुव्वते अ़क़्ल क्यों कर पैदा हुई? माद्दी अ़नासिर की तरकीबो-इम्तिज़ाज से एक मावराए माद्द-ए-जौहर किस तरह ज़ुहूर में आ गया? चींवटी

1-अंग-प्रत्यंग। 2-छुपी शक्तियों। 3-न सुलझने वाली गुत्थी। 4-अंदरूनी हिस्से।

को देखो! उसके दिमाग़ का हुज्म सूई की नोक से शायद ही कुछ ज़्यादा होगा, लेकिन माद्दे के इस हक़ीर-तरीन अ़सबी ज़र्रे में भी एहसासो-इदराक, मेहनतो-इस्तिक़्लाल, तरतीबो-तनासुब, नज़्मो-ज़ब्त और सन्अ़तो-इख़्तिरा की सारी क़ुव्वतें मख़्फ़ी होती हैं और वो अपने आमाले हयात की करिश्मा-साज़ियों से हम पर रौब और हैरत का आ़लम तारी कर देती है। शहद की मक्खी की कार-फ़रमाइयाँ हर रोज़ तुम्हारी नज़रों से गुज़रती रहती हैं। ये कौन है जिसने एक छोटी सी मक्खी में तामीरो-तहसीन की ऐसी मुनज़्ज़म क़ुव्वत पैदा कर दी है? क़ुरआन कहता है : ये इसलिए है कि रहमत का मुक़्तज़ा जमाल था और ज़रूरी था कि जिस तरह उसने जमाले सुवरी[1] से दुनिया आरास्ता कर दी है, इसी तरह जमाले मअ़नवी[2] की बख़्शाइशों मे भी उसे माला-माल कर देती :

ذٰلِكَ عٰلِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ الْعَزِيْزُ الرَّحِيْمُ ۝ الَّذِيْٓ اَحْسَنَ كُلَّ شَيْءٍ خَلَقَهٗ وَبَدَاَ خَلْقَ الْاِنْسَانِ مِنْ طِيْنٍ ۝ ثُمَّ جَعَلَ نَسْلَهٗ مِنْ سُلٰلَةٍ مِّنْ مَّآءٍ مَّهِيْنٍ ۝ ثُمَّ سَوّٰهُ وَنَفَخَ فِيْهِ مِنْ رُّوْحِهٖ وَجَعَلَ لَكُمُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ

ये महसूसात और ग़ैर महसूसात का जानने वाला अ़ज़ीज़ो-रहीम है जिसने जो चीज़ भी बनाई हुस्नो-ख़ूबी के साथ बनाई। चुनांचे उसी की क़ुदरतो-हिकमत है कि इन्सान की पैदाइश मिट्टी से शुरू की, फिर उसके तवालुदो-तनासुल को सिलसिला (ख़ून के) ख़ुलासे से जो पानी का एक हक़ीर सा क़तरा होता है, क़ायम कर

1-दृश्य सौंदर्य। 2-अर्थ सौंदर्य।

وَ الْاَفْـئِـدَةَ ؕ قَلِـيْـلًا مَّـا تَشْكُرُوْنَ ○

(٣٢: ٦-٩)

दिया। फिर उसकी तमाम क़ुव्वतों की दुरुस्तगी की और अपनी रूह (में से एक क़ुव्वत) फूंक दी और (इस तरह) उसके लिए सुनने, देखने और फिक्र करने की क़ुव्वतें पैदा कर दीं। (लेकिन अफ़सोस इन्सान की ग़फ़लत पर!) बहुत कम ऐसा होता है कि वो (अल्लाह की रहमत का) शुक्रगुज़ार हो। (32: 6-9)

बक़ा-ए-अन्फ़ा

लेकिन काइनाते हस्ती का ये बनओ, ये हुस्न, ये इरतिक़ा क़ायम नहीं रह सकता, अगर उसमें ख़ूबी की बक़ा और ख़राबी के इज़ाले के लिए एक अटल क़ुव्वत सरगरमेकार न रहती। ये क़ुव्वत क्या है? फ़ित्रत का इन्तिख़ाब है। फ़ित्रत हमेशा छाँटती रहती है, वो हर गोशे में सिर्फ़ ख़ूबी और बेहतरी ही बाक़ी रखती है, फ़साद और नक़्स महव[1] कर देती है। हम फ़ित्रत के इस इन्तिख़ाब से बेख़बर नहीं हैं। यानी Fittest लेकिन क़ुरआन ''बक़ाए अस्लह'' की जगह ''बक़ाए अन्फ़ा'' का ज़िक्र करता है। वो कहता है: इस कारगाहे फ़ैज़ानो-जमाल में सिर्फ़ वही चीज़ बाक़ी रखी जाती है जिस में नफ़ा हो, क्योंकि यहाँ रहमत कारफ़रमा है और रहमत चाहती है कि इफ़ाद-ओ-फ़ैज़ान हो, नुक़्सानो-बरहमी गवारा नहीं कर सकती।

1-निकाल देना।

तुम सोना कठाली में डाल कर आग पर रखते हो, खोट जल जाता है, ख़ालिस सोना बाक़ी रह जाता है। यही मिसाल फ़ित्रत के इन्तिख़ाब की है, खोट में नफ़ा न था, नाबूद[1] कर दिया गया, सोने में नफ़ा था, बाक़ी रह गया :

اَنۡزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً فَسَالَتۡ اَوۡدِيَةٌۢ بِقَدَرِهَا فَاحۡتَمَلَ السَّيۡلُ زَبَدًا رَّابِيًا ؕ وَمِمَّا يُوۡقِدُوۡنَ عَلَيۡهِ فِى النَّارِ ابۡتِغَآءَ حِلۡيَةٍ اَوۡ مَتَاعٍ زَبَدٌ مِّثۡلُهٗ ؕ كَذٰلِكَ يَضۡرِبُ اللّٰهُ الۡحَـقَّ وَالۡبَاطِلَ ؕ فَاَمَّا الزَّبَدُ فَيَذۡهَبُ جُفَآءً ۚ وَاَمَّا مَا يَنۡفَعُ النَّاسَ فَيَمۡكُثُ فِى الۡاَرۡضِ ؕ

(١٧:١٣)

ख़ुदा ने आसमान से पानी बरसाया तो नदी नालों में जिस क़द्र समाई थी, उसके मुताबिक़ बह निकले और जिस क़द्र कूड़ा करकट झाग बनकर ऊपर आ गया था, उसे सैलाब उठा कर बहा ले गया। किसी तरह जब ज़ेवर या और कसी तरह का सामान बनाने के लिए (मुख़्तलिफ़ क़िस्म की धातें) आग में तपाते हैं तो उसमें भी झाग उठता है और मैल-कुचैल कट कर निकल जाता है। इसी तरह अल्लाह हक़ और बातिल की मिसाल बयान कर देता है। झाग रायगाँ जाएगा (क्योंकि उसमें, नफ़ा न था), जिस चीज़ में इन्सान के लिए नफ़ा होगा वो ज़मीन में बाक़ी रह जाएगी। (13: 17)

1-ख़त्म कर देना,

तदरीजो-इम्हाल

फिर अगर दिक़्क़ते नज़र[1] से काम लो तो इफ़ादा व फ़ैज़ाने फ़ित्रत की हक़ीक़त कुछ इन्हीं मज़ाहिर पर मौक़ूफ़ नहीं है, बल्कि कारख़ान-ए-हस्ती के तमाम आमालो-क़वानीन[2] का यही हाल है।

तुम देखते हो कि फ़ित्रत के तमाम क़वानीन अपनी नौइयत में कुछ इस तरह वाक़े हुए हैं कि अगर लफ़्ज़ों में उसे ताबीर करना चाहो तो सिर्फ़ फ़ित्रत के फ़ज़्लो-रहमत ही से ताबीर कर सकते हो, तुम्हें और कोई ताबीर नहीं मिलेगी। मसलन उसके क़वानीन का अ़मल कभी फ़ौरी और अचानक नहीं होता, वो जो कुछ करती है, आहिस्ता-आहिस्ता बतदरीज करती है और इस तदरीजी तर्ज़े-अ़मल ने दुनिया के लिए मोहलत और ढील का फ़ायदा पैदा कर दिया है। यानी उसका हर क़ानून फ़ुर्सतों पर फ़ुर्सतें देता है और उसका हर फे'ल अ़फ़्वो-दरगुज़र का दरवाज़ा आख़िर तक खुला रखता है, बिला-शुब्हा उसके क़वानीन अपने निफ़ाज़ में अटल हैं, उनमें रद्दो-बदल का इम्कान नहीं :

مَا يُبَدَّلُ الْقَوْلُ لَدَيَّ (٢٩:٥٠)

हमारे यहाँ जो बात एक मर्तबा ठहरा दी गई, उसमें कभी तब्दीली नहीं होती। (50: 29)

और इसलिए तुम ख़याल करने लगते हो कि उनकी क़तइय्यत बेरहमी से ख़ाली नहीं, लेकिन तुम नहीं सोचते कि जो क़वानीन अपने निफ़ाज़ में इस दर्जा क़तई और बेपर्वा हैं, वही अपनी नौइय्यत में कि दर्जा अ़फ़्वो-दरगुज़र और मोहलत बख़्शी व इस्लाह-कोशी[3]

1-सूक्ष्म दृष्टि 2-क्रियाओं व नियमों। 3-सुधारशीलता।

की रूह भी रखते हैं ? इसी लिए आयत मुन्दरज-ए-सदर में "مَا يُبَدَّلُ الْقَوْلُ मा युबद्दलुल्-क़ौलु" के बाद ही फ़रमाया :

وَمَآ اَنَا بِظَلَّامٍ لِّلْعَبِيْدِ ۝ (٢٩:٥٠)

लेकिन ये भी नहीं है कि हम बन्दों के लिए ज़्यादती करने वाले हों। (50: 29)

फ़ित्रत अगर चाहती तो हर हालत बयक-दफ़ा ज़ुहूर में आ जाती, यानी उसके क़वानीन का निफ़ाज़ फ़ौरी और नागहानी होता, लेकिन तुम देख रहे हो कि ऐसा नहीं होता। हर हालत, हर तासीर, हर इन्फ़िआल के ज़ुहूरो-बुलूग़ के लिए एक ख़ास मुद्दत मुक़र्रर कर दी गई है और ज़रूरी है कि बतदरीज मुख़्तलिफ़ मन्ज़िलें पेश आएँ, फिर हर मन्ज़िल अपने असारो-अन्दाज़ रखती है और आने वाले नताइज से ख़बरदार करती रहती है। ज़िन्दगी और मौत के क़वानीन पर ग़ौर करो ! किस तरह ज़िन्दगी बतदरीज नशो-नुमा पाती और किस तहर दर्जा-बदर्जा मुख़्तलिफ़ मन्ज़िलों से गुज़रती है और फिर किस तरह मौत कमज़ोरी और फ़साद का एक तूल-तवील सिलसिला है जो अपने इब्तिदाई नुक़्तों से शुरू होता और यके-बाद दीगर मुख़्तलिफ़ मन्ज़िलें तय करता हुआ आख़िरी नुक़्त-ए-बुलूग़[1] तक पहुँचा करता है! तुम बदपरहेज़ी करते हो तो ये नहीं होता कि फ़ौरन ही हलाक हो जाओ, बल्कि बतदरीज मौत की तरफ़ बढ़ने लगते हो और बिल-आख़िर एक ख़ास मुद्दत के अन्दर जो हर सूरतेहाल के लिए यक्साँ नहीं होती, दर्जा-बदर्जा उतरते हुए मौत की आग़ोश में जा गिरते हो। नबातात को देखो! दरख़्त अगर आबयारी[2] से महरूम हो जाते हैं या नुक़्सानो-फ़साद का कोई दूसरा सबब आरिज़ हो

1-पराकाष्ठा-बिन्दु। 2-वर्षा, जल-सिंचन।

जाता है तो ये नहीं होता कि एक ही दफ़ा मुरझा कर रह जाएँ या खड़े-खड़े अचानक गिर जाएँ, बल्कि बतदरीज शादाबी[1] की जगह पज़्मुर्दगी[2] की हालत तारी होना शुरू हो जाती है और फिर एक ख़ास मुद्दत के अन्दर जो मुक़र्रर कर दी गई है, या तो बिल्कुल मुरझा कर रह जाते हैं या जड़ खोखली हो कर गिर पड़ते हैं।

इस्तिलाहे क़ुरआनी में "अजल"

यही हाल काइनात के तमाम तग़ैयुरात व इन्फ़िआलात का है, कोई तग़ैयुर ऐसा नहीं जो अपना तदरीजी दौर न रखता हो, हर चीज़ ब-तदरीज[3] बनती है और इसी तरह ब-तदरीज बिगड़ती है। बनाव हो या बिगाड़, मुमकिन नहीं कि एक ख़ास मुद्दत गुज़रे बग़ैर कोई हालत भी अपनी कामिल सूरत में ज़ाहिर हो सके।

ये मुद्दत जो हर हालत के ज़ुहूर के लिए उसकी "अजल[4]" यानी मुक़र्ररा वक़्त है, मुख़्तलिफ़ गोशों और मुख़्तलिफ़ हालतों में मुख़्तलिफ़ मिक़्दार रखती है और बाज़ हालतों में उसकी मिक़्दार इतनी तवील होती है कि हम अपने निज़ामे औक़ात से उसका हिसाब भी नहीं लगा सकते। क़ुरआन ने उसे यूँ ताबीर किया है कि जिस मुद्दत को तुम अपने हिसाब में एक दिन समझते हो, अगर उसे एक हज़ार बरस या पचास हज़ार बरस तसव्वुर कर लो तो ऐसे दिनों से जो महीने और बरस बनेंगे उनकी मिक़्दार[5] कितनी होगी :

وَاِنَّ يَوْمًا عِنْدَ رَبِّكَ كَاَلْفِ سَنَةٍ مِّمَّا تَعُدُّوْنَ ۝ (٤٧:٢٢)

और बिला-शुब्हा तुम्हारे परवरदिगार के हिसाब में एक दिन ऐसा है जैसे तुम्हारे हिसाब में एक हज़ार बरस ! (22: 47)

1-तरोताज़ा। 2-मुरझाना। 3-क्रम से। 4-अंत। 5-मात्रा।

तक्वीर

फ़ित्रत का यही तदरीजी तर्ज़े-अ़मल[1] है जिसे क़ुरआन ने "तक्वीर" से भी ताबीर किया है, यानी लिपटने से। वो कहता है : बजाए इसके कि अचानक दिन की रौशनी निकल आती और नागहाँ रात की अँधेरी उबल पड़ती, फ़ित्रत ने रात और दिन के ज़ुहूर को इस तरह तदरीजी बना दिया है कि मालूम होता है रात आहिस्ता-आहिस्ता दिन पर लिपटती जाती है और दिन दर्जा-बदर्जा रात पर लिपटता जाता है :

خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ ۚ يُكَوِّرُ الَّيْلَ عَلَى النَّهَارِ وَيُكَوِّرُ النَّهَارَ عَلَى الَّيْلِ وَسَخَّرَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ ۚ كُلٌّ يَّجْرِیْ لِاَجَلٍ مُّسَمًّى ۚ

(٥ :٣٩)

अल्लाह ने आसमानों और ज़मीन को हिकमतो-मसलहत के साथ पैदा किया है। उसने रात और दिन के यके-बाद दीगरे आते रहने का ऐसा इन्तिज़ाम कर दिया कि रात दिन पर लिपटती जाती है और दिन रात पर लिपटता आता है । और सूरज और चाँद दोनों को उसकी क़ुदरत ने (एक ख़ास इन्तिज़ाम के मातहत) मुसख़्ख़र कर रखा है। सब (अपनी जगह) अपने मुक़र्ररा वक़्त तक के लिए हरकत में हैं। (39: 5)

1-कार्य प्रणाली।

क़ुरआन इस तदरीजी रफ़्तारे अमल को फ़ायदा उठाने का मौक़ा देने, ढील देने, अफ़्वो-दरगुज़र करने और एक ख़ास मुद्दत तक फ़ुर्सते हयात बख़्शने से ताबीर करता है और कहता है : ये इसलिए है कि काइनाते हस्ती में फ़ज़्लो-रहमत की मशिय्यत काम कर रही है और वो चाहती है हर ग़लती को दुरुस्तगी के लिए, हर नुक़्सान को तलाफ़ी के लिए, हर लग़ज़िश को संभल जाने के लिए ज़्यादा से ज़्यादा मोहलते इस्लाह मिलती रहे और इसका दरवाज़ा किसी पर बंद न हो।

ताख़ीरे अजल

वो कहता है : अगर तदरीजो-इम्हाल की ये फ़ुर्सतें और बख़्शिशें न होतीं तो दुनिया में एक वुजूद भी फ़ुर्सते हयात से फ़ायदा न उठा सकता। हर ग़लती, हर कमज़ोरी, हर नुक़्सान, हर फ़साद, अचानक, बयक-दफ़ा बर्बादी व हलाकत का बाइस हो जाता :

وَلَوْ يُؤَاخِذُ اللّٰهُ النَّاسَ بِمَا كَسَبُوْا مَا تَرَكَ عَلٰى ظَهْرِهَا مِنْ دَآبَّةٍ وَّلٰكِنْ يُّؤَخِّرُهُمْ اِلٰى اَجَلٍ مُّسَمًّى ۚ فَاِذَا جَآءَ اَجَلُهُمْ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِعِبَادِهٖ بَصِيْرًا ۝ (٣٥:٤٥)

और इन्सान जो कुछ अपने आमाल से कमाई करता है, अगर अल्लाह उस पर (फ़ौरन) मुआख़िज़ा[1] करता तो यक़ीन करो ज़मीन की सतह पर एक जानदार भी बाक़ी न रहता, लेकिन (ये उसकी रहमत है कि) उसने एक मुक़र्ररा वक़्त तक फ़ुर्सते हयात दे रखी है। अलबत्ता जब वो मुक़र्ररा वक़्त

1-पकड़।

आ जाएगा तो फिर (याद रहे कि) अल्लाह अपने बन्दों के आमाल से बेख़बर नहीं है, उसकी आँखें हर वक़्त और हर हाल में सब कुछ देख रही हैं !
(35: 45)

तदरीजो-इम्हाल
अच्छाई और बुराई दोनों के लिए है

क़ुदरती तौर पर ये ढील अच्छाई और बुराई दोनों के लिए है। अच्छाई के लिए इसलिए, ताकि ज़्यादा नशो-नुमा पाए, बुराई के लिए इसलिए, ताकि मुतनब्बह[1] और ख़बरदार होकर इस्लाहो-तलाफ़ी का सामान कर ले :

كُلًّ نُّمِدُّ هٰـؤُلَآءِ وَهٰـؤُلَآءِ مِنْ عَطَآءِ رَبِّكَ ط وَمَا كَانَ عَطَآءُ رَبِّكَ مَحْظُوْرًا ٥
(٢٠ :١٧)

उन लोगों को भी और इन लोगों को भी (यानी अच्छों को भी और बुरों को भी) सबको तुम्हारे परवरदिगार की बख़्शिश में से हिस्सा मिल रहा है और तुम्हारे परवरदिगार की बख़्शिश किसी पर बंद नहीं !
(17: 20)

अगर क़वानीने फ़ित्रत की इन मुहलत बख़्शियों से फ़ायदा उठा कर नुक़सानो-फ़साद की इस्लाह कर ली जाए, मसलन तुमने बदपरहेज़ी की थी, उसे तर्क कर दो तो फिर उसी फ़ित्रत का ये भी

1-सतर्क।

क़ानून है कि इस्लाहो-तलाफ़ी की हर कोशिश क़बूल कर लेती है और नुक़्सानो-फ़साद के जो नताइज नशो-नुमा पाने लगे थे, उनका मज़ीद[1] नशो-नुमा[2] फ़ौरन रुक जाता है। इतना ही नहीं बल्कि अगर इस्लाह बरवक़्त और ठीक-ठीक की गई है तो पिछले मुज़िर[3] असरात भी महव[4] हो जाएँगे और इस तरह महव जाएँगे, गोया कोई ख़राबी पेश ही नहीं आई थी। लेकिन अगर फ़ित्रत की तमाम मुहलत बख़्शियाँ रायगाँ[5] गईं, उसका बार-बार और दर्जा-बदर्जा अन्दाज़ भी कोई नतीजा पैदा न कर सका तो फिर बिला-शुब्हा वो आख़िरी हद नमूदार हो जाती है जहाँ पहुँच कर फ़ित्रत का आख़िरी फ़ैसला सादिर हो जाता है। और फिर जब उसका फ़ैसला सादिर हो जाए तो न तो उसमें चश्मे-ज़दन[6] की ताख़ीर हो सकती है न किसी हाल में भी तज़ल्ज़ुल और तब्दीली :

فَاِذَا جَآءَ اَجَلُهُمْ لَا يَسْتَاْخِرُوْنَ سَاعَةً وَّلَا يَسْتَقْدِمُوْنَ ٥

(٦١ :١٦)

फिर जब उनका मुक़र्ररा वक़्त आ गया तो उससे न तो एक घड़ी पीछे रह सकते हैं और न आगे बढ़ सकते हैं (यानी न तो उसके निफ़ाज़[7] में ताख़ीर[8] हो सकती है न तक़दीम[9], ठीक-ठीक अपने वक़्त में उसे हो जाना है)। (16: 61)

1-और अधिक। 2-बढ़ना। 3-हानिकर। 4-प्रभावहीन, मिटना। 5-अकारथ। 6-पलक झपकने। 7-कार्यान्वयन। 8-विलम्ब। 9-शीघ्रता, पहले होना।

तस्कीने हयात

ज़िन्दगी की मेहनतें और काविशें

या मसलन हम देखते हैं इन्सान की मईशत[1], क़ियामो-बक़ा[2] की जद्दो-जोहद और कशा-कश[3] का नाम है, इसलिए क़ुदरती तौर पर इसका हर गोशा तरह-तरह की मेहनतों और काविशों से घिरा हुआ है और बहैसियते मज्मूई ज़िन्दगी इज़्तिरारी ज़िम्मेदारियों का बोझ और मुसलसल मशक़्क़तों की आज़माइश है :

لَقَدْ خَلَقْنَا الْإِنسَانَ فِي كَبَدٍ ۝ (٩٠: ٤)

बिला-शुब्हा हमने इन्सान को इस तरह बनाया है कि उसकी ज़िन्दगी मशक़्क़तों से घिरी हुई है ! (90: 4)

मशग़ूलियत और इन्हिमाक

लेकिन बई-हमा[4] फ़ित्रत ने कारख़ान-ए-मईशत का ढंग कुछ इस तरह का बना दिया है और तबीअ़तों में कुछ इस तरह की ख़्वाहिशें, वलवले और इन्फ़िआ़लात वदीअ़त कर दिये है कि ज़िन्दगी के हर गोशे में एक तरह की दिल-बस्तगी, मशग़ूलियत, हमा-हमी[5] और सरगरमी पैदा हो गई है। और यही ज़िन्दगी का इन्हिमाक है जिसकी वजह से हर ज़ी-हयात[6] न सिर्फ़ ज़िन्दगी की मशक़्क़तें बर्दाश्त कर रहा है, बल्कि उन्हीं मशक़्क़तों में ज़िन्दगी की बड़ी से बड़ी लज़्ज़त व राहत महसूस करता है। ये मशक़्क़तें जिस क़द्र ज़्यादा

1-जीवन। 2-अस्तित्व क़ायम रखने की। 3-संघर्ष। 4-सामान्यतः, सर्वव्यापक तौर पर। 5-तालमेल। 6-जीवधारी।

होती हैं उतनी ही ज़्यादा ज़िन्दगी की दिलचस्पी और महबूबियत भी बढ़ जाती है। अगर एक इन्सान की ज़िन्दगी इन मशक़्क़तों से ख़ाली हो जाए तो वो महसूस करेगा कि ज़िन्दगी की सारी लज़्ज़तों से महरूम हो गया और अब ज़िन्दा रहना उसके लिए नाक़ाबिले बर्दाश्त बोझ है!

हालात मुतफ़ावित हैं लेकिन ज़िन्दगी की दिल-बस्तगी और सर-गरमी सबके लिए है

फिर देखो! कारसाज़े फ़ित्रत की ये कैसी करिशमा-साज़ी है कि हालात मुतफ़ावित[1] हैं, तबाए[2] मुतनव्वे[3] हैं, अश्ग़ाल[4] मुख़्तलिफ़ हैं, अग़राज़[5] मुतज़ाद[6] हैं, लेकिन मईशत की दिल-बस्तगी[7] और सर-गरमी सबके लिए यकसाँ है और सब एक ही तरह उसकी मशग़ूलियतों के लिए जोशो-तलब रखते हैं। मर्दो-औरत, तिफ़्लो-जवाँ, अमीरो-फ़क़ीर, आलिमो-जाहिल, क़वी व ज़ईफ़, तंदुरुस्त व बीमार, मुजर्रद व मुताहल, हामिला व मुर्ज़िआ, सब अपनी-अपनी हालतों में मुन्हमिक[8] हैं और कोई नहीं जिसके लिए ज़िन्दगी की काविशों में महवियत न हो। अमीर अपने महल के ऐशो-निशात में और फ़क़ीर अपनी बेसरो-सामानियों की फ़ाक़ा-मस्ती में ज़िन्दगी बसर करता है, लेकिन दोनों के लिए ज़िन्दगी की मशग़ूलियतों में दिल-बस्तगी होती है और कोई नहीं कह सकता कि कौन ज़्यादा मशग़ूल है। एक ताजिर जिस इन्हिमाक के साथ अपनी लाखों रुपये की आमदनी का हिसाब करता है, इसी तरह एक मज़दूर भी दिन

1-भिन्न-भिन्न। 2-स्वभाव। 3-विविध। 4-रुचि, कार्य। 5-उद्देश्य। 6-विरोधाभासी 7-लगाव। 8-प्रतिबद्ध।

इख़्तिलाफ़े लैलो-नहार

चुनांचे इसी सिलसिले में वो रात और दिन के इख़्तिलाफ़ का ज़िक्र करता है और कहता है: अगर ग़ौर करो तो इस इख़्तिलाफ़ में हिकमते इलाही की कितनी निशानियाँ पोशीदा हैं। ये बात कि शबो-रोज़ की आमदो-शुद की दो मुख़्तलिफ़ हालतें ठहरा दी गईं हैं और वक़्त की नौइयत हर मुअय्यन मिक़्दार के बाद बदलती रहती है, ज़िन्दगी के लिए बड़ी ही तस्कीनो-दिल-बस्तगी का ज़रिया है। अगर ऐसा न होता और वक़्त हमेशा एक ही हालत पर बरक़रार रहता तो दुनिया में ज़िन्दा रहना दुशवार हो जाता। अगर तुम क़त्बैन[1] के अतराफ़ में जाओ, जहाँ शबो-रोज़ का इख़्तिलाफ़ अपनी नुमूद नहीं रखता तो तुम्हें मालूम हो जाए कि ये इख़्तिलाफ़ गुज़राने हयात के लिए कैसी अज़ीमुश्शान नेमत है :

إِنَّ فِي خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضِ وَاخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ لَاٰيٰتٍ لِّأُولِي الْأَلْبَابِ ٥ (١٩٠:٣)

बिला-शुब्हा आसमानों और ज़मीन की पैदाइश में और रात और दिन के एक के बाद एक आते रहने में अरबाबे दानिश के लिए (हिकमते इलाही) की बड़ी ही निशानियाँ है ! (3: 190)

रात और दिन के इख़्तिलाफ़ ने मईशत को दो मुख़्तलिफ़ हिस्सों में तक़्सीम कर दिया है। दिन की रौशनी जद्दो-जोहद की सरगरमी पैदा करती है। रात की तारीकी राहतो-सुकून का बिस्तर बिछा देती है। हर दिन की मेहनत के बाद रात का सुकून होता है

1-प्रथ्वी के ध्रुवों।

और हर रात के सुकून के बाद नये दिन की नई सरगरमी !

وَمِنْ رَّحْمَتِهِ جَعَلَ لَكُمُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ لِتَسْكُنُوْا فِيْهِ وَلِتَبْتَغُوْا مِنْ فَضْلِهِ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ٥

(٧٣ :٢٨)

और (देखो!) ये उसकी रहमत की कारसाज़ी है कि तुम्हारे लिए रात और दिन (अलग-अलग) ठहरा दिये गए ताकि रात के वक़्त राहत पाओ और दिन में उसका फ़ज़्ल तलाश करो। (यानी कारो-बारे मईशत में सरगरम हो) [और ताकि तुम (उसका) शुक्र करो (31)]
(28: 73)

दिन की मुख़्तलिफ़ हालतें और रात की मुख़्तलिफ़ मन्ज़िलें

फिर रात और दिन का इख़्तिलाफ़ सिर्फ़ रात और दिन ही का इख़्तिलाफ़ नहीं है, बल्कि हर दिन मुख़्तलिफ़ हालतों से गुज़रता और हर रात मुख़्तलिफ़ मन्ज़िलें तय करती है और हर हालत एक ख़ास तरह की तासीर रखती है और हर मन्ज़िल के लिए एक ख़ास तरह का मुन्ज़र होता है। सुब्ह तुलू होती है और उसकी एक ख़ास तासीर होती है, दिन ढलता है और उसका एक ख़ास मन्ज़र होता है। औक़ात का ये रोज़ाना इख़्तिलाफ़ हमारे एहसासात का ज़ाइक़ा बदलता रहता है और यक्सानियत की अफ़्सुर्दगी[1] की जगह तबद्दुल[2] व तजद्दुद[3] की लज़्ज़त और सरगरमी पैदा होती रहती है !

1-उक्ताहट। 2-बदलाव। 3-नवीनता।

पस पाकी है अल्लाह के लिए और आसमानों और ज़मीन में उसके लिए सताइश है जबकि तुमपर शाम आती है, जब तुमपर सुब्ह होती है, जब दिन का आख़िरी वक़्त होता है और जब तुमपर दोपहर आती है!
(30: 17-18)

فَسُبْحٰنَ اللّٰهِ حِيْنَ تُمْسُوْنَ وَحِيْنَ تُصْبِحُوْنَ ○ وَلَهُ الْحَمْدُ فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَعَشِيًّا وَّحِيْنَ تُظْهِرُوْنَ ○
(٣٠: ١٧-١٨)

हैवानात का इख़्तिलाफ़

इसी तरह इन्सान ख़ुद अपने वुजूद को देखे और तमाम हैवानात को देखे, फ़ित्रत ने किस तरह तरह-तरह के इख़्तिलाफ़ात से उसमें तनव्वो और दिलपज़ीरी पैदा कर दी है !

और इन्सान, जानवर, चारपाए, तरह-तरह की रंगतों के !
(35: 28)

وَمِنَ النَّاسِ وَالدَّوَآبِّ وَالْاَنْعَامِ مُخْتَلِفٌ اَلْوَانُهٗ
(٣٥: ٢٨)

नबातात

आलमे-नबातात[1] को देखो ! दरख़्तों के मुख़्तलिफ़ डील-डौल हैं, मुख़्तलिफ़ रंगतें हैं, मुख़्तलिफ़ ख़ुशबुएँ हैं, मुख़्तलिफ़ ख़्वास हैं और फिर दाना और फल खाओ तो मुख़्तलिफ़ क़िस्म के ज़ाइक़े हैं :

क्या इन लोगों ने कभी ज़मीन पर नज़र नहीं डाली और ग़ौर नहीं किया कि हम ने नबातात

اَوَلَمْ يَرَوْا اِلَى الْاَرْضِ كَمْ اَنْۢبَتْنَا فِيْهَا مِنْ كُلِّ

1-वनस्पति जगत ।

زَوۡجٍ كَرِيۡمٍ ۝ (٢٦: ٧)

की हर दो-दो बेहतर क़िस्मों में से कितने (बेशुमार) दरख़्त पैदा कर दिये हैं? (26: 7)

وما ذَرَأَ لَكُمۡ فِى الۡاَرۡضِ مُخۡتَلِفًا اَلۡوَانُهٗ ؕ اِنَّ فِىۡ ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِّقَوۡمٍ يَّذَّكَّرُوۡنَ ۝ (١٦: ١٣)

और (देखो!) अल्लाह ने जो पैदावार मुख़्तलिफ़ रंगतों की तुम्हारे लिये ज़मीन में फैला दी है, सो इसमें भी इब्रत-पज़ीर तबीअ़तों के लिए (हिकमते इलाही की) बड़ी ही निशानी है! (16: 13)

وَهُوَ الَّذِىۡۤ اَنۡشَاَ جَنّٰتٍ مَّعۡرُوۡشٰتٍ وَّغَيۡرَ مَعۡرُوۡشٰتٍ وَّالنَّخۡلَ وَالزَّرۡعَ مُخۡتَلِفًا اُكُلُهٗ (٦: ١٤١)

और वो (हकीम व क़दीर[1]) जिस ने (तरह-तरह के) बाग़ पैदा कर दिये, टट्टियों पर चढ़ाए हुए और बग़ैर चढ़ाए हुए, और खजूर के दरख़्त और (तरह-तरह की) खेतियाँ जिनके दाने और फल खाने में मुख़्तलिफ़ ज़ाइक़ा रखते हैं। (6: 141)

जमादात

हैवानात और नबातात ही पर मौक़ूफ़ नहीं, जमादात में भी यही क़ानूने फ़ित्रत काम कर रहा है :

وَمِنَ الۡجِبَالِ جُدَدٌۢ بِيۡضٌ

और पहाड़ों को देखो! गोनागूँ रंगतों के हैं, कुछ सफ़ेद, कुछ

1-सामर्थ्यवान।

وَّحُمۡرٌ مُّخۡتَلِفٌ اَلۡوَانُهَا وَ غَرَابِيۡبُ سُوۡدٌ ۝ (٣٥: ٢٧)

सुर्ख़, कुछ काले-कलूटे ! (35: 27)

हर चीज़ के दो-दो होने का क़ानून

इसी क़ानूने इख़्तिलाफ़ का एक गोशा वो भी है जिसे क़ुरआन ने "तज़्वीज़" से ताबीर किया है और हम उसे क़ानूने तस्नियह भी कह सकते हैं, यानी हर चीज़ के दो-दो होने या मुतक़ाबिल व मुतमासिल होने का क़ानून। काइनाते ख़िल्क़त का कोई गोशा भी देखो ! तुम्हें कोई चीज़ यहाँ एकहरी और ताक़ नज़र नहीं आएगी। हर चीज़ में जुफ़्त[1] और दो-दो होने की हक़ीक़त काम कर रही है, या यूँ कहा जाए कि हर चीज़ अपना कोई न कोई मुसन्ना[2] भी ज़रूर रखती है। रात के लिए दिन है, सुब्ह के लिए शाम है, नर के लिए मादा है, मर्द के लिए औरत है, ज़िन्दगी के लिए मौत है। (32)

وَمِنۡ كُلِّ شَىۡءٍ خَلَقۡنَا زَوۡجَيۡنِ لَعَلَّكُمۡ تَذَكَّرُوۡنَ ۝ (٥١: ٤٩)

और हर चीज़ में जोड़े पैदा कर दिए (यानी दो-दो और मुतक़ाबिल अशिया पैदा कीं) [ताकि तुम नसीहत हासिल करो। (33)] (51: 49)

سُبۡحٰنَ الَّذِىۡ خَلَقَ الۡاَزۡوَاجَ كُلَّهَا مِمَّا تُنۡۢبِتُ الۡاَرۡضُ وَمِنۡ اَنۡفُسِهِمۡ وَمِمَّا

पाकी और बुज़ुर्गी है उस ज़ात के लिए जिसने ज़मीन की पैदावार में और इन्सान में और उन तमाम मख़्लूक़ात में जिनका इन्सान को इल्म नहीं, दो-दो

1-जोड़ा, 2-पर्याय, युग्म।

لَا يَعْلَمُوْنَ ٥ (٣٦:٣٦)

और मुतक़ाबिल चीज़ें पैदा कीं ! (36: 36)

मर्द और औ़रत

यही क़ानूने फ़ित्रत है जिसने इन्सान को दो मुख़्तलिफ़ जिन्सों यानी मर्द और औ़रत में तक़सीम कर दिया और फिर उनमें फ़े'लो-इन्फ़िआ़ल और जज़्बो-इन्ज़िाब के कुछ ऐसे विज्दानी एहसासात वदीअ़त कर दिए कि हर जिन्स दूसरी जिन्स से मिलने की क़ुदरती तलब रखती है और दोनों के मिलने से इज़्दवाजी[1] ज़िन्दगी की एक कामिल मईशत पैदा हो जाती है :

فَاطِرُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ جَعَلَ لَكُمْ مِنْ اَنْفُسِكُمْ اَزْوَاجًا وَّمِنَ الْاَنْعَامِ اَزْوَاجًا ۚ (١١:٤٢)

वो आसमानों और ज़मीन का बनाने वाला! उसने तुम्हारे लिए तुम्हारी ही जिन्स में से जोड़े बना दिए (यानी मर्द के लिए औ़रत और औ़रत के लिए मर्द) इसी तरह चारपायों में भी जोड़े पैदा कर दिए। (42: 11)

क़ुरआन कहता है: ये इसलिए है ताकि मुहब्बत और सुकून हो और दो हस्तियों की बाहमी रिफ़ाक़त और इश्तिराक से ज़िन्दगी की मेहनतें और मशक़्क़तें सहल और गवारा हो जाएँ :

وَمِنْ اٰيٰتِهٖٓ اَنْ خَلَقَ لَكُمْ مِّنْ اَنْفُسِكُمْ اَزْوَاجًا لِّتَسْكُنُوْٓا اِلَيْهَا وَجَعَلَ بَيْنَكُمْ مَّوَدَّةً

और (देखो!) उसकी (रहमत की) निशानियों में से एक निशानी ये है कि उसने तुम्हारे लिए तुमही में से जोड़े पैदा कर

1-दाम्पत्य।

وَّرَحْمَةً ؕ اِنَّ فِیْ ذٰلِكَ لَاٰیٰتٍ لِّقَوْمٍ یَّتَفَكَّرُوْنَ ۝

(٣٠: ٢١)

दिए (यानी मर्द के लिए औ़रत और औ़रत के लिए मर्द) ताकि उसकी वजह से तुम्हें सुकून हासिल हो। और (फिर उसकी ये कारफ़रमाई देखो कि) तुम्हारे दरमियान (यानी मर्द और औ़रत के दरमियान) मुहब्बत और रहमत का जज़्बा पैदा कर दिया। बिला-शुब्हा उन लोगों के लिए जो ग़ौरो-फ़िक्र करने वाले हैं, इसमें (हिकमते इलाही की) बड़ी ही निशानियाँ है। (30: 21)

नसब और सिहर

फिर इसी इज़्दिवाजी ज़िन्दगी से तवालुदो-तनासुल[1] का एक ऐसा सिलसिला क़ायम हो गया कि हर वुजूद पैदा होता है और हर वुजूद पैदा करता है। एक तरफ़ वो नसब[2] का रिश्ता रखता है जो उसे पिछलों से जोड़ता है, दूसरी तरफ़ सिहर यानी दामादी का रिश्ता रखता है जो उसे आगे आने वालों से मर्बूत[3] कर देता है। नतीजा ये है कि हर वुजूद की फ़र्दियत[4] एक वसीअ़ दायरे की कसरत में फैल गई है और रिश्तों, क़राबतों[5] का ऐसा वसीअ़ हल्क़ा पैदा हो गया जिसकी हर कड़ी दूसरी कड़ी के साथ मर्बूत है :

1-संतति, वंशवृद्धि। 2-पितृवद्ध रिश्ता, वंश। 3-जोड़ना। 4-वैयक्तिकता। 5-निकटताओं।

وَهُوَ الَّذِىْ خَلَقَ مِنَ الْمَآءِ بَشَرًا فَجَعَلَهٗ نَسَبًا وَّصِهْرًا ط

(٥٤ :٢٥)

और वही (हकीमो-क़दीर) है जिस ने पानी से (यानी नुत्फ़े[1] से) इन्सान को पैदा किया, फिर (इसी रिश्त-ए-पैदाइश के ज़रिये) उसे नसब और सिहर का रिश्ता रखने वाला बना दिया! (25: 45)

सिला-रहमी और ख़ानदानी हल्क़े की तशकील

और फिर देखो! इस नसब और सिहर के रिश्ते से किस तरह ख़ानदान और क़बीले का निज़ाम क़ायम हो गया है और किस अ़जीबो-ग़रीब तरीक़े से सिला-रहमी यानी क़राबतदारी की गीराइयाँ एक वुजूद को दूसरे वुजूद से जोड़तीं और मुआ़शिरती[2] ज़िन्दगी की बाहमी उल्फ़तों[3] और मुआ़विनतों[4] के लिए मुहर्रिक[5] होती हैं। दरअसल इन्सान की इज्तिमाई ज़िन्दगी का सारा कारख़ाना इसी सिला-रहमी के सरे-रिश्ते ने क़ायम कर रखा है :

يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوْا رَبَّكُمُ الَّذِىْ خَلَقَكُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ وَّخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَثِيْرًا وَّنِسَآءً ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِىْ

ऐ अफ़रादे नस्ले इन्सानी! अपने परवरदिगार की नाफ़र्मानी[6] से बचो (और उसके ठहराए हुए रिश्तों से बेपर्वा न हो जाओ।) वो परवरदिगार जिसने तुम्हें एक फ़र्दे-वाहिद से पैदा किया (यानी बाप से पैदा किया) और उसी से उसका जोड़ा (34) भी पैदा

1-वीर्य। 2-सामाजिक। 3-प्रेम, सदभाव। 4-सहयोग। 5-सक्रिय। 6-अवज्ञा।

تَسَآءَ لُوۡنَ بِهٖ وَالۡاَرۡحَامَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلَيۡكُمۡ رَقِيۡبًا ۝

(١ :٤)

कर दिया (यानी जिस तरह मर्द की नस्ल से लड़का पैदा हुआ, लड़की भी पैदा हुई) फिर उनकी (35) नस्ल से एक बड़ी तादाद मर्द और औ़रत की पैदा हो कर फैल गई, (इस तरह फ़र्दे-वाहिद के रिश्ते ने एक बड़े ख़ानदान और क़बीले की सूरत पैदा कर ली) पस अल्लाह की नाफ़र्मानी से बचो जिसके नाम पर बाहम-दिगर (महर व शफ़क़त का) सवाल करते हो, और सिला-रहमी के तोड़ने से भी बचो (जिसके नाम पर बाहम- दिगर एक दूसरे से चश्मे-दाश्त इआनत रखते हो) बिला-शुब्हा अल्लाह तुम्हारा निगराने-हाल है! (4: 1)

وَاللّٰهُ جَعَلَ لَكُمۡ مِّنۡ اَنۡفُسِكُمۡ اَزۡوَاجًا وَّجَعَلَ لَكُمۡ مِّنۡ اَزۡوَاجِكُمۡ بَنِيۡنَ وَحَفَدَةً

(٧٢ :١٦)

और (देखो!) ये अल्लाह है जिसने तुम्हारी ही जिन्स से तुम्हारे लिए जोड़ा बना दिया (यानी मर्द के लिए औ़रत और औ़रत के लिए मर्द) फिर तुम्हारे बाहमी इज़्दिवाज[1] से

1-संसर्ग।

बेटों और पोतों का सिलसिला क़ायम कर दिया। (16: 72)

अय्यामे-हयात का तग़य्युर व तनव्वो

इसी तरह अय्यामे-हयात[1] के तग़य्युर व तनव्वो में भी तस्कीने हयात की एक बहुत बड़ी मस्लहत पोशीदा है। हर ज़िन्दगी तुफ़ूलियत[2], शबाब, जवानी, कुहूलत और बुढ़ापे की मुख़्तलिफ़ मन्ज़िलों से गुज़रती है और हर मन्ज़िल अपने नये-नये एहसासात और नई- नई मशग़ूलियतें और नई-नई काविशें रखती हैं। नतीजा ये है कि हमारी ज़िन्दगी आलमे हस्ती की एक दिलचस्प मुसाफ़िरत बन गई। एक मन्ज़िल की कैफ़ियतों से अभी जी सैर नहीं हो चुकता कि दूसरी मन्ज़िल नमूदार हो जाती है और इस तरह अ़रस-ए-हयात की तिवालत महसूस ही नहीं होती :

هُوَ الَّذِیْ خَلَقَکُمْ مِّنْ تُرَابٍ ثُمَّ مِنْ نُّطْفَةٍ ثُمَّ مِنْ عَلَقَةٍ ثُمَّ یُخْرِجُکُمْ طِفْلًا ثُمَّ لِتَبْلُغُوْٓا اَشُدَّکُمْ ثُمَّ لِتَکُوْنُوْا شُیُوْخًا ۚ وَمِنْکُمْ مَّنْ یُّتَوَفّٰی مِنْ قَبْلُ وَلِتَبْلُغُوْٓا اَجَلًا مُّسَمًّی وَّلَعَلَّکُمْ تَعْقِلُوْنَ ۝ (٤٠:٦٧)

वो (परवर्रादिगार) जिस ने तुम्हारा वुजूद मिट्टी से पैदा किया, फिर नुत्फ़े से, फिर अ़लके से (यानी जोंक की शक्ल की एक चीज़ से) फिर ऐसा होता है कि तुम तुफ़ूलियत की हालत में माँ के शिकम से निकलते हो, फिर बड़े होते हो, और सिन्ने तमीज़[3] तक पहुँचते हो। इसके बाद तुम्हारा जीना इसलिए होता है ताकि बुढ़ापे की मन्ज़िल

1-जीवन की स्थितियों। 2-शैशवकाल। 3-समझने की उम्र।

तक पहुँचो, फिर तुम में से कोई तो इन मन्ज़िलों से पहले ही मर जाता है (और कोई छोड़ दिया जाता है) ताकि अपने मुक़र्ररा वक़्त तक ज़िन्दगी बसर करले [और ताकि तुम समझो! (36)]
(40: 67)

ज़ीनतो-तफ़ाख़ुर, मालो-मता, आलो-औलाद

इसी तरह तरह-तरह की ख़्वाहिशें और जज़्बे, ज़ीनतो-तफ़ाख़ुर के वलवले, मालो-मता की मुहब्बत, आल-अवलाद की दिलबस्तगियाँ ज़िन्दगी की दिलचस्पी और इन्हिमाक के लिए पैदा कर दी गई हैं :

زُيِّنَ لِلنَّاسِ حُبُّ الشَّهَوٰتِ مِنَ النِّسَآءِ وَالْبَنِيْنَ وَالْقَنَاطِيْرِ الْمُقَنْطَرَةِ مِنَ الذَّهَبِ وَالْفِضَّةِ وَالْخَيْلِ الْمُسَوَّمَةِ وَالْاَنْعَامِ وَالْحَرْثِ ط ذٰلِكَ مَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ج وَاللّٰهُ عِنْدَهٗ حُسْنُ الْمَاٰبِ ٥

(١٤ : ٣)

इन्सान के लिए मर्द व औ़रत के तअ़ल्लुक़ में, औलाद में, चाँदी सोने के अन्दोख़्तों में, चुने हुए घोड़ो में, मवेशियों में और खेती-बाड़ी में दिसबस्तगी पैदा कर दी गई है और ये जो कुछ है दुन्यवी ज़िन्दगी की पूंजी है, बेहतर ठिकाना तो अल्लाह ही के पास है !

(3: 14)

इख़्तिलाफ़े मईशत और तज़ाहुमे हयात

इसी तरह मईशत का इख़्तिलाफ़ और उसकी वजह से मुख़्तलिफ़ दरजों और हालतों का पैदा हो जाना भी इन्हिमाके हयात का एक बहुत बड़ा मुहर्रिक है, क्योंकि इसकी वजह से ज़िन्दगी में मुज़ाहमत[1] और मुसाबक़त[2] की हालत पैदा हो गई है और इसमें लगे रहने से ज़िन्दगी की मशक़्क़तों का झेलना आसान हो गया है, बल्कि यही मशक़्क़तें सर-तासर राहतो-सुरूर का सामान भी बन गई हैं :

وَهُوَ الَّذِىْ جَعَلَكُمْ خَلٰٓئِفَ الْاَرْضِ وَرَفَعَ بَعْضَكُمْ فَوْقَ بَعْضٍ دَرَجٰتٍ لِّيَبْلُوَكُمْ فِىْ مَآ اٰتٰكُمْ ط اِنَّ رَبَّكَ سَرِيْعُ الْعِقَابِ وَاِنَّهٗ لَغَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ٥
(٦:٦٥)

और ये उसी (हकीमो-क़दीर) की कारफ़रमाई है कि उसने तुम्हें ज़मीन में (पिछलों) का जा-नशीन[3] बनाया और तुम में से बाज़ को बाज़ पर दरजों में फ़ौक़ियत[4] दे दी, ताकि जो कुछ तुम्हें दिया गया है उसमें तुम्हारे अ़मल की आज़माइश करे। बिला शुब्हा तुम्हारा परवरदिगार (पादाशे अ़मल की) सज़ा देने में तेज़ है -(यानी उसका क़ानूने मुकाफ़ात नताइजे अ़मल में सुस्त रफ़्तार नहीं) लेकिन साथ ही बख़्श देने वाला, रहमत रखने वाला भी है ! (6: 65)

1-प्रतिद्वंद्विता। 2-प्रतिस्पर्धा। 3-उत्तराधिकारी। 4-बड़ाई।

बुरहाने फ़ज़्लो-रहमत

चुनांचे यही वजह है कि जिस तरह क़ुरआन ने रुबूबियत के आमालो-मज़ाहिर[1] से इस्तिदलाल[2] किया है, इसी तरह वो रहमत के आसारो-हक़ाइक़[3] से भी जा-बजा इस्तिदलाल करता है और बुरहाने रुबूबियत[4] की तरह बुरहाने-फ़ज़्लो-रहमत[5] भी उसकी दावतो-इर्शादा[6] का आ़म उस्लूबे ख़िताब है। वो कहता है: काइनाते ख़िल्क़त की हर शय में एक मुक़र्ररा निज़ाम के साथ रहमतो-फ़ज़्ल के मज़ाहिर का मौजूद होना क़ुदरती तौर पर इन्सान को यक़ीन दिला देता है कि एक रहमत रखने वाली हस्ती की कार-फ़रमाइयाँ यहाँ काम कर रही हैं, क्योंकि मुमकिन नहीं फ़ज़्लो-रहमत की ये पूरी काइनात मौजूद हो और फ़ज़्लो-रहमत का कोई ज़िन्दा इरादा मौजूद न हो। चुनांचे वो तमाम मक़ामात जिन में काइनाते ख़िल्क़त के इफ़ाद-ओ-फ़ैज़ान, ज़ीनतो-जमाल, मौज़ूनियतो-एतिदाल[7], तस्विया व क़्वाम[8] और तक्मीलो-इत्क़ान का ज़िक्र किया गया है, दरअसल इसी इस्तिदलाल पर मब्नी हैं :

وَاِلٰـهُكُمْ اِلٰـهٌ وَّاحِدٌ ۚ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُـوَ الرَّحْمٰنُ الرَّحِيْمُ ۝

और (देखो!) तुम्हारा माबूद[9] वही एक माबूद है, कोई माबूद नहीं मगर उसी की एक ज़ात, रहमत वाली और अपनी रहमत की बख़्शाइशों से हमेशा फ़ैज़्याब करने वाली !

1-क्रिया कलापों। 2-तर्क प्रस्तुत करना। 3-साक्ष्यों व तथ्यों। 4-पालनशीलता के सबूतों। 5-दया-करुणा के सबूत। 6-आमंत्रण व ध्यानाकर्षण। 7-उपयुक्तता व संतुलन। 8-सही अंदाज़ा व ठहराव। 9-उपास्य, पूज्य।

اِنَّ فِیۡ خَلۡقِ السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضِ وَاخۡتِلَافِ الَّیۡلِ وَالنَّهَارِ وَالۡفُلۡكِ الَّتِیۡ تَجۡرِیۡ فِی الۡبَحۡرِ بِمَا یَنۡفَعُ النَّاسَ وَمَاۤ اَنۡزَلَ اللّٰهُ مِنَ السَّمَآءِ مِنۡ مَّآءٍ فَاَحۡیَا بِهِ الۡاَرۡضَ بَعۡدَ مَوۡتِهَا وَبَثَّ فِیۡهَا مِنۡ كُلِّ دَآبَّةٍ وَّ تَصۡرِیۡفِ الرِّیٰحِ وَالسَّحَابِ الۡمُسَخَّرِ بَیۡنَ السَّمَآءِ وَالۡاَرۡضِ لَاٰیٰتٍ لِّقَوۡمٍ یَّعۡقِلُوۡنَ ٥

(٢: ١٦٣-١٦٤)

बिला-शुब्हा आसमानों और ज़मीन के पैदा करने में और रात-दिन के एक के बाद एक आते रहने में और किश्ती में जो इन्सान की कार-बरआरियों के लिए समन्दर में चलती है और बारिश में जिसे अल्लाह आसमान से बरसाता है और उस (की आब-पाशी) से ज़मीन मरने के बाद फिर जी उठती है और इस बात में कि हर क़िस्म के जानवर ज़मीन में फैला दिये हैं नीज़ हवाओं के (मुख़्तलिफ़ जानिब) फेरने में और बादलों में जो आसमान और ज़मीन के दरमियान (अपनी मुक़र्ररा जगह के अन्दर) बंधे रुके हैं, अक़्ल रखने वालों के लिए (अल्लाह की हस्ती और उसके क़वानीने फ़ज़्लो-रहमत[1] की) बड़ी ही निशानियाँ हैं ! (2: 163-164)

इसी तरह उन मक़ामात का मुतालआ करो जहाँ ख़ुसूसियत के साथ जमाले फ़ित्रत से इस्तिदलाल किया है :

1-दया-करुणा के विधान।

اَفَلَمْ يَنْظُرُوْٓا اِلَى السَّمَآءِ فَوْقَهُمْ كَيْفَ بَنَيْنٰهَا وَ زَيَّنّٰهَا وَمَا لَهَا مِنْ فُرُوْجٍ ٥

क्या कभी इन लोगों ने आसमान की तरफ़ नज़र उठा कर देखा नहीं कि किस तरह हमने उसे बनाया है और किस तरह उसके मन्ज़र में ख़ुशनुमाई पैदा कर दी है और फिर ये कि कहीं भी उसमें शिगाफ़[1] नहीं।

وَالْاَرْضَ مَدَدْنٰهَا وَاَلْقَيْنَا فِيْهَا رَوَاسِيَ وَاَنْۢبَتْنَا فِيْهَا مِنْ كُلِّ زَوْجٍۢ بَهِيْجٍ ٥ تَبْصِرَةً وَّذِكْرٰى لِكُلِّ عَبْدٍ مُّنِيْبٍ ٥

(٨-٦:٥٠)

और इसी तरह ज़मीन को देखो! किस तरह हमने उसे फ़र्श की तरह फैला दिया और पहाड़ों के लंगर डाल दिए और फिर किस तरह क़िस्म-क़िस्म की ख़ूबसूरत नबातात उगा दीं! हर उस बन्दे के लिए जो हक़ की तरफ़ रुजू करने वाला है इसमें ग़ौर करने की बात और नसीहत की रौशनी है ! (50: 6-8)

وَلَقَدْ جَعَلْنَا فِي السَّمَآءِ بُرُوْجًا وَّزَيَّنّٰهَا لِلنّٰظِرِيْنَ ٥

(١٦:١٥)

और (देखो!) हमने आसमान में (सितारों की गर्दिश के लिए) बुरुज[2] बनाए और देखने वालों के लिए उनमें ख़ुशनुमाई पैदा कर दी। (15: 16)

1-दरार। 2-दुर्ग, सितारों के महल, तारा-समूह।

और (देखो!) हमने दुनिया के आसमान (यानी कुरए् अर्ज़ी की फ़िज़ा) को सितारों की क़िन्दीलों से ख़ुश-मन्ज़र बना दिया ! (67: 5)

وَلَقَدْ زَيَّنَّا السَّمَآءَ الدُّنْيَا بِمَصَابِيحَ

(٦٧: ٥)

और (देखो!) तुम्हारे लिए चारपायों के मन्ज़र में जब शाम के वक़्त चरागाह से वापस लाते हो और जब सुब्ह ले जाते हो, एक तरह का हुस्न और नज़र-अफ़्रोज़ी है ! (16: 6)

وَلَكُمْ فِيهَا جَمَالٌ حِينَ تُرِيحُونَ وَحِينَ تَسْرَحُونَ ۝

(١٦: ٦)

मौज़ूनियत व तनासुब

जिस चीज़ को हम "जमाल" कहते हैं उसकी हक़ीक़त क्या है? मौज़ूनियत और तनासुब। यही मौज़ूनियत और तनासुब है जो बनाव और ख़ूबी के तमाम मज़ाहिर की अस्ल है :

और (देखो!) हमने ज़मीन में हर एक चीज़ मौज़ूनियत और तनासुब रखने वाली उगाई ! (15: 19)

وَاَنْبَتْنَا فِيهَا مِنْ كُلِّ شَيْءٍ مَّوْزُوْنٍ ۝

(١٥: ١٩)

तस्विया

इसी मअ़ना में क़ुरआन "तस्विया" का लफ़्ज़ भी इस्तेमाल करता है। "तस्विया" के मअ़ना ये हैं कि किसी चीज़ को इस तरह ठीक-ठीक दुरुस्त कर देना कि उसकी हर बात ख़ूबी व मुनासिबत के साथ हो :

اَلَّذِىۡ خَلَقَ فَسَوّٰى ۙ وَالَّذِىۡ قَدَّرَ فَهَدٰى ۙ (۸۷: ۲-۳)

वो परवरदिगार जिसने हर चीज़ पैदा की, फिर ठीक-ठीक ख़ूबी व मुनासबत के साथ दुरुस्त कर दी और वो जिसने हर वुजूद के लिए एक अन्दाज़ा ठहरा दिया, फिर उस पर (ज़िन्दगी व मईशत) की राह खोल दी ! (87: 2-3)

اَلَّذِىۡ خَلَقَكَ فَسَوّٰٮكَ فَعَدَلَكَ ۙ فِىۡۤ اَىِّ صُوۡرَةٍ مَّا شَآءَ رَكَّبَكَ ؕ (۸۲: ۷-۸)

वो परवरदिगार जिसने तुम्हें पैदा किया, फिर ठीक-ठीक दुरुस्त कर दिया, फिर (तुम्हारे ज़ाहिरी व बातिनी क़ुवा[1] में) एतिदाल व तनासुब मलहूज़ रखा, फिर जैसी सूरत बनानी चाही उसी के मुताबिक़ तरकीब दे दी। (82: 7-8)

इत्क़ान

यही हक़ीक़त है जिसे क़ुरआन ने "इत्क़ान" से भी ताबीर किया है, यानी काइनाते हस्ती की हर चीज़ का दुरुस्तगी व इस्तवारी के साथ होना कि कहीं भी उसमें ख़लल, नुक़सान, बेढंगापन, ऊंच-नीच और ना हमवारी नज़र नहीं आ सकती :

صُنۡعَ اللّٰهِ الَّذِىۡۤ اَتۡقَنَ كُلَّ شَىۡءٍ ؕ (۲۷: ۸۸)

ये अल्लाह की कारीगरी है जिसने हर चीज़ दुरुस्तगी व इस्तवारी के साथ बनाई! (27:88)

1-बनावट।

مَا تَـرٰی فِیْ خَلْـقِ الرَّحْمٰنِ مِنْ تَـفٰوُتٍ ؕ فَارْجِعِ الْـبَصَرَ هَلْ تَـرٰی مِنْ فُـطُوْرٍ ۝ ثُمَّ ارْجِعِ الْـبَصَرَ كَـرَّتَيْـنِ يَنْقَلِبْ اِلَيْكَ الْـبَصَرُ خَاسِئًا وَّهُـوَ حَسِيْـرٌ ۝

(٦٧: ٣-٤)

तुम अर्रहमान की बनावट में (क्योंकि ये उसकी रहमत ही का ज़ुहूर है) कभी कोई ऊंच-नीच नहीं पाओगे। (अच्छा नज़र उठाओ और इस नुमाइशगाहे सन्अ़त का मुताल्अ़ा करो!) एक बार नहीं बार-बार देखो! क्या तुम्हें कोई दराड़ दिखाई देती है? तुम इसी तरह यके-बाद दीगर देखते रहो! तुम्हारी निगाह उठेगी और आ़जिज़ व दरमांदा हो कर वापस आ जाएगी लेकिन कोई नुक़्स न निकाल सकेगी। (67: 3-4)

"فِی خَلْقِ الرَّحْمٰنِ फ़ी ख़ल्क़िर्रहमानि" फ़रमाया, यानी ये ख़ूबी व इत्क़ान इसलिए है कि रहमत रखने वाले की कारीगरी है और रहमत का मुक़्तज़ा यही था कि हुस्नो-ख़ूबी हो, इत्क़ानो-कमाल हो, नुक़्सो-नाहमवारी[1] न हो!

- रहमत से मआ़द पर इस्तिदलाल

ख़ुदा की हस्ती और उसकी तौहीद व सिफ़ात की तरह आख़िरत की ज़िन्दगी पर भी वो रहमत से इस्तिदलाल करता है। अगर रहमत का मुक़्तज़ा ये हुआ कि दुनिया में इस ख़ूबी व कमाल के साथ ज़िन्दगी का ज़ुहूर हो तो क्यों कर ये बात बावर की जा

1-दोष-असंतुलन।

सकती है कि दुनिया की चन्द-रोज़ा ज़िन्दगी के बाद उसका फ़ैज़ान ख़त्म हो जाए और ख़ज़ान-ए-रहमत में इन्सान की ज़िन्दगी और बनाव के लिए कुछ बाक़ी न रहे ?

اَوَلَمۡ يَرَوۡا اَنَّ اللّٰهَ الَّذِىۡ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضَ قَادِرٌ عَلٰٓى اَنۡ يَّخۡلُقَ مِثۡلَهُمۡ وَجَعَلَ لَهُمۡ اَجَلًا لَّا رَيۡبَ فِيۡهِ ؕ فَاَبَى الظّٰلِمُوۡنَ اِلَّا كُفُوۡرًا ۝

क्या इन लोगों ने कभी इस बात पर ग़ौर नहीं किया कि अल्लाह जिसने आसमानो-ज़मीन पैदा किये हैं, यक़ीनन इस बात से आजिज़ नहीं हो सकता कि इन जैसे (आदमी दोबारा) पैदा कर दे, और ये कि उनके लिए उसने एक मुक़र्ररा वक़्त ठहरा दिया है जिसमें किसी तरह का शको-शुब्हा नहीं? (अफ़सोस इनकी शक़ावत पर!) इस पर भी इन ज़ालिमों ने अपने लिए कोई राह पसन्द न की मगर हक़ीक़त से इनकार करने की!

قُلۡ لَّوۡ اَنۡتُمۡ تَمۡلِكُوۡنَ خَزَآئِنَ رَحۡمَةِ رَبِّىۡۤ اِذًا لَّاَمۡسَكۡتُمۡ خَشۡيَةَ الۡاِنۡفَاقِ ؕ

(١٧:٩٩-١٠٠)

(ऐ पैग़म्बर! इनसे) कह दो: अगर मेरे परवरदिगार की रहमत के ख़ज़ाने तुम्हारे क़ब्ज़े में होते तो उस हालत में यक़ीनन तुम ख़र्च हो जाने के डर से हाथ रोके रखते (लेकिन ये अल्लाह है जिसके ख़ज़ाइने-

न तो कभी ख़त्म हो सकते हैं न उसकी बख़्शाइशे-रहमत की कोई इन्तिहा है)।
(17: 99 - 100)

रहमत से वह्य व तन्ज़ील की ज़रूरत पर इस्तिदलाल

इसी तरह वो रहमत से वह्य व तन्ज़ील की ज़रूरत पर भी इस्तिदलाल करता है। वो कहता है: जो रहमत कारख़ान-ए-हस्ती के हर गोशे में इफ़ाद-ओ-फ़ैज़ान का सर-चश्मा है, क्यों कर मुमकिन था कि इन्सान की मअ़नवी हिदायत के लिए उसके पास कोई फ़ैज़ान न होता और वो इन्सान को नुक़्सानो-हलाकत के लिए छोड़ देती ? अगर तुम दस गोशों में फ़ैज़ाने रहमत महसूस कर रहे हो तो कोई वजह नहीं कि ग्यारहवें गोशे में उससे इनकार कर दो। यही वजह है कि उसने जा-बजा नुज़ूले वह्य, तरसीले कुतुब और बिअ़सते अंबिया को रहमत से ताबीर किया है :

وَلَئِنْ شِئْنَا لَنَذْهَبَنَّ بِالَّذِيٓ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ ثُمَّ لَا تَجِدُ لَكَ بِهٖ عَلَيْنَا وَكِيْلًا ۝ اِلَّا رَحْمَةً مِّنْ رَّبِّكَ ط اِنَّ فَضْلَهٗ كَانَ عَلَيْكَ كَبِيْرًا ۝

(٧٨-٨٦:١٧)

और (ऐ पैग़म्बर !) अगर हम चाहें तो जो कुछ तुमपर वह्य के ज़रिये भेजा गया है उसे उठा ले जाएँ (यानी सिलसल-ए-तन्ज़ीलो-वह्य बाक़ी न रहे) और तुम्हें कोई भी ऐसा कार-साज़ न मिले जो हम पर ज़ोर डाल सके, लेकिन जो सिलसिलए

वह्य जारी है तो ये इसके सिवा कुछ नहीं कि तुम्हारे पर्वरदिगार की रहमत है और यक़ीन करो! तुम पर उसका बड़ा ही फ़ज़्ल है।

(17: 86-87)

تَنْزِيْلَ الْعَزِيْزِ الرَّحِيْمِ ۝ لِتُنْذِرَ قَوْمًا مَّآ أُنْذِرَ اٰبَآؤُهُمْ فَهُمْ غٰفِلُوْنَ ۝

(٣٦: ٥-٦)

(ये क़ुरआन) अ़ज़ीज़ो-रहीम की तरफ़ से नाज़िल किया गया है, ताकि उन लोगों को जिनके आबा-ओ-अज्दाद (किसी पैग़म्बर की ज़बानी) मुतनब्बह[1] नहीं किये गए हैं और इसलिए ग़फ़्लत में पड़े हुए हैं, तुम मुतनब्बह करो।

(36: 5-6)

तौरातो-इन्ज़ील और क़ुरआन की निस्बत जा-बजा तसरीह की कि इनका नुज़ूल "रहमत" है :

وَمِنْ قَبْلِهٖ كِتٰبُ مُوْسٰٓى اِمَامًا وَّرَحْمَةً ؕ

(١١: ١٧)

और इस से पहले (यानी क़ुरआन से पहले) मूसा की किताब (उम्मत के लिए) पेश्वा[2] और रहमत !

(11: 17)

1-आगाह, सचेत। 2-मार्ग-दर्शक।

يَـاَيُّهَا النَّاسُ قَـدْ جَـآءَ تْـكُمْ مَوْعِـظَـةٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَشِفَآءٌ لِّـمَا فِـى الصُّدُوْرِ ۝ وَهُـدًى وَّرَحْمَةٌ لِّلْمُؤْمِنِيْنَ ۝ قُلْ بِفَضْلِ اللّٰهِ وَبِـرَحْـمَـتِـهٖ فَـبِذٰلِكَ فَلْـيَـفْرَحُوْا ط هُـوَ خَـيْـرٌ مِّمَّا يَجْمَعُوْنَ ۝

(١٠: ٥٧-٥٨)

ए अफ़रादे नस्ले इन्सानी ! यक़ीनन ये तुम्हारे परवरदिगार की तरफ़ से मौइज़त है जो तुम्हारे लिए आ गई है और उन तमाम बीमारियों के लिए जो इन्सान के दिल की बीमारियाँ हैं, नुस्ख़-ए-शिफ़ा है और रहनुमाई और रहमत है ईमान रखने वालों के लिए। (ए पैग़म्बर ! इन लोगों से) कह दो (कि ये जो कुछ है) अल्लाह के फ़ज़्ल और रहमत से है, पस चाहिए कि (अपनी फ़ैज़यबी पर) ख़ुश हो। (ये अपनी बरकतों में) उन तमाम चीज़ों से बेहतर है जिन्हें तुम (ज़िन्दगी की कामरानियों के लिए) फ़राहम करते हो।

(10: 57-58)

هٰـذَا بَـصَآئِرُ لِلنَّاسِ وَهُـدًى وَّرَحْمَةٌ لِّقَـوْمٍ يُّـوْقِـنُـوْنَ ۝

(٤٥: ٢٠)

ये (क़ुरआन) लोगों के लिए वाज़ेह दलीलों की रौशनी है और हिदायतो-रहमत है यक़ीन रखने वालों के लिए।

(45: 20)

क्या इन लोगों के लिए ये निशानी काफ़ी नहीं कि हम ने तुम पर किताब नाज़िल की है जो इन्हें (बराबर) सुनाई जा रही है? जो लोग यक़ीन रखने वाले हैं बिला-शुब्हा उनके लिए इस निशानी में सर-तासर रहमत और फ़हमो-बसीरत है। (29: 51)	اَوَلَمْ يَكْفِهِمْ اَنَّآ اَنْزَلْنَا عَلَيْكَ الْكِتٰبَ يُتْلٰى عَلَيْهِمْ ؕ اِنَّ فِىْ ذٰلِكَ لَرَحْمَةً وَّذِكْرٰى لِقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ ۝ (٥١:٢٩)

चुनांचे इसी बिना पर उसने दाइये इस्लाम के ज़ुहूर को भी फ़ैज़ाने रहमत से ताबीर किया है :

(ऐ पैग़म्बर!) हमने तुम्हें नहीं भेजा है मगर इसलिए कि तमाम जहान के लिए हमारी रहमत का ज़ुहूर है! (21: 107)	وَمَآ اَرْسَلْنٰكَ اِلَّا رَحْمَةً لِّلْعٰلَمِيْنَ ۝ (١٠٧:٢١)

इन्सानी आमाल के मअ़नवी क़वानीन पर रहमत से इस्तिदलाल और "बक़ा-ए-अन्फ़ा"

इसी तरह वो "रहमत" के माद्दी मज़ाहिर[1] से इन्सानी आमाल के मअ़नवी क़वानीन[2] पर भी इस्तिदलाल करता है। वो कहता है: जिस "रहमत" का मुक़्तज़ा ये हुआ कि दुनिया में "बक़ा-ए-अन्फ़ा" का क़ानून नाफ़िज़ है, यानी वही चीज़ बाक़ी रहती है जो नाफ़े होती है, क्यों कर मुमकिन था कि वो इन्सानी आमाल

1-भौतिक प्रकटन। 2-आत्मिक नैतिक नियमों।

की तरफ़ से ग़ाफ़िल हो जाती और नाफ़े और ग़ैर नाफ़े आमाल में न इम्तियाज़ करती? पस माद्दियात की तरह मअ़नवियात[1] में भी ये क़ानून नाफ़िज़ है और ठीक-ठीक उसी तरह अपने अहकामो-नताइज रखता है जिस तरह माद्दियात में तुम देख रहे हो।

हक़ और बातिल

इस सिलसिले में वो दो लफ़्ज़ इस्तेमाल करता है "हक़" और "बातिल"। सूर: रअ़द में जहाँ क़ानूने "बक़ा-ए-अन्फ़ा" का ज़िक्र किया है, वहाँ ये भी कह दिया है कि इस बयान से मक़सूद "हक़" और "बातिल" की हक़ीक़त वाज़ेह करनी है :

كَذٰلِكَ يَضْرِبُ اللّٰهُ الْحَقَّ وَالْبَاطِلَ ۚ (۱۳:۱۷)

इसी तरह अल्लाह "हक़" और "बातिल" की एक मिसाल बयान करता है। (13: 17)

साथ ही मज़ीद ये तसरीह कर दी :

فَاَمَّا الزَّبَدُ فَيَذْهَبُ جُفَآءً ۚ وَاَمَّا مَا يَنْفَعُ النَّاسَ فَيَمْكُثُ فِى الْاَرْضِ ؕ كَذٰلِكَ يَضْرِبُ اللّٰهُ الْاَمْثَالَ ؕ

पस (देखो!) मैल-कुचैल से जो झाग उठता है वो रायगाँ जाता है, क्योंकि उसमें इन्सान के लिए नफ़ा न था, लेकिन जिस चीज़ में इन्सान के लिए नफ़ा है वो ज़मीन में बाक़ी रह जाती है। इसी तरह अल्लाह (अपने क़वानीन अ़मल की) मिसालें देता है।

1-नैतिक-आत्मिक मामलों।

لِلَّذِیْنَ اسْتَجَابُوْا لِرَبِّهِمُ الْحُسْنٰی ؕ وَالَّذِیْنَ لَمْ یَسْتَجِیْبُوْا لَهٗ لَوْ اَنَّ لَهُمْ مَّا فِی الْاَرْضِ جَمِیْعًا وَّمِثْلَهٗ مَعَهٗ لَافْتَدَوْا بِهٖ ؕ اُولٰٓئِكَ لَهُمْ سُوْٓءُ الْحِسَابِ ۙ

(۱۳:۱۷-۱۸)

जिन लोगों ने अपने परवरदिगार का हुक्म क़बूल किया, उनके लिए ख़ूबी और बेहतरी है और जिन लोगों ने क़बूल न किया उनके लिए (अपने आमाले बद का) सख़्ती के साथ हिसाब देना है। और अगर उन लोगों के क़ब्ज़े में वो सब कुछ हो जो ज़मीन में है और इतना उस पर और बढ़ा दें और बदले में देकर (नताइजे अ़मल से) बचना चाहें, (जब भी न बच सकेंगे)।
(13: 17-18)

अ़रबी में ''हक़्क़क़'' का ख़ास्सा सबूत और क़ियाम है, यानी जो बात साबित हो, अटल हो, अमिट हो, उसे हक़ कहेंगे। ''बातिल'' ठीक-ठीक इसका नक़ीज़[1] है। ऐसी चीज़ जिसमें सबातो-क़ियाम न हो, टल जाने वाली, मिट जाने वाली, बाक़ी न रहने वाली। चुनांचे ख़ुद क़ुरआन में जा-बजा है :

لِيُحِقَّ الْحَقَّ وَيُبْطِلَ الْبَاطِلَ लि-युहिक़्क़ल्-हक़्क़ व युब्तिलल्-बातिल (8: 8)

क़ानून ''क़ज़ा बिल-हक़''

वो कहता है: जिस तरह तुम माद्दियात में देखते हो कि फ़ित्रत छांटती रहती है, जो चीज़ नाफ़े होती है बाक़ी रखती है, जो

1-विपरीत, विलोम।

नाफ़े नहीं होती उसे महव कर देती है, ठीक-ठीक ऐसा ही अ़मल मअ़नवियात में भी जारी है। जो अ़मल हक़ होगा, क़ायम और साबित रहेगा, जो अ़मल बातिल होगा मिट जाएगा। और जब कभी हक़ और बातिल मुतक़ाबिल होंगे तो बक़ा हक़ के लिए होगी न कि बातिल के लिए। वो इसे ''क़ज़ा बिल-हक़'' से ताबीर करता है, यानी फ़ित्रत का फ़ैसल-ए-हक़ जो बातिल के लिए नहीं हो सकता :

فَاِذَا جَآءَ اَمْرُ اللّٰهِ قُضِیَ بِالْحَقِّ وَخَسِرَ هُنَالِكَ الْمُبْطِلُوْنَ ٥

(٧٨:٤٠)

फिर जब वो वक़्त आ गया कि हुक्मे इलाही सादिर हो तो (.खुदा का) फ़ैसल-ए-हक़ नाफ़िज़ हो गया और उस वक़्त उन लोगों के लिए जो बरसरे बातिल[1] थे तबाही हुई !

(40: 78)

उसने इस हक़ीक़त की ताबीर के लिए ''हक़'' और ''बातिल'' का लफ़्ज़ इख़्तियार करके मुजर्रद ताबीर ही से हक़ीक़त की नौइयत वाज़ेह कर दी, क्योंकि हक़ उसी चीज़ को कहते हैं जो साबित व क़ायम हो और बातिल के मअ़ना ही ये हैं कि मिट जाना, क़ायम व बाक़ी न रहना। पस जब वो किसी बात के लिए कहता है कि ये ''हक़''—है तो ये सिर्फ़ दावा ही नहीं होता बल्कि दावे के साथ उसके जांचने का एक मे'यार भी पेश कर देता है। ये बात हक़ है, यानी न टलने वाली, न मिटने वाली बात है। ये बात बातिल है, यानी न टिक सकने वाली, मिट जाने वाली बात है। पस जो बात अटल होगी उसका अटल होना किसी निगाह से पोशीदा नहीं रह सकता।

1-असत्य पर आधारित।

जो बात मिट जाने वाली है उसका मिटना हर आँख देख लेगी।

अल्लाह की सिफ़त भी "अल्-हक़" है

चुनांचे वो अल्लाह की निस्बत भी "अल्-हक़" की सिफ़त इस्तेमाल करता है, क्योंकि उसकी हस्ती से बढ़कर और कौन सी हक़ीक़त है जो साबित और अटल हो सकती है ?

पस ये है अल्लाह तुम्हारा परवरदिगार "अल्-हक़" (10: 32)

فَذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمُ الْحَقُّ ۚ (۱۰:۳۲)

पस क्या ही बुलन्द दर्जा है अल्लाह का अल्-मलिक (यानी फ़रमांरवा) अल्-हक़ (यानी साबित)। (20: 114)

فَتَعٰلَى اللّٰهُ الْمَلِكُ الْحَقُّ ۚ (۲۰:۱۱٤)

वह्यो-तन्ज़ील भी "अल्-हक़" है

वह्यो-तन्ज़ील को भी वो "अल्-हक़" कहता है, क्योंकि वो दुनिया की एक क़ायम व साबित हक़ीक़त है। जिन क़ौमों ने उसे मिटाना चाहा था वो ख़ुद मिट गईं, लेकिन वह्यो-तन्ज़ील की हक़ीक़त हमेशा क़ायम रही और आज तक क़ायम है :

(ऐ पैग़म्बर ! लोगों से) कह दो कि ऐ अफ़रादे नस्ले इन्सानी ! बिला-शुब्हा तुम्हारे परवरदिगार की तरफ़ से वो चीज़ तुम्हारे लिए आ गई जो "हक़" है। पस अब जिस किसी ने सीधी

قُلْ يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَآءَكُمُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكُمْ ۚ فَمَنِ اهْتَدٰى فَاِنَّمَا يَهْتَدِىْ لِنَفْسِهٖ ۚ وَمَنْ ضَلَّ فَاِنَّمَا يَضِلُّ عَلَيْهَا ۚ

وَمَآ اَنَا عَلَيْكُمْ بِوَكِيْلٍ ۝ وَاتَّبِعْ مَا يُوْحٰى اِلَيْكَ وَاصْبِرْ حَتّٰى يَحْكُمَ اللّٰهُ ۚ وَهُوَ خَيْرُ الْحٰكِمِيْنَ ۝

(١٠: ١٠٨-١٠٩)

राह इख़्तियार की तो ये रास्तरवी उसी की भलाई के लिए है, और जिसने गुमराही इख़्तियार की तो उसकी गुमराही का नुक़्सान भी उसी के लिए है। और (मेरा काम तो सिर्फ़ राहे हक़ दिखा देना है) मैं तुम पर निगहबान मुक़र्रर नहीं किया गया हूँ (कि तुमको पकड़के ज़बर्दस्ती राह पर लगा दूँ)। और (ऐ पैग़म्बर !) जो कुछ तुम पर वह्य की गई है उसके मुताबिक़ चलो और सब्र करो यहाँ तक कि अल्लाह फ़ैसला कर दे और वो फ़ैसला करने वालों में बेहतर फ़ैसला करने वाला है। (10: 108-109)

وَبِالْحَقِّ اَنْزَلْنٰهُ وَبِالْحَقِّ نَزَلَ (١٧: ١٠٥)

और (ऐ पैग़म्बर !) हमारी तरफ़ से इसका (यानी क़ुरआन का) नाज़िल होना हक़ है और वो हक़ ही के साथ नाज़िल भी हुआ है। (17: 105)

क़ुरआन की इस्तिलाह में 'अल्-हक़'

इसी तरह जब वो अ़लामते तारीफ़ के साथ किसी बात को

'अल्-हक़' कहता है तो उससे भी मक़सूद यही हक़ीक़त होती है और इसी लिए वो अक्सर हालतों में सिर्फ़ 'अल्-हक़' कह कर ख़ामोश हो जाता है, इससे ज़्यादा कुछ कहना ज़रूरी नहीं समझता, क्योंकि अगर फ़ित्रते काइनात का ये क़ानून है कि वो हक़ व बातिल के निज़ा में 'हक़' ही को बाक़ी रखती है तो किसी बात के अम्रे हक़ होने के लिए सिर्फ़ इतना ही कह देना काफ़ी है कि वो 'हक़' है यानी बाक़ी व क़ायम रहने वाली हक़ीक़त है, उसका बक़ा व क़ियाम ख़ुद ही अपनी हक़ीक़त का एलान कर देगा (37)।

निज़ा-ए-हक़ो-बातिल

ये जो क़ुरआन जा-बजा हक़ और बातिल के निज़ा का ज़िक्र करता है और फिर बतौर अस्ल और क़ाइदे के इस पर ज़ोर देता है कि कामयाबी हक़ के लिए है और हज़ीमतो-ख़ुसरान[1] बातिल के लिए है तो ये तमाम मक़ामात भी इसी क़ानून 'क़ज़ा बिल्-हक़' की तसरीहात हैं और इसी हक़ीक़त की रौशनी में उनका मुतालआ करना चाहिए :

بَلْ نَقْذِفُ بِالْحَقِّ عَلَى الْبَاطِلِ فَيَدْمَغُهُ فَإِذَا هُوَ زَاهِقٌ ط

(١٨:٢١)

और हमारा क़ानून ये है कि हक़, बातिल से टकराता है और उसे पाश-पाश कर देता है और अचानक ऐसा होता है कि वो नाबूद हो गया! (21: 18)

وَقُلْ جَآءَ الْحَقُّ وَزَهَقَ

और कह दो हक़ नमूदार हो गया और बातिल नाबूद हुआ

1-असफ़लता, नुक़्सान।

और यक़ीनन बातिल नाबूद[1] ही होने वाला था। (17: 81)

الْبَاطِلُ ط اِنَّ الْبَاطِلَ كَانَ زَهُوْقًا ٥ (١٧: ٨١)

अल्लाह की शहादत

और फिर हक़ व सदाक़त के लिए यही अल्लाह की वो शहादत है जो अपने मुक़र्ररा वक़्त पर ज़ाहिर होती है और बता देती है कि हक़ किस के साथ था और बातिल का कौन परिस्तार था। यानी "क़ज़ा बिल्-हक़" का क़ानून हक़ को साबित व क़ायम रख कर और उसके हरीफ़ को महव व मुतलाशी करके हक़ीक़ते हाल का एलान कर देता है :

(इन लोगों से) कह दो: अब किसी और रद्दो-कद की ज़रूरत नहीं, मेरे और तुम्हारे दरमियान अल्लाह की गवाही बस करती है। आसमानो-ज़मीन में जो कुछ है सब उसके इल्म में है। पस जो जोग हक़ की जगह बातिल पर ईमान लाए हैं और अल्लाह की सदाक़त के मुन्किर हैं तो यक़ीनन वही हैं जो तबाह होने वाले हैं! (29: 52)

قُلْ كَفٰى بِاللّٰهِ بَيْنِىْ وَبَيْنَكُمْ شَهِيْدًا ج يَعْلَمُ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ط وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِالْبَاطِلِ وَكَفَرُوْا بِاللّٰهِ اُولٰٓئِكَ هُمُ الْخٰسِرُوْنَ ٥ (٢٩: ٥٢)

एक दूसरे मौक़े पर फ़ैसल-ए-अम्र[2] के लिए इसे सबसे बड़ी शहादत क़रार दिया है :

1-नष्ट-भ्रष्ट। 2-मामलों का निर्णय।

قُلْ اَیُّ شَیْءٍ اَكْبَرُ شَهَادَةً ط قُلِ اللّٰهُ شَهِيْدٌ بَيْنِىْ وَبَيْنَكُمْ قف

(١٩:٦)

पूछो! कौन-सी बात सबसे बड़ी गवाही है? (ए पैग़म्बर!) कह दो: अल्लाह की गवाही। वही मेरे और तुम्हारे दरमियान (फ़ैसल-ए-अम्र के लिए) गवाही देने वाला है! (6: 19)

"क़ज़ा बिल्-हक़" माद्दियात और मअ़नवियात का आलमगीर क़ानून है

वो कहता है: इस क़ानून से तुम क्यों कर इनकार कर सकते हो जबकि ज़मीनो-आसमान का तमाम कारख़ाना इसी की कार-फ़रमाइयों पर क़ायम है। अगर फ़ित्रते काइनात नुक़्सान और बुराई छांटती न रहती और बक़ा व क़ियाम सिर्फ़ अच्छाई और ख़ूबी ही के लिए न होता तो ज़ाहिर है तमाम कारख़ान-ए-हस्ती दरहम-बरहम हो जाता। जब तुम जिस्मानियात में इस क़ानूने फ़ित्रत का मुशाहदा कर रहे हो तो मअ़नवियात में तुम्हें क्यों इनकार हो?

وَلَوِاتَّبَعَ الْحَقُّ اَهْوَآءَ هُمْ لَفَسَدَتِ السَّمٰوٰتُ وَالْاَرْضُ وَمَنْ فِيْهِنَّ ط

(٧١:٢٣)

और अगर हक़ उनकी ख़्वाहिशों की पैरवी करे तो यक़ीन करो! ये आसमानो-ज़मीन और जो कोई इसमें है, सब दरहम-बरहम होकर रह जाए। (23: 71)

"इन्तिज़ार" और "तरब्बुस"

क़ुरआन में जहाँ कहीं इन्तिज़ार और तरब्बुस पर ज़ोर दिया है और कहा है: जल्दी न करो, इन्तिज़ार करो, अन्क़रीब हक़ो-बातिल[1] का फ़ैसला हो जाएगा, मसलन :

قُلْ فَانْتَظِرُوْا اِنِّیْ مَعَکُمْ مِنَ الْمُنْتَظِرِیْنَ (١٠:١٠٢) तो इससे भी मक़सूद यही हक़ीक़त है। (10: 102)

"क़ज़ा बिल्-हक़" और तदरीजो-इम्हाल

लेकिन क्या 'क़ज़ा बिल्-हक़' का नतीजा ये होता है कि हर बातिल अ़मल फ़ौरन नाबूद हो जाए और हर अ़मले हक़ फ़ौरन फ़त्हमन्द हो जाए ! क़ुरआन कहता है कि नहीं, ऐसा नहीं हो सकता और 'रहमत' का मुक़्तज़ा यही है कि ऐसा न हो। जिस 'रहमत' का मुक़्तज़ा ये हुआ कि माद्दियात में 'तदरीजो-इम्हाल' का क़ानून नाफ़िज़ है, उसी रहमत का मुक़्तज़ा ये हुआ कि मअ़्नवियात में भी तदरीजो-इम्हाल का क़ानून काम कर रहा है। और आ़लमे माद्दियात हो या मअ़्नवियात, काइनाते हस्ती के हर गोशे में क़ानूने फ़ित्रत एक ही है। अगर ऐसा न होता तो मुमकिन न था कि दुनिया में कोई इन्सानी जमाअ़त अपनी बद अ़मलियों के साथ मोहलते हयात पा सकती :–

और जिस तरह इन्सान फ़ायदे के लिए जल्दबाज़ होता है, अगर इसी तरह अल्लाह इन्सान को सज़ा देने में जल्दबाज़ होता	وَلَوْ یُعَجِّلُ اللّٰہُ لِلنَّاسِ الشَّرَّ اسْتِعْجَالَھُمْ بِالْخَیْرِ لَقُضِیَ اِلَیْھِمْ اَجَلُھُمْ ط (١٠:١١)

1-सत्य-असत्य।

तो (इन्सान की लग़ज़िशों, ख़ाताओं का ये हाल है कि) कभी का फ़ैसला हो चुकता और उनका मुक़र्ररा वक़्त फ़ौरन नमूदार हो जाता। (10: 11)

'ताजील'

वो कहता है: जिस तरह माद्दियात में हर हालत बतदरीज नशो-नुमा पाती है और हर नतीजे के ज़ुहूर के लिए एक ख़ास मिक़्दार, एक ख़ास मुद्दत और एक ख़ास वक़्त मुक़र्रर कर दिया गया है, ठीक इसी तरह आमाल के नताइज के लिए भी ख़ास मिक़्दार व औक़ात के अहकाम मुक़र्रर हैं। और ज़रूरी है कि हर नतीजा एक ख़ास मुद्दत के बाद और एक ख़ास मिक़्दार की नशो-नुमा के बाद ज़ुहूर में आए।

मसलन फ़ित्रत का ये क़ानून है कि अगर पानी आग पर रखा जाएगा तो वो गरम होकर खौलने लगेगा। लेकिन पानी के गरम होने और बिलआख़िर खौलने के लिए हरारत की एक ख़ास मिक़्दार ज़रूरी है और उसके ज़ुहूरो-तक्मील के लिए ज़रूरी है कि एक मुक़र्ररा वक़्त तक इन्तिज़ार किया जाए। ऐसा नहीं हो सकता कि तुम पानी चूल्हे पर रखो और फ़ौरन खौलने लगे, वो यक़ीनन खौलने लगेगा लेकिन उस वक़्त जब हरारत की मिक़्दार बतदरीज तक्मील तक पहुँच जाएगी। ठीक इसी तरह यहाँ इन्सानी आमाल के नताइज भी अपने मुक़र्ररा औक़ात ही में ज़ुहूर-पज़ीर होते हैं। और ज़रूरी है कि जब तक आमाल के असरात एक ख़ास मुक़र्ररा मिक़्दार तक न पहुँच जाएँ, नताइज के ज़ुहूर का इंतिज़ार किया जाए (38)।

इस सूरतेहाल से तदरीजो-इम्हाल की हालत पैदा हो गई और अ़मले हक़ और अ़मले बातिल दोनों के नताइज के जुहूर के लिए "तालीज" यानी एक मुअ़य्यन वक़्त का ठहराव ज़रूरी हो गया, दोनों के नताइज फ़ौरन ज़ाहिर नहीं हो जाएंगे। अपनी मुक़र्ररा "अजल" यानी मुक़र्ररा वक़्त ही पर ज़ाहिर होंगे, अलबत्ता हक़ के लिए ताजील इसलिए होती है ताकि उसकी फ़त्हमन्द क़ुव्वत नशो-नुमा पाए और बातिल के लिए इसलिए होती है ताकि उसकी फ़ना-पज़ीर कमज़ोरी तक्मील तक पहुँच जाए। इस ताजील के लिए कोई एक ही मुक़र्ररा मुद्दत नहीं है। हर हालत का एक ख़ास्सा है और हर गर्दे-पेश अपना एक ख़ास मुक़्तज़ा रखता है। हो सकता है कि एक ख़ास हालत के लिए मुक़र्ररा मुद्दत की मिक़्दार बहुत थोड़ी हो और हो सकता है कि बहुत ज़्यादा हो :

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَقُلْ اٰذَنْتُكُمْ عَلٰى سَوَآءٍ ط وَاِنْ اَدْرِيْٓ اَقَرِيْبٌ اَمْ بَعِيْدٌ مَّا تُوْعَدُوْنَ ○

फिर अगर ये लोग रू-गर्दानी करें तो इनसे कह दो: मैंने तुम सबको यक्साँ तौर पर (हक़ीक़ते हाल की) ख़बर दे दी और मैं नहीं जानता आमाले बद के जिस नतीजे का तुम से वादा किया गया है, उसका वक़्त क़रीब है या अभी देर है।

اِنَّهٗ يَعْلَمُ الْجَهْرَ مِنَ الْقَوْلِ وَيَعْلَمُ مَا تَكْتُمُوْنَ ○ وَاِنْ اَدْرِيْ لَعَلَّهٗ فِتْنَةٌ لَّكُمْ

जो कुछ अ़लानिया ज़बान से कहा जाता है और जो कुछ तुम पोशीदा रखते हो, ख़ुदा को सब कुछ मालूम है। और मुझे क्या

وَمَتَاعٌ إِلَىٰ حِينٍ ٥
(٢١: ١٠٩-١١١)

मालूम? हो सकता है ये ताख़ीर इस लिए हो ताकि तुम्हारी आज़माइश की जाए या इसलिए कि एक ख़ास वक़्त तक तुम्हें फ़ायदा उठाने का (मज़ीद) मौक़ा दिया जाए !
(21: 109-111)

क़वानीने फ़ित्रत का मे'यारे औक़ात

क़ुरआन कहता हैः तुम अपनी औक़ात शुमारी के पैमाने से क़वानीने फ़ित्रत की रफ़्तारे अ़मल का अन्दाज़ा न लगाओ। फ़ित्रत का दायर-ए-अ़मल तो इतना वसीअ़ है कि तुम्हारे मे'यारे हिसाब की बड़ी से बड़ी मुद्दत उसके लिए एक दिन की मुद्दत से ज़्यादा नहीं :

وَيَسْتَعْجِلُونَكَ بِالْعَذَابِ وَلَنْ يُّخْلِفَ اللّٰهُ وَعْدَهٗ ط

ये लोग अ़ज़ाब के लिए जल्द-बाज़ी कर रहे हैं (यानी इंकारो-शरारत की राह से कहते हैं: अगर सच-मुच को अ़ज़ाब आने वाला है तो वो कहाँ है?) सो यक़ीन करो! ख़ुदा अपने वादे में कभी खि़लाफ़ करने वाला नहीं।

وَاِنَّ يَوْمًا عِنْدَ رَبِّكَ كَاَلْفِ سَنَةٍ مِّمَّا تَعُدُّوْنَ ٥ وَكَاَيِّنْ مِّنْ قَرْيَةٍ اَمْلَيْتُ لَهَا وَهِيَ ظَالِمَةٌ

लेकिन बात ये है कि तुम्हारे परवर्दिगार का एक दिन ऐसा होता है जैसा तुम्हारे हिसाब का हज़ार बरस। चुनांचे कितनी ही बस्तियाँ हैं जिन्हें (अ़र्सए-दराज़

ثُمَّ اَخَذْتُهَا ۚ وَاِلَیَّ الْمَصِیْرُ ۝

(٢٢: ٤٧-٤٨)

तक) ढील दी गई हालाँकि वो ज़ालिम थीं, फिर (जब जुहूरे नताइज का वक़्त आ गया तो) हमारा मुआख़िज़ा[1] नमूदार हो गया और (ज़ाहिर है कि लौट कर) हमारी तरफ़ आना है।
(22: 47-48)

इस्तिअ़जाल बिल्-अ़ज़ाब

इन आयात में फ़िक्रे इन्सानी की जिस गुमराही को 'इस्तिअ़जाल बिल्-अ़ज़ाब' से ताबीर किया गया, वो सिर्फ़ उन्हीं मुन्किरीने हक़ की गुमराही न थी जो ज़ुहूरे इस्लाम के वक़्त उसकी मुख़ालफ़त पर कमरबस्ता हो गए थे, बल्कि हर ज़माने में इन्सान की एक आलमगीर कज-अन्देशी रही है, वो बसा-औक़ात फ़ित्रत की इस मोहलत-बख़्शी से फ़ायदा उठाने की जगह शर्रो-फ़साद में और ज़्यादा निडर और जरी हो जाता है और कहता है: अगर फ़िल्हक़ीक़त हक़्क़ो-बातिल के लिए उनके नताइज व अ़वाक़िब हैं तो वो नताइज कहाँ हैं और क्यों फ़ौरन ज़ाहिर नहीं हो जाते? क़ुरआन जा-बजा मुन्किरीने हक़ का ख़याल नक़ल करता है और कहता है: अगर काइनाते हस्ती में इस हक़ीक़ते आला का ज़ुहूर न होता जिसे "रहमत" कहते हैं तो यक़ीनन नताइज यका-याक और बयक दफ़ा ज़ाहिर हो जाते और इन्सान अपनी बद अ़मलियों के साथ कभी ज़िन्दगी की सांस न ले सकता। लेकिन यहाँ सारे क़ानून और हुक्मों से भी बालातर "रहमत" का क़ानून है और उसका मुक़्तज़ा यही है

1-धर-पकड़, गिरफ़्त।

कि हक़ की तरह बातिल को भी ज़िन्दगी व मईशत की मोहलतें दे और तौबा व रुजू और अफ़्वो-दर्गुज़र का दरवाज़ा हर हाल में बाज़ रखे। फ़ित्रते काइनात में अगर ये "रहमत" न होती तो यक़ीनन वो जज़ाए अमल में जल्दबाज़ होती। लेकिन उसमें रहमत है, इसलिए न तो उसकी मोहलत बख़्शियों की कोई हद है, न उसके अफ़्वो-दर्गुज़र के लिए कोई किनारा !

وَيَقُوْلُوْنَ مَتٰى هٰذَا الْوَعْدُ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ۞ قُلْ عَسٰى اَنْ يَّكُوْنَ رَدِفَ لَكُمْ بَعْضُ الَّذِىْ تَسْتَعْجِلُوْنَ ۞

और (ऐ पैग़म्बर!) ये (हक़ीक़त फ़रामोश) कहते हैं: अगर तुम (नताइजे ज़ुल्मो-तुग़यान से डराने में) सच्चे हो तो वो बात कब होने वाली है (और क्यों नहीं हो चुकती?) इनसे कह दो: (घबराओ नहीं!) जिस बात के लिए तुम जल्दी मचा रहे हो, अजब नहीं उसका एक हिस्सा बिल्कुल क़रीब आ गया हो।

وَاِنَّ رَبَّكَ لَذُوْ فَضْلٍ عَلَى النَّاسِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَشْكُرُوْنَ ۞

(٢٧: ٧١-٧٣)

और (ऐ पैग़म्बर!) तुम्हारा परवरदिगार इन्सान के लिए बड़ा ही फ़ज़्ल रखने वाला है (कि हर हाल में इस्लाह व तलाफ़ी की मोहलत देता है) लेकिन (अफ़सोस इन्सान की ग़फ़्लत पर!) बेशतर ऐसे हैं कि उसके फ़ज़्लो-रहमत से फ़ायदा

उठाने की जगह उसकी ना शुक्री करते हैं ! (27: 71-73)

وَيَسْتَعْجِلُوْنَكَ بِالْعَذَابِ وَلَوْلَآ اَجَلٌ مُّسَمًّى لَّجَآءَهُمُ الْعَذَابُ ط وَلَيَأْتِيَنَّهُمْ بَغْتَةً وَّهُمْ لَا يَشْعُرُوْنَ ٥

(٢٩: ٥٣)

और ये लोग अज़ाब के लिए जल्दी करते हैं (यानी इनकारो-शरारत की राह से कहते हैं: अगर वाक़ई अज़ाब आने वाला है तो क्यों नहीं आ चुकता?) और वाक़िआ ये है कि अगर एक ख़ास वक़्त न ठहरा दिया गया होता तो कब का अज़ाब आ चुका होता। और (यक़ीन रखो ! जब वो आएगा तो इस तरह आएगा कि) यका-यक उनपर आ गिरेगा और उन्हें उसका वहमो-गुमान भी न होगा ! (29: 53)

وَمَا نُؤَخِّرُهٗٓ اِلَّا لِاَجَلٍ مَّعْدُوْدٍ ط

(١١: ١٠٤)

और (याद रखो!) अगर हम इस मामले में ताख़ीर करते हैं तो सिर्फ़ इसलिए कि एक हिसाब की हुई मुद्दत के लिए उसे ताख़ीर में डाल दें।
(11: 104)

अल्-आक़िबतु लिल्-मुत्तक़ीन

वो कहता है: यहाँ ज़िन्दगी व अ़मल की मोहलतें सबके लिए हैं, क्योंकि "रहमत" का मुक़्तज़ा यही था। पस इस बात से धोका नहीं खाना चाहिए और ये नहीं समझना चाहिए कि नताइजे आमाल के क़वानीन मौजूद नहीं। देखना ये चाहिए कि नतीजे की कामयाबी किस के हिस्से में आती है और आख़िर-कार कौन बरोमन्द होता है :

قُلْ يٰقَوْمِ اعْمَلُوْا عَلٰى مَكَانَتِكُمْ اِنِّىْ عَامِلٌ ۚ فَسَوْفَ تَعْلَمُوْنَ مَنْ تَكُوْنُ لَهٗ عَاقِبَةُ الدَّارِ ؕ اِنَّهٗ لَا يُفْلِحُ الظّٰلِمُوْنَ ○

(١٣٥:٦)

(ऐ पैग़म्बर! तुम इन लोगों से) कह दो कि देखो! (अब मेरे और तुम्हारे मामले का फ़ैसला अल्लाह के हाथ है) तुम जो कुछ कर रहे हो, वो अपनी जगह किए जाओ और मैं भी अपनी जगह काम में लगा हूँ। अ़न्क़रीब मालूम हो जाएगा कि कौन है जिसके लिए आख़िरकार (कामयाब) ठिकाना है। बिला-शुब्हा (ये उसका क़ानून है कि) ज़ुल्म करने वाले कभी फ़लाह नहीं पा सकते। (6: 135)

क़ुरआन की वो तमाम आयात जिन में ज़ुल्म व कुफ़्र के लिए फ़लाहो-कामयाबी की नफ़ी की गई है

इस मौक़े पर ये क़ायदा भी मालूम कर लेना चाहिए कि

क़ुरआन ने जहाँ ज़ुल्मो-फ़साद और फ़िस्क़ो-कुफ़्र वग़ैरा आमाले बद के लिए कामयाबी व फ़लाह की नफ़ी की है और नेक अमली के लिए फ़त्हमन्दी व कामरानी का इस्बात किया है, उन तमाम मक़ामात में भी इसी हक़ीक़त की तरफ़ इशारा किया है। मसलन:

اِنَّهٗ لَا يُفْلِحُ الظّٰلِمُوْنَ (6 : 21) اِنَّهٗ لَا يُفْلِحُ الْمُجْرِمُوْنَ (17 :10)

اِنَّهٗ لَا يُفْلِحُ الْكَافِرُوْنَ (117 : 23) لَا يُصْلِحُ عَمَلَ الْمُفْسِدِيْنَ (81: 10)

وَاللّٰهُ لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الْكَافِرِيْنَ (38: 9) وَاللّٰهُ لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ (86: 3) वग़ैरहा

अल्लाह ज़ुल्म करने वालों को फ़लाह नहीं देता, यानी उसका क़ानून है कि ज़ुल्म के लिए कामयाबी व फ़लाह नहीं होती। अल्लाह ज़ुल्म करने वालों पर राह नहीं खोलता, यानी उसका क़ानून यही है कि ज़ुल्म करने वालों पर कामयाबी व सआदत की राह नहीं खुलती। ये मतलब नहीं है कि अल्लाह इरशादो-हिदायत का दरवाज़ा उनपर बंद कर देता है और वो गुमराही व कोरी की ज़िन्दगी पर मजबूर कर दिए जाते हैं। अफ़सोस है कि क़ुरआन के मुफ़स्सिरों ने इन मक़ामात का तर्जुमा ग़ौरो-फ़िक्र के साथ नहीं किया इसलिए मतालिब अपनी अस्ली शक्ल में वाज़ेह न हो सके।

तमत्तो

और फिर इस्तिलाहे क़ुरआनी[1] में यही वो "तमत्तो" है, यानी ज़िन्दगी से फ़ायदा उठाने की मोहलत जिसका वो बार-बार ज़िक्र करता है और जो यक्साँ तौर पर सबको दी गई है :

1-क़ुरआनी शब्दावली।

بَلْ مَتَّعْنَا هٰٓؤُلَآءِ وَاٰبَآءَهُمْ حَتّٰى طَالَ عَلَيْهِمُ الْعُمُرُ ط

(٢١: ٤٤)

बल्कि ये बात है कि हमने इन लोगों को और इनके आबा-ओ-अज्दाद को मोहलते हयात से बहरामन्द होने के मौके दिए यहाँ तक कि (ख़ुशहाली की) उनपर बड़ी-बड़ी उमरें गुज़र गईं। (21: 44)

इसी तरह वो जा-बजा :

مَتَّعْنَاهُمْ اِلٰى حِيْنٍ (98: 10) وَمَتَاعًا اِلٰى حِيْنٍ (44: 36) فَتَمَتَّعُوْا فَسَوْفَ تَعْلَمُوْنَ (55: 16)

वग़ैरा ताबीरात से भी इसी हक़ीक़त पर ज़ोर देता है।

'क़ज़ा बिल्-हक़' और अक़्वामो-जमाअ़ात

इसी तरह वो क़ानूने "क़ज़ा बिल्-हक़" को जमाअ़तों और क़ौमों के उरूजो-ज़वाल पर भी मुन्तबिक़ करता है और कहता है: जिस तरह फ़ित्रत का क़ानून इन्तिख़ाबे-अफ़राद व अज्साम[1] में जारी है इसी तरह अक़्वामो-जमाअ़ात[2] में भी जारी है। जिस तरह फ़ित्रत नाफ़े अशिया को बाक़ी रखती, ग़ैर नाफ़े को छांट देती है, ठीक इसी तरह जमाअ़तों में भी सिर्फ़ उसी जमाअ़त के लिए बक़ा होती है जिस में दुनिया के लिए नफ़ा हो, जो जमाअ़त ग़ैर नाफ़े हो जाती है छांट दी जाती है। वो कहता है: ये उसकी "रहमत" है, क्योंकि अगर ऐसा न होता तो दुनिया में इन्सानी ज़ुल्मो-तुग़यान के लिए कोई रोक-थाम नज़र न आती :

1-व्यक्तियों व शरीरों के चुनने। 2-क़ौमों और समूहों।

और (देखो!) अगर अल्लाह (नि जमाअ़तों और क़ौमों में बाहम-दिगर तज़ाहुम पैदा न कर दिया होता और वो) बाज़ आदमियों के ज़रिए बाज़ आदमियों को राह से हटाता न रहता तो यक़ीनन ज़मीन में ख़राबी फैल जाती, लेकिन अल्लाह काइनात के लिए फ़ज़्ल व रहमत रखने वाला है। (2: 251)

وَلَوْلَا دَفْعُ اللّٰهِ النَّاسَ بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لَّفَسَدَتِ الْاَرْضُ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ ذُوْ فَضْلٍ عَلَى الْعٰلَمِيْنَ ۝ (٢: ٢٥١)

एक दूसरे मौक़े पर यही हक़ीक़त इन लफ़्ज़ों में बयान की गई है :

अगर ऐसा न होता कि अल्लाह बाज़ जमाअ़तों के ज़रिए बाज़ जमाअ़तों को हटाता रहता तो (यक़ीन करो! दुनिया इन्सान के ज़ुल्मो-फ़साद के लिए कोई रोक बाक़ी न रहती और) ये तमाम ख़ानक़ाहें, गिरजे, इबादतगाहें, मस्जिदें जिन में इस कसरत से अल्लाह का ज़िक्र किया जाता है, मुन्हदिम[1] हो कर रह जातीं। [और (याद रखो!) जो कोई

وَلَوْلَا دَفْعُ اللّٰهِ النَّاسَ بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لَّهُدِّمَتْ صَوَامِعُ وَبِيَعٌ وَّصَلَوٰتٌ وَّمَسٰجِدُ يُذْكَرُ فِيْهَا اسْمُ اللّٰهِ كَثِيْرًا ؕ وَلَيَنْصُرَنَّ اللّٰهُ مَنْ يَّنْصُرُهٗ ؕ اِنَّ اللّٰهَ لَقَوِيٌّ عَزِيْزٌ ۝ (٢٢: ٤٠)

1-ढाना।

अल्लाह (की सच्चाई) की हिमायत करेगा, ज़रूरी है कि अल्लाह भी उस की मदद फ़रमाए। कुछ शुब्हा नहीं अल्लाह क़ुव्वत रखने वाला (और सब पर) ग़ालिब है (39)]। (22: 40)

'क़ज़ा बिल्-हक़' के इज्तिमाई निफ़ाज़ में भी तदरीजो-इम्हाल और ताजील है

लेकिन वो कहता है: जिस तरह फ़ित्रते काइनात के तमाम कामों में तदरीजो-इम्हाल को क़ानून काम कर रहा है, इसी तरह क़ौमों और जमाअ़तों के मामले में भी वो जो कुछ करती है बतदरीज करती है और इस्लाहे हाल और रुजू व इनाबत का दरवाज़ा आख़िर वक़्त खुला रखती है, क्योंकि "रहमत" का मुक़्तज़ा यही है :

وَقَطَّعْنٰهُمْ فِى الْاَرْضِ اُمَمًا ۚ مِنْهُمُ الصّٰلِحُوْنَ وَمِنْهُمْ دُوْنَ ذٰلِكَ وَبَلَوْنٰهُمْ بِالْحَسَنٰتِ وَالسَّيِّاٰتِ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُوْنَ ۝

(١٦٨:٧)

और हम ने ऐसा किया कि उनके अलग-अलग गिरोह ज़मीन में फैल गए, उनमें से बाज़ तो नेक अ़मल थे, बाज़ दूसरी तरह के। फिर हम ने उन्हें अच्छाइयों और बुराइयों दोनों हालतों से आज़माया कि नाफ़र्मानी से बाज़ आ जाएँ। (7: 168)

जिस तरह अज्साम के हर तग़य्युर के लिए फ़ित्रत ने अस्बाबो-इलल की एक ख़ास मिक़्दार और मुद्दत मुक़र्रर कर दी है, इसी तरह अक़्वाम के ज़वालो-हलाकत के लिए भी मूजिबात की एक ख़ास मिक़्दार और मुद्दत मुक़र्रर है और ये उनकी "अजल" है। जब तक ये अजल नहीं आ चुकती क़ानूने इलाही यके-बाद दीगरे तनब्बोह व एतिबार की मोहलतें देता रहता है :

اَوَلَا يَرَوْنَ اَنَّهُمْ يُفْتَنُوْنَ فِىْ كُلِّ عَامٍ مَّرَّةً اَوْ مَرَّتَيْنِ ثُمَّ لَا يَتُوْبُوْنَ وَلَا هُمْ يَذَّكَّرُوْنَ ٥

(١٢٦:٩)

क्या ये लोग नहीं देखते कि इनपर कोई बरस ऐसा नहीं गुज़रता कि हम इन्हें एक मर्तबा या दो मर्तबा आज़माइशों में न डालते हों (यानी इनके आमाले बद के नताइज पेश न आते हों), फिर भी न तो तौबा करते हैं न हालात से नसीहत पकड़ते हैं। (9: 126)

लेकिन अगर तनब्बोह व एतिबार की ये तमाम मोहलतें रायगाँ गईं और इनसे फ़ायदा न उठाया गया तो फिर फ़ैसल-ए-अम्र का आख़िरी वक़्त नमूदार हो जाता है और जब वो वक़्त आ जाए तो फिर ये फ़ित्रत का आख़िरी, अटल और बेपनाह फ़ैसला है, न तो इसमें एक लम्हा के लिए ताख़ीर हो सकती है न ये अपने मुक़र्ररा वक़्त से एक लम्हा पहले आ सकता है :

وَلِكُلِّ اُمَّةٍ اَجَلٌ ۚ فَاِذَا جَآءَ اَجَلُهُمْ لَا يَسْتَاْخِرُوْنَ سَاعَةً

और (देखो!) हर उम्मत के लिए एक मुक़र्ररा वक़्त है, सो जब उनका मुक़र्ररा वक़्त आ

وَّلَا يَسْتَقْدِمُوْنَ ۝ (٧: ٣٤)	चुकता है तो उससे न तो एक घड़ी पीछे रह सकते हैं न एक घड़ी आगे बढ़ सकते हैं। (7: 34)
وَمَآ اَهْلَكْنَا مِنْ قَرْيَةٍ اِلَّا وَلَهَا كِتٰبٌ مَّعْلُوْمٌ ۝ مَا تَسْبِقُ مِنْ اُمَّةٍ اَجَلَهَا وَمَا يَسْتَاْخِرُوْنَ ۝ (١٥: ٤-٥)	और हम ने किसी बस्ती को हलाक नहीं किया मगर ये कि (हमारे ठहराए हुए क़ानून के मुताबिक़) एक मुक़र्ररा मीआद उसके लिए मौजूद थी। कोई उम्मत न तो अपने मुक़र्ररा वक़्त से आगे बढ़ सकती है न पीछे रह सकती है। (15: 4-5)

इसी तरह "बक़ाए अन्फ़ा" और "क़ज़ा बिल्-हक़" का क़ानून पिछली क़ौम को छांट देता है और उसकी जगह एक दूसरी क़ौम ला खड़ी करता है और ये सब कुछ इसलिए होता है कि "रहमत" का मुक़्तज़ा यही है :

ذٰلِكَ اَنْ لَّمْ يَكُنْ رَّبُّكَ مُهْلِكَ الْقُرٰى بِظُلْمٍ وَّاَهْلُهَا غٰفِلُوْنَ ۝ وَلِكُلٍّ دَرَجٰتٌ مِّمَّا عَمِلُوْا ؕ وَمَا رَبُّكَ بِغَافِلٍ عَمَّا يَعْمَلُوْنَ ۝	ये (तब्लीग़ो-हिदायत का तमाम सिलसिला) इसलिए है कि तुम्हारे परवरदिगार का ये शेवा नहीं कि बस्तियों को ज़ुल्मो-सितम से हलाक कर डाले और उनके बसने वाले हक़ीक़ते हाल से बेख़बर हो। (उसका क़ानून तो ये है कि) जैसा कुछ जिसका अ़मल है उसी के मुताबिक़

وَرَبُّكَ الْغَنِيُّ ذُو الرَّحْمَةِ ۭ اِنْ يَّشَاْ يُذْهِبْكُمْ وَيَسْتَخْلِفْ مِنْۢ بَعْدِكُمْ مَّا يَشَاۗءُ كَمَآ اَنْشَاَكُمْ مِّنْ ذُرِّيَّةِ قَوْمٍ اٰخَرِيْنَ ۝

(٦: ١٣١-١٣٣)

उसका दर्जा है (और उसी दर्जे के मुताबिक़ अच्छे, बुरे नताइज ज़ाहिर होते हैं), और (याद रखो!) जैसे कुछ लोगों के आमाल हैं, तुम्हारा परवरदिगार उनसे बेख़बर नहीं है। तुम्हारा रब रहमत वाला है, बेनियाज़[1] है। अगर वो चाहे तो तुम्हें राह से हटा दे और तुम्हारे बाद जिसे चाहे तुम्हारा जानशीन बना दे, उसी तरह जिस तरह एक दूसरी क़ौम की नस्ल से तुम्हें औरों का जानशीन बना दिया है। (6: 131-133)

इन्फ़िरादी ज़िन्दगी और मजाज़ाते दुन्यवी

इसी तरह वो कहता है: ये बात कि इन्फ़िरादी ज़िन्दगी के आमाल की जज़ा दुन्यवी ज़िन्दगी से तअ़ल्लुक़ नहीं रखती, आख़िरत पर उठा रखी गई है और दुनिया में नेको-बद सबके लिए यक्साँ तौर पर मोहलते हयात व फ़ैज़ाने मईशत है, इसी हक़ीक़त का नतीजा है कि यहाँ "रहमत" की कारफ़रमाई है। "रहमत" का मुक़्तज़ा यही था कि उसके फ़ैज़ानो-बख़्शिश में किसी तरह का इम्तियाज़ न हो और मोहलते हयात सबको पूरी तरह मिले। उसने इन्सान की इन्फ़िरादी ज़िन्दगी के दो हिस्से कर दिए, एक हिस्सा दुन्यावी ज़िन्दगी

1-निस्पृह।

का है और सर-तासर मोहलत है। दूसरा हिस्सा मरने के बाद का है और जज़ा का मामला इसी से तअ़ल्लुक़ रखता है :

وَرَبُّكَ الْغَفُوْرُ ذُو الرَّحْمَةِ ؕ لَوْيُؤَاخِذُهُمْ بِمَا كَسَبُوْا لَعَجَّلَ لَهُمُ الْعَذَابَ ؕ بَلْ لَّهُمْ مَّوْعِدٌ لَّنْ يَّجِدُوْا مِنْ دُوْنِهٖ مَوْئِلًا ۝

(١٨:٥٨)

और (ऐ पैग़म्बर! यक़ीन करो) तुम्हारा परवरदिगार बड़ा बख़्शने वाला, साहिबे रहमत है। अगर वो इन लोगों से इनके आमाल के मुताबिक़ मुआख़िज़ा करता तो फ़ौरन अ़ज़ाब नाज़िल हो जाता, लेकिन इनके लिए एक मीआ़द मुक़र्रर कर दी गई है और जब वो नमूदार होगी तो उससे बचने के लिए कोई पनाह की जगह उन्हें नहीं मिलेगी। (18: 58)

هُوَالَّذِىْ خَلَقَكُمْ مِّنْ طِيْنٍ ثُمَّ قَضٰى اَجَلًا ؕ وَاَجَلٌ مُّسَمًّى عِنْدَهٗ ؕ

(٦:٢)

वही है जिसने तुम्हें मिट्टी से पैदा किया, फिर तुम्हारी ज़िन्दगी के लिए एक वक़्त ठहरा दिया और इसी तरह उसके पास एक और भी ठहराई हुई मीआ़द है (यानी क़ियामत का दिन)। (6: 2)

● ❋ ●

मअ़नवी क़वानीन की मोहलत बख़्शी और तौबा व इनाबत

वो कहता है: जिस तरह आ़लमे अज्साम[1] में तुम देखते हो कि फ़ित्रत ने हर कमज़ोरी व फ़साद के लिए एक लाज़िमी नतीजा ठहरा दिया है, लेकिन फिर भी इस्लाहे हाल का दरवाज़ा बंद नहीं करती और मोहलतों पर मोहलतें देती रहती है, नीज़ अगर बर-वक़्त इस्लाह ज़ुहूर में आ जाए तो उसे क़बूल कर लेती है, ठीक-ठीक इसी तरह यहाँ भी तौबा व इनाबत का दरवाज़ा खुला रखा है। कोई बद अ़मली, कोई गुनाह, कोई जुर्म, कोई फ़साद हो और नौइयत में कितना ही सख़्त और मिक़्दार में कितना ही अ़ज़ीम हो, लेकिन जूँ ही तौबा व इनाबत का एहसास इन्सान के अन्दर जुंबिश में आता है, रहमते इलाही क़बूलियत का दरवाज़ा मअ़न् खोल देती है और अश्के नदामत का एक क़तरा बद अ़मलियों, गुनाहों के बेशुमार दाग़-धब्बे इस तरह धो देता है गोया उसके दामने अ़मल पर कोई धब्बा लगा ही न था: "التائب من الذنب كمن لا ذنب له":

اِلَّا مَنْ تَابَ وَاٰمَنَ وَعَمِلَ عَمَلًا صَالِحًا فَاُولٰٓئِكَ يُبَدِّلُ اللّٰهُ سَيِّاٰتِهِمْ حَسَنٰتٍ ط وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ○ (٢٥: ٧٠)

हाँ ! मगर जिस किसी ने तौबा की, ईमान लाया और आइन्दा नेक अ़मली इख़्तियार की तो ये लोग हैं जिनकी बुराइयों को अल्लाह अच्छाइयों से बदल देता है। और अल्लाह बड़ा बख़्शने वाला, बड़ा रहम करने वाला है! (25: 70)

1-भौतिक जगत।

रहमते इलाही और मग़्फ़िरत व बख़्शिश की वुस्अ़त व फ़रावानी

इस बारे में क़ुरआन ने रहमते इलाही की वुस्अ़त और उसकी मग़्फ़िरतो-बख़्शिश[1] की फ़रावानी का जो नक़्शा खींचा है, उसकी कोई हद व इन्तिहा नहीं है। कितने ही गुनाह हों, कितने ही सख़्त गुनाह हों, कितनी ही मुद्दत के गुनाह हों, लेकिन हर उस इन्सान के लिए जो उसके दरवाज़-ए-रहमत पर दस्तक दे, रहमतो-क़बूलियत के सिवा कोई सदा नहीं हो सकती :

قُلْ يٰعِبَادِيَ الَّذِيْنَ اَسْرَفُوْا عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ لَا تَقْنَطُوْا مِنْ رَّحْمَةِ اللّٰهِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ يَغْفِرُ الذُّنُوْبَ جَمِيْعًا ؕ اِنَّهٗ هُوَ الْغَفُوْرُ الرَّحِيْمُ ۝

(٥٣ : ٣٩)

[(ऐ पैग़म्बर! लोगों से) कह दो (40)] ऐ मेरे बन्दो जिन्होंने (बद आमालियाँ करके) अपनी जानों पर ज़्यादती की है, (तुम्हारी बद आमालियाँ कितनी ही सख़्त और कितनी ही ज़्यादा क्यों न हों, मगर) अल्लाह की रहमत से मायूस न हो, यक़ीनन अल्लाह तुम्हारे तमाम गुनाह बख़्श देगा। यक़ीनन वो बड़ा बख़्शने वाला, बड़ी ही रहमत रखने वाला है !
(39: 53)

1-क्षमाशीलता।

इस्लामी अक़ाइद का दीनी तसव्वुर और 'रहमत'

और फिर यही वजह है कि हम देखते हैं कि क़ुरआन ने इन्सान के लिए दीनी अक़ाइदो-आमाल का जो तसव्वुर क़ायम किया है, उसकी बुनियाद भी तमाम तर रहमतो-मुहब्बत ही पर रखी है। क्योंकि वो इन्सान की रूहानी ज़िन्दगी को काइनाते फ़ित्रत के आलमगीर कारख़ाने से कोई अलग और ग़ैर मुतअ़लिक़ चीज़ क़रार नहीं देता, बल्कि उसी का एक मर्बूत गोशा क़रार देता है और इसलिए कहता है: जिस कारसाज़े फ़ित्रत ने तमाम कारख़ान-ए-हस्ती की बुन्याद 'रहमत' पर रखी है, ज़रूरी था कि उसके गोशे में भी उसके तमाम अहकाम सर-तासर 'रहमत' की तस्वीर हों।

ख़ुदा और उसके बन्दों का रिश्ता मुहब्बत का रिश्ता है

चुनांचे क़ुरआन ने जा-बजा ये हक़ीक़त वाज़ेह की है कि ख़ुदा और उसके बन्दों का रिश्ता मुहब्बत का रिश्ता है और सच्ची अ़बूदियात उसी की अ़बूदियत है जिसके लिए माबूद सिर्फ़ माबूद ही न हो, बल्कि महबूब भी हो :

और (देखो!) इन्सानों में से कुछ इन्सान ऐसे हैं जो दूसरी हस्तियों को अल्लाह का हमपल्ला बना लेते हैं। वो उन्हें इस तरह

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّتَّخِذُ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ اَنْدَادًا يُّحِبُّوْنَهُمْ كَحُبِّ اللّٰهِ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَشَدُّ

चाहते हैं जिस तरह अल्लाह को चाहना होता है, हालाँकि जो लोग ईमान रखने वाले हैं उनकी ज़्यादा से ज़्यादा मुहब्बत सिर्फ़ अल्लाह ही के लिए होती है। (2: 165)

حُبًّا لِّلّٰهِ ط

(١٦٥:٢)

(ऐ पैग़म्बर! इन लोगों से) कह दो: अगर वाक़ई तुम अल्लाह से मुहब्बत रखने वाले हो तो चाहिए कि मेरी पैरवी करो (मैं तुम्हें मुहब्बते इलाही की हक़ीक़ी राह दिखा रहा हूँ, अगर तुमने ऐसा किया तो सिर्फ़ यही नहीं होगा कि तुम अल्लाह से मुहब्बत करने वाले हो जाओगे, बल्कि ख़ुद) अल्लाह तुम से मुहब्बत करने लगेगा और तुम्हारे गुनाह बख़्श देगा। और अल्लाह बख़्शने वाला, रहमत वाला है ! (3: 31)

قُلْ اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّوْنَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُوْنِىْ يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ وَيَغْفِرْ لَكُمْ ذُنُوْبَكُمْ ط وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ٥

(٣١:٣)

वो जा-बजा इस हक़ीक़त पर ज़ोर देता है कि ईमान-बिल्लाह का नतीजा अल्लाह की मुहब्बत और महबूबियत है :

ऐ ईमान लाने वालो! अगर तुम में से कोई शख़्स अपने दीन की

يٰاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَنْ يَّرْتَدَّ

مِنْكُمْ عَنْ دِيْنِهٖ فَسَوْفَ يَأْتِي اللّٰهُ بِقَوْمٍ يُّحِبُّهُمْ وَيُحِبُّوْنَهٗ (٥: ٥٤)

राह से फ़िर जाएगा तो (वो ये न समझे कि दअ़वते हक़ को उससे कुछ नुक़सान पहुँचेगा), अ़न्क़रीब अल्लाह एक गिरोह ऐसे लोगों का पैदा कर देगा जिन्हें अल्लाह की मुहब्बत हासिल होगी और वो अल्लाह को महबूब रखने वाले होंगे। (5: 54)

जो ख़ुदा से मुहब्बत करना चाहता है उसे चाहिए उसके बन्दों से मुहब्बत करे

लेकिन बन्दे के लिए ख़ुदा की मुहब्बत की अ़मली राह क्या है? वो कहता है: ख़ुदा की मुहब्बत की राह उसके बन्दों की मुहब्बत में से होकर गुज़रती है। जो इन्सान चाहता है ख़ुदा से मुहब्बत करे, उसे चाहिए कि ख़ुदा के बन्दों से मुहब्बत करना सीखे :

وَاٰتَى الْمَالَ عَلٰى حُبِّهٖ (٢: ١٧٧)

और जो अपना माल अल्लाह की मुहब्बत में निकालते और ख़र्च करते हैं। (2: 177)

وَيُطْعِمُوْنَ الطَّعَامَ عَلٰى حُبِّهٖ مِسْكِيْنًا وَّيَتِيْمًا وَّاَسِيْرًا ٥ اِنَّمَا نُطْعِمُكُمْ لِوَجْهِ اللّٰهِ

और अल्लाह की मुहब्बत में वो मिस्कीनों, यतीमों, क़ैदियों को खिलाते हैं (और कहते हैं) हमारा ये खिलाना इसके सिवा कुछ नहीं है कि महज़ अल्लाह

لَانُرِيْدُ مِنْكُمْ جَزَآءً وَّ لَاشُكُوْرًا ٥ (٧٦: ٨-٩)

के लिए है, हम तुम से न तो कोई बदला चाहते हैं न किसी तरह की शुक्र गुज़ारी ! (76: 8-9)

एक हदीसे कुदसी में यही हक़ीक़त निहायत मोअस्सिर पैराए में वाज़ेह की गई है :

يا ابن ادم ! مرضت فلم تعدنی۔ قال: كيف اعودك وانت رب العالمين ؟ قال: اما علمت ان عبدی فلانا مرض فلم تعده ؟ اما علمت انك لو عدته لوجدتنی عنده ؟ يا ابن ادم ! استطعمتك فلم تطعمنی قال : يا رب! كيف اطعمك وانت رب العالمين ؟ قال : اما علمت انه استطعمك عبدی فلان فلم تطعمه ؟ اما علمت انك لو اطعمته لوجدت ذلك عندی؟

(क़ियामत के दिन ऐसा होगा कि ख़ुदा इन्सान से कहेगा) ऐ इब्ने आदम! मैं बीमार हो गया था मगर तूने मेरी बीमार-पुरसी न की। बन्दा मुतअ़ज्जिब[1] होकर कहेगा: भला ऐसा क्यों कर हो सकता है और तू तो रब्बुल-आलमीन है? ख़ुदा फ़रमाएगा क्या तुझे मालूम नहीं कि मेरा फुलाँ बन्दा तेरे क़रीब बीमार हो गया था और तू ने उसकी ख़बर नहीं ली थी? अगर तू उसकी बीमार-पुरसी के लिए जाता तो मुझे उसके पास पाता। इसी तरह ख़ुदा फ़र्माएगा ऐ इब्ने आदम! मैंने तुझसे खाना मांगा था मगर तूने नहीं खिलाया, बन्दा अ़र्ज़ करेगा भला

1-आश्चर्यचकित।

ऐसा कैसे हो सकता है कि तुझे किसी बात की एहतियाज[1] हो? ख़ुदा फ़रमाएगा क्या तुझे याद नहीं कि मेरे फुलाँ भूके बन्दे ने तुझसे खाना मांगा था और तूने इनकार कर दिया था? अगर तू उसे खिलाता तो तू उसे मेरे पास पाता।

يابن ادم! استسقيتك فلم تسقني۔ قال: كيف اسقيك وانت رب العالمين؟ قال : استسقاك عبدى فلان فلم تسقه۔ اما انك لوسقيته لوجدت ذلك عندى ۔

(مسلم: عن ابى هريرةؓ) (٤١)

ऐसे ही ख़ुदा फ़रमाएगा: ऐ इब्ने आदम! मैंने तुझसे पानी मांगा मगर तू ने मुझे पानी न पिलाया। बन्दा अर्ज़ करेगा: भला ऐसा कैसे हो सकता है कि तुझे प्यास लगे, तू तो ख़ुद परवरदिगार है? ख़ुदा फ़र्माएगा: मेरे फुलाँ प्यासे बन्दे ने तुझ से पानी मांगा लेकिन तूने उसे पानी न पिलाया, अगर तू उसे पानी पिला देता तो उसे मेरे पास पाता।

(मुस्लिम: अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत) (41)

1-मुहताजी, कमी।

आमाल व इबादात और इख़्लाक़ो-ख़साइल

इसी तरह क़ुरआन ने आमालो-इबादात[1] की जो शक्लो-नौइयत क़रार दी है, इख़्लाक़ो-ख़साइल[2] में से जिन-जिन बातों पर ज़ोर दिया है, अवामिरो-नवाही में जो-जो उसूलो-मबादी मलहूज़ रखे हैं, इन सब में भी यही हक़ीक़त काम कर रही है और ये चीज़ इस दर्जे वाज़ेह व मालूम है कि बहसो-बयान की ज़रूरत नहीं।

क़ुरआन सर-तासर रहमते इलाही का प्याम है

और फिर यही वजह है कि क़ुरआन ने ख़ुदा की किसी सिफ़त को भी इस कसरत के साथ नहीं दोहराया है और न कोई मतलब इस दर्जा उसके सफ़्हात में नुमायाँ है, जिस क़द्र रहमत है। अगर क़ुरआन के वो तमाम मक़ामात जमा किये जाएँ जहाँ "रहमत" का ज़िक्र किया गया है तो तीन सौ (300) से ज़्यादा मक़ामात होंगे। अगर वो तमाम मक़ामात भी शामिल कर लिए जाएँ जहाँ अगर्चे लफ़्ज़े रहमत इस्तेमाल नहीं हुआ है, लेकिन उनका तअ़ल्लुक़ रहमत ही से है, मसलन रुबूबियत, मग़्फ़िरत, राफ़त, करम, हिल्म, अ़फ़्व् वग़ैरा तो फिर ये तादाद इस हद तक पहुँच जाती है कि कहा जा सकता है: क़ुरआन अव्वल से लेकर आख़िर तक इसके सिवा कुछ नहीं है कि रहमते इलाही का प्याम है।

बाज़ अहादीसे बाब

हम इस मौक़े पर वो तमाम तसरीहात क़स्दन[3] छोड़ रहे हैं जिनका ज़ख़ीरा अहादीस में मौजूद है, क्योंकि ये मक़ाम ज़्यादा

1-कर्मों व उपासनाओं। 2-नैतिकता, आचार। 3-जानबूझ कर।

तफ़्सीलो-बहस का मुतहम्मिल नहीं। पैग़म्बरे इस्लाम (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) ने अपने क़ौलो-अ़मल से इस्लाम की जो हक़ीक़त हमें बताई है, वो तमाम-तर यही है कि ख़ुदा की मोवहिदाना परस्तिश और उसके बन्दों पर शफ़्क़तो-रहमत। एक मशहूर हदीस जो हर मुसलमान वाइज़ की ज़बान पर है, हमें बतलाती है कि :

"انما یرحم الله من عباده الرحماء" (42) ख़ुदा की रहमत उन्हीं बन्दों के लिए है जो उसके बन्दों के लिए रहमत रखते हैं। हज़रत मसीह (अ़लैहिस्सलाम) का मशहूर कलिम-ए-वअ़ज़ "ज़मीन पर रहम करो, ताकि वो जो आसमान में है तुम पर रहम करे" बिजिन्सिही पैग़म्बरे इस्लाम (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की ज़बान पर भी तारी हुआ है :

"الرحمن تبارك وتعالى، ارحموا من فى الارض يرحمكم من فى السماء" (43)

(यानी तुम ज़मीन वालों पर रहम करो आसमान वाला तुम पर रहम करेगा)। इतना ही नहीं बल्कि इस्लाम ने इन्सानी रहमतो-शफ़्क़त की जो ज़ेहनियत पैदा करनी चाही है, वो इस क़द्र वसीअ़ है कि बेज़बान जानवर भी इससे बाहर नहीं हैं। एक से ज़्यादा हदीसें इस मज़्मून की मौजूद हैं कि अल्लाह की रहमत रहम करने वालों के लिए है, अगर्चे ये रहमत एक चिड़िया ही के लिए क्यों न हो : "من رحم ولو ذبيحة عصفور رحمه الله يوم القيامة" (यानी जिस शख़्स ने ज़ब्ह की जाने वाली एक छोटी सी चिड़िया के साथ रहम का मामला किया, अल्लाह तआ़ला क़ियामत के दिन उसके साथ रहम का मामला फ़रमाएँगे)। (44)

मक़ामे इन्सानियत और सिफ़ाते इलाही से तख़ल्लुक़ व तशब्बोह

अस्ल ये है कि क़ुरआन ने ख़ुदा परस्ती की बुन्याद ही इस जज़्बे पर रखी है कि इन्सान ख़ुदा की सिफ़तों का परतौ अपने अन्दर पैदा करे, वो इन्सान के वुजूद को एक ऐसी सरहद क़रार देता है जहाँ हैवानियत का दर्जा ख़त्म होता है और एक माफ़ौक़े हैवानियत[1] का दर्जा शुरू हो जाता है। वो कहता है: इन्सान का जौहरे इन्सानियत जो उसे हैवानात की सतह से बुलन्द व मुम्ताज़ करता है, इसके सिवा कुछ नहीं कि सिफ़ाते इलाही का परतौ है और इसलिए इन्सानियत की तक्मील ये है कि उसमें ज़्यादा से ज़्यादा सिफ़ाते इलाही से तख़ल्लुक़ व तशब्बोह पैदा हो जाए। यही वजह है कि उसने जहाँ कहीं भी इन्सान की ख़ास सिफ़ात का ज़िक्र किया है, उन्हें बराहे-रास्त ख़ुदा की तरफ़ निस्बत दी है, हत्ताकि जौहरे इन्सानियत[2] को ख़ुदा की रूह फूंक देने से ताबीर किया:

ثُمَّ سَوّٰهُ وَنَفَخَ فِيْهِ مِنْ رُّوْحِهٖ وَجَعَلَ لَكُمُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ وَالْاَفْـِٕدَةَ ط (32: 9)

यानी ख़ुदा ने आदम में अपनी रूह में से कुछ फूंक दिया और उसी का नतीजा ये निकला कि उसके अन्दर अक़्लो-हवास[3] का चिराग़ रौशन हो गया:

दर अज़ल परतवे हुस्नत ज़-तजल्ली दम-ज़द्
इश्क़ पैदा शुद व आतिश ब-हमा आलम ज़द् (45)

1-पशु इतर, पाशविकता से ऊपर। 2-मानवीय तत्व। 3-विवेक।

पस अगर वो ख़ुदा की रहमत का तसव्वुर हम में पैदा करना चाहता है तो ये इसलिए है कि वो चाहता है हम भी सर-ता-पा रहमतो-मुहब्बत हो जाएँ। अगर वो उसकी रुबूबियत का मुरक़्क़ा बार-बार हमारी निगाहों के सामने लाता है तो ये इसलिए है कि वो चाहता है हम भी अपने चेहर-ए-इख़्लाक़ में रुबूबियत के सारे ख़ालो-ख़त पैदा कर लें। अगर वो उसकी राफ़तो-शफ़्क़त का ज़िक्र करता है, उसके लुत्फ़ो-करम का जल्वा दिखाता है, उसके जूदो-एहसान का नक़्शा खींचता है तो इसी लिए कि वो चाहता है हम में भी उन इलाही सिफ़ात का जल्वा नमूदार हो जाए। वो बार-बार हमें सुनाता है कि ख़ुदा की बख़्शिश व दरगुज़र की कोई इन्तिहा नहीं और इस तरह हमें याद दिलाता है कि हम में भी उसके बन्दों के लिए बख़्शिश व दरगुज़र का ग़ैर महदूद जोश पैदा हो जाना चाहिए। अगर हम उसके बन्दों की ख़ताएँ बख़्श नहीं सकते तो हमें क्या हक़ है कि अपनी ख़ताओं के लिए उसकी बख़्शाइशों का इन्तिज़ार करें ?

अहकामो-शराय

जहाँ तक अहकामो-शराय का तअल्लुक़ है, बिला-शुब्हा उसने ये नहीं कहा कि दुश्मनों को प्यार करो, क्योंकि ऐसा कहना हक़ीक़त न होती, मजाज़[1] होता। लेकिन उसने कहा कि दुश्मनों को भी बख़्श दो और जो दुश्मन को बख़्श देना सीख लेगा, उसका दिल ख़ुद बख़ुद इन्सानी बुग़्ज़ो-नफ़रत की आलूदगियों से पाक हो जाएगा।

وَالْكَاظِمِينَ الْغَيْظَ وَالْعَافِينَ

गुस्सा ज़ब्त करने वाले और इन्सानों के क़ुसूर बख़्श देने

1-प्रतीकात्मक, मिथात्मक।

عَنِ النَّاسِ ط وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ۝ (٣: ١٣٤)

वाले। और अल्लाह की मुहब्बत उन्हीं के लिए है जो एहसान करने वाले हैं ! (3: 134)

وَالَّذِيْنَ صَبَرُوا ابْتِغَآءَ وَجْهِ رَبِّهِمْ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاَنْفَقُوْا مِمَّا رَزَقْنٰهُمْ سِرًّا وَّعَلَانِيَةً وَّيَدْرَءُوْنَ بِالْحَسَنَةِ السَّيِّئَةَ اُولٰٓئِكَ لَهُمْ عُقْبَى الدَّارِ ۝ (١٣: ٢٢)

और जिन लोगों ने अल्लाह की मुहब्बत में (तल्ख़ी व नागवारी) बर्दाश्त कर ली, नमाज़ क़ायम की, ख़ुदा की दी हुई रोज़ी पोशीदा व अ़लानिया (उसके बन्दों के लिए) ख़र्च की और बुराई का जवाब बुराई से नहीं, नेकी से दिया तो (यक़ीन करो!) यही लोग हैं जिनके लिए आख़िरत का बेहतर ठिकाना है। (13: 22)

وَلَمَنْ صَبَرَ وَغَفَرَ اِنَّ ذٰلِكَ لَمِنْ عَزْمِ الْاُمُوْرِ ۝ (٤٢: ٤٣)

और (देखो!) जो कोई बुराई पर सब्र करे और बख़्श दे तो यक़ीनन ये बड़ी ही उ़लुल्-अ़ज़्मी[1] की बात है ! (42: 43)

وَلَا تَسْتَوِى الْحَسَنَةُ وَلَا السَّيِّئَةُ ط اِدْفَعْ بِالَّتِىْ هِىَ اَحْسَنُ فَاِذَا الَّذِىْ بَيْنَكَ وَبَيْنَهٗ عَدَاوَةٌ كَاَنَّهٗ وَلِىٌّ

और (देखो!) नेकी और बदी बराबर नहीं हो सकती। (अगर कोई बुराई करे तो) बुराई का जवाब ऐसे तरीक़े से दो जो अच्छा तरीक़ा हो। (अगर तुम ने ऐसा किया तो तुम देखोगे

1-कल्याणकारी बड़ी बात।

حَمِيۡمٌ ○ وَمَا يُلَقّٰهَآ اِلَّا الَّذِيۡنَ صَبَرُوۡا ۚ وَمَا يُلَقّٰهَآ اِلَّا ذُوۡ حَظٍّ عَظِيۡمٍ ○

(٤١: ٣٤-٣٥)

कि) जिस शख़्स से तुम्हारी अदावत[1] थी यका-यक तुम्हारा दिली दोस्त हो गया है। (अल्बत्ता) ये (ऐसा मक़ाम है जो) उसी को मिल सकता है जो (बदसलूकी सह लेने की) बर्दाश्त रखता हो और जिसे (नेकी व सआदत का) हिस्सा वाफ़िर मिला हो।
(41: 34-35)

बिला-शुब्हा उसने बदला लेने से बिल्कुल रोक नहीं दिया और वो क्यों कर रोक सकता है जबकि तबीअ़ते हैवानी का ये फ़ित्री ख़ास्सा है और हिफ़ाज़ते नफ़्स इस पर मौकूफ़[2] है। लेकिन जहाँ कहीं भी उसने इसकी इजाज़त दी है, साथ ही अ़फ़्वो-बख़्शिश और बदी के बदले नेकी की मोअस्सिर तरग़ीब भी दी है और ऐसी मोअस्सिर तरग़ीब दी है कि मुमकिन नहीं एक ख़ुदा-परस्त इन्सान इससे मुतअस्सिर न हो :

وَاِنۡ عَاقَبۡتُمۡ فَعَاقِبُوۡا بِمِثۡلِ مَا عُوۡقِبۡتُمۡ بِهٖ ؕ وَلَئِنۡ صَبَرۡتُمۡ لَهُوَ خَيۡرٌ لِّلصّٰبِرِيۡنَ ○

(١٦: ١٢٦)

और (दिखो!) अगर तुम बदला लो तो चाहिए जितनी और जैसी कुछ बुराई तुम्हारे साथ की गई है, उसी के मुताबिक़ ठीक-ठीक बदला भी लिया जाए (ये न हो कि ज़्यादती कर बैठो) लेकिन अगर तुम बर्दाश्त कर

1-शत्रुता। 2-आधारित।

जाओ और बदला न लो तो (याद रखो!) बर्दाश्त करने वालों के लिए बर्दाश्त कर जाने ही में बेहतरी है ! (16: 126)

وَجَزَٰٓؤُا سَيِّئَةٍ سَيِّئَةٌ مِّثْلُهَا ۚ فَمَنْ عَفَا وَأَصْلَحَ فَأَجْرُهُۥ عَلَى ٱللَّهِ ۚ (٤٢: ٤٠)

और बुराई के लिए वैसा ही और उतना ही बदला है जैसी और जितनी बुराई की गई है, लेकिन जिस किसी ने दरगुज़र किया और मामले को बिगाड़ने की जगह संवार लिया तो उसका अज्र अल्लाह पर है ! (42: 40)

इन्जील और क़ुरआन

हमने क़ुरआन की आयाते अफ़्वो-बख़्शिश नक़ल करते हुए अभी कहा है कि "उसने ये नहीं कहा कि दुश्मनों को प्यार करो, क्योंकि ऐसा कहना हक़ीक़त न होती, मजाज़ होता" ज़रूरी है कि उसकी मुख़्तसर तशरीह कर दी जाए :

हज़रत मसीह (अलैहिस्सलाम) ने यहूदियों की ज़ाहिर परस्तियों और इख़्लाक़ी महरूमियों की जगह रहमो-मुहब्बत और अफ़्वो-बख़्शिश की इख़्लाक़ी क़ुर्बानियों पर ज़ोर दिया था और उनकी दावत की अस्ल रूह यही है। चुनांचे हम इन्जील के मवाइज़[1] में जा-बजा इस तरह के ख़िताबात[2] पाते हैं : "तुमने सुना होगा कि अगलों से कहा गया दाँत के बदले दाँत और आँख के बदले आँख,

1-प्रवचनों। 2-सम्बोधन।

लेकिन मैं कहता हूँ कि शरीर का मुक़ाबला न करना" या "अपने हमसायों ही को नहीं बल्कि दुश्मनों को भी प्यार करो" या मसलन "अगर कोई तुम्हारे एक गाल पर तमांचा मारे तो चाहिए कि दूसरा गाल भी आगे कर दो"। सवाल ये है कि इन ख़िताबात की नौइयत क्या थी? ये इख़्लाक़ी फ़ज़ाइलो-ईसार का एक मोअस्सिर पैराय-ए-बयान था या तशरीअ़, यानी क़वानीन वज़अ़ करना था ?

दअ़वते मसीह और दुनिया की हक़ीक़त फ़रामोशी

अफ़सोस है कि इन्जील के मोतक़िदों और नुक्ता-चीनों दोनों ने यहाँ ठोकर खाई, दोनों इस ग़लत-फ़हमी में मुब्तला हो गए कि ये तशरीअ़ थी और इसलिए दोनों को तस्लीम कर लेना पड़ा कि ये ना क़ाबिले अ़मल अहकाम हैं। मोतक़िदों ने ख़याल किया कि अगर्चे इन अहकाम पर अ़मल नहीं किया जा सकता, ताहम मसीहियत के अहकाम यही हैं और अ़मली नुक़्त-ए-ख़याल से इस क़द्र काफ़ी है कि अवाइले अ़हद[1] में चन्द वलियों[2] और शहीदों ने इनपर अ़मल कर लिया था। नुक्ता-चीनों ने कहा कि ये सर-तासर एक नज़री और ना क़ाबिले अ़मल तालीम है और कहने में कितनी ही ख़ुशनुमा हो, लेकिन अ़मली नुक़्त-ए-ख़याल से इसकी कोई क़द्रो-क़ीमत नहीं, ये फ़ित्रते इन्सानी के सरीह ख़िलाफ़ है।

फ़िल्-हक़ीक़त नौए इन्सानी की ये बड़ी ही दर्द-अंगेज़ ना इन्साफ़ी है जो तारीख़े इन्सानियत के इस अ़ज़ीमुश्शान[3] मुअ़ल्लिम[4] के साथ जायज़ रखी गई। जिस तरह बेदर्द नुक्ता-चीनों ने इसे

1-आरंभिक दौर। 2-संतों। 3-महान्। 4-पथप्रदर्शक, शिक्षक।

समझने की कोशिश न की, इसी तरह नादान मोतक़िदों ने भी फ़ह्मो-बसीरत से इनकार कर दिया।

हज़रत मसीह की तालीम को फ़ित्रते इन्सानी के खिलाफ़ समझना तफ़रीक़ बैनर्रुसुल है

लेकिन क्या कोई इन्सान जो क़ुरआन की सच्चाई का मोतरिफ़ हो, ऐसा ख़याल कर सकता है कि हज़रत मसीह (अ़लैहिस्सलाम) की तालीम फ़ित्रते इन्सानी के ख़िलाफ़ थी और इसलिए ना क़ाबिले अ़मल थी? हक़ीक़त ये है कि क़ुरआन की तस्दीक़ के साथ ऐसा मुन्किराना ख़याल जमा नहीं हो सकता। अगर हम एक लम्हा के लिए भी इसे तस्लीम कर लें तो इसके मअ़ना ये होंगे कि हम हज़रत मसीह की तालीम की सच्चाई से इनकार कर दें, क्योंकि जो तालीम फ़ित्रते इन्सानी के ख़िलाफ़ है, वो कभी इन्सान के लिए सच्ची तालीम नहीं हो सकती। लेकिन ऐसा एतिक़ाद न सिर्फ़ क़ुरआन की तालीम के ख़िलाफ़ होगा, बल्कि उसकी दावत की अस्ल बुन्याद ही मुतज़ल्ज़ल[1] हो जाएगी। उसकी दावत की बुन्यादी अस्ल ये है कि वो दुनिया के तमाम रहनुमाओं की यक्साँ तौर पर तस्दीक़ करता और सबको ख़ुदा की एक ही सच्चाई का प्यामबर क़रार देता है। वो कहता है: पैरवाने मज़ाहिब की सबसे बड़ी गुमराही "तफ़रीक़ बैनर्रुसुल" है, यानी ईमानो-तस्दीक़ के लिहाज़ से ख़ुदा के रसूलों में तफ़रीक़ करना, किसी एक को मानना, दूसरों को झुठलाना, या सबको मानना, किसी एक का इनकार कर देना। इसी लिए उसने जा-बजा इस्लाम की राह ये बतलाई है कि :

1-अस्त-व्यस्त।

لَانُفَرِّقُ بَيۡنَ اَحَدٍ مِّنۡهُمۡ وَ نَحۡنُ لَهٗ مُسۡلِمُوۡنَ ٥

(٣: ٨٤)

हम ख़ुदा के रसूलों में से किसी को भी दूसरों से जुदा नहीं करते (कि किसी को मानें, किसी को न मानें,) हम तो ख़ुदा के आगे झुके हुए हैं (उसकी सच्चाई कहीं भी आई हो और किसी की ज़बानी आई हो, हमारे उस पर ईमान है।) (3: 84)

अ़लावा-बरीं क़ुरआने करीम ने हज़रत मसीह की दावत का यही पहलू जा-बजा नुमायाँ किया है कि वो रहमतो-मुहब्बत के प्यामबर थे और यहूदियों की इख़्लाक़ी ख़ुशूनत व क़सावत के मुक़ाबले में मसीही इख़्लाक़ की रिक़्क़तो-राफ़त की बार-बार मदह[1] की है :

وَلِنَجۡعَلَهٗۤ اٰيَةً لِّلنَّاسِ وَرَحۡمَةً مِّنَّا ۚ وَكَانَ اَمۡرًا مَّقۡضِيًّا ٥

(١٩: ٢١)

और ताकि हम उसका (यानी मसीह के ज़ुहूर को) लोगों के लिए एक इलाही निशानी और अपनी रहमत का फ़ैज़ान बनाएँ और ये बात (मशिय्यते इलाही में) तय-शुदा थी। (19: 21)

وَجَعَلۡنَا فِىۡ قُلُوۡبِ الَّذِيۡنَ اتَّبَعُوۡهُ رَاۡفَةً وَّرَحۡمَةً ؕ

(٥٧: ٢٧)

और उन लोगों के दिलों में जिन्हों ने (मसीह की) पैरवी की, हमने शफ़्क़त और रहमत डाल दी। (57: 27)

1-प्रशंसा।

इस मौक़े पर ये बात भी याद रखनी चाहिए कि क़ुरआन ने जिस क़द्र औसाफ़ ख़ुद अपनी निस्बत बयान किए हैं, पूरी फ़राख़ दिली के साथ वही औसाफ़ तौरात व इन्जील के लिए भी बयान किए हैं। मसलन वो जिस तरह अपने आपको हिदायत करने वाला, रौशनी रखने वाला, नसीहत करने वाला, क़ौमों का इमाम, मुत्तक़ियों का राहनुमा क़रार देता है, ठीक इसी तरह पिछले सहीफ़ों को भी इन तमाम औसाफ़ से मुत्तसिफ़ क़रार देता है। चुनांचे इन्जील की निस्बत हम जा-बजा पढ़ते हैं :

وَآتَيْنَاهُ الْإِنجِيلَ فِيهِ هُدًى وَنُورٌ وَمُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ التَّوْرَاةِ وَهُدًى وَمَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِينَ ۝ (5: 46)

ये ज़ाहिर है कि जो तालीम फ़ित्रते बशरी के ख़िलाफ़ और ना क़ाबिले अ़मल हो, वो कभी नूरो-हिदायत और "مَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِينَ" नहीं हो सकती।

दावते मसीही की हक़ीक़त

अस्ल ये है कि हज़रत मसीह (अ़लैहिस्सलाम) की उन तमाम तालीम की वो नौइयत न थी जो ग़लती से समझ ली गई और दुनिया में हमेशा इन्सान की सबसे बड़ी गुमराही उसके इनकार से नहीं, बल्कि कज-अन्देशाना[1] एतिराफ़[2] ही से पैदा हुई है।

हज़रत मसीह का ज़ुहूर एक ऐसे अ़हद में हुआ था जबकि यहूदियों का इख़्लाक़ी तनज़्ज़ुल इन्तिहाई हद तक पहुँच चुका था और दिल की नेकी और इख़्लाक़ की पाकीज़गी की जगह महज़ ज़ाहिरी अहकामो-रुसूम की परस्तिश दीनदारी व ख़ुदा परस्ती समझ ली जाती

1-अदूरदर्शिता। 2-स्वीकार।

थी। यहूदियों के अ़लावा जिस क़द्र मुतमद्दिन क़ौमें क़ुर्बो-जवार में मौजूद थीं, मसलन रूमी, मिस्री, आशूरी, वो भी इन्सानी रहमो-मुहब्बत की रूह से यक्सर ना अशना थीं। लोगों ने ये बात तो मालूम कर ली थी कि मुजरिमों को सज़ाएँ देनी चाहिएँ, लेकिन इस हक़ीक़त से बे-बहरा[1] थे कि रहमो-मुहब्बत और अ़फ़्वो-बख़्शिश[2] की चारा-साज़ियों से जुरमों और गुनाहों की पैदाइश रोक देनी चाहिए। इन्सानी क़त्लो-हलाकत का तमाशा देखना, तरह-तरह के हौलनाक तरीक़ों से मुजरिमों को हलाक करना, ज़िन्दा इन्सानों को दरिन्दों के सामने डाल देना, आबाद शहरों को बिला वजह जला कर ख़ाकिस्तर कर देना, अपनी क़ौम के अ़लावा तमाम इन्सानों को गुलाम समझना और गुलाम बना कर रखना, रहमो-मुहब्बत और हिल्मो-शफ़्क़त[3] की जगह क़ल्बी क़सावत[4] व बेरहमी पर फ़ख़्र करना, रूमी तमद्दुन का इख़्लाक़ और मिस्री और आशूरी देवी देवताओं का पसन्दीदा तरीक़ा था।

ज़रूरत थी कि नौअ़े इन्सानी की हिदायत के लिए एक ऐसी हस्ती मबऊस हो जो सर-तासर रहमतो-मुहब्बत का प्याम हो और जो इन्सानी ज़िन्दगी के तमाम गोशों से क़त्अ़े-नज़र करके सिर्फ़ उसकी क़ल्बी व मअ़नवी हालत की इस्लाहो-तज़्किया पर अपनी तमाम पैग़म्बराना हिम्मत मब्ज़ूल कर दे। चुनांचे हज़रत मसीह की शख़्सियत में वो हस्ती नमूदार हो गई। उसने जिस्म की जगह रूह पर, ज़बान की जगह दिल पर और ज़ाहिर की जगह बातिन पर नौअ़े इन्सानी को तवज्जोह दिलाई और इन्सानियते आला का फ़रामोश शुदा[5] सबक़ ताज़ा कर दिया।

1-अनजान। 2-क्षमाशीलता। 3-दया-करुणा। 4-हृदयहीनता, नृशंशता। 5-भुलाया हुआ।

मवाइज़े मसीह के मजाज़ात को तशरीअ व हक़ीक़त समझ लेना सख़्त ग़लती है

मामूली से मामूली कलाम भी बशर्ते-कि बलीग़[1] हो, अपनी बलाग़त[2] के मजाज़ात[3] रखता है। क़ुदरती तौर पर उस इल्हामी बलाग़त के भी मजाज़ात थे जो उसकी तासीर का ज़ेवर और उसकी दिल-नशीनी की ख़ूब-रूई हैं। लेकिन अफ़सोस कि वो दुनिया जो अक़ानीम सलासह और कफ़्फ़ारे जैसे दूर अज़-कार पैदा कर लेने वाली थी, उनके मवाइज़ का मक़्सदो-महल न समझ सकी और मजाज़ात को हक़ीक़त समझ कर ग़लत-फ़हमियों का शिकार हो गई।

उन्होंने जहाँ कहीं ये कहा है कि "दुश्मनों को प्यार करो" तो यक़ीनन उसका मतलब ये न था कि हर इन्सान को चाहिए अपने दुश्मनों का आशिक़े-ज़ार हो जाए, बल्कि सीधा सादा मतलब ये था कि तुम में ग़ैज़ो-ग़ज़ब और नफ़रतो-इन्तिक़ाम की जगह रहमो-मुहब्बत का पुर-जोश जज़्बा होना चाहिए और ऐसा होना चाहिए कि कि दोस्त तो दोस्त, दुश्मन तक के साथ अफ़्वो-दरगुज़र से पेश आओ। इस मतलब के लिए कि रहम करो, बख़्श दो, इन्तिक़ाम के पीछे न पड़ो, ये एक निहायत ही बलीग़ और मोअस्सिर पैराय-ए-बयान है कि "दुश्मनों तक को प्यार करो"। एक ऐसे गर्दो-पेश में जहाँ अपनों और अज़ीज़ों के साथ भी रहमो-मुहब्बत का बर्ताव न किया जाता हो, ये कहना कि अपने दुश्मनों से भी नफ़रत न करो, रहमो-मुहब्बत की ज़रूरत का एक आला और कामिल-तरीन

1-लाक्षणिक प्रयोग, अलंकार। 2-सुवक्ता, वाक्पटु। 3-अभिव्यक्ति, सूचना।

तख़य्युल पैदा करना था :

शुनीदम केह मरदाने राहे ख़ुदा दिल दुश्मनाने हम न करदन्द तंग
तुरा कि मुयस्सर शवद ईं मक़ाम कि बा-दोस्तानत ख़िलाफ़े सतो-जंग

या मसलन अगर उन्होंने कहा: "अगर कोई तुम्हारे एक गाल पर तमांचा मारे तो दूसरा गाल भी आगे कर दो" तो यक़ीनन इसका मतलब ये न था कि सच-मुच को तुम अपना गाल आगे कर दिया करो, बल्कि सरीह मतलब ये था कि इन्तिक़ाम की जगह अफ़्वो-दरगुज़र[1] की राह इख़्तियार करो। बलाग़ते-कलाम के ये वो मजाज़ात हैं जो हर ज़बान में यक्साँ तौर पाए जाते हैं और ये हमेशा बड़ी ही जिहालत[2] की बात समझी जाती है कि उनके मक़सूदो-मफ़्हूम[3] की जगह उनके मन्तूक़[4] पर ज़ोर दिया जाए। अगर हम इस तरह के मजाज़ात को उनके ज़वाहिर[5] पर महमूल करने लगेंगे तो न सिर्फ़ तमाम इल्हामी तालीमात ही दर्हम-बर्हम हो जाएंगी बल्कि इन्सान का वो तमाम कलाम जो अदब व बलाग़त के साथ दुनिया की तमाम ज़बानों में कहा गया है, यक-क़लम मुख़्तल हो जाएगा।

आमाले इन्सानी में अस्ल रहमो-मुहब्बत है न कि ताज़ीरो-इन्तिक़ाम

बाक़ी रही ये बात कि हज़रत मसीह ने सज़ा की जगह महज़ रहमो-दरगुज़र ही पर ज़ोर दिया तो उनके मवाइज़ की अस्ली नौइयत समझ लेने के बाद [ये बात (46)] भी बिल्कुल वाज़ेह हो

1-सफ़ा-दफ़ा, क्षमा। 2-अज्ञानता। 3-आशय, भाव। 4-शाब्दिक अर्थ, कथ्य। 5-प्रत्यक्ष अर्थ।

जाती है। बिला-शुब्हा शराय ने ताज़ीरो-उक़ूबत का हुक्म दिया था, लेकिन इसलिए नहीं कि ताज़ीरो-उक़ूबत[1] फ़ी-नफ़्सिही[2] कोई मुस्तहसन[3] अ़मल है, बल्कि इसलिए कि मईशते इन्सानी[4] की बाज़ नागुज़ीर[5] हालतों के लिए ये एक नागुज़ीर इलाज है। दूसरे लफ़्ज़ों में यूँ कहा जा सकता है कि एक कम दर्जे की बुराई थी जो इसलिए गवारा कर ली गई कि बड़े दर्जे की बुराइयाँ रोकी जा सकें। लेकिन दुनिया ने इसे इलाज की जगह एक दिलपसन्द मशग़ला बना लिया और रफ़्ता-रफ़्ता इन्सान की ताज़ीबो-हलाकत[6] का एक ख़ौफ़नाक आला बन गई। चुनांचे हम देखते हैं कि इन्सानी क़त्लो-ग़ारतगरी की कोई हौलनाकी ऐसी नहीं है जो शरीअ़त और क़ानून के नाम से न की गई हो और जो फ़िल-हक़ीक़त इसी बदला लेने और सज़ा देने के हुक्म का ज़ालिमाना इस्तेमाल न हो। अगर तारीख़ से पूछा जाए कि इन्सानी हलाकत की सबसे बड़ी क़ुव्वतें मैदानहा-ए-जंग से बाहर कौन-कौन सी रही हैं तो यक़ीनन इसकी उंगलियाँ उन अ़दालगाहों की तरफ़ उठ जाएंगी जो मज़हब और क़ानून के नामों से क़ायम की गईं और जिन्होंने हमेशा अपने हम-जिन्सों[7] की ताज़ीबो-हलाकत का अ़मल उसकी सारी वहशत-अंगेज़ियों[8] और हौलनाकियों के साथ जारी रखा (47)। पस अगर हज़रत मसीह ने ताज़ीरो-उक़ूबत की जगह सर-तासर रहमो-दरगुज़र[9] पर ज़ोर दिया तो ये इसलिए नहीं था कि वो नफ़्से ताज़ीर व सज़ा के ख़िलाफ़ कोई नई तशरीअ़ करना चाहते थे, बल्कि उनका मक़सद ये था कि उस हौलनाक ग़लती से इन्सान को निजात दिलाएँ जिसमें ताज़ीरो-उक़ूबत के ग़ुलू ने मुब्तला

1-सजा, दंड संतिहा। 2-अपने आप में। 3-अच्छा। 4-मानव जीवन। 5-अपरिहार्य। 6-यातना, मारकाट। 7-अपनी ही जीति (मानव जाति) के लोगों। 8-पाशविकताओं। 9-दया व क्षमा।

कर रखा है। वो दुनिया को बताना चाहते थे कि आमाले इन्सानी में अस्ल अ़मल रहमो-मुहब्बत है, ताज़ीरो-इन्तिक़ाम[1] नहीं है। और अगर ताज़ीरो-सियासत जायज़ रखी गई है तो सिर्फ़ इसलिए कि बतौर एक नागुज़ीर इलाज के अ़मल में लाई जाए। इसलिए नहीं कि तुम्हारे दिल रहमो-मुहब्बत की जगह सर-तासर नफ़रतो-इन्तिक़ाम का आशियाना बन जाएँ।

शरीअ़ते मूसवी[2] के पैरवों[3] ने शरीअ़त को सिर्फ़ सज़ा देने का आला बना लिया था। हज़रत मसीह ने बतलाया कि शरीअ़त सज़ा देने के लिए नहीं, बल्कि निजात की राह दिखाने आती है और निजात की राह सर-तासर रहमतो-मुहब्बत की राह है।

'अ़मल' और 'आ़मिल' में इम्तियाज़

दरअसल इस बारे में इन्सान की बुनियादी ग़लती ये रही है कि वो 'अ़मल[4]' में और 'आ़मिल[5]' में इम्तियाज़[6] क़ायम नहीं रखता, हालाँकि जहाँ तक मज़हब की तालीम का तअ़ल्लुक़ है, इस बात में कि एक अ़मल क्या है, और इसमें कि करने वाला क्या है, बहुत बड़ा फ़र्क़ है और दोनों का हुक्म एक नहीं। बिला-शुब्हा तमाम मज़ाहिब का ये आ़लमगीर[7] मक़सद रहा है कि बद अ़मली और गुनाह की तरफ़ से इन्सान के दिल में नफ़रत पैदा कर दें, लेकिन उन्होंने कभी गवारा नहीं किया कि ख़ुद इन्सान की तरफ़ से इन्सान के अन्दर नफ़रत पैदा हो जाए। यक़ीनन उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया है कि गुनाह से नफ़रत करो, लेकिन ये कभी नहीं कहा है कि गुनहगार से

1-सज़ा व प्रतिशोध। 2-हज़रत मूसा का धर्म विधान। 3-अनुयायियों। 4-कर्म। 5-कर्ता, कर्म करने वाला। 6-भेद। 7-सार्वभौमिक।

नफ़रत करो। इसकी मिसाल ऐसी है जैसे एक तबीब[1] हमेशा लोगों को बीमारी से डराता रहता है और बसा-औक़ात उनके मोहलिक नताइज का ऐसा हौलनाक नक़्शा खींच देता है कि देखने वाले सहम कर रह जाते हैं, लेकिन ये तो कभी नहीं करता कि जो लोग बीमार हो जाएँ, उनसे डरने और नफ़रत करने लगे या लोगों से कहे: डरो और नफ़रत करो! इतना ही नहीं, बल्कि उसकी तो सारी तवज्जोह और शफ़्क़त का मरकज़ बीमारी का वुजूद होता है। जो इन्सान जितना ज़्यादा बीमार होगा, उतना ही ज़्यादा उसकी तवज्जोह और शफ़्क़त का मुस्तहिक़[2] हो जाएगा।

मरज़ और मरीज़

पस जिस तरह जिस्म का तबीब बीमारियों के लिए, नफ़रत लेकिन बीमार के लिए, शफ़्क़त और हमदर्दी की तल्क़ीन करता है, ठीक इसी तरह रूहो-दिल के तबीब बीमारियों के लिए, नफ़रत लेकिन गुनहगारों के लिए, सर-तासर रहमतो-शफ़्क़त का प्याम होते हैं। यक़ीनन वो चाहते हैं कि गुनाहों से (जो रूहो-दिल की बीमारियाँ हैं) हम में दहशतो-नफ़रत पैदा कर दें, लेकिन गुनाहों से पैदा कर दें, गुनहगार इन्सानों से नहीं और यही वो नाज़ुक मक़ाम है जहाँ पैरवाने मज़ाहिब ने ठोकर खाई है। मज़ाहिब ने चाहा था उन्हें बुराई से नफ़रत करना सिखाएँ, लेकिन बुराई से नफ़रत करने की जगह उन्होंने उन इन्सानों से नफ़रत करना सीख लिया जिन्हें वो अपने ख़याल में बुराई का मुजरिम तसव्वुर करते हैं।

1-चिकित्सक। 2-पात्र, अधिकारी।

गुनाहों से नफ़रत करो मगर गुनहगारों पर रहम करो

हज़रत मसीह की तालीम सर-तासर इसी हक़ीक़त की दावत थी। गुनाहों से नफ़रत करो, मगर उन इन्सानों से नफ़रत न करो जो गुनाहों में मुब्तला हो गए हैं। अगर एक इन्सान गुनहगार है तो उसके मअ़ना ये हैं कि उसकी रूहो-दिल की तन्दुरुस्ती बाक़ी नहीं रही, लेकिन अगर उसने बदबख़्ताना[1] अपनी तन्दुरुस्ती ज़ाय कर दी है तो तुम उससे नफ़रत क्यों करो, वो तो अपनी तन्दुरुस्ती खो कर और ज़्यादा तुम्हारे रहमो-शफ़्क़त का मुस्तहिक़ हो गया है। तुम अपने बीमार भाई की तीमारदारी करोगे या उसे जल्लाद के ताज़ियाने के हवाले कर दोगे? वो मौक़ा याद करो जिसकी तफ़्सील हमें सेंट लोका (Saint Luke) की ज़बानी मालूम हुई है। जब एक गुनहगार औरत हज़रत मसीह की ख़िदमत में आई और उसने अपने बालों की लटों से उनके पाँव पोंछे तो उस पर रियाकार[2] फ़रेसियों (Pharisee) को (और अब फ़रेसियत के मअ़ना ही रियाकारी के हो गए हैं : Pharisaism) सख़्त तअ़ज्जुब हुआ, लेकिन उन्होंने कहा: तबीब बीमारियों के लिए होता है न कि तन्दुरुस्तों के लिए। फिर ख़ुदा और उसके गुनहगार बन्दों का रिश्त-ए-रहमत वाज़ेह करने के लिए एक निहायत ही मोअस्सिर और दिलनशीन मिसाल बयान की: फ़र्ज़ करो! एक साहूकार के दो क़र्ज़दार थे, एक पचास रुपये का, एक हज़ार रुपये का। साहूकार ने दोनों का क़र्ज़ माफ़ कर दिया। बताओ! कि क़र्ज़दार पर उसका एहसान ज़्यादा हुआ और कौन उससे

1-दुर्भाग्य से। 2-मक्कार, पाखंडी।

ज़्यादा मुहब्बत करेगा? वो जिसे पचास माफ़ कर दिए या वो जिसे हज़ार ? (48)

नसीबे मास्त बहिश्त ऐ ख़ुदा शनास बरो
कि मुस्तहिक़े करामत गुनाहगारानन्द

यही हक़ीक़त है जिस की तरफ़ बाज़ अइम्म-ए-ताबईन ने इशारा किया है ''انكسار العاصين احب الى الله من صولة المطيعين'' ख़ुदा को फ़रमाँबर्दार बन्दों की तम्कनत से कहीं ज़्यादा गुनाहगार बन्दों का इज्ज़ो-इन्किसार महबूब है।

गदायाने रा अज़ीं मअ़ना ख़बर नेस्त
कि सुल्ताने जहाँ बा-मास्त इम-रोज़

क़ुरआन गुनाहगार बन्दों के लिए सदा-ए-तशरीफ़ो-रहमत

और फिर यही हक़ीक़त है कि हम क़ुरआन में देखते हैं जहाँ कहीं ख़ुदा ने गुनाहगार इन्सानों को मुख़ातिब किया है या उनका ज़िक्र किया है तो उमूमन या-ए-निस्बत के साथ किया है जो तशरीफ़ो-मुहब्बत पर दलालत करती है :

قُلْ يٰعِبَادِىَ الَّذِيْنَ اَسْرَفُوْا عَلٰى اَنْفُسِهِمْ (53: 39) ءَ اَنْتُمْ اَضْلَلْتُمْ عِبَادِىْ (17: 25) (49)।

इसकी मिसाल बिल्कुल ऐसी है जैसे एक बाप जोशे मुहब्बत में अपने बेटे को पुकारता है तो ख़ुसूसियत के साथ अपने रिश्त-ए-पिदरी[1] पर ज़ोर देता है ''ऐ मेरे बेटे! ऐ मेरे फ़रज़न्द!'' हज़रत

1-पिता का रिश्ता।

इमाम जाफ़र सादिक़ ने सूर: जुमर की आयते रहमत की तफ़्सीर करते हुए क्या ख़ूब फ़रमाया है : "जब हम अपनी औलाद को अपनी तरफ़ निस्बत देकर मुख़ातिब करते हैं तो वो बेख़ौफ़ो-ख़तर हमारी तरफ़ दौड़ने लगते हैं, क्योंकि समझ जाते हैं हम उनपर ग़ज़बनाक नहीं" क़ुरआन में ख़ुदा ने बीस से ज़्याद मौक़ों पर हमें "इबादी" कह कर अपनी तरफ़ निस्बत दी है और सख़्त से सख़्त गुनाहगार इन्सानों को भी "या इबादी" कह कर पुकारा है। क्या इससे भी बढ़ कर उसकी रहमत व आमुर्ज़ेश का कोई प्याम हो सकता है ?

सहीह मुस्लिम की मशहूर हदीस का मतलब किस तरह वाज़ेह हो जाता है जब हम इस रौशनी में उसका मुतालआ करते हैं :

والذی نفسی بیده لولم تذنبوا لذهب الله بکم ولجاء بقوم یذنبون فیستغفرون ـ (مسلم : عن ابی هریرة رضی الله عنه) (٥٠)

उस ज़ात की क़सम जिसके हाथ में मेरी जान है ! अगर तुम ऐसे हो जाओ कि गुनाह तुमसे सरज़द ही न हो तो ख़ुदा तुम्हें ज़मीन से हटा दे और तुम्हारी जगह एक दूसरा गिरोह पैदा कर दे जिसका शेवा ये हो कि गुनाहों में मुब्तला हो और फिर ख़ुदा से बख़्शिशो-मग़्फ़िरत की तलबगारी करे। (मुस्लिम: अन अबी हुरैरा रज़ि०) (50)

फ़िदा-ए-शेव-ए-रहमत कि दर लिबासे बहार
ब-उज़र ख़्वाहि-ए-रिन्दाँ बादा नोश आमद

अस्लन इन्जील और क़ुरआन की तालीम में कोई इख़्तिलाफ़ नहीं

पस फ़िल-हक़ीक़त हज़रत मसीह (अ़लैहिस्सलाम) की तालीम में और क़ुरआन की तालीम में अस्लन कोई फ़र्क़ नहीं है। दोनों का मे'यारे अहकाम एक ही है, फ़र्क़ सिर्फ़ महल्ले बयान और पैराय-ए-बयान का है। हज़रत मसीह ने सिर्फ़ इख़्लाक़ और तज़्किय-ए-क़ल्ब[1] पर ज़ोर दिया, क्योंकि शरीअ़त मूसवी मौजूद थी और वो उसका एक नुक़्ता भी बदलना नहीं चाहते थे। लेकिन क़ुरआन को इख़्लाक़ और क़ानून दोनों के अहकाम बयक वक़्त बयान करने थे, इसलिए क़ुदरती तौर पर उसने पैराय-ए-बयान[2] ऐसा इख़्तियार किया जो मजाज़ात व मुतशाबिहात[3] की जगह अहकाम व क़वानीन का साफ़-साफ़, जचा तुला पैराय-ए-बयान था। उसने सबसे पहले अ़फ़्वो-दरगुज़र पर ज़ोर दिया और उसे नेकी व फ़ज़ीलत की अस्ल क़रार दिया। साथ ही बदला लेने और सज़ा देने का दरवाज़ा भी खुला रखा कि नागुज़ीर हालतों में इसके बग़ैर चारा नहीं। लेकिन निहायत क़तई और वाज़ेह लफ़्ज़ों में बार-बार कह दिया कि बदले और सज़ा में किसी तरह की ना इन्साफ़ी और ज़्यादती नहीं होनी चाहिए। यक़ीनन दुनिया के तमाम नबियों और शरीअ़तों के अहकाम का माहसल[4] यही तीन उसूल रहे हैं :

और (देखो!) बुराई के बदले वैसी ही और उतनी ही बुराई है, लेकिन जो कोई बख़्श दे	وَجَزٰٓؤُا سَيِّئَةٍ سَيِّئَةٌ مِّثْلُهَا ۚ فَمَنْ عَفَا وَاَصْلَحَ فَاَجْرُهٗ عَلَى

1-मन की शुद्धता, संयम। 2-वर्णन शैली। 3-अलंकारों व प्रतीकों। 4-प्राप्य।

اللّٰہ ؕ اِنَّہٗ لَا یُحِبُّ الظّٰلِمِیْنَ ۝ وَلَمَنِ انْتَصَرَ بَعْدَ ظُلْمِہٖ فَاُولٰٓئِکَ مَا عَلَیْہِمْ مِّنْ سَبِیْلٍ ۝ اِنَّمَا السَّبِیْلُ عَلَی الَّذِیْنَ یَظْلِمُوْنَ النَّاسَ وَ یَبْغُوْنَ فِی الْاَرْضِ بِغَیْرِ الْحَقِّ ؕ اُولٰٓئِکَ لَہُمْ عَذَابٌ اَلِیْمٌ ۝ وَلَمَنْ صَبَرَ وَغَفَرَ اِنَّ ذٰلِکَ لَمِنْ عَزْمِ الْاُمُوْرِ ۝ (٤٢: ٤٠-٤٣)	और बिगाड़ने की जगह संवार ले तो (यक़ीन करो!) उसका अज्र अल्लाह के ज़िम्मे है। अल्लाह उन लोगों को दोस्त नहीं रखता जो ज़्यादती करने वाले हैं। और जिस किसी पर ज़ुल्म किया गया हो और वो ज़ुल्म के बाद उसका बदला ले तो उस पर कोई इल्ज़ाम नहीं। इल्ज़ाम उन लोगों पर है जो इन्सानों पर ज़ुल्म करते हैं और नाहक़ मुल्क में फ़साद का बाइस होते हैं। सो यही लोग हैं जिनके लिए अज़ाबे अलीम है। और जो कोई बदला लेने की जगह बुराई बर्दाश्त कर जाए और बख़्श दे तो यक़ीनन ये बड़ी ही उलुल-अ़ज़्मी की बात है! (42: 40-43)

उस्लूबे बयान पर ग़ौर करो! अगर्चे इब्तिदा में साफ़-साफ़ कह दिया था कि "فَمَنْ عَفَا وَاَصْلَحَ فَاَجْرُہٗ عَلَی اللّٰہِ" और बज़ाहिर अफ़्वो-दरगुज़र के लिए इतना कह देना काफ़ी था, लेकिन आख़िर में फिर दोबारा इस पर ज़ोर दिया: وَلَمَنْ صَبَرَ وَغَفَرَ اِنَّ ذٰلِکَ لَمِنْ عَزْمِ الْاُمُوْرِ ये तकरार इसलिए है अफ़्वो-दरगुज़र की अहमियत वाज़ेह हो जाए, यानी ये हक़ीक़त अच्छी तरह आशकारा हो जाए कि अगर्चे बदले

और सज़ा का दरवाज़ा खुला रखा गया है, लेकिन नेकी व फ़ज़ीलत की राह अफ़्वो-दरगुज़र की राह है।

फिर इस पहलू पर भी नज़र रहे कि क़ुरआन ने उस सज़ा को जो बुराई के बदले में दी जाए, बुराई ही के लफ़्ज़ से ताबीर किया : "وَجَزَاؤُ سَيِّئَةٍ سَيِّئَةٌ مِّثْلُهَا" यानी "सय्यिह[1]" के बदले में जो कुछ किया जाएगा वो भी "सय्यिह" ही होगा, अमले हसन[2] नहीं होगा। लेकिन उसका दरवाज़ा इसलिए बाज़ रखा गया कि अगर बाज़ न रखा जाए तो इससे भी ज़्यादा बुराइयाँ ज़ुहूर में आने लगेंगी। फिर उस आदमी की निस्बत जो माफ़ कर दे "अस्लह" का लफ़्ज़ कहा, यानी संवारने वाला। इससे मालूम हुआ कि यहाँ बिगाड़ के अस्ली संवारने वाले वही हुए जो बदले की जगह अफ़्वो-दरगुज़र की राह इख़्तियार करते हैं (51)।

क़ुरआन के ज़वाजिर व क़वारिअ़

मुमकिन है बाज़ तबीअ़तें यहाँ एक ख़दशा महसूस करें। अगर फ़िल-हक़ीक़त क़ुरआन की तमाम तालीम का अस्ले उसूल रहमत ही है तो फिर उसने मुख़ालिफ़ों की निस्बत ज़जरो-तौबीख़[3] का सख़्त पैराया क्यों इख़्तियार किया ?

इसका मुफ़स्सल जवाब तो अपने महल पर आएगा, लेकिन तक्मीले बहस के लिए ज़रूरी है कि यहाँ मुख़्तसर इशारा कर दिया जाए। बिला-शुब्हा क़ुरआन में ऐसे मक़ामात मौजूद है जहाँ उसने मुख़ालिफ़ों के लिए शिद्दतो-ग़िल्ज़त का इज़्हार किया है, लेकिन सवाल ये है कि किन मुख़ालिफ़ों के लिए? उनके लिए जिनकी

1-बुराई। 2-अच्छा कर्म। 3-आक्रोश, कटुता।

मुख़ालफ़त महज़ इख़्तिलाफ़े फ़िक्रो-इतिक़ाद की मुख़ालफ़त थी, यानी ऐसी मुख़ालफ़त जो मोआनिदाना और जारिहाना नौइयत नहीं रखती थी। हमें इससे क़तअ़न इनकार है। हम पूरे वुसूक़ के साथ कह सकते हैं कि तमाम क़ुरआन में शिद्दतो-ग़िल्ज़त का एक लफ़्ज़ भी नहीं मिल सकता जो इस तरह के मुख़ालिफ़ों के लिए इस्तेमाल किया गया हो। उसने जहाँ कहीं भी मुख़ालिफ़ों का ज़िक्र करते हुए सख़्ती का इज़्हार किया है, उसका तमाम-तर तअ़ल्लुक़ उन मुख़ालिफ़ों से है जिन की मुख़ालफ़त बुग़ज़ो-इनाद[1] और ज़ुल्मो-शरारत की जारिहाना मोआ़नदत थी। और ज़ाहिर है कि इस्लाहो-हिदायत की कोई तालीम भी इस सूरते-हाल से गुरेज़ नहीं कर सकती। अगर ऐसे मुख़ालिफ़ों के साथ भी नर्मी व शफ़क़त मल्हूज़ रखी जाए तो बिला-शुब्हा ये रहमत का सुलूक तो होगा, मगर इन्सानियत के लिए नहीं होगा, ज़ुल्मो-शरारत के लिए होगा। और यक़ीनन सच्ची रहमत का मे'यार ये नहीं होना चाहिए कि ज़ुल्मो-फ़साद की परवरिश करे। अभी चन्द सफ़्हों के बाद तुम्हें मालूम होगा कि क़ुरआन ने सिफ़ाते इलाही में रहमत के साथ अ़दालत को भी उसकी जगह दी है और सूर: फ़ातिहा में उसकी रुबूबियत और रहमत के बाद अ़दालत ही की सिफ़त जल्वागर हुई है कि वो रहमत से अ़दालत को अलग नहीं करता, बल्कि उसे ऐने रहमत का मुक़्तज़ा क़रार देता है। वो कहता है: तुम इन्सानियत के साथ रहमो-मुहब्बत का बरताव कर ही नहीं सकते, अगर ज़ुल्मो-शरारत के लिए तुम में सख़्ती नहीं है। इन्जील में हम देखते हैं कि हज़रत मसीह भी अपने ज़माने के मुफ़्सिदों को "सांप के बच्चे" और "डाकुओं का मज्मा" कहने पर मज्बूर हुए।

1-दुर्भावना, ईर्ष्या, द्वेष।

कुफ़्रे महज़ और कुफ़्रे जारिहाना

क़ुरआन ने 'कुफ़्र' का लफ़्ज़ इनकार के मअ्ना में इस्तेमाल किया है। इनकार दो तरह का होता है, एक ये कि इनकारे महज़[1] हो, एक ये कि जारिहाना[2] हो।

इनकारे महज़ से मक़्सूद ये है कि एक शख़्स तुम्हारी तालीम क़बूल नहीं करता, इसलिए कि उसकी समझ में नहीं आती या इसलिए कि उसमें तलबे सादिक़[3] नहीं है या इसलिए कि जो राह चल रहा है उसी पर क़ाने[4] है। बहरहाल कोई वजह हो, लेकिन वो तुम से मुत्तफ़िक़ नहीं है।

जारिहाना इनकार से मक़्सूद वो हालत है जो सिर्फ़ इतने ही पर क़नाअ़त नहीं करती, बल्कि उसमें तुम्हारे ख़िलाफ़ एक तरह की कद और ज़िद पैदा हो जाती है और फिर ये ज़िद बढ़ते-बढ़ते बुग़ज़ो-इनाद और ज़ुल्मो-शरारत की सख़्त से सख़्त सूरतें इख़्तियार कर लेती है। इस तरह का मुख़ालिफ़ सिर्फ़ यही नहीं करता कि तुम से इख़्तिलाफ़ रखता है, बल्कि उसके अन्दर तुम्हारे ख़िलाफ़ बुग़ज़ो-इनाद का एक ग़ैर महदूद जोश पैदा हो जाता है। वो अपनी ज़िन्दगी और ज़िन्दगी की सारी क़ुव्वतों के साथ तुम्हारी बरबादी व हलाकत के दरपै हो जाएगा। तुम कितनी ही अच्छी बात कहो, वो तुम्हें झुठलाएगा, तुम कितना ही अच्छा सुलूक करो, वो तुम्हें अज़िय्यत पहुँचाएगा, तुम कहो: रौशनी तारीकी से बेहतर है, तो वो कहेगा: तारीकी से बेहतर कोई चीज़ नहीं। तुम कहो: कड़वाहट से मिठास अच्छी है, तो वो कहे: नहीं, कड़वाहट ही में दुनिया की सबसे बड़ी

1-मात्र इनकार। 2-आक्रामक इनकार। 3-सत्याकांक्षा। 4-संतुष्ट।

लज़्ज़त है।

यही हालत है जिसे क़ुरआन इन्सानी फ़िक्रो-बसीरत के तअत्तुल से ताबीर करता है और इसी नौइयत के मुख़ालिफ़ है जिनके लिए उसके तमाम ज़वाजिर व क़वारिअ़ ज़ुहूर में आए हैं :

لَهُمْ قُلُوبٌ لَّا يَفْقَهُونَ بِهَا ز وَلَهُمْ أَعْيُنٌ لَّا يُبْصِرُونَ بِهَا ز وَلَهُمْ آذَانٌ لَّا يَسْمَعُونَ بِهَا ط أُولَٰئِكَ كَالْأَنْعَامِ بَلْ هُمْ أَضَلُّ ط أُولَٰئِكَ هُمُ الْغَافِلُونَ

(١٧٩ :٧)

उनके पास दिल हैं मगर सोचते नहीं, उनके पास आँखें हैं मगर देखते नहीं, उनके पास कान हैं मगर सुनते नहीं। वो ऐसे हो गए हैं जैसे चारपाए, नहीं बल्कि चारपायों से भी ज़्यादा खोए हुए। बिला-शुब्हा यही लोग हैं जो ग़फ़्लत में डूब गए हैं।

(7: 179)

हमारे मुफ़स्सिर इसी दूसरी हालत को "कुफ़्रे जुहूद" से ताबीर करते हैं।

दुनिया में जब कभी सच्चाई की कोई दावत ज़ाहिर हुई है तो कुछ लोगों ने उसे क़बूल कर लिया है, कुछ ने इनकार किया है, लेकिन कुछ लोग ऐसे हुए हैं जिन्होंने उनके ख़िलाफ़ तुग़यानो-जुहूद और ज़ुल्मो-शरारत की जत्थाबन्दी कर ली है। क़ुरआन का जब ज़ुहूर हुआ तो उसने भी ये तीनों जमाअ़तें अपने सामने पाईं। उसने पहली जमाअ़त को अपनी आग़ोशे तरबियत में ले लिया, दूसरी को दावतो-तज़्कीर का मुख़ातिब बनाया, मगर तीसरी के ज़ुल्मो-तुग़यान पर हस्बेहालत व ज़रूरत ज़ज्रो-तौबीख़ की। अगर ऐसे गिरोह के लिए भी उसके लबो-लहजे की सख़्ती "रहमत" के ख़िलाफ़ है तो

बिला-शुब्हा इस मअ़ना में क़ुरआन रहमत का मोतरिफ़ नहीं और यक़ीनन इस तराज़ू से उसकी रहमत तौली नहीं जा सकती।

तुम बार-बार सुन चुके हो कि वो दीने हक़ के मअ़नवी क़वानीन को काइनाते फ़ित्रत के आ़म क़वानीन से अलग नहीं क़रार देता, बल्कि उन्हीं का एक गोशा क़रार देता है। फ़ित्रते काइनात का अपने फ़े'लो-ज़ुहूर के हर गोशे में क्या हाल है? ये हाल है कि वो अगर्चे सर-तासर रहमत है, लेकिन रहमत के साथ अ़दालत और बख़्शिश के साथ जज़ा का क़ानून भी रखती है। पस क़ुरआन कहता है: मैं फ़ित्रत से ज़्यादा कुछ नहीं दे सकता। तुम्हारी जिस मज़्ऊमा रहमत से फ़ित्रत का ख़ज़ाना ख़ाली है, यक़ीनन मेरे आस्तीनो-दामन में नहीं मिल सकती :

فِطْرَتَ اللّٰهِ الَّتِیْ فَطَرَ النَّاسَ عَلَیْهَا ط لَا تَبْدِیْلَ لِخَلْقِ اللّٰهِ ط ذٰلِكَ الدِّیْنُ الْقَیِّمُ ۙ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا یَعْلَمُوْنَ ۝

(۳۰ :۳۰)

अल्लाह की फ़ित्रत जिस पर अल्लाह ने इन्सान को पैदा किया है। अल्लाह की बनावट में कभी तब्दीली नहीं हो सकती। यही (अल्लाह की ठहराई हुई फ़ित्रत) सच्चा और ठीक-ठीक देना है। लेकिन अक्सर लोग ऐसे हैं जो इस हक़ीक़त से बेख़बर हैं।

(30: 30)

क़ुरआन के उन तमाम मक़ामात पर नज़र डालो जहाँ उसने सख़्ती के साथ मुन्किरों का ज़िक्र किया है, ये हक़ीक़त बयक-नज़र वाज़ेह हो जाएगी (52)।

(5)

مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ

मालिकि यौमिद्दीनि

'रुबूबियत' और 'रहमत' के बाद जिस सिफ़त का ज़िक्र किया गया है वो 'अ़दालत' है और इसके लिए "مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ मालिकि यौमिद्दीन" की ताबीर इख़्तियार की गई है।

अद्-दीन

सामी ज़बानों का एक क़दीम माद्दा "दाना" और "दीन" है जो बदले और मुकाफ़ात के मअ़नों में बोला जाता था और फिर आईनो-क़ानून[1] के मअ़नों में भी बोला जाने लगा। चुनांचे इबरानी और आरामी में इसके मुतअ़द्दद मुश्तक़्क़ात मिलते हैं। आरामी ज़बान ही से ग़ालिबन ये लफ़्ज़ क़दीम ईरान में भी पहुँचा और पहलवी में "दीनियह" ने शरीअ़त व क़ानून का मफ़्हूम पैदा कर लिया। ख़ुरद ओस्ता में एक से ज़्यादा मवाक़े पर ये लफ़्ज़ मुस्तामल हुआ है और ज़रदुश्तियों की क़दीम अदबियात में इन्शा व किताबत के आईनो-क़वाइद को भी "दीने दबीरह" के नाम से मौसूम[2] किया है। अ़लावा बरीं ज़रदुश्तियों की एक मज़हबी किताब का नाम "दीने कारत" है जो ग़ालिबन नवीं सदी मसीही में इराक़ के एक मोबद ने मुरत्तब की थी (53)।

1-विधानों, नियम-क़ानूनों। 2-व्यक्त।

बहरहाल अरबी में 'अद्-दीन' के मअ़ना बदले और मुकाफ़ात के हैं, ख़्वाह अच्छाई का हो या बुराई का:

ستعلم ليلى اى دين تداينت   واى غريم فى التقاضى غريمها

पस ''مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ मालिकि यौमिद्दीनि'' के मअ़ना हुए वो जो जज़ा के दिन का हुक्मराँ है यानी रोज़े-क़ियामत का। इस सिलसिले में कई बातें क़ाबिले ग़ौर हैं :

'दीन' के लफ़्ज़ ने जज़ा की हक़ीक़त वाज़ेह कर दी

अव्वलन क़ुरआन ने न सिर्फ़ इस मौक़े पर बल्कि आ़मतौर पर जज़ा के लिए ''अद्-दीन'' का लफ़्ज़ इख़्तियार किया है और इसी लिए वो क़ियामत को भी उमूमन ''यौमिद्दीन'' से ताबीर करता है। ये ताबीर इसलिए इख़्तियार की गई कि जज़ा के बारे में जो एतिक़ाद पैदा करना चाहता था, उसके लिए यही ताबीर सबसे ज़्यादा मौज़ूँ और वाक़ई ताबीर थी। वो जज़ा को आमाल का कुदरती नतीजा और मुकाफ़ात क़रार देता है।

नुज़ूले क़ुरआन के वक़्त पैरवाने मज़ाहिब का आ़लमगीर एतिक़ाद ये था कि जज़ा महज़ ख़ुशनूदी और उसके क़हरो-ग़ज़ब का नतीजा है, आमाल के नताइज को उसमें दख़ल नहीं। उलूहियत और शाहियत का तशाबुह तमाम मज़हबी तसव्वुरात की तरह, इस मामले मे गुमराहिए फ़िक्र का मूजिब हुआ था। लोग देखते थे कि एक मुत्लक़ुल-इनान बादशाह कभी ख़ुश हो कर इनामो-इकराम देने लगता है, कभी बिगड़ कर सज़ाएँ देने लगता है, इसलिए ख़याल करते थे कि ख़ुदा का भी ऐसा ही हाल है। वो कभी हमसे ख़ुश हो

जाता है, कभी ग़ैज़ो-ग़ज़ब में आ जाता है। तरह-तरह की कुर्बानियों और चढ़ावों की रस्म इसी एतिक़ाद से पड़ी थी। लोग देवताओं का जोशे ग़ज़ब ठंढा करने के लिए कुर्बानियाँ करते और उनकी नज़रे इल्तिफ़ात हासिल करने के लिए नज़रें चढ़ाते।

यहूदियों और ईसाइयों का आम तसव्वुर देवबानी तसव्वुरात से अलग हो गया था, लेकिन जहाँ तक इस मामले का तअल्लुक़ है, उनके तसव्वुर ने भी कोई वक़ीअ तरक़्क़ी नहीं की थी। यहूदियत बहुत से देवताओं की जगह ख़ानदाने इस्राईल का एक ख़ुदा मानते थे, लेकिन पुराने देवताओं की तरह ये ख़ुदा भी शाही और मुत्लकुल-इनानी का ख़ुदा था। वो कभी ख़ुश हो कर उन्हें अपनी चहीती क़ौम बना लेता, कभी जोशे इन्तिक़ाम में आकर बरबादी व हलाकत के हवाले कर देता। ईसाइयों की एतिक़ाद था कि आदम के गुनाह की वजह से उसकी पूरी नस्ल मग़ज़ूब[1] हो गई और जब तक ख़ुदा ने अपनी सिफ़ते इब्नियत[2] को ब-शक्ले मसीह[3] (अलैहिस्सलाम) कुर्बान नहीं कर दिया, उसके नस्ली गुनाह और मग़ज़ूबियत का कफ़्फ़ारा न हो सका।

मजाज़ाते अमल का मामला भी दुनिया के आलमगीर क़ानूने फ़ित्रत का एक गोशा है

लेकिन क़ुरआन ने जज़ा व सज़ा का एतिक़ाद एक दूसरी ही शक्लो-नौइयत का पेश किया है। वो उसे ख़ुदा का कोई ऐसा फ़ेल नहीं क़रार देता जो काइनाते हस्ती के आम क़वानीन व निज़ाम[4] से अलग हो, बल्कि उसी का एक क़ुदरती गोशा क़रार देता है। वो

1-प्रताड़ित, प्रकोपग्रस्त। 2-पुत्रत्व। 3-मसीह के रूप में। 4-क़ानून-व्यवस्था।

कहता है: काइनाते हस्ती का आलमगीर क़ानून ये है कि हर हालत कोई न कोई असर रखती है और हर चीज़ का कोई न कोई ख़ास्सा है। मुमकिन नहीं यहाँ कोई शय अपना वुजूद रखती हो और असरात व नताइज के सिलसिले से बाहर हो। पस जिस तरह ख़ुदा ने अज्सामो-मवाद में ख़्वासो-नताइज रखे हैं, इसी तरह आमाल में भी ख़्वासो-नताइज हैं। और जिस तरह जिस्मे इन्सानी के क़ुदरती इन्फ़िआलात[1] हैं, इसी तरह रूहे इन्सानी के लिए भी क़ुदरती इन्फ़िआलात हैं। जिस्मानी मोअस्सिरात जिस्म पर मुरत्तब होते हैं, मअ़्नवी मोअस्सिरात[2] से रूह मुतअस्सिर होती है। आमाल के यही क़ुदरती ख़्वासो-नताइज हैं जिन्हें जज़ा व सज़ा से ताबीर किया गया है। अच्छे अ़मल का नतीजा अच्छाई है और ये सवाब[3] है, बुरे अ़मल का नतीजा बुराई है और ये अ़ज़ाब[4] है। सवाब और अ़ज़ाब के इन असरात की नौइयत क्या होगी? वहये इलाही ने हमारी फ़हमो-इस्तेदाद[5] के मुताबिक़ उसका नक़्शा खींचा है। उस नक़्शे में एक मुरक़्क़ा बहिश्त[6] का है, एक दोज़ख़[7] का। बहिश्त के नआइम[8] उनके लिए हैं जिनके आमाल बहिश्ती होंगे। दोज़ख़ की उक़ूबतें[9] उनके लिए हैं जिनके आमाल दोज़ख़ी होंगे :

لَا يَسْتَوِىٓ اَصْحٰبُ النَّارِ وَاَصْحٰبُ الْجَنَّةِ ؕ اَصْحٰبُ الْجَنَّةِ هُمُ الْفَآئِزُوْنَ ۝ (٥٩:٢٠)

अस्हाबे जन्नत[10] और अस्हाबे दोज़ख़[11] (54) (अपने आमाल व नताइज में) यक्साँ नहीं हो सकते। कामयाब इन्सान वही हैं जो अस्हाबे जन्नत हैं। (59:20)

1-नैसर्गिक क्रिया-प्रतिक्रियाएं। 2-आध्यात्मिक प्रभावों। 3-पुण्य। 4-प्रकोप, कुफल। 5-समझ, विवेक की सीमा। 6-स्वर्ग। 7-नर्क। 8-पुरस्कार। 9-यातनाएं। 10-स्वर्ग वाले। 11-नर्क वाले।

जिस तरह माद्दियात में ख़्वासो-नताइज हैं इसी तरह मअ़्नवियात में भी हैं

वो कहता है: तुम देखते हो कि फ़ित्रत हर गोश-ए-वुजूद में अपना क़ानूने मुकाफ़ात रखती है। मुमकिन नहीं कि इसमें तग़य्युर व तसाहुल हो। फ़ित्रत ने आग में ख़ास्सा रखा है कि जलाए। अब सोज़ो-तपिश फ़ित्रत की वो मुकाफ़ात हो गई जो हर उस इन्सान के लिए है जो आग के शोलों में हाथ डाल देगा। मुमकिन नहीं कि तुम आग में कूदो और उस फ़ेअ़्ल के मुकाफ़ात से बच जाओ। पानी का ख़ास्सा ठंढक और रुतूबत है, यानी ठंढक और रुतूबत वो मुकाफ़ात है जो फ़ित्रत ने पानी में वदीअ़त कर दी है। अब मुमकिन नहीं कि तुम दरयिा में उतरो और उस मुकाफ़ात से बच जाओ। फिर जो फ़ित्रत काइनाते हस्ती की हर चीज़ और हर हालत में मुकाफ़ात रखती है, क्योंकर मुमकिन है कि इन्सान के आमाल के लिए मुकाफ़ात[1] न रखे? यही मुकाफ़ात जज़ा व सज़ा है।

आग जलाती है, पानी ठंढक पैदा करता है, संखिया खाने से मौत, दूध से ताक़त आती है, कुनीन से बुख़ार रुक जाता है, जब अशिया की इन तमाम मुकाफ़ात पर तुम्हें तअ़ज्जुब नहीं होता, क्योंकि ये तुम्हारी ज़िन्दगी की यक़ीनियात हैं तो फिर आमाल के मुकाफ़ात पर क्यों तअ़ज्जुब होता है? अफ़सोस तुम पर ! तुम अपने फ़ैसलों में कितने ना हमवार[2] हो।

तुम गेहूँ बोते हो और तुम्हारे दिल में कभी ये ख़दशा नहीं गुज़रता कि गेहूँ पैदा नहीं होगा। अगर कोई तुम से कहे कि मुमकिन

1-प्रभाव, तासीर। 2-असमानतापूर्ण।

है गेहूँ की जगह जुवार पैदा हो जाए, तो तुम उसे पागल समझोगे, क्यों? इसलिए कि फ़ित्रत के क़ानूने मुकाफ़ात का यक़ीन तुम्हारी तबीअत में रासिख़ हो गया है। तुम्हारे वहमो-गुमान में भी ये ख़तरा नहीं गुज़र सकता कि फ़ित्रत गेहूँ लेकर उसके बदले में जुवार दे देगी। इतना ही नहीं बल्कि तुम ये भी नहीं मान सकते कि अच्छे क़िस्म का गेहूँ लेकर बुरे क़िस्म का गेहूँ देगी। तुम जानते हो कि वो बदला देने में क़तई और शको-शुब्हा से बालातर है। फिर बताओ ! जो फ़ित्रत गेहूँ के बदले गेहूँ और जुवार के बदले जुवार दे रही है, क्योंकर मुमकिन है कि अच्छे अ़मल के बदले अच्छा और बुरे अ़मल के बदले बुरा नतीजा न रखती हो ?

أَمْ حَسِبَ الَّذِينَ اجْتَرَحُوا السَّيِّئَاتِ أَنْ نَجْعَلَهُمْ كَالَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ سَوَاءً مَحْيَاهُمْ وَمَمَاتُهُمْ ۚ سَاءَ مَا يَحْكُمُونَ ○

जो लोग बुराइयाँ करते हैं क्या वो समझते हैं हम उन्हें उन लोगों जैसा कर देंगे जो ईमान रखते हैं और जिन के आमाल अच्छे हैं? दोनों बराबर हो जाएँ, ज़िन्दगी में और मौत में भी? (अगर इन लोगों की फ़हमो-दानिश[1] का यही फ़ैसला है तो) अफ़सोस उनके फ़ैसले पर !

وَخَلَقَ اللَّهُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ بِالْحَقِّ وَلِتُجْزَىٰ كُلُّ نَفْسٍ بِمَا كَسَبَتْ وَهُمْ

और अल्लाह ने आसमान व ज़मीन को (बेकार और अ़बस नहीं बनया है, बल्कि) हिकमत व मसलहत के साथ बनाया है और इसलिए बनाया है कि हर

1-विवेक-बुद्धि।

لا يُظْلَمُوْنَ ٥

(٤٥: ٢١-٢٢)

जान को उसकी कमाई के मुताबिक़ बदला मिले, और ये बदला ठीक-ठीक मिलेगा, किसी पर ज़ुल्म नहीं किया जाएगा। (45: 21-22)

चुनांचे यही वजह है कि क़ुरआन ने जज़ा व सज़ा के लिए 'अद्-दीन' का लफ़्ज़ इख़्तियार किया है, क्योंकि मुकाफ़ाते अ़मल का मफ़्हूम अदा करने के लिए सबसे ज़्यादा मौज़ूँ लफ़्ज़ यही था।

इस्तिलाहे क़ुरआनी में "कस्ब"

और फिर यही वजह है कि हम देखते हैं उसने अच्छे बुरे काम करने को जा-बजा "कस्ब" के लफ़्ज़ से ताबीर किया है। "कसब" के मअ़ना अ़रबी में ठीक-ठीक वही हैं जो उर्दू में कमाई के हैं, यानी ऐसा काम जिसके नतीजे से तुम कोई फ़ायदा हासिल करना चाहो, अगर्चे फ़ायदे की जगह नुक़सान भी जाए। मतलब ये हुआ कि इन्सान के लिए जज़ा और सज़ा ख़ुद इन्सान ही की कमाई है। जैसी किसी की कमाई होगी वैसा ही नतीजा पेश आएगा। अगर एक इन्सान ने अच्छे काम करके अच्छी कमाई कर ली है तो उसके लिए अच्छाई है, अगर किसी ने बुराई करके बुराई कमा ली है तो उसके लिए बुराई है :

كُلُّ امْرِئٍ بِمَا كَسَبَ رَهِيْنٌ ٥

(٥٢: ٢١)

हर इन्सान उस नतीजे के साथ जो उसकी कमाई है, बँधा हुआ है। (52: 21)

सूरः बक़रा में जज़ा व सज़ा का क़ायदा कुल्लिया बता दिया:

(हर इन्सान के लिए वही है जैसी कुछ उसकी कमाई होगी) जो कुछ उसे पाना है वो भी उसकी कमाई है और जिसके लिए उसे जवाबदेह होना है वो भी उसकी कमाई है। (2: 286)	لَهَا مَا كَسَبَتْ وَعَلَيْهَا مَا اكْتَسَبَتْ ط (٢٨٦:٢)

इसी तरह क़ौमों और जमाअ़तों की निस्बत भी एक आ़म क़ायदा बता दिया :

ये एक उम्मत थी जो गुज़र चुकी। इसके लिए वो नतीजा था जो इसने कमाया और तुम्हारे लिए वो नतीजा है जो तुम कमाओगे। तुम से इसकी पूछ कुछ नहीं होगी कि उन लोगों के आमाल कैसे थे। (2: 134)	تِلْكَ أُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ ۚ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَا كَسَبْتُمْ ۚ وَلَا تُسْئَلُونَ عَمَّا كَانُوا يَعْمَلُونَ ○ (١٣٤:٢)

अ़लावा बरीं साफ़-साफ़ लफ़्ज़ों में जा-बजा ये हक़ीक़त वाज़ेह कर दी कि अगर दीने इलाही नेक अ़मली की तरग़ीब देता है और बद अ़मली से रोकता है तो ये सिर्फ़ इसलिए है कि इन्सान नुक़्सान व हलाकत से बचे और निजातो-सआ़दत हासिल करे। ये बात नहीं है कि ख़ुदा का ग़ज़बो-क़हर उसे अ़ज़ाब देना चाहता हो और उससे बचने के लिए मज़हबी रियाज़तों[1] और इबादतों की ज़रूरत हो :

1-धार्मिक रियाज़ों-अभ्यासों।

مَنْ عَمِلَ صَالِحًا فَلِنَفْسِهٖ وَمَنْ اَسَآءَ فَعَلَيْهَا ؕ وَمَا رَبُّكَ بِظَلَّامٍ لِّلْعَبِيْدِ ۝

(٤١ : ٤٦)

जिस किसी ने नेक काम किया तो अपने लिए किया और जिस किसी ने बुराई की तो ख़ुद उसी के आगे आएगी। और ऐसा नहीं है कि तुम्हारा परवरदिगार अपने बन्दों के लिए ज़ुल्म करने वाला हो! (41: 46)

एक मशहूर हदीसे क़ुदसी में इसी हक़ीक़त कह तरफ़ इशारा किया है :

يا عبادى ! لو ان اولكم وآخركم وانكم وجنكم كانوا على اتقىٰ قلب رجل واحد منكم، مازاد فى ملكى شيئا ـ ياعبادى ! لو ان اولكم وآخركم وانكم وجنكم كانوا على افجر قلب رجل واحد منكم، ما نقص ذلك من مُلكى شيئاً ـ ياعبادى !

ऐ मेरे बन्दो ! अगर तुममें से सब इन्सान जो पहले गुज़र चुके और वो सब जो बाद को पैदा होंगे और तमाम इन्स और तमाम जिन्न, उस शख़्स की तरह नेक हो जाते जो तुममें सबसे ज़्यादा मुत्तक़ी[1] है तो याद रखो! इससे मेरी ख़ुदाई में कुछ भी इज़ाफ़ा न होता। ऐ मेरे बन्दो ! अगर वो सब जो पहले गुज़र चुके और वो सब जो बाद को पैदा होंगे और तमाम इन्स और तमाम जिन्न उस शख़्स की तरह बदकार हो जो जाते जो तुममें सबसे बदकार है तो इससे

1-संयमी।

لو ان اولكم وآخركم وانكم وجنكم قاموا فى صعيد واحد فسألونى فاعطيت كل انسان مسألته، ما نقص ذلك مما عندى الا كما ينقص المخيط اذا ادخل البحر۔ يا عبادى ! انما هى اعمالكم احصيها لكم ثم اوفيكم اياها۔ فمن وجد خيرا فليحمد الله، ومن وجد غير ذلك فلا يلومن الا نفسه۔

(مسلم عن ابى ذر) (٥٥)

मेरी ख़ुदावन्दी में कुछ भी नुक़सान न होता। ऐ मेरे बन्दो! अगर वो सब जो पहले गुज़र चुके और वो सब जो बाद को पैदा होंगे एक मक़ाम पर जमा होकर मुझसे सवाल करते और मैं हर इन्सान को उसकी मुँह मांगी मुराद बख़्श देता तो मेरी रहमतो-बख़्शिश के ख़ज़ाने में इससे ज़्यादा कमी न होती जितनी की सुई के नाके जितना पानी निकल जाने से समन्दर में हो सकती है। ऐ मेरे बन्दो! याद रखो! ये तुम्हारे आमाल ही हैं जिन्हें मैं तुम्हारे लिए इन्ज़िबात और निगरानी में रखता हूँ और फिर उन्हीं के नताइज बग़ैर किसी कमी-बेशी के तुम्हें वापस देता हूँ। पस तुम में से जो कोई अच्छाई पाए, चाहिए कि अल्लाह की हम्दो-सना[1] करे। और जिस किसी को बुराई पेश आए तो चाहिए कि ख़ुद अपने वुजूद के

1-प्रशंसा-स्तुति।

सिवा और किसी को मलामत[1]
न करे।
(मुस्लिम: अन अबी ज़र) (55)

यहाँ ये खदशा किसी के दिल में वाके न हो कि ख़ुद क़ुरआन ने भी तो जा-बजा ख़ुदा की ख़ुशनूदी और ना रज़ामन्दी का ज़िक्र किया है। बिला-शुब्हा किया है! इतना ही नहीं बल्कि वो इन्सान की नेक अ़मली का आला दर्जा यही क़रार देता है कि जो कुछ करे, सिर्फ़ अल्लाह की ख़ुशनूदी ही के लिए करे, लेकिन ख़ुदा की जिस रिज़ा व ग़ज़ब का वो इस्बात करता है, वो जज़ा व सज़ा की इल्लत नहीं, बल्कि जज़ा व सज़ा का क़ुदरती नतीजा है, यानी ये नहीं कहता कि जज़ा व सज़ा महज़ ख़ुदा की ख़ुशनूदी और नाराज़ी की नतीजा है, नेक व बद आमाल का नतीजा नहीं है, बल्कि वो कहता है जज़ा व सज़ा तमाम-तर इन्सान के आमाल का नतीजा है और ख़ुदा नेक अ़मली से ख़ुशनूद होता है, बद अ़मली ना पसन्द करता है। ज़ाहिर है कि ये तालीम क़दीम एतिक़ाद से न सिर्फ़ मुख़्तसर है, बल्कि यक्सर मुतज़ाद[2] है।

बहरहाल, जज़ा व सज़ा की इस हक़ीक़त के लिए "अद्-दीन" का लफ़्ज़ निहायत मौज़ूँ लफ़्ज़ है और उन तमाम गुमराहियों की राह बंद कर देता है जो इस बारे में फैली हुई थीं। सूर: फ़ातिहा में मुजर्रद इस लफ़्ज़ के इस्तेमाल ने जज़ा व सज़ा की अस्ली हक़ीक़त आशकारा कर दी।

1-दोषारोपण। 2-विरोधाभासी।

अद्-दीन ब-मअ़ना क़ानून व मज़हब

सानियन[1], यही वजह है कि मज़हब और क़ानून के लिए भी "अद्-दीन" का लफ़्ज़ इस्तेमाल किया गया, क्योंकि मज़हब का बुनियादी एतिक़ाद मुकाफ़ाते अ़मल का एतिक़ाद है और क़ानून की बुनियाद भी ताज़ीरो-सियासत[2] पर है। सूरः यूसुफ़ में जहाँ ये वाक़िआ बयान किया है कि हज़रत यूसुफ़ (अ़लैहिस्सलाम) ने अपने छोटे भाई को अपने पास रोक लिया था, वहाँ फ़रमाया :

مَا كَانَ لِيَأْخُذَ أَخَاهُ فِي دِينِ الْمَلِكِ إِلَّا أَنْ يَشَاءَ اللَّهُ (12: 76)

यहाँ बादशाहे मिस्र के दीन से मक़सूद उसका क़ानून है।

'मालिकि यौमिद्दीनि' में अ़दालते इलाही का एलान है

सालिसन, यहाँ रुबूबियत और रहमत के बाद सिफ़ाते क़हरो-जलाल[3] में से किसी सिफ़त का ज़िक्र नहीं किया, बल्कि "मालिकि यौमिद्दीन" की सिफ़त बयान की गई जिससे अ़दालते इलाही[4] का तसव्वुर हमारे ज़हेन में पैदा हो जाता है। इससे मालूम हुआ कि क़ुरआन ने ख़ुदा की सिफ़ात का जो तसव्वुर क़ायम किया है उसमें क़हरो-ग़ज़ब के लिए कोई जगह नहीं। अल्बत्ता अ़दालत ज़रूर है और सिफ़ाते क़हरिय्या जिस क़द्र बयान की गई हैं, दरअसल इसी के मज़ाहिर हैं (56)।

फ़िल-हक़ीक़त सिफ़ाते इलाही के तसव्वुर का यही मक़ाम है जहाँ फ़िक्रे इन्सानी ने हमेशा ठोकर खाई है। ये ज़ाहिर है कि फ़ित्रते

1-दूसरी बात यह कि। 2-दंड-राजनीति। 3-कोप-प्रकोप के गुणों। 4-ईश्वरीय न्याय।

काइनात, रुबूबियतो-रहमत के साथ अपने मजाज़ात भी रखती है और अगर एक तरफ़ इसमें परवरिशो-बख़्शिश है तो दूसरी तरफ़ मुआख़िज़ा व मुकाफ़ात भी है। फ़िक्रे इन्सानी के लिए फ़ैसला तलब सवाल ये था कि फ़ित्रत के मजाज़ात उसके क़हरो-ग़ज़ब का नतीजा है या अदलो-क़िस्त के? इसका फ़िक्रे ना-रसा[1] अदलो-क़िस्त की हक़ीक़त मालूम न कर सका। उसने मजाज़ात को क़हरो-ग़ज़ब पर महमूल कर लिया और यहीं से ख़ुदा की सिफ़ात में ख़ौफ़ो-दहशत का तसव्वुर पैदा हो गया। हालाँकि अगर वो फ़ित्रते काइनात को ज़्यादा क़रीब हो कर देख सकता तो मालूम कर लेता कि जिन मज़ाहिर को क़हरो-ग़ज़ब पर महमूल कर रहा है वो क़हरो-ग़ज़ब का नतीजा नहीं हैं, लेकिन ऐन मुक़्तज़ा-ए-रहमत हैं। अगर फ़ित्रते काइनात में मुकाफ़ात का मुआख़िज़ा न होता या तामीन की तहसीनो-तकमील के लिए तख़्रीब न होती तो मीज़ाने अदल काइन न रहता और तमाम निज़ामे हस्ती दरहम-बरहम हो जाता।

कारख़ान-ए-हस्ती के तयें मअ़नवी अ़नासिर: रुबूबियत, रहमत, अ़दालत

राबिअ़न, जिस तरह कारख़ान-ए-ख़िल्क़त अपने वुजूदो-बक़ा के लिए रुबूबियत और रहमत का मोहताज है, इसी तरह अ़दालत का भी मोहताज है। यही तीन मअ़नवी उन्सुर हैं जिनसे ख़िल्क़तो-हस्ती का क़िवाम ज़ुहूर में आया है। रुबूबियत परवरिश करती है, रहमत इफ़ाद-ओ-फ़ैज़ान[2] का सर-चश्मा है और अ़दालत से बनाव और ख़ूबी ज़ुहूर में आती और नुक़्सानो-फ़साद का इज़ाला होता है।

1-अदूरदर्शी सोच, लघुचेता। 2-दया-उपकार, करुणा।

तामीरो-तहसीन के तमाम हक़ाइक़ दर-असल अ़दलो-तवाज़ुन का नतीजा हैं

तुमने अभी रूबूबियत और रहमत के मक़ामात का मुशाहदा[1] किया है। अगर एक क़दम आगे बढ़ो तो इसी तरह अ़दालत का मक़ाम भी नमूदार हो जाए। तुम देखोगे कि इस कारख़ान-ए-हस्ती में बनाव, सुल्झाव, ख़ूबी और जमाल में से जो कुछ भी है, इसके सिवा कुछ नहीं है कि अ़दलो-तवाज़ुन[2] की हक़ीक़त का ज़ुहूर है। ईजाबो-तामीर को तुम उसकी बेशुमार शक्लों में देखते हो और इसलिए बेशुमार नामों से पुकारते हो, लेकिन अगर हक़ीक़त का सुराग़ लगाओ तो देख लो कि ईजाबी हक़ीक़त यहाँ सिर्फ़ एक ही है और वो अ़दलो-एतिदाल[3] है।

"अ़दल" के मअ़ना है बराबर होना, ज़्यादा न होना। इसी लिए मामलात और क़ज़ाया में फ़ैसला कर देने को अ़दालत कहते हैं कि हाकिम दो फ़रीक़ों की बाहम-दिगर ज़्यादतियाँ दूर कर देता है। तराज़ू की तौल को भी मुअ़ादलत कहते हैं, क्योंकि वो दोनों पल्लों का वज़न बराबर कर देता है। यही अ़दालत जब अशिया में नमूदार होती है तो उनकी कम्मियत और कैफ़ियत में तवाज़ुन पैदा कर देती है। एक जुज़ का दूसरे जुज़ से कम्मियत या कैफ़ियत में मुनासिब व मौज़ूँ होना अ़दालत है।

अब ग़ौर करो! कारख़ान-ए-हस्ती में बनाव और ख़ूबी के जिस क़द्र मज़ाहिर हैं किस तरह इसी हक़ीक़त से ज़ुहूर में आए हैं। वुजूद क्या है? हकीम बतलाता है कि अ़नासिर की तरकीब का

1-जानकारी ली, अध्ययन किया। 2-न्याय व संतुलन। 3-न्याय-साम्यता।

एतिदाल है। अगर इस एतिदाली हालत में ज़रा भी फ़ुतूर[1] वाके़ हो जाए, वुजूद की नुमूद मादूम[2] हो जाए। जिस्म क्या है? जिस्मानी मवाद[3] की एक ख़ास एतिदाली हालत है। अगर इसका कोई एक जुज़[4] भी ग़ैर मोतदिल हो जाए, जिस्म की हयअते तरकीबी[5] बिगड़ जाए। सेहत व तन्दुरुस्ती क्या है? अख़्लात का एतिदाल है। जहाँ इसका क़िवाम बिगड़ा, सेहत में इन्हिराफ़ हो गया। हुस्नो-जमाल क्या है? तनासुबो-एतिदाल की एक कैफ़ियत है। अगर इन्सान में है तो ख़ूबसूरत इन्सान है, नबातात में है तो फूल है, इमारत में है तो ताज महल है। नग़मा की हलावत क्या है? सुरों की तरकीब का तनासुब व एतिदाल। अगर एक सुर भी बेमेल हुआ, नग़मे की कैफ़ियत जाती रही।

फिर कुछ अशिया व अज्साम ही पर मौक़ूफ़ नहीं, कारख़ान-ए-हस्ती का तमाम निज़ाम ही अ़दलो-तवाज़ुन पर क़ायम है। अगर एक लम्हा के लिए ये हक़ीक़त ग़ैर मौजूद हो जाए तो तमाम निज़ामे आ़लम दरहम-बरहम हो जाए, ये क्या बात है कि निज़ामे शम्सी[6] का हर कुरा[7] अपनी-अपनी जगह मुअ़ल्लक़[8] है, अपने-अपने दायरों में हरकत कर रहा है और ऐसा कभी नहीं होता कि ज़रा भी इन्हिराफ़ व मैलान वाके़ हो? यही अ़दालत का क़ानून है जिसने सबको एक ख़ास नज़्म के साथ जकड़-बंद कर रखा है। तमाम कुरे अपनी- अपनी कशिश रखते हैं और उनके मज्मूई जज़्बो-इन्जज़ाब के तवाज़ुन से ऐसी हालत पैदा हो गई है कि हर कुरा अपनी जगह क़ायम व मुअ़ल्लक़ है। अगर कोई कुरा इस क़ानूने अ़दालत से बाहर

1-बिगाड़ा। 2-विनष्ट। 3-पदार्थों। 4-अंग। 5-जीवशास्त्रीय समीकरण। 6-सौर मंडल। 7-गृह। 8-टंगा, स्थिर।

हो जाए तो मअन दूसरे कुरों से टकरा जाए और तमाम निज़ामे शम्सी मुख़्तल[1] हो जाए।

आदाद के तनासुब की अज़ीमुश्शान सदाक़त जिस पर रियाज़ी और हिसाब के तमाम हक़ाइक़ का दारो-मदार है, क्या है? यही अ़दल-तआ़दुल की हक़ीक़त है। जिस दिन ये हक़ीक़त ज़ेहने इन्सानी पर खुली थी, उलमो-मआ़रिफ़ के तमाम दरवाज़े बाज़ हो गए थे।

वज़्अ़े मीज़ान

चुनांचे क़ुरआन ने इस हक़ीक़त की तरफ़ जा-बजा इशारात किए हैं :

وَالسَّمَآءَ رَفَعَهَا وَ وَضَعَ الْمِيْزَانَ ۝ اَلَّا تَطْغَوْا فِى الْمِيْزَانِ ۝
(٥٥: ٧-٨)

और उसने आसमान को बुलन्द कर दिया और (अजरामे[2] समाविया के क़याम के लिए क़ानूने अ़दालत का) मीज़ान बना दिया [ताकि तुम तौलने में कमी-बेशी न करो (57)]।

ये "अल-मीज़ान" यानी तराज़ू क्या है? तआ़दुल व तवाज़ुन का क़ानून है जो तमाम अजरामे समाविया को उनकी मुक़र्ररा जगह में थामे हुए है और कभी ऐसा नहीं हो सकता कि उसके तवाज़ुन का पल्ला किसी एक तरफ़ झुक पड़े। अजरामे समाविया का यही वो ग़ैर मरई सुतून है जिसकी निस्बत सूर: रअ़द में फ़रमाया :

اَللّٰهُ الَّذِىْ رَفَعَ السَّمٰوٰتِ

अल्लाह जिसने आसमानों को (यानी अजरामे समाविया को)

1-बिखरना, टूट-फूट। 2-आकाशीय पिंडों।

بِغَيْرِ عَمَدٍ تَرَوْنَهَا (۱۳:۲)

बग़ैर सुतून[1] के बुलन्द कर दिया है और तुम (उस की ये हिकमत) देख रहो हो ! (13: 2)

और सूर: लुक़्मान में भी इसी की तरफ़ इशारा किया है :

خَلَقَ السَّمٰوٰتِ بِغَيْرِ عَمَدٍ تَرَوْنَهَا (۳۱:۱۰)

उसने आसमानों को (यानी अजरामे समाविया को) पैदा कर दिया और तुम देख रहो हो कि कोई सुतून उन्हें थामे हुए नहीं है। (31: 10)

ये कहना ज़रूरी नहीं कि अ़दलो-तआ़दुल की हक़ीक़त समझाने के लिए मीज़ान यानी तराज़ू से बेहतर कोई आ़म फ़हम और दिलनशीं ताबीर हो सकती थी।

इसी तरह सूर: आले इमरान की मशहूर आयते शहादत में قَائِمًۢا بِالْقِسْطِ (۳:۱۸) क़ाइमम्-बिल्-क़िस्ति (3:18) कह कर इसी हक़ीक़त की तरफ़ इशारा किया है, यानी काइनाते ख़िल्क़त में उसके तमाम काम अ़दालत के साथ क़ायम हैं और उसने क़यामे हस्ती के लिए यही क़ानून ठहरा दिया है।

आमाले इन्सानी का अ़दलो-क़िस्त पर मब्नी होना क़ुरआन की इस्तिलाह में 'अ़मले सालेह' है

क़ुरआन कहता है: जब अ़दालत का ये क़ानून काइनाते ख़िल्क़त के हर गोशे में नाफ़िज़ है तो क्योंकर मुमकिन है कि इन्सान

1-स्तंभ।

के अफ़्कारो-आमाल के लिए बेअसर हो जाए! पस इस गोशे में भी वही अ़मल मक़्बूल[1] होता है जो अफ़रातो-तफ़रीत[2] और मैलो-इन्हिराफ़ की जगह फ़ित्रत के अ़दलो-क़िस्त पर मब्नी होता है और इसी को वह्ये इलाही "अ़मले सालेह[3]" के नाम से ताबीर करती है। अगर तामीरो-जमाल के सैकड़ों नामों से तुम्हें मुग़ालता नहीं होता और ये बात पा लेते हो कि इन सबमें अस्ल हक़ीक़त एक ही है और वो अ़दालत है तो इस गोशे में ईमानो-अ़मल की इस्तिलाह से तुम्हें क्यों तवह्हुश हो और क्यों बे-तहाशा इनकार कर बैठो ?

اَفَغَيْرَ دِيْنِ اللّٰهِ يَبْغُوْنَ وَلَهٗٓ اَسْلَمَ مَنْ فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ طَوْعًا وَّكَرْهًا وَّاِلَيْهِ يُرْجَعُوْنَ ۝

(٣: ٨٣)

क्या ये लोग चाहते हैं अल्लाह का ठहराया हुआ दीन छोड़ कर कोई दूसरा दीन तलाश करें? हालांकि आसमान और ज़मीन में जो कोई भी है सब उसी के हुक्म की इताअ़त कर रहे हैं, ख़ुशी से हो या नाख़ुशी से (मगर सबके लिए चलना उसी के ठहराए हुए क़ानून पर है) और बिल-आख़िर सब उसी की तरफ़ लौटने वाले हैं। (3: 83)

बद-अ़मली के लिए क़ुरआन के इख़्तियाराते लुग़विय्या

यही वजह है कि क़ुरआन ने बद अ़मली और बुराई के लिए

1-स्वीकार्य। 2-कम-ज़्यादा, असाम्य। 3-सदकर्म।

जितनी ताबीरात[1] इख़्तियार की हैं सब ऐसी हैं कि अगर उनके मआनी पर ग़ौर किया जाए तो अ़दलो-तवाज़ुन की ज़िद और मुख़ालिफ़ साबित होंगी। गोया क़ुरआन के नज़दीक बुराई की हक़ीक़त इसके सिवा कुछ नहीं है कि हक़ीक़ते अ़दल से इन्हिराफ़ हो, मसलन ज़ुल्म, तुग़यान, इसराफ़, तब्ज़ीर, इफ़्साद, एतदा, उदवान वग़ैरा-ज़ालिक।

''ज़ुल्म'' के मअ़ना ''वज्उश-शय फ़ी ग़ैरि मौज़इही'' के हैं, यानी जो बात जिस जगह होनी चाहिए वहाँ न हो, बेमहल हो, तो लुग़त में इस हालत को ''ज़ुल्म'' कहेंगे। इसी लिए क़ुरआन ने शिर्क[2] को ''ज़ुल्मे अ़ज़ीम'' कहा है, क्योंकि इससे ज़्यादा कोई बेमहल बात नहीं हो सकती। और ये ज़ाहिर है कि किसी चीज़ का अपनी सहीह जगह में न होना, एक ऐसी हालत है जो हक़ीक़ते अ़दल के ऐन मनाफ़ी है।

''तुग़यान'' के मअ़ना है किसी चीज़ का अपनी हद से गुज़र जाना। दरिया का पानी अपनी हद से बुलन्द हो जाता है तो कहते हैं : طغی الماء तग़ल्-माउ, ज़ाहिर है कि हद से तजावुज़ ऐने अ़दालत की ज़िद है।

''इसराफ़'' सर्फ़ से है ''सर्फ़'' के मअ़ना ये हैं कि जो चीज़ जितनी मिक़्दार में जहाँ ख़र्च करनी चाहिए, उससे ज़्यादा ख़र्च कर दी जाए।

''तब्ज़ीर'' के मअ़ना किसी चीज़ को ऐसी जगह ख़र्च करना है जहाँ ख़र्च नहीं करना चाहिए। ''इसराफ़'' और तब्ज़ीर में मिक़्दार और महल का फ़र्क़ हुआ। खाने में ख़र्च करना, ख़र्च का सहीह

1-अभिव्यक्तियां, खुलासे। 2-अनेकेश्वरवाद।

महल है, लेकिन अगर ज़रूरत से ज़्यादा ख़र्च किया जाए तो ये इसराफ़ होगा। दरिया में रुपया फेंक देना, रुपया ख़र्च कर देने का सहीह़ महल नहीं है। अगर तुम रुपया पानी में फेंक दो तो ये फ़ेले तब्ज़ीर होगा। दोनों सूरतें अ़दालत के मनाफ़ी हैं, क्योंकि हक़ीक़ते अ़दल, मिक़्दार और महल दोनों में तनासुब चाहती है।

"फ़साद" के मअ़ना ही "ख़ुरूजुश्-शय अ़निल्-एतदालि" के हैं यानी किसी चीज़ का हालते एतिदाल से बाहर हो जाना।

"एतिदा" और "उदवान" एक ही माद्दे से हैं और दोनों के मअ़ना हद से गुज़र जाना है।

क़ुरआन और सिफ़ाते इलाही का तसव्वुर

क़ुरआन ने ख़ुदा की सिफ़ात का जो तसव्वुर क़ायम किया है, सूर: फ़ातिहा उसकी सबसे पहली रू-नुमाई है। हम इस मुरक़्क़ा में वो शबीह[1] देख सकते हैं जो क़ुरआन ने नौअ़े इन्सानी के सामने पेश की है। ये रुबूबियत, रहमत और अ़दालत की शबीह है। इन्हें तीनों सिफ़तों के तफ़क्कुर से हम उसके तसव्वुरे इलाही की मअ़रिफ़त हासिल कर सकते हैं।

ख़ुदा का तसव्वुर हमेशा इन्सान की रूहानी व इख़्लाक़ी ज़िन्दगी का महवर रहा है, ये बात कि मज़हब का मअ़नवी और नफ़्सियाती[2] मिज़ाज कैसा है और वो अपने पैरुवों के लिए किस तरह के असरात रखता है, सिर्फ़ ये बात देख कर मालूम कर ली जा सकती है कि उसके तसव्वुरे इलाही की नौइयत क्या है (58)।

इन्सान का इब्तिदाई तसव्वुर

जब हम इन्सान के तसव्वुराते उलूहियत का उनके मुख़्तलिफ़ अ़हदों में मुतालआ़ करते हैं तो हमें उनके तग़य्युरात की रफ़्तार कुछ अ़जीब दिखाई देती है (59) और तालीलो-तौजीह के आ़म उसूल काम नहीं देते। मौजूदाते ख़िल्क़त के हर गोशे में तदरीजी इरतिक़ा (Evolution) का क़ानून काम करता रहा है और इन्सान का जिस्मो-दिमाग़ भी इससे बाहर नहीं है। जिस तरह इन्सान का जिस्म बतदरीज तरक़्क़ी करता हुआ निचली कड़ियों से ऊँची कड़ियों तक पहुँचा, इसी तरह उसके दिमाग़ी तसव्वुरात भी निचले दरजों से

1-शक्ल, रूप। 2-मनोवैज्ञानिक।

बुलन्द होते हुए बतदरीज ऊँचे दरजों तक पहुँचे, लेकिन जहाँ तक ख़ुदा की हस्ती के तसव्वुरात का तअ़ल्लुक़ है, मालूम होता है कि सूरते हाल इससे बिल्कुल बरअ़क्स रही और इरतिक़ा की जगह एक तरह के तनज़्ज़ुल[1] या इरतिजा[2] का क़ानून यहाँ काम करता रहा। हम जब इब्तिदाई अ़हद के इन्सानों का सुराग़ लगाते हैं तो हम उनसे आगे बढ़ने की जगह पीछे हटते दिखाई देते हैं।

इन्सानी दिमाग़ का सबसे ज़्यादा पुराना तसव्वुर जो क़दामत की तारीकी में चमकता है वो तौहीद[3] का तसव्वुर है, यानी सिर्फ़ एक अन-देखी और आला हस्ती का तसव्वुर जिसने इन्सान को और उन तमाम चीज़ों को जिन्हें वो अपने चारों तरफ़ देखे रहा था, पैदा किया, लेकिन फिर उसके बाद ऐसा मालूम होता है जैसे उस जगह से उसके क़दम बतदरीज[4] पीछे हटने लगे और तौहीद की जगह आहिस्ता-आहिस्ता "इश्राक[5]" और "तअ़द्दुदे इलाह[6]" का तसव्वुर पैदा होने लगा, यानी अब एक हस्ती के साथ जो सबसे बाला-तर है, दूसरी क़ुव्वतें भी शरीक होने लगीं और एक माबूद की जगह बहुत से माबूदों की चौखटों पर इन्सान का सर झुक गया।

अगर ख़ुदा के तसव्वुर में वहदत का तसव्वुर इन्सानी दिमाग़ का बुलन्द-तर तसव्वुर है और इश्राक और तअ़द्दुद के तसव्वुरात निचले दर्जे के तसव्वुरात हैं तो हमें इस नतीजे तक पहुँचना पड़ता है कि यहाँ इब्तिदाई कड़ी जो नुमायाँ हुई वो निचले दर्जे की न थी, ऊँचे दर्जे की थी और उसके बाद जो कड़ियाँ उभरीं, उन्होंने बुलन्दी की जगह पस्ती की तरफ़ रुख़ किया। गोया इरतिक़ा का आ़म क़ानून

1-पतन। 2-गिरावट। 3-एकेश्वरवाद। 4-क्रमशः। 5-ईश्वर की हस्ती में दूसरों को शामिल करना। 6- अनेकेश्वरवाद।

यहाँ बेअसर हो गया, तरक़्क़ी की जगह रज्अत[1] अस्ल काम करने लगी।

उन्नीस्वीं सदी के नज़रिये और इरतिक़ाई मज़हब

उन्नीस्वीं सदी के उलमा-ए-इज्तिमाइयात का आम नुक़्त-ए-ख़याल ये था कि इन्सान के दीनी अक़ाइद की इब्तिदा उन अवहामी तसव्वुरात से हुई जो उसकी इब्तिदाई मईशत के तबई तक़ाज़ों और अहवालो-ज़ुरूफ़ के क़ुदरती असरात से नशो-नुमा पाने लगे थे। ये तसव्वुरात क़ानूने इरतिक़ा के तहत दर्जा-बदर्जा मुख़्तलिफ़ कड़ियों से गुज़रते रहे और बिल-आख़िर इन्हों ने अपनी तरक़्क़ी-याफ़्ता सूरत में एक आला हस्ती और ख़ालिके-कुल के अक़ीदे की नौइयत पैदा कर ली। गोया इस सिलसिल-ए-इरतिक़ा की इब्तिदाई कड़ी अवहामी तसव्वुरात थे जिनसे तरह-तरह की इलाही क़ुव्वतों का तसव्वुर पैदा हुआ और फिर इसी तसव्वुर ने तरक़्क़ी करते हुए ख़ुदा के एक तौहीदी एतिक़ाद की शक्ल इख़्तियार कर ली। बेजा न होगा अगर इख़्तिसार के साथ यहाँ उन तमाम नज़रियों पर एक इज्माली नज़र डाल ली जाए जो इस सिलसिले में यके-बाद दीगरे नुमायाँ हुए और वक़्त के इल्मी हल्क़ों को मुतअस्सिर किया।

दीनी अक़ाइद और तसव्वुरात की तारीख़ ब-हैसियत एक मुस्तक़िल शाख़े इल्म के 19वीं सदी की पैदावार है। 18वीं सदी के अवाख़िर में जब इण्डो-जर्मन (Indo-German) क़बाइल (यानी वस्ते एशिया के आर्याई क़बाइल) और उनकी ज़बानों की तारीख़ रक़म[2] में आई तो उनके दीनी तसव्वुरात भी नुमायाँ हुए और इस तरह

1-अवनति। 2-लिखने।

बहसो-तन्क़ीद का एक नया मैदान पैदा हो गया। यही मैदान था जिसके मबाहिस ने 19वीं सदी के अवाइल में बहसो-नज़र की एक मुस्तक़िल शाख़ पैदा कर दी, यानी दीनी अक़ाइद की पैदाइश और उनके नशो-नुमा की तारीख़ का इल्म मुदव्वन होने लगा। इसी दौर में आम ख़याल ये था कि ख़ुदा परस्ती की इब्तिदा नेचर-मिथ्स (Nature-myths) के तसव्वुरात से हुई, यानी उन खुराफ़ाती असातीर से हुई जो मज़ाहिरे फ़ित्रत के मुतअ़ल्लिक़ बनना शुरू हो गए थे। मसलन रौशनी की एक मुस्तक़िल हस्ती का तसव्वुर पैदा हो गया। बारिश की क़ुव्वत ने एक देवता की शक्ल इख़्तियार कर ली। क़दीम आर्याई तसव्वुरात से जो मज़ाहिरे फ़ित्रत की परस्तिश पर मब्नी थे इस ख़याल का मवाद फ़राहम हुआ था।

लेकिन 19वीं के निस्फ़ इब्तिदाई दौर में जब अफ़रीक़ा और अमरीका के वहशी क़बाइल के हालात रौशनी में आए तो उनके दीनी तसव्वुरात की तहक़ीक़ात ने एक नये नज़रिये का सामान फ़राहम कर दिया। सन् 1760 ई० में डी ब्रोसेज़ (De Brosses) ने इन्हीं वहशी क़बाइल के तसव्वुरात से फ़ेटिश वर्शिप (Fetish-worship) का इस्तिंबात किया था, यानी ऐसी अशिया की परस्तिश का जिन से किसी जिन्नी रूह की वाबस्तगी यक़ीन की जाती थी। अब फिर सन् 1851 ई० में ए-कामट (A. Comte) ने इसी परस्तिश से ख़ुदा-परस्ती की पैदाइश का नज़रिया इख़्तियार किया और सर-जॉनलॉबक (Sir John Lubbock) ने (जो आगे चल कर लॉर्ड

ओवेबरी के लक़ब से मशहूर हुआ) उसे मज़ीद बहसो-नज़र का जामा पहनाया। इस नज़रिये का उसके अ़हद में आ़म तौर इस्तिक़बाल किया गया था और वक़्त के इल्मी हल्क़ों में इसने क़बूलियत हासिल कर ली थी।

तक़रीबन उसी अ़हद में मैनइज़्म (Manism) यानी अज्दाद[1] परस्ती के नज़रिये ने सर उठाया। इस नज़रिये की बुनियाद इस क़ियास पर रखी गई थी कि इन्सान को आबा-ओ-अज्दाद की मुहब्बत व अ़ज़्मत ने पहले उनकी परस्तिश की राह दिखाई, फिर इसी परस्तिश ने क़ानूने इर्तिक़ा के मातहत तरक़्क़ी करके ख़ुदा-परस्ती की नौइयत पैदा कर ली। सहरा-नशीन और चरागाहों की जुस्तुजू करने वाले क़बीलों के इब्तिदाई तसव्वुरात में अज्दाद-परस्ती का ज़ेहनी मवाद मौजूद था। चीन की क़दीम तारीख़ में भी इस परस्तिश का सुराग़ बहुत दूर तक मिलने लगा था। इसलिए इस नये नज़रिये के लिए ज़रूरी मवाद फ़राहम हो गया और सन् 1870 ई० में जब हरबर्ट स्पेन्सर (Herbert Spencer) ने अपने आसेबी नज़रिये (Ghost-theory) की बुनियाद इसी तख़य्युल पर इस्तवार की तो वक़्त के फ़लसफ़ियों और इज्तिमाइयात के आ़लिमों के हल्के में उसने फ़ौरन मक़बूलियत पैदा कर ली।

इसी अ़हद में दूसरा नज़रिया भी बरू-ए-कार आया और उसने ग़ैर-मामूली मक़बूलियत हासिल कर ली। ये इ. बी. टेलर (E. B. Tylor) का एनिमिज़्म (Animism) का नज़रिया था। सन् 1872 ई० में उसने अपनी मशहूर किताब प्रिमिटिव कल्चर (Primitive Culture) शाय की और उसमें दीनी अ़क़ाइद की कम अज़ कम

1-पितृ-पूजा।

तारीफ़ एनिमिज़्म के ज़रिये की। एनिमिज़्म से मक़सूद ये है कि इन्सान के तसव्वुरात में उसकी जिस्मानी ज़िन्दगी के अलावा एक मुस्तक़िल रूहानी ज़िन्दगी का तसव्वुर भी पैदा हो जाए। इस "मुस्तक़िल रूहानी ज़िन्दगी" का तसव्वुर टेलर के नज़दीक ख़ुदा-परस्ती और दीनी अक़ाइद का बुनियादी माद्दा था। इसी माद्दे ने नशो-नुमा पाकर ख़ुदा की हस्ती के अक़ीदे की नौइयत पैदा कर ली। ग़ालिबन दीनी अक़ाइद की पैदाइश के तमाम नज़रियों में ये पहला नज़रिया है जो इल्मी तरीक़े पर पूरी तरह मुरत्तब किया गया और बहसो-नज़र के तमाम अतराफ़ो-जवानिब मुनज़्ज़म और आरास्ता किए गए। चुनांचे हम देखते हैं कि वक़्त के तमाम इल्मी हल्क़ों पर इस नज़रिये ने एक ख़ास असर डाला था और आम तौर पर इसे एक मुक़र्ररा और तय-शुदा अस्ल की शक्ल में पेश किया जाने लगा था। 19वीं सदी के इख़्तिताम तक इस नज़रिये का ये इक़्तिदार बिला-इस्तिस्ना क़ायम रहा।

इसी अस्ना में मिस्र, बाबुल और आशोरिया के क़दीम आसार[1] व कतबात के हल से तारीख़े क़दीम का एक बिल्कुल नया मैदान रौशनी में आने लगा था और उन आसार के मबाहिस ने मुस्तक़िल उलूम की हैसियत पैदा कर ली थी। इस नये मवाद ने मज़ाहिरे फ़ित्रत की परस्तिश की अस्ल को अज़-सरे नौ अहमियत दे कर उभार दिया, क्योंकि वादी नील और वादी दजला व फुरात के ये दोनों क़दीम तमद्दुन[2] दीनी अक़ाइद के यही तसव्वुरात नुमायाँ करते थे। चुनांचे अब फिर एक नया मज़हब (स्कूल) पैदा हो गया जो ख़ुदा परस्ती की पैदाइश की इब्तिदाई बुनियाद मज़ाहिरे फ़ित्रत के

1-प्राचीन अवशेषों। 2-प्राचीन सभ्यताएं।

तअस्सुरात को क़रार देता था और ख़ुसूसियत के साथ अजरामे समावी के तअस्सुरात पर ज़ोर देता था। इस नज़रिये के हामियों ने एनिमिज़्म (Animism) की मुख़ालफ़त की और एस्ट्रल एण्ड नेचर मेथालोजिस्ट (Astral and nature mythologists) के नाम से मशहूर हुए।

लेकिन 19वीं सदी के निस्फ़ आख़िरी हिस्से में जबकि ये तमाम नज़रिये सर उठा रहे थे, दसूरी तरफ़ एक ख़ास इल्मी हल्क़ा एक दूसरे नज़रिये की बुनियादें भी चुन रहा था। इस नज़रिये का मवाद क़दीम-तरीन तमद्दुनी अहद के शिकार पेशा क़बाइल के तसव्वुरात ने बहम पहुँचाया था जिनके हालात अब तारीख़ की दस्तरस से बाहर नहीं रहे थे। ये नज़रिया टॉटमिज़्म (Tote mism) के नाम से मशहूर हुआ और बहुत जल्द इसने इल्मी हल्क़ों की तवज्जोह अपनी तरफ़ खींच ली। टॉटमिज़्म से मक़सूद मुख़्तलिफ़ अशिया और जानवरों के वो इन्तिबासात हैं जो जमइय्यते बशरी[1] की इब्तिदाई क़बाइली ज़िन्दगी में पैदा हो गए थे और फिर कुछ अर्से के बाद उन अशिया और जानवरों का ग़ैर मामूली एहतिराम किया जाने लगा था। इस नज़रिये की रू-से ख़याल किया गया कि हिन्दुस्तान की गाय, मिस्र का मगरमच्छ और बैल, शुमाली ख़ित्तों का रीछ और सहरा नशीन क़बाइल का सफ़ेद बछड़ा दरअसल टॉटमिज़्म ही की बक़ाया हैं। सबसे पहले सन् 1885 ई० में रॉबर्टसन स्मिथ (Robertson Smith) ने इस नज़रिये का एलान किया था फिर वक़्त के दूसरे नज़्ज़ारे ने भी इसी रुख़ पर क़दम उठाया।

लेकिन कुछ अर्से के बाद इस नज़रिये की मक़्बूलियत मजरूह

1-मानव समूह।

होना शुरू हो गई। प्रोफ़ेसर जे. जी. फ़रेज़र (J. G. Frazer) का जमा किया हुआ मवाद जब मन्ज़रे-आम पर आया तो मालूम हुआ कि टॉटमिज़्म (Tote mism) के तसव्वुरात न तो दीनी तसव्वुरात की नौइयत रखते थे न दीनी तसव्वुरात का मब्दा बनने की उनमें सलाहियत थी। उनकी अस्ली नौइयत ज़्यादा से ज़्यादा एक इज्तिमाई निज़ाम की थी जिसके साथ तरह-तरह के तसव्वुरात का एक सिलसिला वाबस्ता हो गया था। इससे ज़्यादा उन्हें इस सिलसिले में अहमियत नहीं दी जा सकती।

मगर इस सिलसिले में मामले का एक और गोशा भी नुमायाँ हुआ था। फ़रेज़र ने टॉटमिज़्म के तसव्वुरात में एक ख़ास क़िस्म ऐसी भी पाई थी जिसमें दीनी अक़ाइद का इब्तिदाई मवाद बनने की ज़्यादा सलाहियत दिखाई देती थी। यानी वो क़िस्म जो जादू के एतिक़ाद से तअ़ल्लुक़ रखती थी। बहसो-नज़र के इस गोशे ने मुफ़क्किरों की एक बड़ी तादाद को अपनी तरफ़ मुतवज्जह कर लिया और जादू का नज़रिया इल्मी हल्क़ों में रू-शनास[1] हो गया। सन् 1892 ई० में एक अमरीकी आ़लिम जे. के. कनेग (J. K. Kenneg) इस पहलू पर तवज्जोह दिला चुका था। अब 20वीं सदी की इब्तिदाई बरसों में बयक वक़्त जर्मनी, इंगलैण्ड, फ्रांस और अमरीका के इल्मी हल्क़ों से इसकी बाज़-गश्त शुरू हो गई और एनिमिज़्म के ख़िलाफ़ रद्दे अ़मल काम करने लगा। अब ये ख़याल आ़म तौर पर फ़ैल गया कि एनिमिज़्म के तसव्वुरात से पेशतर भी इन्सानी तसव्वुरात का एक दौर रह चुका है और ये मा-क़ब्ल एनिमिज़्म (Pre-animism) दौर जादू के तसव्वुरात का दौर था। इसी जादू के

1-परिचित, प्रचलित।

अब जादू का नज़रिया एक आम मक़्बूल नज़रिया बन गया और पिछले नज़रिये अपनी जगह खोने लगे। सन् 1895 ई० में आर. आर. मैरट (R. R. Marett) ने, सन् 1902 ई० में हैविट (Hewitt) ने, सन् 1904 ई० में के. पिरीस (K. Preuss) ने, सन् 1907 ई० में ए. फीर कांट (A. Fier Kandt) ने और सन् 1908 ई० में ई. एस. हॉर्टलैण्ड (E. S. Hartland) ने इसी नज़रिये पर अपनी बहसो-फ़िक्र की तमाम दीवारें उठाईं और इसे दूर तक फैलाते चले गए। सबसे ज़्यादा हिस्सा इसमें फ़रांस के उलमा-ए-इज्तिमाइयात के उस तबक़े ने लिया जो दुरख़ीम (Durkheim) के मस्लके नज़र से तअ़ल्लुक़ रखता था। इस तबक़े का ज़ईम पहले एच. हॉबर्ट (H. Hubert) और एम. मास (M. Mauss) था। फिर सन् 1912 ई० में ख़ुद दरख़ीम आगे बढ़ा और इस नज़रिये का सबसे बड़ा अलमबर्दार बन गया। इस गिरोह की राय में टॉटमिज़्म (Totemism) और जादू के तसव्वुरात का मुरक्कब मज्मूआ जैसा कि वस्ते ऑस्ट्रेलिया के क़बाइल के अवहाम में पाया जाता है, जम्इय्यते-बशरी के दीनी तसव्वुरात का अस्ली मब्दा था। क़ानूने इरतिक़ा के मातहत इन्हीं तसव्वुरात ने ख़ुदा परस्ती के अक़ाइद की तरक़्क़ी-याफ़्ता शक्ल पैदा कर ली।

इस ज़माने के चन्द साल बाद बाज़ प्रोटेस्टंट (Protestant) उलमा ने जो दीनी अक़ाइद के नफ़्सियाती मुतालअ़े में मशग़ूल थे, मसअले पर नफ़्सियाती नुक़्त-ए-निगाह डाली और इस नज़रिये की हिमायत शुरू कर दी। वो इस तरफ़ गए कि ख़ुदा परस्ती के अक़ीदे का मब्दा हमें मज़हब और सहरकारी दोनों के मुरक्कब तसव्वुरात में ढूँढना चाहिए। इस जमाअ़त का पेश-रौ आर्च पुश्प सोडरब्लोम (Soderblom) था जिसके मबाहिस सन् 1916 ई० में शाय हुए।

इसके बाद का ज़माना पहली आलमगीर जंग[1] का ज़माना था जो 20वीं सदी का एक दौर ख़त्म करके दूसरे दौर का दरवाज़ा खोल रही थी। इस नये दौर ने जहाँ इल्मो-नज़र के बहुत से गोशों को इन्क़िलाबी तग़य्युरात से आशना किया, वहाँ इल्म की इस शाख़ में भी एक नया इन्क़िलाबी दौर शुरू हो गया।

ये तमाम पिछले नज़रिये माद्दी मज़हबे इरतिक़ा (Materialistic Evolutionism) की अस्ल पर मब्नी थे। इन सबके अन्दर ये बुनियादी अस्ल काम कर रही थी कि अज्साम व मवाद[2] की तरह इन्सान का दीनी अक़ीदा भी बतदरीज निचली कड़ियों से तरक़्क़ी करता हुआ आला कड़ियों तक पहुँचा है और ख़ुदा परस्ती के अक़ीदे में तौहीद (Monotheism) का तसव्वुर एक तूल-तवील सिलसिलए् इरतिक़ा का नतीजा है। 19वीं सदी का निस्फ़े आख़िर डॉर्निज़्म (Darwinism) के शुयू व इशाते[3] का ज़माना था और बुचनेर (Buchner) वेल्ज़ (Wells), स्पेन्सर (Spencer) ने इसे अपने फ़ल्सफ़ियाना मबाहिस से इन्सानी फ़िक्रो-अमल के तमाम दायरों में फैला दिया था। क़ुदरती तौर पर ख़ुदा के एतिक़ाद की पैदाइश का मस्अला भी इससे मुतअस्सिर हुआ और नज़रो-बहस के जितने क़दम उठे वो इसी राह पर गाम-ज़न होने लगे।

मज़हबे इरतिक़ा का ख़ातिमा और ज़मान-ए-हाल की तहक़ीक़ात

लेकिन अभी 20वीं सदी अपने इन्क़िलाब-अंगेज़[4] इन्किशाफ़ों[5] में बहुत आगे नहीं बढ़ी थी कि इन तमाम नज़रियों की इमारतें

1-विश्व-युद्ध। 2-पिंडों व पदार्थों। 3-फैलने। 4-क्रांतिकारी। 5-रहस्योदघाटनों।

मुतज़ल्ज़ल होना शुरू हो गईं और पहली आलमगीर जंग के बाद के अहद ने तो इन्हें यक-क़लम मुन्हदिम कर दिया। अब तमाम अहले नज़र बिल-इत्तिफ़ाक़[1] देखने लगे कि इस राह में जितने क़दम उठाए गए थे वो सिरे से अपनी बुनियाद ही में ग़लत थे, क्योंकि इन सबकी बुनियाद क़ानूने इरतिक़ा की अस्ल पर रखी गई थी और इरतिक़ाई अस्ल की रहनुमाई यहाँ सूदमन्द होने की जगह गुमराह-कुन साबित हुई है। अब इन्हीं ठोस और नाक़ाबिले इनकार तारीख़ी शवाहिद की रौशनी में साफ़-साफ़ नज़र आ गया कि इन्सान के दीनी अक़ाइद की जिस नौइयत को इन्होंने आला और तरक़्क़ी-याफ़्ता क़रार दिया था वो बाद के ज़मानों की पैदावार नहीं है, बल्कि जमइय्यते बशरी की सबसे ज़्यादा पुरानी मताअ़ है। मज़ाहिरे फ़ित्रत की परस्तिश, हैवानी इन्तिसाबात के तसव्वुरात, अज्दाद-परस्ती की रुसूम और जादू के तौहहुमात[2] की इशाअ़त से भी बहुत पहले जो तसव्वुर इन्सानी दिलो-दिमाग़ के उफ़ुक़ पर तुलू हुआ था वो एक आला-तरीन हस्ती की मौजूदगी का बेलाग तसव्वुर था, यानी ख़ुदा की हस्ती का तौहीदी एतिक़ाद था।

चुनांचे अब बहसो-नज़र के इस गोशे में इरतिक़ाई मज़हब का यक-क़लम ख़ातिमा हो चुका है।

डब्ल्यू. स्मिथ (W. Schmidt) प्रोफ़ेसर वाइना यूनीवर्सिटी, जिन्होंने इस मौज़ू पर ज़मान-ए-हाल की सबसे बेहतर किताब लिखी है, लिखते हैं :

> "इल्मे शुऊबो-क़बाइले इन्सानी के पूरे मैदान में अब पुराना इरतिक़ाई मज़हब यक्सर दीवालिया हो

1-संयोग से। 2-अंधविश्वासों।

चुका है। नशो-नुमा की मरत्तब कड़ियों का वो ख़ुशनुमा सिलसिला जो इस मज़हब ने पूरी आमदगी के साथ तैयार कर दिया था, अब टुकड़े-टुकड़े हो गया और नये तारीख़ी रुज्हानों ने उसे उठा कर फेंक दिया है" (60)।

एक दूसरी जगह लिखते हैं :

"अब ये बात वाज़ेह हो चुकी है कि इन्सान के इब्तिदाई इमरान व तमद्दुन[1] के तसव्वुर की "आलातरीन हस्ती" फिल-हक़ीक़त तौहीदी एतिक़ाद का ख़ुदा-ए-वाहिद था और इन्सान का दीनी अक़ीदा जो उससे ज़ुहूर-पज़ीर हुआ वो पूरी तरह एक तौहीदी दीन था। ये हक़ीक़त अब इस दर्जा नुमायाँ हो चुकी है कि एक सरसरी नज़रे तहक़ीक़ भी इसके लिए किफ़ायत करेगी। नस्ले इन्सानी के क़दीम पस्ता-क़द क़बाइल में से अक्सरों की निस्बत ये बात वुसूक़ के साथ कही जा सकती है। इसी तरह इब्तिदाई अहद के जंगली क़बीलों के जो हालात रौशनी में आए हैं, और कुरनाई (Kurnai) जोलीन (Julin) और जुनूब मश्रिक़ी ऑस्ट्रेलिया के याइन (Yuin) क़बीलों की निस्बत जिस क़द्र तारीख़ी मवाद मुहैया हुआ है, उन सब की तहक़ीक़ात हमें इस नतीजे तक पहुँचाती है। आर्कटिक (Arctic) तहज़ीब के क़बीलों के रिवायती

1-प्रगति व सभ्यता।

आसार[1] और शुमाली[2] अमरीका के क़बाइल के दीनी तसव्वुरात की छान-बीन ने भी बिल-आख़िर इसी नतीजे को नुमायाँ किया" (61)।

ज़मान-ए-हाल के नज़्ज़ारे ने अब इस मस्अले का मौसूआती (Pantologic) तरीक़े नज़र से मुतालआ किया है और क़दीम मालूमातो-मबाहिस की तमाम शाखें जमा करके मज्मूई नताइज[3] निकाले हैं। ज़रूरी है कि इस सिलसिले की बाज़ जदीद तहक़ीक़ात पर एक सरसरी नज़र डाल ली जाए, क्योंकि अभी वो इस दर्जा शाय नहीं हुई हैं कि आम तौर पर नज़रो-मुतालअे में आ चुकी हों।

ऑस्ट्रेलिया और जज़ाइर के वहशी क़बाइल और मिस्र के क़दीम-तरीन आसार की जदीद तहक़ीक़ात

ऑस्ट्रेलिया और जज़ाइर[4] बहरे मुहीत[5] के वहशी क़बाइल एक ग़ैर मुअय्यन क़दामत से अपनी इब्तिदाई ज़ेहनी तफ़ूलियत की ज़िन्दगी बसर करते रहे। ज़िन्दगी व मईशत की वो तमाम तरक़्क़ी-याफ़्ता कड़ियाँ जो आम तौर पर इन्सानी जमाअतों के ज़ेहनी इरतिक़ा का सिलसिला मरबूत करती हैं, यहाँ यक-सर मफ़्क़ूद रहीं। इब्तिदाई अहद की बशरी जमइय्यत के तमाम जिस्मानी और दिमाग़ी ख़साइस उनकी क़बाइली ज़िन्दगी में देख लिए जा सकते थे। उनके तसव्वुर इस दर्जा महदूद थे कि अवहामो-ख़ुराफ़ात में भी किसी तरह का इरतिक़ाई नज़्म नहीं पाया जाता, ताहम उनका एक एतिक़ादी तसव्वुर बिल्कुल वाज़ेह था। एक बालातर हस्ती है जिसने उनकी ज़मीन और उनका आसमान पैदा किया और उनका मरना जीना

1-परंपरागत अवशेषों। 2-उत्तरी। 3-संयुक्त निष्कर्ष। 4-दीप। 5-महासागर।

उसी के क़ब्ज़े व तसर्रुफ़ में है। मिस्र के क़दीम बाशिन्दों की सदाएँ आठ हज़ार बरस पेशतर तक की हमारे कानों से टकरा चुकी हैं। क़दीम मिस्री तसव्वुरात का पूरा सिलसिला अपनी अ़हद ब-अ़हद की तब्दीलियों के साथ हमारे सामने उभर आया है। हमें साफ़ नज़र आ रहा है कि एक ख़ुदा की परस्तिश का तसव्वुर इस सिलसिले में बाद को नहीं उभरा, बल्कि सिलसिले की सबसे ज़्यादा पुरानी कड़ी है। मिस्र के वो तमाम माबूद जिनके मुरक़्क़ओं से उसके मशहूरे-आ़लम हैकलों और मनारों की दीवारें मुनक़्क़श की गई हैं, उस क़दीम-तरीन अ़हद में अपनी कोई नुमूद नहीं रखते थे। जब सिर्फ एक "उसिरीज़" (Osiris) की अन-देखी हस्ती का एतिक़ाद दरिया-ए-नील की तमाम आबाद वादियों पर छाया हुआ था (62)।

दजला व फ़ुरात की वादियों की क़दीम आबादियाँ और ख़ुदा की हस्ती का तौहीदी तसव्वुर

पहली आ़लमगीर जंग के बाद इराक़ के मुख़्तलिफ़ हिस्सों में ख़ुदाई की जो नई मुहिम्में शुरू की गई थीं और जो मौजूदा जंग की वजह से ना तमाम रह गईं, उनके इन्किशाफ़ात ने इस मस्अले के लिए नई रौशनियाँ बहम पहुँचाई हैं। अब इस बारे में कोई शुब्हा नहीं किया जाता कि दरिया-ए-नील[1] की तरह दजला और फ़ुरात की वादियों में भी जब इन्सान ने पहले-पहल अपने ख़ुदा को पुकारा तो वो बहुत-सी हस्तियों में बटा हुआ नहीं था, बल्कि एक ही अन-देखी हस्ती की सूरत में नुमायाँ हुआ था। कॉल्डिया (Chaldea) के सोमेरी (Sumerian) और अकादी (Akadian) क़बाइल जिन

1-नील नदी।

इन्सानी नस्लों के वारिस हुए थे, वो "शमश" यानी सूरज और "नानआर" यानी चाँद की परस्तिश नहीं करते थे, बल्कि उस एक ही लाज़वाल हस्ती की "जिसने सूरज और चाँद और तमाम चमकदार सितारों को बनाया है"।

महन्जूदारू का ख़ुदा-ए-वाहिद 'ऑन'

हिन्दुस्तान में मोहनजोदड़ो (Mohenjodaro) के आसार हमें आर्याओं के अहदे वुरूद से भी आगे ले जाते हैं। उनके मुताला-ओ-तहक़ीक़ का काम अभी पूरा नहीं हुआ है, ताहम एक हक़ीक़त बिल्कुल वाज़ेह हो गई है। इस क़दीम-तरीन इन्सानी बस्ती के बाशिन्दों का बुनियादी तसव्वुर तौहीदे इलाही का तसव्वुर था, अस्नाम-परस्ताना तसव्वुर न था। वो अपने यगाना ख़ुदा को ऑन (Oun) के नाम से पुकारते थे जिसकी मुशाबहत हमें संस्कृत के लफ़्ज़ अँदवान (Undwan) में मिल जाती है। उस यगाना हस्ती की हुकूमत सब पर छाई हुई है। ताक़त की तमाम हस्तियाँ उसी के ठहराए हुए क़ानून के मातहत काम कर रही हैं। उसकी सिफ़त वेदोकुन (Vedukun) है, यानी ऐसी हस्ती जिसकी आँखें कभी ग़ाफ़िल नहीं हो सकतीं :

"لَا تَأْخُذُهٗ سِنَةٌ وَّلَا نَوْمٌ" (उसे न ऊँघ लगती है और न नींद।)

अल्लाह की यगाना और अन-देखी हस्ती का क़दीम सामी तसव्वुर

सामी क़बाइल का अस्ली सर-चश्मा सहरा-ए-अरब के बाज़ शादाब इलाक़े थे। जब उस चश्मे में नस्ले इन्सानी का पानी बहुत

बढ़ जाता तो अतराफ़ में फैलने लगता, यानी क़बाइल के जत्थे अ़रब से निकल कर अतराफ़ो-जवानिब के मुल्कों में मुन्तशिर होने लगते और फिर चन्द सदियों के बाद नया रंग-रूप और नये नाम इख़्तियार कर लेते।

शायद इन्सानी क़बाइल का इन्शिआ़ब कुर-ए-अर्ज़ी के दो मुख़्तलिफ़ हिस्सों में ब-यक वक़्त जारी रहा और ज़मान-ए-माबद की मुख़्तलिफ़ क़ौमों और तमद्दुनों का बुनियादी मब्दा बना, सहराए गोबी के सर-चश्मे से वो क़बाइल निकले जो हिन्दी-यूरपी (इण्डो-यूर्पियन) (Indo-European) आर्याओं के नाम से पुकारे गए। सहराए अ़रब से वो क़बाइल निकले जिनका पहला नाम सामी पड़ा और फिर ये नाम बेशुमार नामों के हुजूम में गुम हो गया। तारीख़ की मौजूदा मालूमात इस हद तक पहुँच कर रुक गई है और आगे की ख़बर नहीं रखती।

अ़रब क़बाइल का ये इन्शिआ़ब बतदरीज मग़रिबी एशिया और क़रीबी अफ़रीक़ा के तमाम दूर-दराज़ हिस्सों तक फैल गया था। फ़लस्तीन, शाम, मिस्र, नोबिया, इराक़ और सवाहिल ख़लीजे फ़ारस[1] सब उनके दायर-ए-इन्शिआ़ब में आ गए थे। आ़द, समूद, अ़मालिक़ा हक्सोस, मवाबी, आशूरी, अकादी, सोमेरी, ईलामी, आरामी और इबरानी वग़ैरहुम मुख़्तलिफ़ मक़ामों और मुख़्तलिफ़ अ़हदों की क़ौमों के नाम हैं, मगर दरअसल सब एक ही क़बाइली सर-चश्मे से निकले हुए हैं यानी अ़रब से।

अब जदीद सामी असरियात के मुतालअ़े से जो इन तमाम क़ौमों से तअ़ल्लुक़ रखती हैं, एक हक़ीक़त बिल्कुल वाज़ेह हो गई है,

1-फारस की खाड़ी के किनारे।

यानी इन तमाम क़ौमों में एक अन-देखे ख़ुदा की हस्ती का एतिक़ाद मौजूद था और वो "इल्-इलाह" या "अल्लाह" के नाम से पुकारा जाता था। यही "इलाह" है जिसने कहीं "एल" की सूरत इख़्तियार की, कहीं "उलूह" की और कहीं "अलाहिया" की।

सरहदे हिजाज़ की वादी उक़्बा और शिमाली शाम के रासे शिमर के जो आसार गुज़श्ता जंग के बाद मुन्कशिफ़ हुए, उनसे ये हक़ीक़त और ज़्यादा आशकारा हो गई है, मगर ये मौक़ा तफ़्सील का नहीं।

इन्सान की पहली राह हिदायत की थी, गुमराही बाद को आई

बहरहाल 20वीं सदी की इल्मी जुस्तुजू अब हमें जिस तरफ़ ले जा रही है वो इन्सान का क़दीम-तरीन तौहीदी और ग़ैर अस्नामी[1] एतिक़ाद है। इससे ज़्यादा उसके तसव्वुरात की कोई बात बुरी नहीं। उसने अपने अहदे तफ़ूलियत में होशो-ख़िरद की आँखें जूँ-ही खोली थीं, एक यगाना हस्ती का एतिक़ाद अपने अन्दर मौजूद पाया था। फिर आहिस्ता-आहिस्ता उसके क़दम भटकने लगे और बैरूनी[2] असरात की जौलानियाँ उसे नई-नई सूरतों और नये-नये ढंगों से आशना करने लगीं। अब एक से ज़्यादा माफ़ौक़ल-फ़ित्रत ताक़तों का तसव्वुर नशो-नुमा पाने लगा और मज़ाहिरे फ़ित्रत के बेशुमार जल्वे उसे अपनी तरफ़ खींचने लगे, यहाँ तक कि परस्तिश की ऐसी चौखटें बनना शुरू हो गईं जिन्हें उसकी जबीने-नियाज़ छू सकती थी और तसव्वुरात की ऐसी सूरतें उभरने लगीं जो उसके दीद-ए-सूरत परस्त

1-ग़ैर मूर्ति पूजक। 2-बाहरी।

के सामने नुमायाँ हो सकती थीं। यहीं उसे ठोकर लगी, लेकिन राह ऐसी थी कि ठोकर से बच भी नहीं सकता था :

कमन्द कोतह व बाज़ूए सुस्त व बाम बुलन्द
ब-मन् हवाला व न उम्मीदेम गुनह गीरन्द

पस मालूम हुआ कि इस राह में ठोकर बाद को लगी। पहली हालत ठोकर की न थी, राहे-रास्त पर गाम-फ़रसाइयों की थी :

मन् मलक बूदम व फ़िरदौसे बरीं जायम बूद
आदम आवुर्द दरीं ख़ाना ख़राब आबादम

इस सूरतेहाल को गुमराही से ताबीर किया जा सकता है तो मानना पड़ेगा कि पहली हालत जो इन्सान को पेश आई थी वो गुमराही की न थी, हिदायत की थी। उसने आँखें रौशनी में खोली थीं, फिर आहिस्ता-आहिस्ता तारीकी फैलने लगी।

दीनी नविश्तों की शहादत और क़ुरआन का एलान

ज़मान-ए-हाल की इल्मी तहक़ीक़ात का ये नतीजा अदियाने आलम के मुक़द्दस नविश्तों[1] की तसरीहात के ऐन मुताबिक़ है। मिस्र, यूनान, कॉल्डिया, हिन्दुस्तान, चीन, ईरान सबकी मज़हबी रिवायतें एक ऐसे इब्तिदाई अहद की ख़बर देती हैं जब नौए इन्सानी गुमराही और ग़म-नाकी से आशना नहीं हुई थी और फ़ित्री हिदायत की ज़िन्दगी बसर करती थी। अफ़लातून ने क्रीतियास (Critias) में आबादि-ए-आलम की जो हिकायत दर्ज की है, उसमें एतिक़ाद की पूरी झलक मौजूद है। और तीमाऊस (Timaeus) की हिकायत जो एक मिस्री

1-किताबों।

पुजारी की ज़बानी है, मिस्री रिवायत की ख़बर देती है। तौरात की किताबे पैदाइश ने आदम का क़िस्सा बयान किया है। इस क़िस्से में आदम की पहली ज़िन्दगी हिदायत की बहिश्ती ज़िन्दगी थी। फिर लग़ज़िश हुई और बहिश्ती ज़िन्दगी मफ़्क़ूद हो गई। इस क़िस्से में भी यही अस्ल काम कर रही है कि यहाँ पहला दौर फ़ित्री हिदायत का था, इन्हिराफ़ो-गुमराही की राहें बाद को खुलीं। क़ुरआन ने तो साफ़-साफ़ एलान कर दिया है कि :

وَمَا كَانَ النَّاسُ اِلَّآ اُمَّةً وَّاحِدَةً فَاخْتَلَفُوْا ط

(١٩:١٠)

इब्तिदा में तमाम इन्सान एक ही गिरोह थे (यानी अलग-अलग राहों में भटके हुए न थे) फिर इख़्तिलाफ़ात में पड़ गए। (10: 19)

दूसरी जगह मज़ीद तशरीह की :

كَانَ النَّاسُ اُمَّةً وَّاحِدَةً فَبَعَثَ اللّٰهُ النَّبِيّٖنَ مُبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ وَاَنْزَلَ مَعَهُمُ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ لِيَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ فِيْمَا اخْتَلَفُوْا فِيْهِ ط

(٢١٣:٢)

इब्तिदा में तमाम इन्सानों का एक ही गिरोह था (यानी फ़ित्री हिदायत की एक ही राह पर थे, फिर उसके बाद इख़्तिलाफ़ात पैदा हो गए) पस अल्लाह ने एक के बाद एक नबी मबऊस किए, वो नेक अमली के नतीजों की ख़ुशख़बरी देते थे, बद अमली के नतीजों से मुतनब्बह[1] करते थे, नीज़ उनके साथ नविश्ते[2]

1-सचेत। 2-किताबें।

नाज़िल किए, ताकि जिन बातों
में लोग इख़्तिलाफ़ करने लगे हैं,
उनका फ़ैसला कर दें।
(2: 213)

इरतिक़ाई नज़रिया ख़ुदा की हस्ती के एतिक़ाद में नहीं, मगर उसकी सिफ़ात के तसव्वुरात के मुतालअ़े में मदद देता है

पस ख़ुदा की हस्ती के अ़क़ीदे के बारे में 19वीं सदी का इरतिक़ाई नज़रिया अब अपनी इल्मी अहमियत खो चुका है और बहसो-नज़र में बहुत कम मदद दे सकता है। अल्बत्ता जहाँ तक इन्सान के उन तसव्वुरों का तअ़ल्लुक़ है जो ख़ुदा की सिफ़ात की नक़्श-आराइयाँ करते रहे, हमें इरतिक़ाई नुक़्त-ए-ख़याल से ज़रूर मदद मिलती है। क्योंकि बिला-शुब्हा यहाँ तसव्वुरात के नशो-इरतिक़ा का एक ऐसा सिलसिला मौजूद है जिसकी इरतिक़ाई कड़ियाँ एक दूसरे से अलग की जा सकती हैं और निचले दरजों से ऊँचे दरजों की तरफ़ हम बढ़ सकते हैं।

ख़ुदा की हस्ती का एतिक़ाद इन्सान के ज़ेहन की पैदावार न था कि ज़ेहनी तब्दीलियों के साथ-साथ वो भी बदलता रहता। वो उसकी फ़ित्रत का एक विज्दानी एहसास था और विज्दानी एहसासात में न तो ज़ेहनो-फ़िक्र के मोअस्सिरात मुदाख़िलत कर सकते हैं न बाहर के असरात से उनमें तब्दीली हो सकती है।

लेकिन इन्सान की अ़क़्ल ज़ाते मुत्लक़ के तसव्वुर से आ़जिज़

है। वो जब किसी चीज़ का तसव्वुर करना चाहती है तो गो तसव्वुर ज़ात का करना चाहे, लेकिन तसव्वुर में सिफ़ातो-अवारिज़ ही आते हैं और सिफ़ात ही के जम्ओ-तफ़्रिक़ा[1] से वो हर चीज़ का तसव्वुर आरास्ता करती है! पस जब फ़ित्रत के अन्दरूनी जज़्बे ने एक बालातर हस्ती के ऐतिराफ़ का वल्वला पैदा किया तो ज़ेहन ने चाहा उसका तसव्वुर आरास्ता करे, लेकिन जब तसव्वुर किया तो ये उसकी ज़ात का तसव्वुर न था, उसकी सिफ़ात का तसव्वुर था और सिफ़ात में से भी उन्हीं सिफ़ात का, जिनका ज़ेहने इन्सानी तख़य्युल कर सकता था। यहीं से ख़ुदा परस्ती के फ़ित्री जज़्बे में ज़ेहनो-फ़िक्र की मुदाख़िलत शुरू हो गई।

अक़्ले इन्साी की दरमान्दगी और सिफ़ाते इलाही की सूरत-आराई

अक़्ले इन्सानी का इदराक महसूसात[2] के दायरे में महदूद है। इसलिए उसका तसव्वुर इस दायरे से बाहर क़दम नहीं निकाल सकता। वो जब किसी अन-देखी और ग़ैर महसूस चीज़ का तसव्वुर करेगी तो नागुज़ीर है कि तसव्वुर में वही सिफ़ात आएँ जिन्हें वो देखती और सुनती है और जो उसके हास्स-ए-ज़ौको-लम्स[3] की दस्तरस से बाहर नहीं हैं। फिर उसके ज़ेहनो-तफ़क्कुर[4] की जितनी भी रसाई है, ब-यक दफ़ा ज़ुहूर में नहीं आई है, बल्कि एक तूल-तवील अर्से के नशो-इरतिक़ा का नतीजा है। इब्तिदा में उसका ज़ेहन अहदे तफ़ूलियत में था, इसलिए उसके तसव्वुरात भी उसी नौइयत के होते थे। फिर जूँ-जूँ उसमें और उसके माहौल में तरक़्क़ी होती गई,

1-संयोजन-विभाजन। 2-अनुभव। 3-छूने-समझने की चेतना। 4-बुद्धि व सोच।

उसका ज़ेहन भी तरक़्क़ी करता गया और ज़ेहन की तरक़्क़ी व तज़्किये के साथ उसके तसव्वुरात में भी शाइस्तगी और बुलन्दी आती गई।

इस सूरते-हाल का नतीजा ये था कि जब कभी ज़ेहने इन्सानी ने ख़ुदा की सूरत बनानी चाही तो हमेशा वैसी ही बनाई जैसी सूरत ख़ुद उसने और उसके अहवालो-ज़ुरूफ़ ने पैदा कर ली थी। जूँ-जूँ उसका मे'यारे फ़िक्र बदलता गया, वो अपने माबूद की शक्लो-शबाहत भी बदलता गया। उसे अपने आईन-ए-तफ़क्कुर में एक सूरत नज़र आती थी, वो समझता था ये उसके माबूद की सूरत है, हालाँकि वो उसके माबूद की सूरत न थी, ख़ुद उसी के ज़ेहनो-सिफ़ात का अक्स था।

फ़िक्रे इन्सानी की सबसे पहली दरमांदगी[1] यही है जो इस राह में पेश आई।

हरम जोयाने दरे रा मी पुरिस्तन्द　　फ़क़ीहाने दफ़्तरे रा मी पुरिस्तन्द
बर अफ़्गान पर्दा ता मालूम गर्दद　　कि याराने दीगरे-रा मी पुरिस्तन्द

यही दरमांदगी है जिससे निजात दिलाने के लिए वह्ये इलाही की हिदायात हमेशा नमूदार होती रही (**63**)।

अंबिया-ए-किराम (अलैहिमुस्सलाम) की दावत की एक बुनियादी अस्ल ये रही है कि उन्होंने हमेशा ख़ुदा परस्ती की तालीम वैसी ही शक्लो-उसलूब में दी जैसी शक्लो-उसलूब के फ़हमो-तहम्मुल की इस्तेदाद मुख़ातिबों में पैदा हो गई थी। वो मज्मए इन्सानी के मुअ़ल्लिम व मुरब्बी थे और मुअ़ल्लिम का फ़र्ज़ है कि

1-दरिद्रता, लघुता।

मुतअ़ल्लिमों[1] में जिस दर्जे की इस्तेदाद पाई जाए, उसी दर्जे का सबक़ भी दे। पस अंबिया-ए-किराम ने भी वक़्तन-फ़वक़्तन[2] ख़ुदा की सिफ़ात के लिए जो पैराय-ए-तालीम[3] इख़्तियार किया वो इस सिलसिल-ए-इर्तिक़ा[4] से बाहर न था, बल्कि इसी की मुख़्तलिफ़ कड़ियाँ मुहय्या करता था।

इर्तिक़ा-ए-तसव्वुर के नुक़ाते सलासा

इस सिलसिले की तमाम कड़ियों पर जब हम नज़र डालते हैं और इनके फ़िक्री अ़नासिर की तहलील करते हैं तो हमें मालूम होता है कि अगर्चे इनकी बेशुमार नौइयतें क़रार दी जा सकती हैं, लेकिन इर्तिक़ाई नुक़्ते हमेशा तीन ही रहे और उन्हीं से इस सिलसिले की बिदायत व निहायत मालूम की जा सकती है :

(1) तजस्सुम (64) से तन्ज़ीह की तरफ़।

(2) तअ़द्दुद व इश्राक (Polytheism) से तौहीद (Monotheism) की तरफ़।

(3) सिफ़ाते क़हरो-जलाल से सिफ़ाते रहमतो-जमाल की तरफ़।

यानी तजस्सुम और सिफ़ाते क़हरिय्या का तसव्वुर इसका इब्तिदाई दर्जा है और तनज़्ज़ोह और सिफ़ाते रहमतो-जमाल से इत्तिसाफ़, आला व कामिल दर्जा है। जो तसव्वुर जिस क़द्र इब्तिदाई और अदना दर्जे का है, उतना ही तजस्सुम[5] और सिफ़ाते क़हरिय्या[6] का उन्सुर उसमें ज़्यादा है। जो तसव्वुर जिस क़द्र ज़्यादा तरक़्क़ी-

1-सीखने वालों, विधार्थियों। 2-समय-समय पर। 3-शिक्षा का तरीक़ा। 4-विकास-शृंखला। 5-औत्सुक। 6-प्रकोप-गुण।

याफ़्ता है, उतना ही ज़्यादा मुनज़्ज़ह और सिफ़ाते रहमतो-जलाल से मुत्तसिफ़ है।

इन्सान का तसव्वुर सिफ़ाते क़हरिय्या से क्यों शुरू हुआ ?

इन्सान का तसव्वुर सिफ़ाते क़हरिय्या के तख़य्युल से क्यों शुरू हुआ? इसकी इल्लत वाज़ेह है। फ़ित्रते काइनात की तामीर, तख़रीब के नक़ाब में पोशीदा है। इन्सानी फ़िक्र की तफ़ूलियत तामीर का हुस्न न देख सकी, तख़रीब की हौलनाकियों से सहम गई। तामीर का हुस्नो-जमाल देखने के लिए फ़हमो-बसीरत की दूर-रस निगाह मतलूब थी और वो अभी उसकी आँखों ने पैदा नहीं की थी।

दुनिया में हर चीज़ की तरह हर फ़े'ल की नौइयत भी अपना मिज़ाज रखती है। बनाव एक ऐसी हालत है जिस का मिज़ाज सर-तासर सुकून और ख़ामोशी है और बिगाड़ एक ऐसी हालत है कि उसका मिज़ाज सर-तासर शोरिश और हवलनाकी है। बनाव ईजाब है, नज़्म है, जम-ओ-तरतीब है। बिगाड़ सल्ब है, बरहमी है, तफ़रिक़ा व इख़्तिलाल है। जम-ओ-नज़्म[1] की हालत ही सुकून की हालत होती है और तफ़रिक़ा व बरहमी की हालत ही शोरिश व इन्फ़िजार की हालत है। दीवार जब बनती है तो तुम्हें कोई शोरिश महसूस नहीं होती, लेकिन जब गिरती है तो धमाका हो होता है और तुम बेइख़्तियार चौंक उठते हो। इस सूरते-हाल का क़ुदरती नतीजा ये है कि हैवानी तबीअ़त सल्बी अफ़्आ़ल से फ़ौरन मुतअ़स्सिर हो जाती है, क्योंकि उनकी नुमूद में शोरिश ओर हौलनाकी है।

1-ठहराव, व्यवस्था।

लेकिन ईजाबी अफ़्आल से मुतअस्सिर होने में देर लगाती है, क्योंकि उनका हुस्नो-जमाल यका-यक मुशाहदे में नहीं आ जाता और उनका मिज़ाज शोरिश की जगह ख़ामोशी और सुकून है (65)।

फ़ित्रत के सल्बी मज़ाहिर की क़हर-मानी और ईजाबी मज़ाहिर का हुस्नो-जमाल

इन्सान पर शेफ़्तगी से पहले दहशत तारी हुई

इसी बिना पर अक़्ले इन्सानी ने जब सिफ़ाते इलाही की सूरत-आराई करनी चाही तो फ़ित्रते काइनात के सल्बी मज़ाहिर की दहशत से फ़ौरन मुतअस्सिर हो गई, क्योंकि ज़्यादा नुमायाँ और पुर-शोर थे। और ईजाबी व तामीरी हक़ीक़त से मुतअस्सिर होने में बहुत देर लग गई, क्योंकि उनमें शोरिश और हंगामा न था। बादलों की गरज, बिजली की कड़क, आतिश-फ़शाँ[1] पहाड़ों का इन्फ़िजार[2], ज़मीन का ज़लज़ला, आसमान की ज़ालाबारी, दरिया का सैलाब, समन्दर का तलातुम, इन तमाम सल्बी मज़ाहिर में उसके लिए रोबो-हैबत थी और उसी हैबत के अन्दर वो एक ग़ज़बनाक ख़ुदा की डरावनी सूरत देखने लगा था। उसे बिजली की कड़क में कोई हुस्न महसूस नहीं हो सकता था, वो बादलों की गरज में कोई शाने महबूबियत नहीं पा सकता था, वो आतिश-फ़शाँ पहाड़ों की संगबारी से प्यार नहीं कर सकता था और उसकी अक़्ल अभी ख़ुदा के इन्हीं कामों से आशना हुई थी!

ख़ुद उसकी इब्तिदाई मईशत की नौइयत भी ऐसी ही थी कि

1-ज्वाला-मुखी। 2-फटना।

उन्सो-मुहब्बत की जगह ख़ौफ़ो-वहशत के जज़्बात बर-अंगेख़्ता होते। वो कमज़ोर और निहत्ता था और दुनिया की हर चीज़ उसे दुश्मनी और हलाकत पर तुली नज़र आती थी। दलदल के मच्छरों के झुण्ड चारों तरफ़ मंडला रहे थे, ज़हरीले जानवर हर तरफ़ रेंग रहे थे, दरिन्दों के हमलों से हर वक़्त मुक़ाबिल रहना पड़ता था। सर पर सूरज की तपिश बेपनाह थी और चारों तरफ़ मौसम के असरात हौलनाक थे। गरज़ कि उसकी ज़िन्दगी सर-तासर जंग और मेहनत थी और उस माहौल का क़ुदरती नतीजा था कि उसका ज़ेहन ख़ुदा का तसव्वुर करते हुए ख़ुदा की हलाकत आफ़रीनियों की तरफ़ जाता, रहमतो-फ़ैज़ान का इदराक न कर सकता।

बिल-आख़िर सिफ़ाते रहमतो-जमाल का इश्तिमाल

लेकिन जूँ-जूँ उसमें और उसके माहौल में तब्दीली होती गई, उसके तसव्वुर में भी यासो-दहशत की जगह उम्मीदो-रहमत का उन्सुर शामिल होता गया, यहाँ तक कि माबूदियत के तसव्वुर में सिफ़ाते रहमतो-जमाल ने भी वैसी ही जगह पा ली जैसी सिफ़ाते क़हरो-जलाल के लिए थी। चुनांचे अगर क़दीम अक़्वाम के अस्नाम परस्ताना तसव्वुरात का मुतालआ करें तो हम देखेंगे कि उनकी इब्तिदा हर जगह सिफ़ाते क़हरो-ग़ज़ब ही से हुई है और फिर आहिस्ता-आहिस्ता रहमतो-जमाल की तरफ़ क़दम उठा है। आख़िरी कड़ियाँ वो नज़र आएँगी जिन में क़हरो-ग़ज़ब के साथ रहमतो-जमाल का तसव्वुर भी मुसावियाना हैसियत से क़ायम हो गया है। मसलन क़हरो-हलाकत के देवताओं और क़ुव्वतों के साथ ज़िन्दगी,

रिज़्क़, दौलत और हुस्नो-इल्म के देवताओं की भी परस्तिश शुरू हो गई है। यूनान का इल्मुल-अस्नाम[1] अपने लताफ़ते तख़य्युल के लिहाज़ से तमाम अस्नामी तख़य्युलात में अपनी ख़ास जगह रखता है, लेकिन उसकी परस्तिश के भी क़दीम माबूद वही थे जो क़हरो-ग़ज़ब की ख़ौफ़नाक क़ुव्वतें समझी जाती थीं। हिन्दुस्तान में इस वक़्त तक ज़िन्दगी और बख़्शिश के देवताओं से कहीं ज़्यादा हलाकत के देवताओं की परस्तिश होती है।

ज़ुहूरे क़ुरआन के वक़्त दुनिया के आम तसव्वुरात

बहरहाल हमें ग़ौर करना चाहिए कि क़ुरआन के ज़ुहूर के वक़्त सिफ़ाते इलाही के आम तसव्वुरात की नौइयत क्या थी और क़ुरआन ने जो तसव्वुर पेश किया उसकी हैसियत क्या है ?

ज़ुहूरे क़ुरआन के वक़्त पाँच दीनी तसव्वुर (66) फ़िक्रे इन्सानी पर छाए हुए थे :

1- चीनी। 2-हिन्दुस्तानी। 3-मजूसी। 4-यहूदी और 5-मसीही।

(1) चीनी तसव्वुर

दुनिया की तमाम क़दीम क़ौमों में चीनियों की ये खुसूसियत तस्लीम करनी पड़ती है कि उनके तसव्वुरे उलूहियत ने इब्तिदा में जो एक सादा और मुब्हम नौइयत इख़्तियार कर ली थी, वो बहुत हद तक बराबर क़ायम रही और ज़मान-ए-माबाद की ज़ेहनी वुस्अत-

1-मूर्ति कला।

पज़ीरियाँ उसमें ज़्यादा मदाख़िलत न कर सकीं। ताहम तसव्वुर का कोई मुरक़्क़ा बग़ैर रंग-रोग़न के बन नहीं सकता, इसलिए आहिस्ता-आहिस्ता उस सादा ख़ाके में भी मुख़्तलिफ़ रंगतें नुमायाँ होने लगीं और बिल-आख़िर एक रंगीन तस्वीर मुतशक्कल[1] हो गई।

चीन में क़दीम ज़माने से मक़ामी ख़ुदाओं के साथ 'आसमानी' हस्ती का एतिक़ाद भी मौजूद था। एक ऐसी बुलन्द और अज़ीम हस्ती जिसकी उलुव्वियत के तसव्वुर के लिए हम आसमान के सिवा और किसी तरफ़ नज़र नहीं उठा सकते। आसमान हुस्नो-बख़्शायश का भी मज़हर है, क़हरो-ग़ज़ब की भी हौलनाकी है, उसका सूरज रौशनी और हरारत बख़्शता है, उसके सितारे अंधेरी रातों में क़िन्दीलें रौशन कर देते हैं, उसकी बारिश ज़मीन को तरह-तरह की रूईदगियों से मामूर कर देती है, लेकिन उसकी बिजलियाँ हलाकत का भी प्याम हैं और उसकी गरज दिलों को दहला भी देती है। इसलिए आसमानी ख़ुदा के तसव्वुर में दोनों सिफ़तें नमूदार हुईं, एक तरफ़ उसकी जूदो-बख़्शायश है, दूसरी तरफ़ उसका क़हरो-ग़ज़ब है। चीनी शायरी की क़दीम किताब में हम क़दीम-तरीन चीनी तसव्वुरात की झलक देख सकते हैं, उनमें जा-बजा हमें ऐसे मुख़ातबात मिलते हैं जिन में आसमानी आमाल की इन मुतज़ाद नुमूदों पर हैरानी व सरगश्तगी का इज़्हार किया गया है। "ये क्या बात है कि तेरे कामों में यक्सानी और हम-आहंगी नहीं? तू ज़िन्दगी भी बख़्शता है और तेरे पास हलाकत की बिजलियाँ भी हैं"।

ये "आसमान" चीनी तसव्वुर का एक ऐसा बुनियादी उन्सुर बन गया कि चीनी जमइय्यत आसमानी जमइय्यत और चीनी

1-शक्ल या आकार ग्रहण करना।

मम्लकत आसमानी मम्लकत के नाम से पुकारी जाने लगी। रूमी जब पहले पहल चीन से आशना हुए तो उन्हें एक "आसमानी मम्लकत" ही की ख़बर मिली थी। उस वक़्त से (Coelum) के मुश्तक़्क़ात का चीन के लिए इस्तेमाल होने लगा, यानी "आसमान वाले" और "आसमानी"। अब भी अंग्रेज़ी में चीन के बाशिन्दों के लिए मजाज़न "सले-शेल" (Celestial) का लफ़्ज़ इस्तेमाल किया जाता है, यानी आसमानी मुल्क के बाशिन्दे।

इस आसमानी हस्ती के अ़लावा गुज़रे हुए इन्सानों की रूहें भी थीं जिन्हें दूसरे आ़लम में पहुँच कर तदबीरो-तसर्रुफ़ की ताक़तें हासिल हो गई थीं और इसलिए परस्तिश की मुस्तहिक़ समझी गई थीं। हर ख़ानदान अपनी माबूद रूहें रखता था और हर इलाक़ा अपना मक़ामी ख़ुदा।

लाउत्ज़ो और कुंग फ़ोत्ज़े की तालीम

सने मसीही से पाँच सौ बरस पहले लाउत्ज़ो (Lao-Tzu) और कुंग फ़ोत्ज़े (Kung-Fu-Tse) (67) का ज़ुहूर हुआ। कुंग फ़ोत्ज़े ने मुल्क को अ़मली ज़िन्दगी की सआ़दतों की राह दिखाई और मुआ़शरती हुक़ूक़ो-फ़राइज़ की अदाइगी का एक क़ानून मुहैया कर दिया। लेकिन जहाँ तक ख़ुदा की हस्ती का तअ़ल्लुक़ है "आसमान" का क़दीमी तसव्वुर बदस्तूर क़ायम रहा और अज्दाद परस्ती के अ़क़ाइद ने इसके साथ मिलकर एक ऐसी नौइयत पैदा कर ली गोया आसमानी ख़ुदा तक पहुँचेने का ज़रिया गुज़री हुई रूहों का वसीला और तशफ़्फ़ो है। रूहानी तसव्वुरात में वसीले का एतिक़ाद हमेशा आ़बिदाना परस्तिश की नौइयत पैदा कर लेता है, चुनांचे ये तवस्सुल

भी अ़मलन तअ़ब्बुद था और हर तरह के दीनी आमालो-रुसूम का मरकज़ी नुक़्ता बन गया था।

हिन्दुस्तान और यूनान में देवताओं के तसव्वुर ने नशो-नुमा पाई थी जो ख़ुदाई की एक बालातर हस्ती के साथ कारख़ान-ए-आ़लम के तसर्रुफ़ात में शिर्कत रखते थे। चीनी तसव्वुर में ये ख़ाना बुज़ुर्गों की रूहों ने भरा और इस तरह इश्राक और तअ़द्दुद के तसव्वुर की पूरी नक़्श-आराई हो गई।

कुंग-फ़ोत्ज़े के ज़ुहूर से पहले क़ुर्बानियों की रस्म आ़म तौर पर राइज थी। कुंग-फ़ोत्ज़े ने अगर्चे इनपर ज़ोर नहीं दिया, लेकिन इनसे तअ़र्रुज़ भी नहीं किया। चुनांचे वो चीनी मन्दिरों का तक़ाज़ा बराबर पूरा करती रहीं। क़ुर्बानियों के अ़मल के पीछे तलबे बख़्शिश और जल्बे तहफ़्फ़ुज़ दोनों के तसव्वुर काम करते थे। क़ुर्बानियों के ज़रिये हम अपने मक़ासिद भी हासिल कर सकते हैं और ख़ुदा के क़हरो-ग़ज़ब से महफ़ूज़ हो सकते हैं। पहली ग़रज़ के लिए वो नज़र हैं, दूसरी ग़रज़ के लिए फ़िदया !

लाउत्ज़ो ने "ताउ" यानी तरीक़त के मस्लक की बुनियाद डाली, इसे चीन का तसव्वुफ़ और वेदान्त समझना चाहिए। ताउ ने चीनी ज़िन्दगी को रूहानी इस्तिग़राक़ और दाख़िली मुराक़बे की राहों से आशना किया और मज़हबी और इख़्लाक़ी तसव्वुरात में एक तरफ़ गहराई और दिक़्क़त-आफ़रीनी पैदा हुई, दूसरी तरफ़ लताफ़ते फ़िक्र और रिक़्क़ते ख़याल के लिए नये-नये दरवाज़े खुले। लेकिन तसव्वुफ़ मुल्क का आ़म दीनी तसव्वुर नहीं बन सकता था। इसकी महदूद जगह चीन में भी वही रही जो वेदान्त की हिन्दुओं में और तसव्वुफ़ की मुसलमानों में रही है।

चीन का शमनी तसव्वुर

उसके बाद वो ज़माना आया जब हिन्दुस्तान के शमनी (68) मज़हब (यानी बौद्ध मज़हब) की चीन में इशाअ़त हुई। ये महायाना बौद्ध मज़हब था जो मज़हब के अस्ली मबादियात से बहुत दूर जा चुका था और जिसने तबद्दुल-पज़ीरी की ऐसी बेरोक लचक पैदा कर ली थी कि जिस शक्लो-क़तअ़ का खाना मिलता था, वैसा ही जिस्म बना कर उसमें समा जाता था। ये जब चीन, कोरिया और जापान में पहुँचा तो उसे हिन्दुस्तान और सीलोन से मुख़्तलिफ़ क़िस्म की फ़िज़ा मिली और उसने फ़ौरन मक़ामी वज़अ़ व क़तअ़ इख़्तियार कर ली।

बौद्ध मज़हब की निस्बत यक़ीन किया जाता है कि ख़ुदा की हस्ती के तसव्वुर से खाली है, लेकिन पैरवाने बुद्ध ने ख़ुद बुद्ध को ख़ुदा की जगह दे दी और उसकी परस्तिश का एक ऐसा अ़लमगीर निज़ाम क़ायम कर दिया जिसकी कोई दूसरी नज़ीर अस्नामी मज़ाहिब की तारीख़ में नहीं मिलती। चुनांचे चीन, कोरिया और जापान की इबादत गाहें भी अब इस माबूदों के बुतों से मामूर हो गईं।

(2) हिन्दुस्तानी तसव्वुर

हिन्दुस्तान के तसव्वुरे उलूहियत की तारीख़ मुतज़ाद तसव्वुरों का एक हैरत-अंगेज़ मंज़र है। एक तरफ़ उसका तौहीदी फ़ल्सफ़ा है, दूसरी तरफ़ उसका अ़मली मज़हब है। तौहीदी फ़ल्सफ़े ने इस्तिग़राक़ फ़िक्रो-अ़मल के निहायत गहरे और दक़ीक़ मरहले तय किए और मामले को फ़िक्री बुलन्दियों की ऊँची सतह तक पुहँचा दिया जिसकी

कोई दूसरी मिसाल हमें क़दीम क़ौमों के मज़हबी तसव्वुरात में नहीं मिलतीं। अ़मली मज़हब ने इशराक और तअ़द्दुदे इलाह की बेरोक राह इख़्तियार की और अस्नामी तसव्वुरों को इतनी दूर तक फैलने दिया कि हर पत्थर माबूद हो गया, हर दरख़्त ख़ुदाई करने लगा और हर चौखट सज्दागाह बन गई। वो बयक-वक़्त ज़्यादा से ज़्यादा बुलन्दी की तरफ़ उड़ा और ज़्यादा से ज़्यादा पस्ती में भी गिरा। उसके ख़्वास ने अपने लिए तौहीद की जगह पसन्द की और अ़वाम के लिए इशराक और अस्नाम परस्ती की राह मुनासिब समझी।

उप-निषद का तौहीदी और वह्दतुल-वुजूदी तसव्वुर

ऋगवेद के श्लोकों में हमें एक तरफ़ मज़ाहिर क़ुदरत की परस्तिश का इब्तिदाई तसव्वुर बतदरीज फैलता और मुतजस्सिम होता दिखाई देता है, दूसरी तरफ़ एक बालातर और ख़ालिक़े-कुल हस्ती का तौहीदी तसव्वुर भी आहिस्ता-आहिस्ता उभरता नज़र आता है। ख़ुसूसन दस्वें हिस्से के श्लोकों में तो इसकी नुमूद साफ़-साफ़ दिखाई देने लगती है। ये तौहीदी तसव्वुर किसी बहुत पुराने गुज़श्ता अ़हद के बुनियादी तसव्वुर का बक़िया था या मज़ाहिरे क़ुदरत की कसरत आराइयों का तसव्वुर, अब ख़ुद बख़ुद कसरत से वह्दत की तरफ़ इरतिक़ाई क़दम उठाने लगा था, इसका फ़ैसला मुश्किल है। लेकिन बहरहाल एक ऐसे क़दीम अ़हद में भी जबकि ऋगवेद के तसव्वुरों ने नज़्मो-सुख़न का जामा पहनना शुरू किया था, तौहीदी तसव्वुर की झलक साफ़-साफ़ देखी जा सकती है। ख़ुदाओं का वो हुजूम जिसकी तादाद 333 या इसी तरह की सुलासी कसरत तक

पहुँच गई थी (69), बिल-आख़िर दायरों में सिमटने लगा, यानी ज़मीन, फ़िज़ा और आसमान में। और फिर उसने एक रब्बुल-अरबाबी (70) तसव्वुर (Henotheism) की[1] नौइयत पैदा कर ली। फिर ये रब्बुल-अरबाबी तसव्वुर और ज़्यादा सिमटने लगता है और एक सबसे बड़ी और सबपर छाई हुई हस्ती नुमायाँ होने लगती है। ये हस्ती कभी 'वरुण' में नज़र आती है, कभी 'इन्द्र' में, कभी 'अग्नि' में। लेकिन बिल-आख़िर एक ख़ालिक़े-कुल हस्ती का तसव्वुर पैदा हो जाता है जो 'प्रजापति' (परवर्दिगारे आ़लम) और 'विश्वकर्मा' (ख़ालिक़े-कुल) के नाम से पुकारी जाने लगती है और जो तमाम काइनात की अस्लो-हक़ीक़त है। "वो एक है मगर इल्म वाले उसे मुख़्तलिफ़ नामों से पुकारते हैं : अग्नि, यम, मात्री शिवान" (46-164), वो एक न तो आसमान है, न ज़मीन है, न सूरज की रौशनी है, न हवा का तूफ़ान है। वो काइनात की रूह है, तमाम क़ुव्वतों का सर-चशमा, हमेशगी, लाज़वाल। वो क्या है? वो शायद रट है जौहर के रूप में, आदीती है रूहानियत के भेस में। वो बग़ैर सांस के सांस लेने वाली हस्ती है!" (हिस्सा दहुम-121-2) "हम उसे देख नहीं सकते, हम उसे पूरी तरह बता नहीं सकते" (ऐज़न-121) वो 'ऐकमास्त' है, यानी हक़ीक़ते यगाना, अल-हक़। यही वह्दत है जो काइनात की तमाम कसरत के अन्दर देखी जा सकती है (71)।

यही मबादियात हैं जिन्हों ने उप-निषदों में तौहीदे वुजूदी (Pantheism)[2] के तसव्वुर की नौइयत पैदा कर ली और फिर वेदान्त के मा-बादत्तबइय्यात (Metaphysics)[3] ने उन्हीं बुनियादों पर इस्तिग़रक़े फ़िक्रो-नज़र की बड़ी-बड़ी इमारतें तैयार कर दीं।

1-एकैकाधिदेववाद। 2-सर्वेश्वरवाद। 3-अभौतिक शास्त्र, अतींद्रिय शास्त्र।

वह्दतुल-वुजूदी एतिक़ाद ज़ाते मुत्लक़ के कश्फ़ी[1] मुशाहदात पर मब्नी था, नज़री[2] अक़ाइद को इसमें दख़ल न था। इसलिए अस्लन यहाँ सिफ़ाते आराइयों की गुंजाइश ही न थी और अगर थी भी तो सिर्फ़ सल्बी सिफ़ात (Negative Attributes) ही उभर सकती थीं। यानी ये तो कहा जा सकता था कि वो ऐसा नहीं है, लेकिन ये नहीं कहा जा सकता था कि वो ऐसा है और ऐसा है। क्योंकि ईजाबी सिफ़ात का जो नक़्शा भी बनाया जाएगा वो हमारे ज़ेहनो-फ़िक्र ही का बनाया हुआ नक़्शा होगा और हमारा ज़ेहनो-फ़िक्र इम्कानो-इज़ाफ़त की चारदीवारी में इस तरह मुक़ैयद[3] है कि मुत्लक़[4] और ग़ैर महदूद हक़ीक़त का तसव्वुर कर ही नहीं सकता। वो जब तसव्वुर करेगा तो नागुज़ीर है कि मुत्लक़ को मुशख़्ख़स[5] बना कर सामने लाए और जब तशख़्ख़ुस आया तो इत्लाक़ बाक़ी नहीं रहा। बाबा अफ़ग़ानी ने दो मिस्रों के अन्दर मामले की पूरी तस्वीर खींच दी थी:

मुश्किल हिकायतस्त कि हर ज़र्रा ऐने ऊस्त
अमा नमी तवाँ कि इशारत ब-ऊ कुनन्द

यही वजह है कि उप-निषद ने पहले ज़ाते मुत्लक़ (ब्रह्मा) को ज़ाते मुशख़्ख़स (ईश्वर) के मर्तबे में उतारा (72)। और जब इत्लाक़ ने तशख़्ख़ुस का नक़ाब चेहरे पर डाल लिया तो फिर उस नक़ाब-पोश चेहरे की सिफ़तों की नक़्श-आराइयाँ की गईं और इस तरह वह्दतुल-वुजूदी अक़ीदे ने ज़ाते मुशख़्ख़स व मुत्तसिफ़ (सगुण) के तसव्वुर का मक़ाम भी मुहैया कर दिया।

1-स्थूल। 2-वैचारिक। 3-क़ैद। 4-निराकार-असीम। 5-विशिष्ट वैयक्तिक।

जब इन सिफ़ात का हम मुतालआ करते हैं तो बिला-शुब्हा एक निहायत बुलन्द तसव्वुर सामने आ जाता है जिस में सल्बी और ईजाबी दोनों तरह की सिफ़तें अपनी पूरी नुमूदारियाँ रखती हैं। उसकी ज़ात यगाना है, उस एक के लिए दूसरा नहीं, वो बेहम्ता है, बेमिसाल है, ज़र्फ़ो-मकान और मकान के कुयूद से बालातर, अज़ली व अबदी, नामुमकिनुल-इदराक[1], वाजिबुल-वुजूद, वही पैदा करने वाला है, वही हिफ़ाज़त करने वाला और वही फ़ना कर देने वाला। वो इल्लतुल-इलल् और इल्लते मुत्लक़ा ("उपादान" और "निमत्तिकरण") है। तमाम मौजूदात उसी से बनीं, उसी से क़ायम रहती हैं और फिर उसी की तरफ़ लौटने वाली हैं। वो नूर है, कमाल है, हुस्न है, सर-तासर पाकी है। सबसे ज़्यादा ताक़तवर, सबसे ज़्यादा रहमो-मुहब्बत वाला, सारी इबादतों और आशिक़ियों का मक़सूदे हक़ीक़ी !

लेकिन साथ ही दूसरी तरफ़ ये हक़ीक़त भी हमें साफ़-साफ़ दिखाई देती है कि तौहीदी तसव्वुर की ये बुलन्दी भी इश्राक और तअ़द्दुद की आमेज़श से ख़ाली नहीं रही और तौहीद फ़िज़्-ज़ात के साथ तौहीद फ़िस्-सिफ़ात का बे-मेल अ़क़ीदा जल्वागर न हो सका। ज़मान-ए-हाल के एक क़ाबिल हिन्दू मुसन्निफ़ के लफ़्ज़ों में "दरअसल इश्राकी और तअ़द्दुदी तसव्वुर (Polytheistic) हिन्दुस्तानी दिलो-दिमाग़ में इस दर्जा जड़ पकड़ चुका था कि अब उसे यक-क़लम उखाड़ के फेंक देना आसान न था। इसलिए एक यगाना हस्ती की जल्वा-तराज़ी के बाद भी दूसरे ख़ुदा नाबूद नहीं हो गए। अल्बत्ता उस यगाना हस्ती का क़ब्ज़ा व इक़्तिदार उन सब पर छा

1-अनुभवातीत।

गया और सब उसकी मातहती में आ गए" (73)।

अब इस तरह की तसरीहात हमें मिलने लगती हैं कि बग़ैर उस बालातर हस्ती (ब्रह्मा) के 'अग्नि' देवी कुछ नहीं कर सकती। "ये उसी का (ब्रह्मा का) ख़ौफ़ है जो तमाम देवताओं से उनके फ़राइज़े मन्सबी अन्जाम दिलाता है"। (तैत्तिरीय उप-निषद) राजा अश्वपति ने जब पाँच घर वालों से पूछा "तुम अपने ध्यान में किस की परस्तिश करते हो? तो उनमें से हर एक ने एक-एक देवता का नाम लिया। इस पर अश्वपति ने कहा "तुममें से हर एक ने हक़ीक़त के सिर्फ़ एक ही हिस्से की परस्तिश की, हालाँकि वो सबके मिलने से शक्ल-पज़ीर होती है। 'इन्द्र' उसका सर है, 'सूर्या' (सूरज) उसकी आँखें हैं, 'वायु' सांस है, 'आकाश' (एथर) जिस्म है, 'धरती' (ज़मीन) उसका पाँव है"। (एज़न) (74)।

लेकिन फिर साथ ही ये भी है कि जब हक़ीक़त की क़बूलियत और इहाते पर ज़ोर दिया जाता है तो तमाम मौजूदात के साथ देवताओं की हस्ती भी ग़ायब हो जाती है, क्योंकि तमाम मौजूदात उसी पर मौक़ूफ़ हैं, वो किसी पर मौक़ूफ़ नहीं। "जिस तरह रथ के पहिये की तमाम शाखें एक ही दायरे के अन्दर अपना वुजूद रखती हैं, इसी तरह तमाम चीज़ें, तमाम दुनियाएँ और तमाम आलात उसी एक वुजूद के अन्दर हैं" (ब्रह्मा रीनाक, उप-निषद, बाब 2-5)"यहाँ वो दरख़्त मौजूद है जिसकी जड़ ऊपर की तरफ़ चली गई है और शाखें नीचे की तरफ़ फैली हुई हैं। ये ब्रहमा है ला-फ़ानी, तमाम काइनात उसमें हैं, कोई उससे बाहर नहीं"। (तीत्रया-1-10)

यहाँ हम मुसन्निफ़ मौसूफ के अल्फ़ाज़ फिर मुस्तआर लेते हैं। "ये दरअसल एक समझौता था जो चन्द ख़ास दिमाग़ों के

फ़ल्सफ़ियाना तसव्वुर ने इन्सानी भीड़ के वहम-परस्ताना वल्वलों के साथ कर लिया था। इसका नतीजा ये निकला कि ख़्वास[1] और अ़वाम[2] की फ़िक्री मुवाफ़क़त[3] की एक आबो-हवा पैदा हो गई और वो बराबर क़ायम रही''।

आगे चल कर वेदान्त के फ़ल्सफ़े ने बड़ी वुस्अ़तें और गहराइयाँ पैदा कीं, लेकिन ख़्वास के तौहीदी तसव्वुर में अ़वाम के इश्राकी तसव्वुर से मुफ़ाहमत का जो मैलान पैदा हो गया था वो मुतज़ल्ज़ल[4] न हो सका, बल्कि और ज़्यादा मज़्बूत और वसीअ़ होता गया। ये बात आ़म तौर पर तस्लीम कर ली गई कि सालिक जब इरफ़ाने हक़ीक़त की मन्ज़िलें तय कर लेता है तो फिर मा-सिवा की तमाम हस्तियाँ मादूम हो जाती हैं और मा-सिवा में देवताओं की हस्तियाँ भी दाख़िल हैं, गोया देवताओं की हस्तियाँ मज़ाहिरे वुजूद की इब्तिदाई तयनात हुईं। लेकिन साथ ही ये बुनियाद भी बराबर क़ायम रखी गई कि जब तक उस आख़िरी मक़ामे इरफ़ान तक रसाई न हासिल न हो जाए, देवताओं की परिस्तश के बग़ैर चारा नहीं और उनकी परस्तिश का जो निज़ाम क़ायम हो गया है, उसे छेड़ना नहीं चाहिए। इस तरह गोया एक तरह के तौहीदी इश्राकी तसव्वुर (Monotheistic Polytheism) का मख़्लूत मिजाज़ पैदा हो गया जो बयक-वक़्त फ़िक्रो-नज़र का तौहीदी तक़ाज़ा भी पूरा करना चाहता था और साथ ही अस्नामी अ़क़ाइद का निज़ामे अ़मल भी संभाले रखना चाहता था। वेदान्त के बाज़ मज़हबों में तो ये मख़्लूत नौइयत बुनियादी तसव्वुरों तक सरायत कर गई। मसलन नीमबारक और उसका शागिर्द श्रीनिवास, ब्रहम सूत्र की शर्ह करते हुए हमें

1-विशिष्ट जन। 2-सामान्य जन। 3-अनुकूलता। 4-विचलित।

बतलाते हैं कि "अगर्चे ब्रह्मा या कृष्ण की तरह कोई नहीं, मगर उससे जुहूर में आई हुई दूसरी भी क़ुव्वतें हैं जो उसके साथ अपनी नुमूद रखती हैं और उसी की तरह कारफ़रमाई में शरीक हैं। चुनांचे कृष्ण की बायीं तरफ़ राधा है। ये बख़्शिशो-नवाल की हस्ती है, तमाम नताइज व समरात बख़्शने वाली। हमें चाहिए कि ब्रह्मा के साथ राधा की भी परस्तिश करें" (75)।

इस मौक़े पर ये हक़ीक़त भी पेशे नज़र रहनी चाहिए कि फ़ित्रते काइनात के जिन क़ुवाए मुदब्बिरा को सामी तसव्वुर ने "मलाक" और मलाइका" से ताबीर किया था, उसी को आर्याई तसव्वुर ने "देव" और "यज़्ता" से ताबीर किया। यूनानियों का "थीवस" (Theos) रूमियों का डेयूस (Deus) पारसियों का "यज़्ता" (यज़्दान) सबके अन्दर वही एक बुनियादी माद्दा और वही एक बुनियादी तसव्वुर काम करता रहा। संस्कृत में " देव " एक लचकदार लफ़्ज़ है जो मुतअ़द्दद मअ़नों में मुस्तामल हुआ है, लेकिन जब माफ़ौक़ल-फ़ित्रत हस्तियों के लिए बोला जाता है तो इसके मअ़ना एक ऐसी ग़ैर माद्दी और रूहानी हस्ती के हो जाते हैं जो अपने वुजूद में रौशन और दरख़्शाँ हो। सामी अदियान ने इन रूहानी हस्तियों की हैसियत इससे ज़्यादा नहीं देखी कि वो ख़ुदा की पैदा की हुई कारकुन हस्तियाँ हैं। लेकिन आर्याई तसव्वुर ने इनमें तदबीरो-तसर्रुफ़ की बिल-इस्तिक़लाल ताक़तें देखीं और जब तौहीदी तसव्वुर के क़याम से वो इस्तिक़लाल बाक़ी नहीं रहा तो तवस्सुल और तज़ल्लुफ़ का दरमियानी मक़ाम उन्होंने पैदा कर लिया। यानी अगर्चे वो ख़ुद ख़ुदा नहीं हैं, लेकिन ख़ुदा तक पहुँचने के लिए उनकी परस्तिश ज़रूरी हुई। एक परिस्तार की परस्तिश अगर्चे होगी माबूदे

हक़ीक़ी के लिए, मगर होगी उन्हीं के आस्तानों पर। हम बराहे-रास्त ख़ुदा के आस्ताने तक नहीं पहुँच सकते, हमें पहले देवताओं के आस्तानों का वसीला पकड़ना चाहिए। दरअसल यही तवस्सुल व तज़ल्लुफ़ का अक़ीदा है जिसने हर जगह तौहीदी एतिक़ादो-अमल की तक्मील में ख़लल डाला, वरना एक ख़ुदा की यगांगी और बालातरी से तो किसी को भी इनकार न था। अरब जाहिलिय्यत के बुत-परस्तों का भी यही अक़ीदा क़ुरआन ने नक़ल किया है कि :

"مَا نَعْبُدُهُمْ اِلَّا لِيُقَرِّبُوْنَا اِلَى اللّٰهِ زُلْفٰى" (39 :3)

बहरहाल शिर्क फ़िस्-सिफ़ात[1] और शिर्क फ़िल-इबादात[2] का यही वो उन्सुरी माद्दा था जिसने हिन्दुस्तान के अमली मज़हब को सर-तासर इशराक और अस्नाम परस्ती के अक़ाइद से मामूर कर दिया और बिल-आख़िर ये सूरतेहाल इस दर्जा गहरी और आम हो गई कि जब तक एक सुराग़-रसाँ जुस्तुजू और तफ़हहुस की दूर-दराज़ मसाफ़तें तय न कर ले, हिन्दू अक़ीदे के तौहीदी तसव्वुर का कोई निशान नहीं पा सकता। तौहीदी तसव्वुर ने यहाँ एक ऐसे राज़ की नौइयत पैदा कर ली जिस तक सिर्फ़ ख़ास-ख़ास आरिफ़ों ही की रसाई हो सकती है। हम इसका सुराग़ पहाड़ों के ग़ारों में पा सकते हैं, लेकिन कूच-ओ-बाज़ार में नहीं पा सकते। 11वीं सदी मसीही में जब अबू रैहान बैरूनी हिन्दुस्तान के उलूमो-अक़ाइद के सुराग़ में निकला था तो ये मुतज़ाद सूरतेहाल देख कर हैरान रह गया था। 16वीं सदी में वैसी ही हैरानी अबुल फ़ज़ल को पेश आई और फिर 18वीं सदी में सर विल्यम जोन्स (Sir William Jones) को।

1-ईश्वरीय गुणों में साझेदारी। 2-उपासना में साझेदारी।

बेहतरीन माज़िरत जो इस सूरतेहाल की जा सकती है, वो वही है जिसका इशारा गीता के शुहर-ए-आफ़ाक़ तरानों में हमें मिलता है और जिसने अल-बैरूनी के फ़ल्सफ़ियाना दिमाग़ को भी अपनी तरफ़ मुतज्जवह कर लिया था। यानी यहाँ पहले दिन से अक़ाइदो-अ़मल की मुख़्तलिफ़ राहें मस्लिहतन खुली रखी गईं ताकि ख़्वास और अ़वाम दोनों की फ़हमो-इस्तेदाद की रिआ़यत मलहूज़ रहे। तौहीदी तसव्वुर ख़्वास के लिए था, क्योंकि वही इस बुलन्द मक़ाम के मुतहम्मिल हो सकते थे, अस्नामी तसव्वुर अ़वाम के लिए था, क्योंकि उनकी तिफ़लाना उक़ूल के लिए यही राह मौज़ूँ थी। और फिर चूंकि ख़्वास भी जमइय्यतो-मुआ़शरत के आ़म ज़ब्तो-नज़्म से बाहर नहीं रह सकते, इसलिए अ़मली ज़िन्दगी में उन्हें भी अस्नाम परस्ती के तक़ाज़े पूरे ही करने पड़ते थे और इस तरह हिन्दू ज़िन्दगी की बैरूनी वज़अ़-क़तअ़[1] बिला इस्तिस्ना इश्राक और अस्नाम परस्ती ही की रहती आई।

अलबैरूनी ने हुकमा-ए-यूनान के अक़्वाल नक़्ल करके दिखाया है कि इस बारे में हिन्दुस्तान और यूनान दोनों का हाल एक ही तरह का रहा। फिर गीता का ये क़ौल नक़्ल किया है कि "बहुत से लोग मुझ तक (यानी ख़ुदा तक) इस तरह पहुँचना चाहते है कि मेरे सिवा दूसरों की इबादत करते हैं। लेकिन मैं उनकी मुरादें भी पूरी कर देता हूँ, क्योंकि मैं उनसे और उनकी इबादत से बेनियाज़ हूँ" (76)।

बेमहल न होगा अगर इस मौक़े पर ज़मान-ए-हाल के एक हिन्दू मुसन्निफ़ की राय पर भी नज़र डाल ली जाए। गौतम बुद्ध के ज़ुहूर से पहले हिन्दू मज़हब के तसव्वुरे उलूहियत ने जो आ़म

1-ऊपरी बनावट।

शक्लो-सूरत पैदा कर ली थी, उस पर बहस करते हुए ये क़ाबिल मुसन्निफ़ लिखता है :

"गौतम बुद्ध के अ़हद में जो मज़हब मुल्क पर छाया हुआ था, उसके नुमायाँ ख़तो-ख़ाल ये थे कि लेन-देन का एक सौदा था जो ख़ुदा और इन्सानों के दरमियान ठहर गया था। जबकि एक तरफ़ उप-निषद का ब्रह्मा था जो ज़ाते उलूहियत का एक आला और शाइस्ता तसव्वुर पेश करता था तो दूसरी तरफ़ अन-गिनत ख़ुदाओं का हुजूम था जिन के लिए कोई हद-बन्दी नहीं ठहराई जा सकती थी। आसमान के सय्यारे, माद्दे के अ़नासिर, ज़मीन के दरख़्त, जंगल के हैवान, पहाड़ों की चटानें, दरियाओं की जदवलें, ग़रज़ेकि मौजूदाते ख़िल्क़त की कोई क़िस्म ऐसी न थी जो ख़ुदाई हुकूमत में शरीक न कर ली गई हो। गोया एक बे-लगाम और ख़ुद-रौ तख़य्युल को परवाना मिल गया था कि दुनिया की जितनी चीज़ों को ख़ुदाई मुस्नद पर बिठा सकता है, बेरोक-टोक बिठाता रहे। फिर जैसे ख़ुदाओं की ये बेशुमार भेड़ें भी उसके ज़ौक़े ख़ुदा-साज़ी के लिए काफ़ी न हुई हों, तरह-तरह के इफ़रीतों और अ़जीबुल-ख़िल्क़त जिस्मों की मुतख़य्यला सूरतों का भी उनपर इज़ाफ़ा होता रहा। इसमें शुब्हा नहीं कि उप-निषदों ने फ़िक्रो-नज़र की दुनिया में इन ख़ुदाओं की सुल्तानी दरहम

बरहम कर दी थी, लेकिन अ़मल की ज़िन्दगी में इन्हें नहीं छेड़ा गया, वो बदस्तूर अपनी ख़ुदाई मस्नदों पर जमे रहे'' (77)।

शमनी मज़हब और उसके तसव्वुरात

क़दीम ब्रह्मनी मज़हब के बाद शमनी मज़हब (यानी बौद्ध मज़हब) का ज़ुहूर हुआ। इस्लाम के ज़ुहूर से पहले हिन्दुस्तान का आ़म मज़हब यही था। शमनी मज़हब की एतिक़ादी मबादियात की मुख़्तलिफ़ तफ़्सीरें की गई हैं। 19वीं सदी के मुस्तशरिक़ों के एक गिरोह ने इसे उप-निषदों की तालीम ही का एक अ़मली इस्तिग़राक़ क़रार दिया था और ख़याल किया था कि 'निरवाण' में जज़्बो-इन्फ़िसाल की रूहानी अस्ल पोशीदा है, यानी जिस सर-चश्मे से इन्सानी हस्ती निकलती है, फिर उसी में वासिल हो जाना 'निरवाण' यानी निजाते कामिल है। लेकिन अब आ़म तौर पर तस्लीम कर लिया गया है कि शमनी मज़हब ख़ुदा और रूह की हस्ती का कोई तसव्वुर नहीं रखता। उसका दायर-ए-एतिक़ादो-अ़मल सिर्फ़ ज़िन्दगी की सआ़दत और निजात के मस्अले में महदूद है। वो सिर्फ़ प्रकृति यानी माद्द-ए-अज़ली का हवाला देता है जिसे काइनाती तबीअ़त हरकत में लाती है। निरवाण से मक़सूद ये है कि हस्ती की अनानियत[1] फ़ना हो जाए और ज़िन्दगी के चक्कर से निजात मिल जाए। इसमें शक नहीं कि जहाँ तक मा-बाद ज़माने के शमनी मुफ़क्किरों की तसरीहात का तअ़ल्लुक़ है, यही तफ़्सीर सहीह मालूम होती है। अगर उनका एक गिरोह ला-अदरिय्यत (Agnosticism)

1-अहं।

तक पहुँच कर रुक गया है तो दूसरा गिरोह उससे भी आगे निकल गया है और मुद्दइयाना इनकार की राह इख़्तियार की है। मोकशाकर गुप्ता ने "तुर्क भाषा" (78) में उन तमाम दलाइल का रद किया है जो न्याय (79) और वेशीसेक तरीक़े नज़र के नज़्ज़ार ख़ुदा की हस्ती के इस्बात में पेश करते थे। ताहम ये बात भी क़तई तौर पर नहीं कही जा सकती कि ख़ुद गौतम बुद्ध का सुकूत व तवक़्क़ुफ़ भी इनकार पर मब्नी था। उसके सुकूती तहफ़्फ़ुज़ात मुतअ़द्दद मस्अलों में साबित हैं ओर उसके मुतअ़द्दद महमल क़रार दिए जा सकते हैं। अगर उन तमाम अक़्वाल पर जो बराहेरास्त उसकी तरफ़ मंसूब हैं, गौर किया जाए तो ऐसा महसूस होता है कि उसका मस्लक नफ़ी ज़ात का न था, नफ़ी सिफ़ात का था। और नफ़ी सिफ़ात का मक़ाम ऐसा है कि इन्सानी फ़िक्रो-ज़बान की तमाम ताबीरात मुअ़त्तल हो जाती हैं और सुकूत के सिवा चार-ए-कार बाक़ी नहीं रहता।

अ़लावा बरीं ये हक़ीक़त भी फ़रामोश नहीं करनी चाहिए कि उसके ज़ुहूर के वक़्त अस्नामी ख़ुदा परस्ती के मफ़ासिद बहुत गहरे हो चुके थे और अस्नामी ख़ुदा परस्ती बजाए ख़ुद राहे हक़ीक़त की सबसे बड़ी रुकावट बन गई थी। उसने उस रोक से रास्ता साफ कर देना चाहा और तमाम तवज्जोह ज़िन्दगी की अ़मली सआ़दत के मस्अले पर मरकूज़ कर दीं। इस सूरतेहाल का लाज़िमी नतीजा ये था कि ब्रहमनी ख़ुदा परस्ती के अ़क़ाइद से इनकार किया जाए और इस पर ज़ोर दिया जाए कि निजात की राह इन माबूदों की परस्तिश में नहीं है, बल्कि इल्मे हक़ और अ़मले हक़ में है, यानी 'अष्टांग मार्ग' (80) में है। आगे चल कर इस इज़ाफ़ी इनकार ने मुत्लक़ इनकार की शक्ल पैदा कर ली और फिर ब्रहमनी मज़हब की मुख़ालफ़त के

गुलू ने मामले को दूर तक पहुँचा दिया (81)।

बहरहाल ख़ुद गौतम बुद्ध और उसकी तालीम के शारिहों की तसरीहात इस बारें में कुछ भी रही हों, मगर ये वाक़िआ है कि उसके पैरवों ने ख़ुदा के तसव्वुर की ख़ाली मस्नद बहुत जल्द भर दी। उन्होंने उस मस्नद को ख़ाली देखा तो ख़ुद गौतम बुद्ध को वहाँ ला कर बिठा दिया और फिर इस नए माबूद की परिस्तश इस ज़ोरो- शोर के साथ शुरू कर दी कि आधी से ज़्यादा दुनिया उसके बुतों से मामूर हो गई !

आवार-ए-गुर्बत न तवाँ दीद सनम-रा

वक़्तस्त दिगर बुत-कदह साज़न्द हरम-रा

गौतम बुद्ध की वफ़ात पर अभी ज़्यादा ज़माना नहीं गुज़रा था कि पैरवाने बुद्ध की अक्सरियत ने उसकी शख़्सियत को आ़म इन्सानी सतह से बालातर देखना शुरू कर दिया था और उसके आसारो-तबर्रुकात की परस्तिश का मैलान बढ़ने लगा था। उसकी वफ़ात के कुछ अ़र्से बाद जब मज़हब की पहली मज्लिसे आज़म राजगीरी में मुन्अ़क़िद हुई और उसके शागिर्दे ख़ास आनन्द ने उसकी आख़िरी वसाया बयान कीं तो बयान किया जाता है कि लोग उसकी रिवायत पर मुतमइन न हुए और उसके मुख़ालिफ़ हो गए, क्योंकि उसकी रिवायतों में उन्हें वो मा-वराए इन्सानियत अ़ज़्मत नज़र नहीं आई जिसे अब उनकी तबीअ़त ढूंढने लगी थीं। तक़रीबन सौ बरस बाद जब दूसरी मज्लिस वैशाली (मुज़फ़्फ़रपुर) में मुन्अ़क़िद हुई तो अब मज़हब की बुनियादी सादगी अपनी जगह खो चुकी थी और उसकी जगह नए-नए तसव्वुरों और मख़्लूत अ़क़ीदों ने ले ली थी। अब

मसीही मज़हब के अक़ानीमे सलासा की तरह जो 500 बरस बाद ज़ुहूर में आने वाला था, एक शमनी अक़ानीम का अ़क़ीदा बुद्ध की शख़्सियत के गिर्द हाले की तरह चमकने लगा और आ़म इन्सानी सतह से वो मा-वरा तस्लीम कर ली गई। यानी बुद्ध की एक शख़्सियत के अन्दर तीन वुजूदों की नुमूद हो गई: उसकी तालीम की शख़्सियत, उसके दुनियावी वुजूद की शख़्सियत, उसके हक़ीक़ी वुजूद की शख़्सियत जो लोक (बहिश्त) में रहती है। दुनिया में जब कभी बुद्ध का ज़ुहूर होता है तो ये उस हक़ीक़ी वुजूद का एक परतौ होता है। निजात पाने के मअ़ना ये हुए कि आदमी हक़ीक़ी बुद्ध के इसी मा-वरा-ए-आ़लम मस्कन में पहुँच जाए।

पहली सदी मसीह में बअ़हद कोशान जब चौथी मज्लिस बरशादर (पेशावर हाले) में मुन्अ़क़िद हुई तो अब बुनियादी मज़हब की जगह एक तरह का कलीसाई मज़हब क़ायम हो चुका था और बुद्ध के अष्टांग मार्ग (तरीक़े समानिया) की अ़मली रूह तरह-तरह की रुसूम परस्तियों और क़वाइद आराइयों में मादूम हो चुकी थी।

बिल-आख़िर पैरवाने बुद्ध दो बड़े फ़िरक़ों में बट गए। "हेनयान" (Hinayana) और "महायान" (Mahayana)। पहला फ़िरक़ा बुद्ध की शख़्सियत में एक रहनुमा और मुअ़ल्लिम की इन्सानी शख़्सियत देखनी चाहता था, लेकिन दूसरे ने उसे पूरी तरह मावराए इन्सानियत[1] की रब्बानी सतह पर मुतमक्किन कर दिया था और पैरवाने बोद्ध की आ़म राह वही हो गई थी। अफ़ग़ानिस्तान, बामियान, वस्ते एशिया[2], चीन, कोरिया, जापान, तिब्बत, सब में महायान मज़हब ही की तब्लीग़ो-इशाअ़त हुई। चीनी सैय्याह[3]

1-मानवेतर, अलौकिक। 2-मध्य एशिया। 3-यात्री।

फ़ह्यान (Fa-Hien) जब चौथी सदी मसीही में हिन्दुस्तान आया था तो उसने पूरब के हीन यान शमनियों से मबाहिसा किया था और महायान तरीक़े की सदाक़त के दलाइल पेश किए थे। मौजूदा ज़माने में सीलोन के सिवा जहाँ हैन यान तरीक़े का एक मुहर्रफ़ बक़िया "थेरावाद" के नाम से पाया जाता है, तमाम पैरवाने बुद्ध का मज़हब महायान है।

मौजूदा ज़माने के बाज़ महक़्क़ीन शमनिया का ख़याल है कि अशोक के ज़माने तक बौद्ध मज़हब में बुत-परस्ती का आ़म रिवाज नहीं हुआ था, क्योंकि इस अ़हद तक के जो बौद्ध आसार मिलते हैं उनमें बोद्ध की शख़्सियत किसी बुत-परस्त के ज़रिये नहीं, बल्कि सिर्फ़ एक कमल के फूल या एक ख़ाली कुरसी की जगह दो क़दम नमूदार होने लगे और फिर बतदरीज क़दमों की जगह ख़ुद बुद्ध का पूरा मुजस्समा नमूदार हो गया। अगर ये इस्तिंबात सहीह तस्लीम कर लिया जाए, जब भी मानना पड़ेगा कि अशोक के ज़माने के बाद से बुद्ध के बुतों की आ़म परस्तिश जारी हो गई थी। अशोक का अ़हद सन् 250 ई० क़ब्ल अज़ मसीह[1] था।

(3) ईरानी मजूसी तसव्वुर

ज़र्दुशत के जुहूर से पहले मादा (मीडिया-Media) और पारस में एक क़दीम ईरानी (82) तरीक़े परस्तिश राइज था। हिन्दुस्तान के वेदों में देवताओं की परस्तिश और क़ुर्बानियों के आमालो-रुसूम[2] जिस तरह पाए जाते हैं, क़रीब-क़रीब वैसे ही अ़क़ाइद व रुसूम पारस और माद्दा में भी फैले हुए थे। देवताई ताक़तों को उनके दो बड़े

1-ईसापूर्व। 2-रीति-रिवाज।

मज़्हरों में तक़्सीम कर दिया गया था। एक ताक़त रौशन हस्तियों की थी जो इन्सान को ज़िन्दगी की तमाम ख़ुशियाँ बख़्शती थी। दूसरी बुराई के तारीक इफ़्रीतों की थी जो हर तरह की मुसीबतों और हलाकतों का सर-चश्मा थी। आग की परिस्तश के लिए क़ुर्बानगाहें बनाई जाती थीं और उनके पुजारियों को 'मोगूश' के नाम से पुकारा जाता था। ओस्ता के गाथा में इन्हें 'कारपान' और 'कावी' के नाम से भी पुकारा गया है। आगे चल कर उसी 'मूगोश' ने आतिश परस्ती का मफ़्हूम पैदा कर लिया और ग़ैर क़ौमें ईरानियों को 'मुग' और 'मोगूश' के नाम से पुकारने लगीं।

अ़रबों ने इसी 'मोगूश' को 'मजूस' कर दिया।

मज़्दीसना

ज़र्दुशत का जब ज़ुहूर हुआ तो उसने ईरानियों को इन क़दीम अ़क़ाइद से निजात दिलाई और "मज़्दीसना" की तालीम दी, यानी देवताओं की जगह एक ख़ुदा-ए-वाहिद "आहूराम्ज़दा" की परिस्तश की। ये आहूराम्ज़दा यगाना है, बेहम्ता है, बेमिसाल है, नूर है, पाकी है, सर-तासर हिकमत और ख़ैर है और तमाम काइनात का ख़ालिक़ है। इसने इन्सान के लिए दो आ़लम बनाए। एक आ़लम दुनियवी ज़िन्दगी का है, दूसरा मरने के बाद की ज़िन्दगी का। मरने के बाद जिस्म फ़ना हो जाता है मगर रूह बाक़ी रहती है और अपने आमाल के मुताबिक़ जज़ा पाती है।

देवताओं की जगह इसने 'अमश सपन्द' और 'यज़्ता' का तसव्वुर पैदा किया, यानी फ़िरिश्तों का। ये फ़िरिश्ते आहूराम्ज़द के अहकाम की तामील करते हैं। बुराई और तारीकी की ताक़तों की

जगह 'अंगरामे मीवश' (Angrame Miyush) की हस्ती की ख़बर दी, यानी शैतान की। यही 'अंगरामे मीवश' पाज़न्दकी ज़बान में 'अहरमन' हो गया।

ज़र्दुशत की तालीम में हिन्दुस्तानी आर्याओं के वेदी अक़ाइद का रद्द साफ़ नुमायाँ है। एक ही नाम ईरान और हिन्दुस्तान दोनों जगह उभरता है और मुतज़ाद मअ़ना पैदा कर लेता है। ओस्ता का 'आहूरा' साम और यजुर्वेद में "आसूरा" (असुर) है और अगर्चे ऋगवेद में इसका इत्लाक़ अच्छे मअ़नों पर हुआ था, मगर अब वो बुराई की शैतानी रूह बन गया है। वेदों का 'इन्द्रा' ओस्ता का 'अंग्रा' हो गया। वेदों में वो आसमान का ख़ुदा था, ओस्ता में ज़मीन का शैतान है। हिन्दुस्तान और यूरोप में 'देव' (Dev) और 'डियूस' (Deus) और 'थयूस' (Theus) ख़ुदा के लिए बोला गया, लेकिन ईरान में 'देव' के मअ़ना इफ़रीतों[1] के हो गए। गोया दोनों अक़ीदे एक दूसरे से लड़ रहे थे। एक का ख़ुदा दूसरे का शैतान हो जाता था और दूसरे का शैतान पहले के लिए ख़ुदा का काम देता था। इसी तरह हिन्दुस्तान में 'यम' मौत की ताक़त है, ओस्ता की रिवायतों में 'यम' ज़िन्दगी और इन्सानियत की सबसे बड़ी नुमूद हुई और फिर यही 'यम' जम हो कर जमशेद हो गया।

फ़सानहा कि ब-बाज़ीच-ए-रोज़गार सुरूद
कनूँ ब-मस्नद जमशीदो-ताज कै बस्तन्द

लेकिन मामूल होता है कि चन्द सदियों के बाद ईरान के क़दीम तसव्वुरात और बैरूनी असारात फिर ग़ालिब आ गए और

1-बुराई के प्रतीक।

सासानी अहद में जब ''मज़्दीसना'' की तालीम अज़-सरे नौ तदवीन[1] हुई तो क़दीम मजूसी, यूनानी और ज़र्दुशती अक़ाइद[2] का एक मख़्लूत मुरक्कब[3] था और उसका बैरूनी रंगो-रोग़न तो तमामतर मजूसी तसव्वुर ही ने फ़राहम किया था। इस्लाम का जब जुहूर हुआ तो यही मख़्लूत तसव्वुर ईरान का क़ौमी मज़हबी तसव्वुर था। मग़रिबी हिन्द के पारसी मुहाजिर यही तसव्वुर अपने साथ हिन्दुस्तान लाए और फिर यहाँ के मक़ामी असरात की एक तह उस पर और चढ़ गई।

मजूसी तसव्वुर की बुनियाद सनविय्यत (Dualism)[4] के अक़ीदे पर थी। यानी ख़ैर[5] और शर[6] की दो अलग-अलग क़ुव्वतें हैं। ''आहूराम्ज़दा'' जो कुछ करता है ख़ैर और रौशनी है। ''अंग्रामे-नीवश'' यानी अहरमन जो कुछ करता है शर और तारीकी है। इबादत की बुनियाद सूरज और आग की परिस्तश पर रखी गई कि रौशनी यज़्दानी सिफ़ात की सबसे बड़ी मज़्हर है। कहा जा सकता है कि मजूसी तसव्वुर ने ख़ैर और शर की गुत्थी यूँ सुलझानी चाही कि कारख़ान-ए-हस्ती की सरबराही दो मुतक़ाबिल[7] और मुतआरिज़ क़ुव्वतों में तक़सीम कर दी।

(4) यहूदी तसव्वुर

यहूदी तसव्वुर इब्तिदा में एक महदूद नस्ली तसव्वुर था। यानी किताबे पैदाइश का ''यहुवा'' ख़ानदाने इस्राईल के नस्ली ख़ुदा की हैसियत से नुमायाँ हुआ था, लेकिन फिर ये तसव्वुर बतदरीज

1-लिपिबद्ध, संकलित। 2-आस्थाओं। 3-मिश्रण। 4-द्वैतवाद। 5-अच्छाई। 6-बुराई। 7-प्रतिद्वंद्वी।

वसीअ़ होता गया। यहाँ तक कि यशइया दोम (83) के सहीफ़े में "तमाम क़ौमों का ख़ुदा" और "तमाम क़ौमों का हैकल" नुमायाँ हो गया। ताहम "इस्राईली ख़ुदा" का नस्ली इख़्तिसास किसी न किसी शक्ल में बराबर काम करता ही रहा और ज़ुहूरे इस्लाम के वक़्त उसके नुमायाँ ख़त्तो-ख़ाल और जुग़राफ़िया ही के ख़ालो-ख़त थे।

तजस्सुम और तंज़ीह के एतिबार से वो एक दरमियानी दर्जा रखता था और उसमें ग़ालिब उन्सुर[1] क़हरो-ग़ज़ब[2] और इन्तिक़ामो-ताज़ीब[3] का था। ख़ुदा का बार-बार मुतशक्कल[4] हो कर नमूदार होना। मुख़ातबात का तमामतर इन्सानी औसाफ़ो-जज़्बात से आलूदा होना, क़हरो-इन्तिक़ाम की शिद्दत और इब्तिदाई दर्जे का तमसीली उसलूब तौरात के सहीफ़ों का आ़म तसव्वुर है।

ख़ुदा का इन्सान से रिश्ता इस नौइयत का रिश्ता हुआ जैसे एक शौहर का अपनी बीवी से होता है। शौहर निहायत ग़य्यूर होता है, वो अपनी बीवी की सारी ख़ताएँ मुआ़फ़ कर देगा, लेकिन ये जुर्म मुआ़फ़ नहीं करेगा कि उसकी मुहब्बत में किसी दूसरे मर्द को भी शरीक करे। इसी तरह ख़ानदाने इस्राईल का ख़ुदा भी बहुत ग़य्यूर है। उसने इस्राईल के घराने को अपनी चहीती बीवी बनाया और चूंकि चहीती बीवी बनाया इसलिए ख़ानदाने इस्राईल की बेवफ़ाई और ग़ैर क़ौमों से आश्नाई उस पर बहुत ही शाक़ गुज़रती है और ज़रूरी है कि वो इस जुर्म के बदले सख़्त सज़ाएँ दे। चुनांचे अहकामे अशरह (Ten Commandments) में एक हुक्म ये भी था "तू किसी चीज़ की सूरत न बनाइयो और न उसके आगे झुकियो, क्योंकि मैं ख़ुदावन्द तेरा रश्क करने वाला एक बहुत ही ग़य्यूर ख़ुदा हूँ" (ख़ुरूज 20:4-5)।

1-हावी तत्व। 2-प्रकोप-क्रोध। 3-बदला-प्रतिशोध। 4-मूर्तरूप।

शौहर के रिश्ते की ये तम्सील जो मिस्र से खुरूज के बाद मुतशक्कल होना शुरू हो गई थी, आख़िर अ़हद तक कमो-बेश क़ायम रही। यहूदियों की हर गुमराही पर ख़ुदा के ग़ज़ब का इज़्हार एक ग़ज़बनाक शौहर का पुर-जोश इज़्हार होता है जो अपनी चहीती बीवी को उसकी एक-एक बे-वफ़ाई याद दिला रहा हो। ये उसलूबे तम्सील ब-ज़ाहिर कितना ही मोअस्सिर और शाइराना दिखाई देता हो, लेकिन इसमें शक नहीं कि ख़ुदा के तसव्वुर के लिए एक इब्तिदाई दर्जे का ग़ैर तरक़्क़ी-याफ़ता तसव्वुर था।

(5) मसीही तसव्वुर

लेकिन यशइया दोम के ज़माने से इस सूरतेहाल में तब्दीली शुरू हुई और यहूदी तसव्वुर में बयक-वक़्त वुस्अ़त और लताफ़त दोनों तरह के अ़नासिर नुमायाँ होने लगे। गोया अब एक नई तसव्वुरी फ़िज़ा के लिए ज़माने का मिज़ाज तैयार होने लगा था। चुनांचे मसीहियत आई तो रहमो-मुहब्बत और अ़फ़्वो-बख़्शिश[1] की एक नया तसव्वुर लेकर आई। अब ख़ुदा का तसव्वुर न तो जाबिर बादशाह की तरह था, न रश्को-ग़ैरत में डूबे हुए शौहर की तरह सख़्तगीर था, बल्कि बाब की मुहब्बत-शफ़्क़त की मिसाल नुमायाँ करता था। और इसमें शक नहीं कि यहूदी तसव्वुर की शिद्दतो-ग़ल्ज़त के मुक़ाबले में रहमो-मुहब्बत की रिक़्क़त का ये एक इन्क़िलाबी तसव्वुर था। इन्सानी ज़िन्दगी के सारे रिश्तों में माँ-बाप का रिश्ता सबसे बुलन्दतर रिश्ता है। इसमें शौहर के रिश्ते की तरह जज़्बों और ख़्वाहिशों की ग़रज़ों को दख़ल नहीं होता। ये सरासर

1-क्षमाशीलता।

रहमो-शफ़्क़त और परवरिश व चारासाज़ी होती है। औलाद बार-बार क़ुसूर करेगी, लेकिन माँ की मुहब्बत फिर भी गर्दन नहीं मोड़ेगी और बाप की शफ़्क़त फिर भी मुआफ़ी से इनकार नहीं करेगी। पस अगर ख़ुदा के तसव्वुर के लिए इन्सानी रिश्तों की मुशाबहतों[1] से काम लिए बग़ैर चारा न हो तो बिला-शुब्हा शौहर की तम्सील के मुक़ाबले में बाप की तम्सील[2] कहीं ज़्यादा शाइस्ता और तरक़्क़ी-याफ़्ता तम्सील है (**84**)।

तजस्सुम और तनज़्ज़ोह के लिहाज़ से मसीही तसव्वुर की सतह अस्लन वही थी जहाँ तक यहूदी तसव्वुर पहुँच चुका था। मगर जब मसीही अ़क़ाइद का रूमी अस्नाम परस्ती के तसव्वुरों से इम्तिज़ाज हुआ तो अक़ानीमे सलासा, कफ़्फ़ारा और मसीही परस्ती के तसव्वुरात छा गए और अस्कंदरिया के फ़लसफ़ा-आमेज़ अस्नामी तसव्वुर सेरापिस (Serapis) ने मसीही अस्नामी तसव्वुर की शक्ल इख़्तियार कर ली। अब मसीहियत को बुत परस्तों की बुत परस्ती से तो इनकार था, लेकिन ख़ुद अपनी बुत-परस्ती पर कोई एतिराज़ न था। मैडोना (Madonna) के क़दीम बुत की जगह अब एक नई मसीही मैडोना का बुत तैयार हो गया। ये ख़ुदा के फ़रज़न्द को गोद में लिए हुए थी और हर रासिख़ुल-एतिक़ाद मसीही की जबीने नियाज़ का सज्दा तलब करती थी।

ग़रज़ेकि क़ुरआन का जब नुज़ूल हुआ तो मसीही तसव्वुर रहमो-मुहब्बत की पिदरी तम्सील के साथ अक़ानीमे सलासा, कफ़्फ़ारा और तजस्सुम का एक मख़्लूत "इशराकी-तौहीदी[3]" तसव्वुर था।

1-उपमाओं। 2-प्रतीक, मिसाल। 3-अनेकात्मक एकेश्वरवाद।

फ़लासफ़-ए-यूनान और अस्कंदरिया का तसव्वुर

इन तसव्वुरों के अ़लावा एक तसव्वुर फ़लासफ़-ए-यूनान का भी है जो अगर्चे मज़ाहिब के तसव्वुरों की तरह अक़्वामे आ़लम का तसव्वुर न हो सका, ताहम इन्सान की फ़िक्री नशो-नुमा की तारीख़ में उसने बहुत बड़ा हिस्सा लिया और इसलिए उसे नज़र अन्दाज़ नहीं किया जा सकता।

तक़रबीन पाँच सौ बरस क़ब्ल अज़ मसीह यूनान में तौहीद का तसव्वुर नशो-नुमा पाने लगा था। इसकी सबसे बड़ी मुअ़ल्लिम शख़्सियत सुक़रात (Socrates) की हिक्मत में नुमायाँ हुई जिसे अफ़लातून (Plato) ने तदवीनो-इन्ज़िबात के जामे से आरास्ता किया।

जिस तरह हिन्दुस्तान में ऋगवेद के देववाणी तसव्वुरात ने बिल-आख़िर एक "रब्बुल-अरबाबी" तसव्वुर की नौइयत पैदा कर ली थी और फिर उसी रब्बुल-अरबाबी तसव्वुर ने बतदरीज तौहीदी तसव्वुर की तरफ़ क़दम बढ़ाया था, ठीक इसी तरह यूनान में भी ओलम्पस (Olympus) के देवताओं को बिल-आख़िर एक रब्बुल-अरबाब हस्ती के आगे झुकना पड़ा और फिर ये रब्बुल-अरबाबी तसव्वुर बतदरीज कसरत से वह्दत की तरफ़ क़दम बढ़ाने लगा। यूनान के क़दीम-तरीन तसव्वुरों के मालूम करने का तन्हा ज़रिया उसकी पुरानी शायरी है। जब हम उसका मुतालआ़ करते हैं तो दो अ़क़ीदे बराबर पसे-पर्दा काम करते दिखाई देते हैं। मरने के बाद की ज़िन्दगी और एक सबसे बड़ी और सबपर छाई हुई उलूहियत।

आयूनी (Ionic) फ़लसफ़े ने जो यूनानी मज़ाहिबे फ़लसफ़े में सबसे ज़्यादा पुराना है, अजरामे समावी की अन-देखी रूहों का एतिराफ़ किया था और फिर उन रूहों के ऊपर किसी ऐसी रूह का सुराग़ लगाना चाहता था जिसे अस्ले काइनात क़रार दिया जा सके। पाँचवीं सदी क़ब्ल अज़ मसीह फ़ीसागोरस (Pythagoras) का ज़ुहूर हुआ और उसने नए-नए फ़िक्री उन्सुरों से फ़लसफ़े को आश्ना किया। फ़ीसागोरस के सफ़रे हिन्द की रिवायत सहीह हो या न हो, लेकिन इसमें शक नहीं कि उसके फ़लसफ़ियाना तसव्वुरों में हिन्दुस्तानी तरीक़े फ़िक्र की मुशाबहतें पूरी तरह नुमायाँ हैं। तनासुख़ का ग़ैर मुश्तबह अक़ीदा, पाँचवें आसमानी उन्सुर (Quintaessentia) का एतिराफ़, नफ़्से इंसानी की इंफ़िरादियत का तसव्वुर, मुकाशिफ़ाती तरीक़े इदराक की झलक और सबसे ज़्यादा ये कि एक "तरीक़े ज़िन्दगी" के ज़ाबिते का एतिमाम। ऐसे मबादियात हैं जो हमें उप-निषद के दायर-ए-फ़िक्रो-नज़र से बहुत क़रीब कर देते हैं। फ़ीसागोरस के बाद एनेक्सागोरस (Anaxagoras) ने इन मबादियात को कुल्लियाती तसव्वुरात (Abstracts) की नौइयत का जामा पहनाया और इस तरह यूनानी फ़लसफ़े की वो बुनियाद इस्तवार हो गई जिस पर आगे चलकर सुक़रात और अफ़लातून अपनी-अपनी कुल्लियाती तसव्वुरियत की इमारतें खड़ी करने वाले थे।

सुक़रात की शख़्सियत में यूनान के तौहीदी और तन्ज़ीही एतिक़ाद की सबसे बड़ी नुमूद हुई। सुक़रात से पहले जो फ़लसफ़ी गुज़रे थे, उन्होंने क़ौमी परस्तिशगाहों के देवताओं से कोई तअर्रुज़ नहीं किया था, क्योंकि ख़ुद उनके दिलो-दिमाग़ भी उनके असरात से ख़ाली नहीं हुए थे। नुफ़ूसे फ़लकी के तसव्वुरात की अगर अस्ल

हक़ीक़त मालूम की जाए तो इससे ज़्यादा नहीं निकलेगी कि यूनान के कवाकबी देवताओं ने इल्मो-नज़र के हल्क़ों से रू-शनास होने के लिए एक नया फ़लसफ़ियाना नक़ाब अपने चेहरों पर डाल लिया था और अब उनकी हस्ती सिर्फ़ अ़वाम ही को नहीं, बल्कि फ़लसफ़ियों को भी तस्कीन देने के क़ाबिल बना दी गई थी। ये तक़रीबन वैसी ही सूरतेहाल थी जो अभी थोड़ी देर हुई हम हिन्दुस्तान की क़दीम तारीख़ के सहीफ़ों पर देख रहे थे। लेकिन फ़िक्री ग़ौरो-ख़ौज़ के नताइज एक ऐसी लचकदार सूरत में उभरने लगे कि एक तरफ़ फ़लसफ़ियाना दिमाग़ों के तक़ाज़ों का भी जवाब दिया जा सके, दूसरी तरफ़ अ़वाम के क़ौमी अ़क़ाइद से भी तसादुम न हो। हिन्दुस्तान की तरह यूनान में भी ख़्वास व अ़वाम के फ़िक्रो-अ़मल ने बाहम-दिगर समझौता कर लिया था, यानी तौहीदी और अस्नामी अ़क़ीदे साथ-साथ चलने लगे थे।

लेकिन सुक़रात का मअ़नवी उलुव्वे फ़िक्र उस आ़म सतह से बहुत बुलन्द जा चुका था। वो वक़्त के अस्नामी अ़क़ाइद से कोई समझौता नहीं कर सका। उसका तौहीदी तसव्वुर तजस्सुम और तशब्बोह की तमाम आलूदगियों से पाक हो कर उभरा। उसकी बे-लौस ख़ुदा परस्ती का तसव्वुर इस दर्जा बुलन्द था कि वक़्त के आ़म मज़हबी तसव्वुरात उससे सर ऊँचा करके भी देख नहीं सकते थे, उसकी हक़ीक़त-शनास निगाह में यूनान की अस्नामी ख़ुदा परस्ती इससे ज़्यादा कोई इख़्लाक़ी बुनियाद नहीं रखती थी कि एक तरह का दुकानदाराना लेन-देन था जो अपने ख़ुदसाख़्ता माबूदों के साथ चुकाया जाता था। अफ़लातून यूती-फ़रा (Euthyphro) के मुकालमे में हमें साफ़-साफ़ बतलाता है कि यूनान के दीनी तसव्वुरात व

आमाल की निस्बत सुक़रात के बेलाग फैसले क्या थे। सुक़रात पर मज़हबी बेएहतिरामी का इलज़ाम लगाया गया था, वो पूछता है कि "मज़हबी एहतिराम" की हक़ीक़त क्या है। फिर जो जवाब मिलता है वो उसे इस नतीजे पर पहुँचाता है कि "मज़हबी एहतिराम" गोया मांगने और देने का एक फ़न हुआ। देवताओं से वो चीज़ मांगनी जिस की हमें ख़्वाहिश है और उन्हें वो चीज़ दे देनी जिस की उन्हें एहतियाज है। मुख़्तसर ये कि तिजारती कारोबार का एक ख़ास ढंग है।

ऐसी बेपर्दा तालीम वक़्त की दारो-गीर से बच नहीं सकती थी और न बची, लेकिन सुक़रात की उलुल-अ़ज़्म रूह वक़्त की कोताह-अन्देशियों से मग़लूब नहीं हो सकती थी। उसने एक ऐसे सब्रो-इस्तक़ामत हक़ के साथ जो सिर्फ़ नबियों और शहीदों ही के अन्दर घर बाना सकता है, ज़हर का जाम उठाया और बग़ैर किसी तल्ख़-कामी के पी लिया :

تمنّت سليمى ان نموت بحبها
فاهون شيء عندنا ما تمنّت

उसने मरने से पहले आख़िरी बात जो कही थी वो ये थी: वो एक कम्तर दुनिया से बेहतर दुनिया की तरफ़ जा रहा है !

अफ़लातून ने सुक़रात के बाहिसाना (Dialectic) अफ़्कार को जो एक मुअ़ल्लिम के दरसो-इम्ला की नौइयत रखते थे, एक मुकम्मल ज़ाबिते की शक्ल दे दी और मन्तिक़ी तहलील के ज़रिये उन्हें कुल्लियातो-जवामे की सूरत में मुरत्तब किया। उसने अपने तमाम फ़लसफ़ियाना बहसो-नज़र की बुनियाद कुल्लियात[1]

1-अमूर्त

(Abstracts) पर रखी और हुकूमत से लेकर ख़ुदा की हस्ती तक सबको तसव्वुरियत[1] (Idealism) का जामा पहना दिया। अगर तसव्वुरियत महसूसात से अलग हस्ती रखती है तो "नाऊस" (Nous) (85) यानी नफ़्से-नातिक़ा[2] भी माद्दे से अलग अपनी हस्ती रखता है। और अगर नफ़्से-नातिक़ माद्दे से अलग हस्ती रखता है तो ख़ुदा की हस्ती भी माद्दियात[3] से अलग अपनी नुमूद रखती है। उसने एनेक्सागोरस के मस्लक[4] के ख़िलाफ़ दो नफ़्सों में इम्तियाज़ किया, एक को फ़ानी क़रार दिया, दूसरे को ला-फ़ानी। फ़ानी[5] नफ़्स ख़्वाहिशें रखता है और वही मुजस्सम ईगो (Ego) है लेकिन ला-फ़ानी[6] नफ़्स काइनात की अस्ले आक़िला[7] है और जिस्मानी ज़िन्दगी की तमाम अलाइशों[8] से यक-क़लम मुनज़्ज़ह[9]। यही नफ़्से कुल्ली ही वो इलाही चिंगारी है जिसने इन्सान के अन्दर क़ुव्वते मुदरिका की रौशनी का चिराग़ रौशन कर दिया है। यहाँ पहुँच कर नफ़्से कुल्ली का तसव्वुर भी एक तरह से वह्दतुल-वुजूदी तसव्वुर की नौइयत पैदा कर लेता है। दरअसल हिन्दू फ़लसफ़े का 'आत्मा' और यूनानी फ़लसफ़े का 'नफ़्स' एक ही मुसम्मा के दो नाम हैं। यहाँ 'आत्मा' के बाद 'परमात्मा' नमूदार हुआ था, वहाँ नफ़्स के बाद नफ़्से कुल्ली नमूदार हुआ।

सुक़रात ने ख़ुदा की हस्ती के लिए 'अगाथो' (Agatho) यानी 'अल-खैर[10]' का तसव्वुर क़ायम किया था। वो सर-तासर अच्छाई और हुस्न है। अफ़लातून वुजूद की दुनियाओं से भी ऊपर उड़ा और उसने खैर बहत[11] का सुराग़ लगाना चाहा, लेकिन सुक़रात के

1-आदर्शवाद। 2-मानस, बुद्धित्व, मन। 3-भौतिकता। 4-पंथ। 5-नश्वर। 6-अनश्वर 7-मूलचेतना। 8-उपभोगों। 9-विरक्त। 10-शुभ, सत्य। 11-अनुभवातीत।

सिफ़ाती तसव्वुर पर कोई इज़ाफ़ा न कर सका।

अरस्तू (Aristotle) जिस ने फ़लसफ़े को रूहानी तसव्वुरों से ख़ालिस करके सिर्फ़ मुशाहदा व एहसासात के दायरे में देखना चाहता था, उस सुक़राती तसव्वुर का साथ नहीं दे सकता था। उसने अक़्ले अव्वल और अक़्ले फ़'आल का तसव्वुर क़ायम किया जो एक अबदी ग़ैर मुतजज़्ज़ी और बसीत बहत हस्ती है। पस गोया सुक़रात और अफ़लातून ने उसे 'अल-अक़्ल[1]' में देखा और इस मन्ज़िल पर पहुँच कर रुक गया। इससे ज़्यादा जो कुछ मशाई फ़लसफ़े (Peripatetic Philosophy) में हमें मिलता है वो ख़ुद अरस्तू की तसरीहात नहीं हैं। इसके यूनानी और अरब शारिहों के इज़ाफ़े हैं।

इस तमाम तफ़्सील से मालूम हुआ कि 'अल-ख़ैर' और 'अल-अक़्ल' यूनानी फ़लसफ़े के तसव्वुरे उलूहियत का मा-हसल है।

सुक़रात की सिफ़ाती तसव्वुर को वज़ाहत के साथ समझने के लिए ज़रूरी है कि अफ़लातून की जमहूरियत (Republic) का हस्बे-ज़ैल मुकालमा पेशे-नज़र रखा जाए। इस मुकालमे में उसने तालीम के मस्अले पर बहस की है और वाज़ेह किया है कि इसके बुनियादी उसूल क्या होने चाहिएँ :

एडीमिंटस (Adeimantus) (86) ने सवाल किया कि शायरों को ख़ुदा का ज़िक्र करते हुए क्या पैराय-ए-बयान इख़्तियार करना चाहिए ?

सुक़रात : हर हाल में ख़ुदा की तौसीफ़ ऐसी करनी चाहिए

1-बुद्धि, बुधित्व।

जैसाकि वो अपनी ज़ात में है, ख़्वाह रज़्मी (Epic) शे'र हो ख़्वाह ग़िनाई (Lyric)। अलावा बरीं इसमें कोई शुब्हा नहीं कि ख़ुदा की ज़ात सालेह[1] है। पस ज़रूरी है कि उसकी सिफ़ात भी इस्लाह पर मब्नी हों।

एडिमैंटस : दुरुस्त है।

सुक़रात : और ये भी ज़ाहिर है कि जो वुजूद सालेह होगा, उससे कोई बात मुज़िर[2] साबित नहीं हो सकती और जो हस्ती ग़ैर मुज़िर होगी वो कभी शर[3] की सानेअ़[4] नहीं हो सकती। इसी तरह ये बात भी ज़ाहिर है कि जो ज़ात सालेह होगी, ज़रूरी है कि नाफ़े भी हो, पस मालूम हुआ कि ख़ुदा सिर्फ़ ख़ैर की इल्लत है, शर की इल्लत नहीं हो सकता।

एडिमैंटस : दुरुस्त है।

सुक़रात : और यहीं से ये बात भी वाज़ेह हो गई कि ख़ुदा का तमाम हवादिस की इल्लत होना मुमकिन नहीं, जैसाकि आ़म तौर पर ख़याल किया जाता है। बल्कि वो इन्सानी हालात के बहुत ही थोड़े हिस्से की इल्लत है, क्योंकि हम देखते हैं कि हमारी बुराइयाँ भलाइयों से कहीं ज़्यादा है और बुराइयों की इल्लत ख़ुदा की सालेह और नाफ़े[5] ज़ात नहीं हो सकती। पस चाहिए कि सिर्फ़ अच्छाई ही को उसकी तरफ़ निस्बत[6] दें और बुराई की इल्लत किसी दूसरी जगह ढूंढें।

एडिमैंटस : मैं महसूस करता हूँ कि ये बात बिल्कुल वाज़ेह है।

1-शुद्ध। 2-हानिप्रद। 3-बुराई। 4-प्रशंसक। 5-लाभप्रद। 6-जोड़ें।

सुक़रात: तो अब ज़रूरी हुआ कि हम शाइरों के ऐसे ख़यालात से मुत्तफ़िक़ न हों जैसे होमर (Homer) के हस्बेज़ैल शे'रो में ज़ाहिर किए गए हैं: मुश्तरी (Zeus) (87) की डेवढ़ी में दो प्याले रखे हैं, एक ख़ैर का है, एक शर का, और वही इन्सान की भलाई और बुराई की तमाम-तर इल्लत हैं। जिस इन्सान के हिस्से में ख़ैर के प्याले की शराब आ गई, उसके लिए तमाम-तर ख़ैर है। जिसके हिस्से में शर की आई, उसके लिए तमाम-तर शर है। और फिर जिस किसी को दोनों प्यालों का मिला जुला घूँट मिल गया, उसके हिस्से में अच्छाई भी आ गई और बुराई भी (88)।

फिर इसके बाद तजस्सुम के अक़ीदे पर बहस की है, और इससे इनकार किया है कि "ख़ुदा एक बाज़ीगर और बहरूपिये की तरह कभी एक भेस में नमूदार होता है, कभी दूसरे भेस में" (89)।

अस्कंदरिया का मज़हब अफ़लातूने जदीद

तीसरी सदी मसीही में अस्कंदरिया के फ़लसफ़-ए-तसव्वुफ़[1] ने "मज़हब अफ़लातूने जदीद" (Neo-Paltonism) के नाम से ज़ुहूर किया जिसका बानी अमोनियस सकास (Ammonius Saccas) था। अमोनियस को जा-नशीन फ़लातींस (Plotinus) हुआ और फ़लातींस का शागिर्द फ़ोर-फ़ोरयूस (Porphyry) था जो अस्कंदर अफ़रोदेसी (Alexander of Aphrodisias) के बाद अरस्तू का सबसे बड़ा शारेह तस्लीम किया गया है और जिसने अफ़लातूनिय-ए-जदीदा की मबादियात मशाई फ़लसफ़े में मख़्लूत कर दीं। फ़लातींस और फ़ोर-

1-सूफ़ी-दर्शन।

फ़ोरयूस की तालीम सर-तासर उसी अस्ल पर मब्नी थी जो हिन्दुस्तान में उप-निषद के मज़हब ने इख़्तियार की है, यानी इल्मे हक़[1] का अस्ली ज़रिया कशफ़[2] है न कि इस्तिदलाल[3], और मअ़रफ़ित[4] का कमाले मर्तबा[5] ये है कि जज़्बो-फ़ना[6] का मक़ाम हासिल हो जाए।

ख़ुदा की हस्ती के बारे में फ़लातींस भी इसी नतीजे पर पहुँचा जिसपर उप-निषद के मुसन्निफ़ इससे बहुत पहले पहुँच चुके थे, यानी नफ़ी सिफ़ात का मस्लक उसने भी इख़्तियार किया। ज़ाते मुत्लक़ हमारे तसव्वुर व इदराक की तमाम ताबीरात से मा-वरा है, इसलिए हम इस बारे में कोई हुक्म नहीं लगा सकते। "ज़ाते मुत्लक़ उन चीज़ों में से कोई चीज़ भी नहीं जो उससे ज़ुहूर में आई। हम उसकी निस्बत कोई हुक्म नहीं लगा सकते। हम न तो उसे मौजूदियत से ताबीर कर सकते हैं न जौहर से, न ये कह सकते हैं कि वो ज़िन्दगी है। हक़ीक़त इन ताबीरों से वराउल-वरा है" (90)।

सुक़रात और अफ़लातून ने हक़ीक़त को "अल-ख़ैर" से ताबीर किया था। इसलिए फ़लातींस वहाँ तक बढ़ने से इनकार न कर सका, लेकिन उससे आगे की तमाम राहें बंद कर दीं। "जब तुमने कहा "अल-ख़ैर" तो बस ये कह कर रुक जाओ और इस पर और कुछ न बढ़ाओ। अगर तुम किसी दूसरे ख़याल का इज़ाफ़ा करोगे तो हर इज़ाफ़े के साथ एक नये नक़्स[7] की उससे तक़रीब[8] करते जाओगे" (91)। अरस्तू ने हक़ीक़त का सुराग़ उक़ूले-मुजर्रदा[9] की राह से

1-सत्य ज्ञान। 2-खुलना, ज्ञान का उपलब्ध होना। 3-तर्कशीलता। 4-बोध। 5-पराकाष्ठा। 6-मिटने, अहंकारशून्य होने। 7-कमी। 8-पहुंचाना, जोड़ना। 9-अमूर्त बोध।

लगाया था और इल्लतुल-इलल[1] को अक़्ले अव्वल से ताबीर किया था, मगर फ़लातीस का 'मुत्लक़[2]' (Acsolute) इस ताबीर की गरानी भी बर्दाश्त नहीं कर सकता "ये मत कहो कि वो अक़्ल है, तुम इस तरह इस तरह उसे मुन्क़सिम[3] करने लगोगे" (92)।

लेकिन अगर हम "अक़्ल" का इत्लाक़ इस पर नहीं कर सकते तो फिर "अल-वुजूद" और "अल-ख़ैर" क्यों कर कह सकते हैं? अगर हम अपनी मुतसव्वरा[4] सिफ़तों में से कोई सिफ़त भी उसके लिए नहीं बोल सकते तो फिर वुजूदियत और ख़ैरियत की सिफ़ात भी क्यों मम्नूअ़[5] न हों? इस एतिराज़ का वो ख़ुद जवाब देता है :

"हमने अगर उसे "अल-ख़ैर" कहा तो इसका ये मतलब नहीं है कि हम कोई बाक़ाइदा तस्दीक़ किसी ख़ास वस्फ़ की करनी चाहते हैं जो उसके अन्दर मौजूद है। हम इस ताबीर के ज़रिये सिर्फ़ ये बात वाज़ेह करनी चाहते हैं कि वो एक मक़सद और मुन्तहा[6] है जिस पर तमाम सिलसिले जा कर ख़त्म हो जाते हैं। ये गोया एक इस्तिलाह[7] हुई जो एक ख़ास ग़रज़ के लिए काम में लाई गई है। इसी तरह अगर हम उसकी निस्बत वुजूद का हुक्म लगाते हैं तो सिर्फ़ इसलिए कि अदम[8] के दायरे से उसे बाहर रखें। वो तो हर चीज़ से मा-वरा है हत्ताकि वुजूद के औसाफ़ो-ख़्वास से भी" (93)।

अस्कंदरिया की किलीमेंट (Clement) ने इस मस्लक का खुलासा चन्द लफ़्ज़ों में कह दिया: "उसकी शिनाख़्त इससे नहीं की जा सकती कि वो क्या है? सिर्फ़ इससे की जा सकती है कि वो क्या

1-कार्य-कारण। 2-असीम, निरपेक्ष। 3-विभाजित, वर्गीकृत। 4-काल्पनिक, अवधारणीय। 5-निषिद्ध। 6-अंतिम (सत्य)। 7-परिभाषा। 8-अनस्तित्व, न होना।

कुछ नहीं है" यानी यहाँ सिर्फ़ सल्बो-नफ़ी[1] की राह मिलती है, ईजाबो-इस्बात की राहें बंद हैं :

سرّ لسان النطق عنه اخرس !

बाबे सिफ़ात में ये वही बात हुई जो उप-निषद की "नेति नेति" में हम सुन चुके हैं और जिस पर शंकर ने अपने मज़हब की मबादियात[2] की इमारतें इस्तवार[3] की हैं।

अज़्मिन-ए-वुस्ता के यहूदी फ़लासफ़ा ने भी यही मस्लक इख़्तियार किया था। मूसा बिन मैमून (अल-मुतवफ़्फ़ी सन् 605 हि०) ख़ुदा को 'अल-मौजूद' कहने से भी इनकार करता है और कहता है: हम जूँ-ही 'मौजूद' का वस्फ़ बोलते हैं, हमारे तसव्वुर पर मख़्लूक़ के औसाफ़ो-ख़्वास[4] की परछाईं पड़ने लगती हैं और ख़ुदा उन औसाफ़ से मुनज़्ज़ह है। उसने इससे भी इनकार किया कि ख़ुदा को 'वह्दहू ला शरीक[5]' कहा जाए, क्योंकि 'वह्दत' और 'अ़दमे शिर्कत' के तसव्वुरात भी इज़ाफ़ी निस्बतों[6] से ख़ाली नहीं। इब्ने मैमून का ये मस्लक दरअसल फ़लसफ़-ए-अस्कंदरिया ही की बाज़-गश्त[7] थी।

क़ुरआनी तसव्वुर

बहरहाल, छटी सदी मसीही में दुनिया की ख़ुदा परस्ताना ज़िन्दगी के तसव्वुरात इस हद तक पहुँच चुके थे कि क़ुरआन का नुज़ूल हुआ।

अब ग़ौर करो कि क़ुरआन के तसव्वुरे इलाही का क्या हाल

1-स्वीकार-नकार। 2-शुरूआत। 3-खड़ी। 4-गुण-विशेषताओं। 5-एक है वो, कोई उसका शरीक नहीं। 6-अतिरिक्त प्रतिबद्धताओं। 7-प्रतिध्वनि।

है? जब हम इन तमाम तसव्वुरात के मुतालआ के बाद क़ुरआन के तसव्वुर पर नज़र डालते हैं तो साफ़ नज़र आ जाता है कि तसव्वुरे इलाही की तमाम तस्वीरों में इसकी तस्वीर जामे[1] और बुलन्द-तर[2] है। इस सिलसिले में हस्बेज़ैल उमूर क़ाबिले ग़ौर हैं :

(1) तन्ज़ीह की तक्मील

अव्वलन तजस्सुम[3] और तन्ज़ीह[4] के लिहाज़ से क़ुरआन का तसव्वुर तन्ज़ीह की ऐसी तक्मील है जिसकी कोई नुमूद उस वक़्त दुनिया में मौजूद नहीं थी। क़ुरआन से पहले तन्ज़ीह का बड़े से बड़ा मर्तबा जिस का ज़ेहने इन्सानी मुतहम्मिल[5] हो सका था, ये था कि अस्नाम परस्ती[6] की जगह एक अन-देखे ख़ुदा की परस्तिश की जाए। लेकिन जहाँ तक सिफ़ाते इलाही का तअल्लुक़ है, इन्सानी औसाफ़ो-जज़्बात की मुशाबहत[7] और जिस्मो-हैअत के तम्सील से कोई तसव्वुर भी ख़ाली न था। हिन्दुस्तान और यूनान का हाल हम देख चुके हैं। यहूदी तसव्वुर जिसने अस्नाम परस्ती की कोई शक्ल भी जायज़ नहीं रखी थी, वो भी इस तर के तशब्बोह व तमस्सुल से यक्सर आलूदा है। हज़रत इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) का ख़ुदा को ममरे के बलूतों में देखना, ख़ुदा का हज़रत याक़ूब (अ़लैहिस्सलाम) से कुश्ती लड़ना, कोहे तूर पर शोलों के अन्दर नमूदार होना, हज़रत मूसा (अ़लैहिस्-सलाम) को ख़ुदा को पीछे से देखना, ख़ुदा का जोश ग़ज़ब में आ कर कोई काम कर बैठना और फिर पछताना, बनी इस्राईल को अपनी चहीती बीवी बना लेना और फिर उसकी बद-चलनी पर

1-सम्पूर्ण। 2-उच्च। 3-साकार। 4-निराकार। 5-आदी। 6-मूर्तिपूजा। 7-उपमाना, साम्यता, सदृश्यता।

मातम करना, हैकल की तबाही पर उसका नौहा, उसकी अन्तड़ियों में दर्द का उठना और कलेजे में सुराख़ पड़ जाना तौरात का आम उस्लूबे बयान[1] है।

अस्ल ये है कि क़ुरआन से पहले फ़िक्रे इन्सानी इस दर्जा बुलन्द नहीं हुआ था कि तम्सील का पर्दा हटा कर सिफ़ाते इलाही का जल्वा देख लेता, इसलिए हर तसव्वुर की बुनियाद तमाम-तर तम्सीलो-तश्बीह[2] ही पर रखनी पड़ी। मसलन तौरात में हम देखते हैं कि एक तरफ़ ज़बूर के तरानों और यशइया की किताब में ख़ुदा के लिए शाइस्ता सिफ़ात का तख़ैयुल मौजूद है, लेकिन दूसरी तरफ़ ख़ुदा का कोई मुख़ातिबा ऐसा नहीं जो सर-तासर इन्सानी औसाफ़ो-जज़्बात ती तश्बीह से मम्लू न हो। हज़रत मसीह ने जब चाहा कि रहमते इलाही का आलमगीर तसव्वुर पैदा करें तो वो भी मजबूर हुए कि ख़ुदा के लिए बाप की तश्बीह से काम लें। इसी तश्बीह से ज़ाहिर परस्तों ने ठोकर खाई और इब्नियते मसीह[3] का अक़ीदा पैदा कर लिया।

लेकिन इन तमाम तसव्वुरात के बाद जब हम क़ुरआन की तरफ़ रुख़ करते हैं तो ऐसा मालूम होता है गोया अचानक फ़िक्रो-तसव्वुर की एक नई दुनिया सामने आ गई। यहाँ तम्सीलो-तश्बीह के तमाम पर्दे बयक-दफ़ा उठ जाते हैं, इन्सानी औसाफ़ो-जज़्बात की मुशाबहत मफ़्क़ूद हो जाती है, हर गोशे में मजाज़ की जगह हक़ीक़त का जल्वा नुमायाँ हो जाता है और तजस्सुम का शायबा तक बाक़ी नहीं रहता। तन्ज़ीह इस मर्तब-ए-कमाल तक पहुँच जाती है कि :

1-वर्णन शैली। 2-रूपक-उपमा। 3-मसीह को ईश-पुत्र मानना।

لَيْسَ كَمِثْلِهٖ شَيْءٌ ج (١١:٤٢)	उसके मिस्ल कोई शय नहीं, किसी चीज़ से भी तुम उसे मुशाबेह नहीं ठहरा सकते। (42: 11)
لَاتُدْرِكُهُ الْاَبْصَارُ وَهُوَ يُدْرِكُ الْاَبْصَارَ ج وَهُوَ اللَّطِيْفُ الْخَبِيْرُ ٥ (١٠٣:٦)	इन्सान की निगाहें उसे नहीं पा सकतीं, लेकिन वो इन्सान की निगाहों को देख रहा है। [और वो बड़ा ही बारीक-बीं (और) बा-ख़बर है (94)] (6: 103)
قُلْ هُوَ اللّٰهُ اَحَدٌ ٥ اَللّٰهُ الصَّمَدُ ٥ لَمْ يَلِدْ ٥ وَلَمْ يُوْلَدْ ٥ وَلَمْ يَكُنْ لَّهٗ كُفُوًا اَحَدٌ ٥ (١١٢: ١-٤)	अल्लाह की ज़ात यगाना है, बेनियाज़ है, उसे किसी की एहतियाज नहीं, न तो उससे कोई पैदा हुआ, न वो किसी से पैदा हुआ और न कोई हस्ती उसके दर्जे और बराबर की हुई। (112: 1-4)

तौरात और क़ुरआन के जो मक़ामात मुश्तरक[1] हैं, दिक़्क़त नज़र[2] के साथ उनका मुतालआ करो। तौरात में जहाँ कहीं ख़ुदा की बराहे-रास्त नुमूद का ज़िक्र किया गया है, क़ुरआन वहाँ ख़ुदा की तजल्ली का ज़िक्र करता है। तौरात में जहाँ ये पाओगे कि ख़ुदा मुतशक्कल[3] होकर उतरा, क़ुरआन इस मौक़े की यूँ ताबीर करेगा कि ख़ुदा का फ़िरिश्ता मुतशक्कल होकर नमूदार हुआ। बतौर मिसाल सिर्फ़ एक मक़ाम पर नज़र डाली जाए। तौरात में है :

1-समान, कॉमन। 2-सूक्ष्म दृष्टि। 3-रूपधारी।

"ख़ुदावन्द ने कहा: ऐ मूसा देख! ये जगह मेरे पास है तो इस चटान पर खड़ा रह और यूँ होगा कि जब मेरे जलाल का गुज़र होगा तो मैं तुझे इस चटान की दराड़ में रखूँगा। और जब तक न गुज़र लूँगा, तुझे अपनी हथेली से ढांपे रहूँगा। फिर ऐसा होगा कि मैं हथेली उठा लूँगा और तू मेरा पीछा देख लेगा, लेकिन तू मेरा चेहरा नहीं देख सकता" (ख़ुरूज 33: 21-23)।

"तब ख़ुदावन्द बदली के सतून में होकर उतरा और ख़ीमे के दरवाज़े पर खड़ा रहा ...... उसने कहा कि मेरा बन्दा मूसा अपने ख़ुदावन्द की शबीह देखेगा" (गंती 12: 5-8)।

इसी मामले की ताबीर क़ुरआन ने यूँ की है :

قَالَ رَبِّ اَرِنِیْٓ اَنْظُرْ اِلَیْكَ ؕ قَالَ لَنْ تَرٰىنِیْ وَلٰكِنِ انْظُرْ اِلَی الْجَبَلِ

(١٤٣ :٧)

मूसा ने कहा: ऐ परवरदिगार! मुझे अपना जल्वा दिखा ताकि मैं तेरी तरफ़ निगाह कर सकूँ। फ़रमाया नहीं, तू कभी मुझे नहीं देखेगा, लेकिन हाँ, इस पहाड़ की तरफ़ देख! (7: 143)

तन्ज़ीह और तातील का फ़र्क़

अलबत्ता याद रहे कि तन्ज़ीह[1] और तातील[2] में फ़र्क़ है। तन्ज़ीह से मक़सूद ये है कि जहाँ तक अक़्ले बशरी पुहँची है, सिफ़ाते इलाही को मख़्लूक़ात की मुशाबहत से पाक और बुलन्द रखा जाए। तातील के मअ़ना ये हैं कि तन्ज़ीह के मना व नफ़ी को इस हद तक पहुँचा दिया जाए कि फ़िक्रे इन्सानी के तसव्वुर के लिए कोई बात

1-निराकार। 2-नकारना, नास्तिकता।

बाक़ी न रहे। क़ुरआन का तसव्वुर तन्ज़ीह की तक्मील है, तातील की इब्तिदा नहीं है।

बिला-शुब्हा उप-निषद तन्ज़ीह की 'नेति-नेति' (95) को बहुत दूर तक ले गए, लेकिन अ़मलन नतीजा क्या निकला? यही ना कि ज़ाते मुत्लक़ (ब्रह्मा) को ज़ाते मुशख़्ख़स (ईश्वर) में उतारे बग़ैर काम न चल सका :

बनती नहीं है बाद-ओ-साग़र कहे बग़ैर

जिस तरह इस्बाते सिफ़ात[1] में ग़ुलू तशब्बोह की तरफ़ ले जाता है, इसी तरह नफ़ी सिफ़ात[2] में ग़ुलू तातील तक पहुँचा देता है और दोनों में तसव्वुरे इन्सानी के लिए ठोकर हुई। अगर तशब्बोह उसकी हक़ीक़त से ना आश्ना कर देता है तो तअ़त्तुल[3] उसे अ़क़ीदे की रूह से महरूम कर देता है। पस यहाँ ज़रूरी हुआ कि इफ़रात[4] और तफ़रीत[5] दोनों से क़दम रोके जाएँ और तशब्बोह और तातील दोनों के दरमियान राह निकाली जाए। चुनांचे क़ुरआन ने जो राह इख़्तियार की है वो दोनों राहों के दरमियान जाती है और दोनों इन्तिहाई सिम्तों के मैलान से बचती हुई निकल गई है।

अगर ख़ुदा के तसव्वुर के लिए सिफ़ात व अफ़आ़ल की कोई सूरत ऐसी बाक़ी न रहे जो फ़िक्रे इन्सानी की पकड़ में आ सकती है तो क्या नतीजा निकलेगा? यही निकलेगा कि तन्ज़ीह के मअ़ना नफ़ी वुजूद के हो जाएँगे, यानी अगर कहा जाए "हम ख़ुदा के लिए कोई ईजाबी सिफ़त क़रार नहीं दे सकते, क्योंकि जो सिफ़त भी क़रार देंगे, उसमें मख़्लूक़ के औसाफ़ से मुशाबहत की झलक आ जाएगी" तो

1-सकार। 2-नकार। 3-नास्तिकता। 4-अधिकता।

ज़ाहिर है कि ऐसी सूरत में फ़िक्रे इन्सानी के लिए कोई सरे-रिश्तए तसव्वुर बाक़ी नहीं रहेगा और वो किसी ऐसी ज़ात का तसव्वुर ही नहीं कर सकेगा। और जब तसव्वुर नहीं कर सकेगा तो ऐसा अक़ीदा उसके अन्दर कोई पकड़ और लगाव भी पैदा नहीं कर सकेगा। ऐसा तसव्वुर अगर्चे इस्बाते वुजूद की कोशिश करे, लेकिन फ़िल-हक़ीक़त वो नफ़ी वुजूद का तसव्वुर होगा, क्योंकि सिर्फ़ सल्बी तसव्वुर के ज़रिये हम हस्ती को नेस्ती से जुदा नहीं कर सकते।

ख़ुदा की हस्ती का एतिक़ाद[1] इन्सानी फ़ित्रत के अन्दरूनी तक़ाज़ों का जवाब है। उसे हैवानी सतह से बुलन्द होने और इन्सानियते आला के दर्जे तक पहुँचने के लिए बुलंदी के एक नसबुल-ऐन[2] की ज़रूरत है। और उस नसबुल-ऐन की तलब बग़ैर किसी ऐसे तसव्वुर के पूरी नहीं हो सकती जो किसी न किसी शक्ल में उसके सामने आए, लेकिन मुश्किल ये है कि मुत्लक़ का तसव्वुर सामने आ नहीं सकता। वो जभी आएगा कि ईजाबी सिफ़तों के तशख़्ख़ुस का कोई न कोई नक़ाब चेहरे पर डाल ले। चुनांचे हमेशा उस नक़ाब ही के ज़रिये जमाले हक़ीक़त को देखना पड़ा, ये कभी भारी हुआ, कभी हलका हुआ, कभी पुर-ख़ौफ़ रहा, कभी दिल-आवेज़, मगर उतरा कभी नहीं।

आह अज़ाँ हौसल-ए-तंग व अज़ाँ हुस्न बुलन्द
कि दिलम-रा गिला अज़ हस्रते दीदारे तू नेस्त

जमाले हक़ीक़त बेनक़ाब है, मगर हमारी निगाहों में याराए दीद[3] नहीं। हम अपनी निगाहों पर नक़ाब डाल कर उसे देखना चाहते हैं और समझते हैं कि उसके चेहरे पर नक़ाब पड़ गया :

1-विश्वास। 2-लक्ष्य। 3-देखने की क्षमता या पात्रता।

हरचे हस्त अज़ क़ामते नासाज़ वबी अन्दामे मास्त
वर्ना तश्रीफ़े तू बर बाला-ए-कस दुश्वार नेस्त

ग़ैर सिफ़ाती तसव्वुर इन्सान पकड़ नहीं सकता और तलब उसे ऐसी मतलूब हुई जो उसकी पकड़ में आ सके। वो एक ऐसा जल्वए महबूबी चाहता है जिसके इश्क़ में उसका दिल अटक सके, जिसके हुस्ने गुरेज़ाँ के पीछे वो वालिहाना दोड़ सके, जिसका दामने किबरियाई[1] पकड़ने के लिए हमेशा अपना दस्ते इज्ज़ो-नियाज़[2] बढ़ाता रहे। जो अगर्चे ज़्यादा से ज़्यादा बुलन्दी पर हो, लेकिन फिर भी उसे हर दम झांक लगाए ताक रहा हो कि (14:89) اِنَّ رَبَّكَ لَبِالْمِرْصَادِ (96) और وَاِذَا سَأَلَكَ عِبَادِىْ عَنِّىْ فَاِنِّىْ قَرِيْبٌ ؕ اُجِيْبُ دَعْوَةَ الدَّاعِ اِذَا دَعَانِ (2: 186) (97)।

दर-पर्दए व बरहमा कस पर्दा मी-दरी
ब-हर कसे व ब-तू कसे रा विसाले नेस्त

ग़ैर सिफ़ाती तसव्वुर महज़ नफ़ी व सल्ब होता है और इससे इन्सानी तलब की प्यास नहीं बुझ सकती। ऐसा तसव्वुर एक फ़लसफ़ियाना तख़ैयुल[3] ज़रूर पैदा कर देगा, लेकिन दिलों का ज़िन्दा और सर-गर्म अक़ीदा नहीं बन सकेगा।

यही वजह है कि क़ुरआन ने जो राह इख़्तियार की वो एक तरफ़ तो तन्ज़ीह को उसके कमाले दर्जा पर पहुँचा देती है, दूसरी तरफ़ तातील से भी तसव्वुर को बचा ले जाती है। वो फ़र्दन-फ़र्दन तमाम सिफ़ा व अफ़आल का इस्बात करता है, मगर साथ ही मुशाबहत की क़तई नफ़ी भी करता जाता है। वो कहता है: ख़ुदा हुस्नो-ख़ूबी की उन तमाम सिफ़तों से जो इन्सानी फ़िक्र में आ

1-प्रभुमय दामन। 2-विनयपूर्ण हाथ। 3-दार्शनिक विचार भाव।

सकती हैं मुत्तसिफ़ है। वो ज़िन्दा है, क़ुदरत वाला है, पालने वाला है, रहमत वाला है, देखने वाला, सुनने वाला, सब कुछ जानने वाला है। और फिर इतना ही नहीं, बल्कि इन्सान की बोल-चाल में कुदरतो-इख़्तियार और इरादा व फ़ेल की जितनी शाइस्ता ताबीरात[1] हैं, उन्हें भी बिला तअम्मुल[2] इस्तेमाल करता है। मसलन ख़ुदा के हाथ तंग नहीं: بَلْ يَدَاهُ مَبْسُوطَتَانِ (64:5) उसके तख़्ते हुकूमत व किबरियाई के इहाते से कोई गोशा बाहर नहीं : وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ (2:255) लेकिन ये भी साफ़-साफ़ और बेलचक लफ़्ज़ों में कह देता है कि उससे मुशाबह[3] कोई चीज़ नहीं जो तुम्हारे तसव्वुर में आ सकती। वो अदीमुल-मिसाल है: لَيْسَ كَمِثْلِهٖ شَيْءٌ (42:11) तुम्हारी निगाह उसे पा ही नहीं सकती: لَا تُدْرِكُهُ الْاَبْصَارُ (6:103) तुम उसके लिए अपने तख़ैयुल से मिसलें न गढ़ो: فَلَا تَضْرِبُوْا لِلّٰهِ الْاَمْثَالَ (16:74) पस ज़ाहिर है कि उसका ज़िन्दा होना हमारे ज़िन्दा होने की तरह नहीं हो सकता, उसकी परवरदिगारी हमारी परवरदिगारी की तरह नहीं हो सकती, उसका देखना, सुनना, जानना वैसा नहीं हो सकता जिस तरह के देखने, सुनने और जानने का हम तसव्वुर कर सकते हैं। उसकी क़ुदरतो-बख़्शिश का हाथ और जलाल व इहाते का अर्श ज़रूर है, लेकिन इसका मतलब वो नहीं हो सकता जो उन अलफ़ाज़ के मदलूलात से हमारे ज़ेहन में मुतशक्कल होने लगता है।

क़ुरआन के तसव्वुरे इलाही का ये पहलू फ़िल-हक़ीक़त इस राह की तमाम दर-मांदगियों का एक ही हल है और सारी उम्र की सर-गर्दानियों के बाद बिल-आख़िर इसी मन्ज़िल पर पहुँच कर दम

1-शिष्ट अभिव्यक्तियां। 2-निस्संकोच। 3-उसके सदृश्य।

लेना पड़ता है। इन्सानी फ़िक्र जितनी भी काविशें करेगी, इसके सिवा और कोई हल पैदा नहीं कर सकेगी। यहाँ एक तरफ़ बामे-हक़ीक़त[1] की बुलन्दी और फ़िक्रे-कोताह[2] की ना-रसाइयाँ[3] हुईं, दूसरी तरफ़ हमारी फ़ित्रत का इज़्तिराब-तलब[4] और हमारे दिल का तक़ाज़ए दीद[5] हुआ। बाम इतना बुलन्द कि निगाहे तसव्वुर थक-थक के रह जाती है। तक़ाज़ए दीद इतना सख़्त कि बग़ैर किसी का जल्वा सामने लाए चैन नहीं पा सकता :

न ब-अन्दाज़ए बाज़ूस्त कमन्दम हैआत
वर्ना बा-गोशए बा-मीम सरो-कारे हस्त

एक तरफ़ राह की इतनी दुश्वारियाँ, दूसरी तरफ़ तलब की इतनी सहल अन्देशियाँ ! व लिनिअ़्म मा-क़ील :

मिलना तेरा अगर नहीं आसाँ तो सहल है
दुश्वार तो यही है कि दुश्वार भी नहीं

अगर तन्ज़ीह की तरफ़ ज़्यादा झुकते हैं तो तातील में जा गिरते हैं। अगर इस्बाते सिफ़ात की सूरत आराइयों में दूर निकल जाते हैं तो तशब्बोह और तजस्सुम में खो जाते हैं। पस निजात की राह सिर्फ़ यही है कि दोनों के दरमियान क़दम संभाले रखें। इस्बात का दामन भी हाथ से न छूटे, तन्ज़ीह की बाग भी ढीली न पड़ने पाए, इस्बात उसकी दिल-आवेज़ सिफ़तों का मुरक़्क़ा खींचेगा, तन्ज़ीह तशब्बोह की परछाईं बचाती रहेगी। एक का हाथ हुस्ने मुत्लक़ को सूरते सिफ़ात में जल्वा-आरा कर देगा, दूसरे का हाथ उसे इतनी बुलन्दी पर थामे रहेगा कि तशब्बोह का गर्दे-गुबार उसे छूने की

1-परम सत्य। 2-लघु विचार। 3-न पहुँचना। 4-आकंक्षा की झटपटाहट। 5-देखने का तक़ाज़ा।

जुर्अत नहीं कर सकेगा :

बर चेहरए हक़ीक़त अगर मांद पर्दए
जुर्मे निगाह दीदए सूरत परस्त मास्त

उप-निषद के मुसन्निफ़ों का नफ़ी सिफ़ात में ग़ुलू मालूम है, लेकिन मुसलमानों में जब इल्मे कलाम के मुख़्तलिफ़ मज़ाहिब व आरा पैदा हुए तो उनकी नज़री काविशें इस मैदान में उनसे भी आगे निकल गईं और सिफ़ाते बारी का मस्अला बहसो-नज़र का एक मअ्रिकतुल-आरा मस्अला बन गया। जहमियह और बातिनियह क़तई इनकार की तरफ़ गए। मोतज़िलह ने इनकार नहीं किया, लेकिन उनका रुख़ रहा इसी तरफ़। इमाम अबुल हसन अशअ़री ने गो ख़ुद मोतदिल राह इख़्तियार की थी (जैसा कि किताबुल-अबानह से ज़ाहिर है), लेकिन उनके पैरवों की काविशें तावीले सिफ़ात में दूर तक चली गईं और बहसो-नज़ा से ग़ुलू का रंग पैदा हो गया। लेकिन इनमें से कोई भी मामले की गुत्थी न सुलझा सका। अगर गुत्थी सुलझी तो उसी तरीक़े से सुलझी जो क़ुरआन ने इख़्तियार किया है। इमाम जुवैनी ये इक़रार करते हुए दुनिया से गए कि "व हा अना ज़ा अमूतु अ़ला अ़क़ीदति उम्मी" (मेरी माँ ने जो अक़ीदा सिखलाया था उस पर दुनिया से जा रहा हूँ)।

अशाइरा में इमाम फ़ख़्रुद्दीन राज़ी सबसे ज़्यादा इन काविशों में सरगर्म रहे, लेकिन बिल-आख़िर अपनी ज़िन्दगी की आख़िरी तस्नीफ़ में उन्हें भी इक़रार करना पड़ा था कि :

मैंने इल्मे कलाम और फ़लसफ़े के तमाम तरीक़ों को ख़ूब देखा	لقد تأملت الطرق الكلامية

والمناهج الفلسفية ، فما رأيتها تشفى عليلا ولا تروى غليلا ـ ورأيت اقرب الطرق طريق القرآن ـ اقرأ فى الاثبات "الرحمن على العرش استوىٰ" وفى النفى "ليس كمثله شىء" ومن جرب مثل تجربتى عرف مثل معرفتى ـ

(نقله ملاعلى القارى فى شرح الفقه الاكبر)

भाला, लेकिन बिल-आख़िर मालूम हुआ कि न तो उनमें किसी बीमार के लिए शिफ़ा है, न किसी प्यासे के लिए सैराबी। सबसे बेहतर और हक़ीक़त से नज़दीक-तर राह वही है जो क़ुरआन की राह है। इस्बाते सिफ़ात में पढ़ो ''अर्रहमानु अ़लल-अ़र्शिस्तवा'' और नफ़ी तशब्बोह में पढ़ो ''लै-स क-मिस्लि-ही श-य-उन'' यानी इस्बात और नफ़ी दोनों का दामन थामे रहो। और जिस किसी को मेरी तरह इस मामले के तजुर्बे का मौक़ा मिला होगा उसे मेरी तरह ये हक़ीक़त मालूम हो गई होगी।

(मुल्ला अ़ली क़ारी ने इसको फ़िक़्हे-अक्बर की शर्ह में नक़ल किया है)

यही वजह है कि अस्हाबे हदीस और सलफ़िय्या ने इस बाब में तफ़्वीज़ का मस्लक (98) इख़्तियार किया था और तावीले सिफ़ात में काविशें करना पसन्द नहीं करते थे। और इसी बिना पर उन्होंने जहमियह के इनकारे सिफ़ात को तातील से ताबीर किया और मोतज़िलह व अशाइरा की तावीलों में भी तअ़त्तुल की बू सूंघने

लगे। मुतकल्लिमीन ने उनपर तजस्सुम और तशब्बोह का इलज़ाम लगाया, लेकिन वो कहते थे कि तुम्हारे तअत्तुल से तो हमारा नाम-निहाद तशब्बोह ही बेहतर है, क्योंकि यहाँ अक़ीदे के लिए एक तसव्वुर तो बाक़ी रह जाता है, तुम्हारे सल्बो-नफ़ी की काविशों के बाद तो कुछ भी बाक़ी नहीं रहता। मुतअख़्ख़िरीन अस्हाबे हदीस में इमाम तैमिया और उनके शागिर्द इमाम इब्ने क़ैयम ने इस मस्अले की गहराइयों को ख़ूब समझा और इसी लिए सलफ़ के मस्लक से इधर उधर होना गवारा नहीं किया।

आर्याई और सामी नुक्त-ए-ख़याल का इख़्तिलाफ़

आर्याई और सामी तालीमों के नुक्तए ख़याल का इख़्तिलाफ़ हम इस मामले में पूरी तरह देख ले सकते हैं। आर्याई हिकमत ने फ़ित्रते इन्सानी की जिस सूरत परस्ती के तक़ाज़े का जवाब मूरती पूजा का दरवाज़ा खोल कर दिया, क़ुरआन ने उसे सिर्फ़ सिफ़ात की सूरत आराई से पूरा कर दिया और फिर उससे नीचे उतरने की तमाम राहें बंद कर दीं। नतीजा ये निकला कि उन तमाम मफ़ासिद के खुलने के दरवाज़े बंद हो गए जो बुत-परस्ती की ग़ैर अक़्ली ज़िन्दगी से पैदा हो सकते थे और हिन्दुस्तान में पैदा हुए।

मोहकमात और मुतशाबिहात

क़ुरआन ने अपने मतालिब की दो बुनियादी क़िस्में क़रार दी हैं। एक को "मोहकमात" से ताबीर किया है, दूसरी को "मुतशाबिहात" से। "मोहकमात" से वो बातें मक़सूद हैं जो साफ़-साफ़ इन्सान की समझ में आ जाती हैं और उसकी अमली जिन्दगी

से तअ़ल्लुक़ रखती हैं और इसलिए एक से ज़्यादा मआ़नी को उनमें एहतिमाल नहीं। "मुतशाबिहात" वो हैं जिनकी हक़ीक़त वो पा नहीं सकता और इसके सिवा चारा नहीं कि एक ख़ास हद तक जा कर रुक जाए और बे नतीजा बारीक बीनियाँ न करे :

هُوَ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ عَلَيْكَ الْكِتٰبَ مِنْهُ اٰيٰتٌ مُّحْكَمٰتٌ هُنَّ اُمُّ الْكِتٰبِ وَاُخَرُ مُتَشٰبِهٰتٌ ؕ فَاَمَّا الَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ زَيْغٌ فَيَتَّبِعُوْنَ مَا تَشَابَهَ مِنْهُ ابْتِغَآءَ الْفِتْنَةِ وَابْتِغَآءَ تَاْوِيْلِهٖ ج وَمَا يَعْلَمُ تَاْوِيْلَهٗٓ اِلَّا اللّٰهُ م وَالرّٰسِخُوْنَ فِي الْعِلْمِ يَقُوْلُوْنَ اٰمَنَّا بِهٖ لا كُلٌّ مِّنْ عِنْدِ رَبِّنَا ج وَمَا يَذَّكَّرُ اِلَّآ اُولُوا الْاَلْبَابِ ۔ (3: 7)

सिफ़ाते इलाही की हक़ीक़त मुतशाबिहात में दाख़िल है। इस लिए क़ुरआन कहता है कि इस बाब में फ़िक्री काविशें कुछ सूदमन्द नहीं हो सकतीं, बल्कि तरह-तरह की कज-अन्देशियों का दरवाज़ा खोल देती हैं। यहाँ बजुज़ तफ़्वीज़ के चारा-कार नहीं। पस वो तमाम फ़लसफ़ियाना काविशें जो हमारे मुतकल्लिमों ने की हैं फ़िल-हक़ीक़त क़ुरआन के मे'यारे तालीम का साथ नहीं दे सकतीं।

उप-निषद का मर्तब-ए-इत्लाक़ और मर्तब-ए-तशख़्ख़ुस

इस मौक़े पर ये बात भी साफ़ हो जानी चाहिए कि वेदांत सूत्र और उसके सबसे बड़े शारेह शंकराचार्य ने नफ़ी सिफ़ात पर जितना ज़ोर दिया है, वो हक़ीक़त के उस मर्तबए इत्लाक़ से तअ़ल्लुक़ रखता है जिसे वो 'ब्रह्मा' से ताबीर करते हैं, यानी ज़ाते

मुत्लक़ से। लेकिन इससे उन्हें भी इनकार नहीं कि मर्तबए इत्लाक़ के नीचे एक और मर्तबा भी है जहाँ तमाम सिफ़ाते ईजाबी की नक़्श- आराई ज़ुहूर में आ जाती है और इन्सान के तमाम आ़बिदाना तसव्वुरात का माबूद वही ज़ाते मुत्तसिफ़ होती है।

उप-निषद के नज़दीक ज़ाते मुत्लक़ 'निरोपाध्यक सत्य' और 'निगुर्ण' है, यानी तमाम मज़ाहिरात से मुनज़्ज़ह और अ़दीमुत्तौसीफ़ है। अगर कोई ईजाबी सिफ़त उसकी निस्बत से कही भी जा सकती है तो वो उसी सल्ब का ईजाब है, यानी वो 'निर्गुणोगुणी' है, अ़दीमुल-वस्फ़ी सिफ़त से मुत्तसिफ़ "हम उसकी निस्बत कुछ नहीं कह सकते, क्योंकि हम जो कुछ कहेंगे उसका लाज़िमी नतीजा ये निकलेगा कि ला-महदूद[1] को महदूद[2] बना देंगे। अगर महदूद ला-महदूद का तसव्वुर कर सकता है तो फिर या तो महदूद को ला-महदूद मानना पड़ेगा, या ला-महदूद को महदूद बन जाना पड़ेगा" (शंकरभाष्य, ब्रहम सूत्र-बाब: 3) "हम किसी चीज़ की तरफ़ इशारा करते हुए जो अल्फ़ाज़ बोलते हैं, वो या तो उस चीज़ का तअ़ल्लुक़ किसी ख़ास नौअ़ से ज़ाहिर करते हैं या उसके फ़े'ली ख़्वास बतलाते हैं, या उसकी क़िस्म की ख़बर देते हैं, या किसी और इज़ाफ़ी नौइयत की वज़ाहत करते हैं, लेकिन ब्रह्मा के लिए कोई नौअ़ नहीं ठहराई जा सकती। इसकी कोई क़िस्म नहीं, इसके फ़े'ली ख़्वास बतलाए नहीं जा सकते हैं, इसके लिए कोई इज़ाफ़त नहीं। हम नहीं कह सकते कि वो ऐसा है, ये भी नहीं कह सकते कि वो इस तरह का नहीं है, क्योंकि उसके लिए कोई मुशाबहत नहीं। और चूंकि मुशाबहत नहीं इसलिए उसकी अ़दमे मुशाबहत और ग़ैरियत भी इन्सानी तसव्वुर में

1-असीम। 2-सीमित।

नहीं लाई जा सकती। मुशाबहत की तरह हमारी नफ़ी मुशाबहत भी इज़ाफ़ी रिश्ते रखती है।" (ऐज़न बाबे अव्वल व सानी)

ग़रज़ेकि हक़ीक़त अपने मर्तबए इत़्लाक़ में ना-मुम्किनुत्तारीफ़[1] है और मन्तिक़ी मा-वराइयत से भी मा-वरा[2] है, इसी लिए वेदांत सूत्र ने बुनियादी तौर पर हस्ती के दो दायरे ठहरा दिए एक को मुम्किनुत् तसव्वुर[3] कहा है, दूसरे को ना-मुम्किनुत्-तसव्वुर[4]। मुम्किनुत्-तसव्वुर दायरए प्रकृति, अ़नासिर, ज़ेहन, तअ़क़्क़ुल और ख़ुदी का है। ना-मुम्किनुत्-तसव्वुर दायरए ब्रह्मा (ज़ाते मुत्लक़) का। यही मज़हब अस्कंदरिया के अफ़लातूनियए जदीदा का भी था और हुकमाए इस्लाम और सूफ़िया ने भी यही मस्लक इख़्तियार किया। सूफ़िया मर्तबए इत्लाक़ को मर्तबए "अहदिय्यत" से ताबीर करते हैं और कहते हैं: 'अहदिय्यत' ना-मुम्किनुत्-तसव्वुर, ना-मुम्किनुत्-ताबीर और तमाम मन्तिक़ी मा-वराइयों से भी वराउल्-वरा[5] है :

ब-नामे आँ कि आँ नामे न दारद
ब-हर नामे कि ख़्वानी सर बर आरद

लेकिन फिर मर्तबए इत़्लाक़ एक ऐसे मर्तबे में नुज़ूल करता है जिस में तमाम ईजाबी सिफ़ात की सूरत आराई का तशख़्ख़ुस नमूदार जो जाता है। उप-निषद ने इसे 'ईश्वर' से और सूफ़िया ने 'वहदानियत' से ताबीर किया है। वेदांत सूत्र के शारिहों में शंकर ने सबसे ज़्यादा उप-निषद के नफ़ी सिफ़ात के मस्लक को क़ायम रखना

1-जिसके गुणों को वर्णन न किया जा सके। 2-उसके बारे में तर्क-वितर्क नहीं किया जा सकता। 3-कल्पनीय। 4-अकल्पनीय, कल्पनातीत। 5-ईश्वर का एकत्व कल्पनातीत, वर्णनातीत और तमाम तर्क क्षमताओं से परे है।

चाहा है और इस बाब में बड़ी काविश की। ताहम उसे भी 'सगुण-ब्रह्मा' यानी ज़ाते मुशख़्ख़स व मुत्तसिफ़[1] के मर्तबे का एतिराफ़ करना पड़ा। और गो इस मर्तबे के इरफ़ान को वो 'अप्रम' यानी फ़रो-तर मर्तबे का इरफ़ान क़रार देता है, मगर साथ ही तस्लीम करता है कि एक माबूद हस्ती का तसव्वुर बग़ैर इसके मुमकिन नहीं और इन्सानी ज़ेहनो-इदराक के लिए ज़्यादा से ज़्यादा बुलन्द परवाज़ी जो यहाँ हो सकती है वो यही है (99)।

(2) सिफ़ाते रहमतो-जमाल

सानियन, तन्ज़ीह की तरह सिफ़ाते रहमतो-जमाल के लिहाज़ से भी क़ुरआन के तसव्वुर पर नज़र डाली जाए तो उसकी शाने तक्मील नुमायाँ है। नुज़ूले क़ुरआन के वक़्त यहूदी तसव्वुर में क़हरो-ग़ज़ब का उन्सुर ग़ालिब था। मजूसी तसव्वुर ने नूरो-ज़ुल्मत[2] की दो मुसावियाना[3] क़ुव्वतें अलग-अलग बना लीं थीं। मसीही तसव्वुर ने रहमो-मुहब्बत पर ज़ोर दिया था, लेकिन जज़ा[4] की हक़ीक़त मस्तूर हो गई थी। इसी तरह पैरवाने बौद्ध ने भी सिर्फ़ रहमो-मुहब्बत पर ज़ोर दिया, अदालत नुमायाँ नहीं हुई। गोया जहाँ तक रहमतो-जमाल का तअल्लुक़ है या तो क़हरो-ग़ज़ब का उन्सुर ग़ालिब था, या मुसावी था, या फिर रहमतो-मुहब्बत आई थी तो इस तरह आई थी कि अदालत के लिए कोई जगह बाक़ी नहीं रही थी।

लेकिन क़ुरआन ने एक तरफ़ तो रहमतो-जमाल का एक ऐसा कामिल तसव्वुर पैदा कर दिया कि क़हरो-ग़ज़ब के लिए कोई जगह ही न रही, दूसरी तरफ़ जज़ाए अमल का सरे-रिश्ता भी हाथ से

1-व्यक्तित्व व गुण रखने वाली हस्ती। 2-प्रकाश व अंधकार। 3-समान। 4-बदला, न्याय।

जाने नहीं दिया, क्योंकि जज़ा का एतिक़ाद क़हरो-ग़ज़ब की बिना पर नहीं, बल्कि अदालत की बिना पर क़ायम कर दिया। चुनांचे सिफ़ाते इलाही के बारे में उसका आम एलान ये है :

قُلِ ادْعُوا اللّٰهَ اَوِ ادْعُوا الرَّحْمٰنَ ط اَيًّامَّا تَدْعُوْا فَلَهُ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى ط (۱۷:۱۱۰)

ऐ पैग़म्बर! इनसे कह दो तुम ख़ुदा को अल्लाह के नाम से पुकारो या रहमान कह कर पुकारो, जिस सिफ़त से भी पुकारो उसकी सारी सिफ़तें हुस्नो-ख़ूबी की सिफ़तें हैं। (17: 110)

यानी वो ख़ुदा की तमाम सिफ़तों को 'अस्माए हुस्ना'[1] क़रार देता है। इससे मालूम हुआ कि ख़ुदा की कोई सिफ़त नहीं जो हुस्नो-ख़ूबी की सिफ़त न हो। ये सिफ़तें क्या-क्या हैं? क़ुरआन ने पूरी वुस्अत के साथ इन्हें जा-बजा बयान किया है। इनमें ऐसी सिफ़तें भी हैं जो बज़ाहिर क़हरो-जलाल की सिफ़तें हैं, मसलन जब्बार[2], क़ह्हार[3], लेकिन क़ुरआन कहता है वो भी 'अस्माए हुस्ना' हैं, क्योंकि उनमें क़ुदरतो-अदालत को जुहूर हुआ है और क़ुदरतो-अदालत[4] हुस्नो-ख़ूबी है, ख़ूँ-ख़्वारी व ख़ौफ़नाकी नहीं है। चुनांचे सूरः हश्र में सिफ़ाते रहमतो-जमाल के साथ क़हरो-जलाल का भी ज़िक्र किया है और फिर मुत्तसिलन इन सबको "अस्माए हुस्ना" क़रार दिया है :

هُوَاللّٰهُ الَّذِىْ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ج

वो अल्लाह है, उसके सिवा कोई माबूद[5] नहीं, वो अल-मलिक[6] है

1-सुन्दर नाम। 2-कठोर बलशाली। 3-प्रकोप प्रकट करने वाला। 4-शक्ति व न्याय। 5-पूज्य। 6-बादशाह, साम्राज्यशाली।

अल-क़ुद्दूस[1] है, अस-सलाम[2] है, अल-मुअ्मिन[3] है, अल-मुहैमिन[4] है, अल-अज़ीज़ुल-जब्बार[5] है, अल-मुतकब्बिर[6] है, और उस साझे से पाक है जो लोगों ने उसकी माबूदियत में बना रखे हैं। वो अल-ख़ालिक़[7] है, अल-बारी[8] है अल-मुसव्विर[9] है, (ग़रज़ेकि) उसके लिए हुस्नो-ख़ूबी की सिफ़तें[10] हैं आसमान व ज़मीन में जितनी भी मख़्लूक़ात[11] हैं सब उसकी पाकी और अज़्मत[12] की शहादत[13] दे रही हैं और बिला- शुब्हा वही है जो हिकमत[14] के साथ ग़लबा[15] व तवानाई[16] भी रखने वाला है! (59: 23-24)	اَلْمَلِكُ الْقُدُّوْسُ السَّلٰمُ الْمُؤْمِنُ الْمُهَيْمِنُ الْعَزِيْزُ الْجَبَّارُ الْمُتَكَبِّرُ ط سُبْحٰنَ اللّٰهِ عَمَّا يُشْرِكُوْنَ ۝ هُوَاللّٰهُ الْخَالِقُ الْبَارِئُ الْمُصَوِّرُ لَهُ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى يُسَبِّحُ لَهٗ مَافِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ج وَهُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ۝ (٥٩: ٢٣_٢٤)

इसी तरह सूर: अअ्राफ़ में है :

और अल्लाह के लिए हुस्नो-ख़ूबी की सिफ़तें हैं, सो चाहिए	وَلِلّٰهِ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى فَادْعُوْهُ

1-पवित्रतम। 2-सर्वथा सलामती, साक्षात शांति-सुरक्षा। 3-निश्चिंतता प्रदान करने वाला। 4-संरक्षक। 5-प्रभुत्वशाली-प्रभावशाली। 6-अपनी बड़ाई प्रकट करने वाला। 7-सर्जक। 8-अस्तित्वदायी। 9-रूप देने वाला। 10-अच्छाई की तमाम विशेषताएं उसी के लिए हैं। 11-सृष्टियां। 12-महानता। 13-गवाही। 14-तत्वदार्शिता के साथ। 15-प्रभुत्व। 16-शक्ति।

बِهَا ص وَذَرُو الَّذِيْنَ يُلْحِدُوْنَ فِيْٓ اَسْمَآئِهٖ ط (١٠٠)

(١٨٠ :٧)

कि उन सिफ़तों से उसे पुकारो। और जिन लोगों का शेवा ये है कि उसकी सिफ़तों में कज-अन्देशियाँ[1] करते हैं उन्हें उनके हाल पर छोड़ दो। (100)
(7: 180)

चुनांचे इसी लिए सूर: फ़ातिहा में सिर्फ़ तीन सिफ़तें नुमायाँ हुई : रुबूबियत, रहमत और अ़दालत। और क़हरो-ग़ज़ब की किसी सिफ़त को यहाँ जगह न दी गई।

(3) इश्राकी तसव्वुरात का कुल्ली इन्सिदाद

सालिसन, जहाँ तक तौहीद व इश्राक[2] का तअ़ल्लुक़ है क़ुरआन का तसव्वुर इस दर्जा कामिल और बेलचक है कि उसकी कोई नज़ीर पिछले तसव्वुरात में नहीं मिल सकती।

अगर ख़ुदा अपनी ज़ात में यगाना है तो ज़रूरी है कि वो अपनी सिफ़ात में भी यगाना हो, क्योंकि उसकी यगानगत की अ़ज़्मत क़ायम नहीं रह सकती अगर कोई दूसरी हस्ती उसकी सिफ़ात में शरीक व सहीम मान ली जाए। क़ुरआन से पहले तौहीद के ईजाबी पहलू पर तो तमाम मज़ाहिब ने ज़ोर दिया था, लेकिन सल्बी पहलू नुमायाँ नहीं हो सका था। ईजाबी पहलू ये है कि ख़ुदा एक है, सल्बी पहलू ये है कि उसकी तरह कोई नहीं। और जब उसकी तरह कोई नहीं तो ज़रूरी है कि जो सिफ़तें उसके लिए ठहरा दी गई हैं उनमें कोई दूसरी हस्ती शरीक न हो। पहली बात तौहीद

1-कुटिलता ग्रहण करना। 2-बहुदेववाद।

फ़िज़्-ज़ात[1] से और दूसरी तौहीद फ़िस्-सिफ़ात[2] से ताबीर की गई है। क़ुरआन से पहले अक़्वामे आ़लम की इस्तेदाद इस दर्जा बुलन्द नहीं हुई थी कि तौहीद फ़िस्सिफ़ात की नज़ाकतों और बन्दिशों की मुतहम्मिल हो सकती, इसलिए मज़ाहिब ने तमाम-तर ज़ोर तौहीद फ़िज़्ज़ात ही पर दिया, तौहीद फ़िस्सिफ़ात अपनी इब्तिदाई और सादा हालत में छोड़ दी गई।

चुनांचे यही वजह है कि हम देखते हैं बावजूद इसके कि तमाम मज़ाहिब क़ब्ल-अज़ क़ुरआन[3] में अक़ीदए तौहीद की तालीम मौजूद थी, लेकिन किसी न किसी सूरत में शख़्सियत परस्ती, अ़ज़्मत परस्ती और अस्नाम परस्ती नमूदार होती रही और रहनुमायाने मज़ाहिब इसका दरवाज़ा बंद न कर सके। हिन्दुस्तान में तो ग़ालिबन अव्वल रोज़ ही से ये बात तस्लीम कर ली गई थी कि अ़वाम की तशफ़्फ़ी के लिए देवताओं और इन्सानी अ़ज़्मत ती परस्तारी नागुज़ीर है और इसलिए तौहीद का मक़ाम सिर्फ़ ख़्वास[4] के लिए मख़्सूस होना चाहिए। फ़लासफ़ए यूनान का भी यही ख़याल था। यक़ीनन वो इस बात से बेख़बर न थे कि कोहे ओलेम्पस के देवताओं की कोई असलियत नहीं, ताहम सुक़रात के अ़लावा किसी ने भी इसकी ज़रूरत महसूस नहीं की कि अ़वाम के अस्नामी अ़क़ाइद में ख़लल-अन्दाज़ हो। वो कहते थे: "अगर देवताओं की परस्तिश का निज़ाम क़ायम न रहा तो अ़वाम की मज़हबी ज़िन्दगी दर्हम-बर्हम हो जाएगी" फ़ीसाग़ोरस की निस्बत बयान किया गया है कि जब उसने अपना मशहूर हिसाबी क़ायदा मालूम किया था तो उसके शुक्राने में

1-एक हस्ती पर विश्वास। 2-उस एक हस्ती को गुणों में अप्रतिम मानना। 3-कुरआन से पहले के मज़हब। 4-विशिष्ट वर्ग।

सौ बछड़ो की क़ुर्बानी देवताओं की नज़र की थी।

इस बारे में सबसे ज़्यादा नाज़ुक मामला मुअ़ल्लिम व रहनुमा की शख़्सियत का था। ये ज़ाहिर है कि कोई तालीम अ़ज़्मतो-रफ़अ़त हासिल नहीं कर सकती जब तक मुअ़ल्लिम की शख़्सियत में भी अ़ज़्मत की शान पैदा न हो। लेकिन शख़्सियत की अ़ज़्मत के हुदूद क्या हैं? यहीं आकर सबके क़दमों ने ठोकर खाई। वो इसकी ठीक-ठीक हद-बन्दी न कर सके, नतीजा ये निकला कि कभी शख़्सियत को ख़ुदा का अवतार बना दिया, कभी इब्नुल्लाह[1] समझ लिया, कभी शरीको-सहीम ठहरा दिया। और अगर ये नहीं किया तो कम अज़ कम उसकी ताज़ीम बन्दगी व नियाज़ की सी शान पैदा कर दी। यहूदियों ने अपने इब्तिदाई अ़हद की गुमराहियों के बाद कभी ऐसा नहीं किया कि पत्थर के बुत तराश कर उनकी पूजा की हो, लेकिन इस बात से वो भी न बच सके कि अपने नबियों की क़ब्रों पर हैकल की तामीर करके उन्हें इबादतगाहों की सी शान व तक़्दीस दे देते थे। गौतम बुद्ध की निस्बत मालूम है कि उसकी तालीम में अस्नाम परस्ती के लिए कोई जगह नहीं थी, उसकी आख़िरी वसिय्यत जो हम तक पहुँची है ये है "ऐसा न करना कि मेरी नाश[2] की राख की पूजा शुरू कर दो, अगर तुमने ऐसा किया तो यक़ीन करो! निजात की राह तुम पर बंद हो जाएगी" (101)। लेकिन इस वसिय्यत पर जैसा कुछ अ़मल किया गया वो दुनिया के सामने है। न सिर्फ़ बुद्ध की ख़ाक और यादगारों पर माबद तामीर किए गए, बल्कि मज़हब की इशाअ़त का ज़रिया ही ये समझा गया कि उसके मुजस्समों[3] से ज़मीन का कोई गोशा ख़ाली न रहे। ये वाक़िआ़ है कि दुनिया में किसी माबूद

1-अल्लाह का बेटा। 2-शव। 3-प्रतिमाओं।

के भी इतने मुजस्समे नहीं बनाए गए जितने गौतम बुद्ध के बनाए गए हैं। इसी तरह हमें मालूम है कि मसीहियत की हक़ीक़ी तालीम सर-तासर तौहीद की तालीम थी, लेकिन अभी उसके ज़ुहूर पर पूरे सौ बरस भी नहीं गुज़रे थे कि उलूहियते मसीह का अक़ीदा नशो-नुमा पा चुका था।

तौहीद फ़िस्-सिफ़ात

लेकिन क़ुरआन ने तौहीद फ़िस्-सिफ़ात का ऐसा कामिल नक़्शा खींच दिया है कि इस तरह की लग़्ज़िशों के तमाम दरवाज़े बंद हो गए, उसने सिर्फ़ तौहीद ही पर ज़ोर नहीं दिया, बल्कि शिर्क की राहें भी बन्द कर दीं और यही इस बाब[1] में उसकी ख़ुसूसियत है।

वो कहता है "हर तरह की इबादत और नियाज़ की मुस्तहिक़ सिर्फ़ ख़ुदा ही की ज़ात है। पस अगर तुमने आबिदाना इज्ज़ो-नियाज़ के साथ किसी दूसरी हस्ती के सामने सर झुकाया तो तौहीदे इलाही का एतिक़ाद बाक़ी न रहा"। वो कहता है "ये उसी की ज़ात है जो इन्सानों की पुकार सुनती और उनकी दुआएँ क़बूल करती है। पस अगर तुमने अपनी दुआओं और तलबगारियों में किसी दूसरी हस्ती को भी शरीक कर लिया तो गोया तुम ने उसे ख़ुदा की ख़ुदाई में शरीक कर लिया"। वो कहता है: दुआ, इस्तिआनत, रुकूअ, सुजूद, इज्ज़ो-नियाज़, एतिमाद व तवक्कुल और इस तरह के तमाम इबादत-गुज़ाराना और नियाज़मंदाना आमाल वो आमाल हैं जो ख़ुदा और उसके बन्दों का बाहमी रिश्ता क़ायम करते हैं। पस अगर इन आमाल में तुमने किसी दूसरी हस्ती को भी शरीक कर लिया तो

1-दिशा, विषय।

ख़ुदा के रिश्तए् माबूदियत की यगानगी[1] बाक़ी न रही। इसी तरह अज़्मतों, किबरियाइयों, कारसाज़ियों और बेनियाज़ियों का जो एतिक़ाद तुम्हारे अन्दर ख़ुदा की हस्ती का तसव्वुर पैदा करता है, वो सिर्फ़ ख़ुदा ही के लिए मख़्सूस होना चाहिए। अगर तुमने वैसा ही एतिक़ाद किसी दूसरी हस्ती के लिए भी पैदा कर लिया तो तुमने उसे ख़ुदा का निद्द यानी शरीक ठहरा लिया और तौहीद का एतिक़ाद दर्हम-बर्हम हो गया।

यही वजह है कि सूर: फ़ातिहा में اِيَّاكَ نَعْبُدُ وَاِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ की तल्क़ीन की गई। इसमें अव्वल तो इबादत के साथ इस्तिआनत[2] का भी ज़िक्र किया गया, फिर दोनों जगह मफ़ऊल को मुक़द्दम किया जो मुफ़ीदे हस्र है, यानी "सिर्फ तेरी ही इबादत करते हैं और सिर्फ़ तुझी से मदद तलब करते हैं"। इसके अलावा तमाम क़ुरआन में इस कसरत के साथ तौहीद फ़िस-सिफ़ात और रद्दे इश्राक पर ज़ोर दिया गया है कि शायद ही कोई सूरत बल्कि कोई सफ़्हा इससे ख़ाली हो।

मक़ामे नुबुव्वत की हद-बन्दी

सबसे ज़्यादा अहम मस्अला मक़ामे नुबुव्वत की हद-बन्दी का था, यानी मुअ़ल्लिम की शख़्सियत को उसकी अस्ली जगह में महदूद[3] कर देना, ताकि शख़्सियत परस्ती[4] का हमेशा के लिए सद्दे-बाब[5] हो जाए। इस बारे में क़ुरआन ने जिस तरह साफ़ और क़तई लफ़्ज़ों में जा-बजा पैग़म्बर इस्लाम की बशरियत[6] और बन्दगी पर ज़ोर दिया है, मोहताजे बयान नहीं। हम यहाँ सिर्फ़ एक बात की तरफ़

1-अलगपन। 2-मदद। 3-सीमित। 4-व्यक्ति पूजा। 5-अध्याय बंद होना। 6-मानव होना।

तवज्जोह दिलाएंगे। इस्लाम ने अपनी तालीम का बुनियादी कलिमा जो क़रार दिया है, वो सब को मालूम है :

اَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰـهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ यानी "मैं इक़रार करता हूँ कि ख़ुदा के सिवा कोई माबूद नहीं और मैं इक़रार करता हूँ कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) ख़ुदा के बन्दे और उसके रसूल हैं"। इस इक़रार में जिस तरह ख़ुदा की तौहीद का एतिराफ़ किया गया है, ठीक इसी तरह पैग़म्बरे इस्लाम की बन्दगी और दर्जाए रिसालत का भी एतिराफ़[1] है। ग़ौर करना चाहिए कि ऐसा क्यों किया गया? सिर्फ़ इसलिए कि पैग़म्बरे इस्लाम की बन्दगी और दर्जाए रिसालत का एतिक़ाद इस्लाम की अस्ल व असास बन जाए और इसका कोई मौक़ा ही बाक़ी न रहे कि अ़ब्दियत की जगह माबूदियत का और रिसालत की जगह अवतार का तख़ैयुल पैदा हो। ज़ाहिर है कि इससे ज़्यादा इस मामले का तहफ़्फ़ुज़ क्या किया जा सकता था? कोई शख़्स दायराए इस्लाम में दाख़िल ही नहीं हो सकता जब तक कि वो ख़ुदा की तौहीद की तरह पैग़म्बरे इस्लाम की बन्दगी का भी इक़रार न कर ले।

यही वजह है कि हम देखते हैं पैग़म्बरे इस्लाम (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की वफ़ात के बाद मुसलमानों में बहुत से इख़्तिलाफ़ात पैदा हुए, लेकिन उनकी शख़्सियत के बारे में कभी कोई सवाल पैदा नहीं हुआ। अभी उनकी वफ़ात[2] पर चन्द घंटे भी नहीं गुज़रे थे कि हज़रत अबूबक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बरसरे मिंबर एलान कर दिया था :

जो कोई तुम में मुहम्मद مَنْ كَانَ مِنْكُمْ يَعْبُدُ مُحَمَّدًا

1-स्वीकार। 2-मृत्यु

فَإِنَّ مُحَمَّدًا قَدْ مَاتَ، وَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ يَعْبُدُ اللّٰهَ فَإِنَّ اللّٰهَ حَيٌّ لَّايَمُوْتُ۔

(بخاری) (١٠٢)

(सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की परस्तिश करता था, सो उसे मालूम होना चाहिए कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) ने वफ़ात पाई और जो कोई तुम में से अल्लाह की परस्तिश करता था तो उसे मालूम होना चाहिए कि अल्लाह की ज़ात हमेशा ज़िन्दा है, उसके लिए मौत नहीं। (बुख़ारी) (102)

(4) अ़वाम और ख़्वास दोनों के लिए एक तस्वीर

राबिअ़न, क़ुरआन से पहले उलूमो-फुनून की तरह मज़हबी अ़क़ाइद में भी ख़ासो-आ़म का इम्तियाज़ मल्हूज़ रखा जाता था और ख़याल किया जाता था कि ख़ुदा का एक तसव्वुर तो हक़ीक़ी है और ख़्वास के लिए है, एक तसव्वुर मजाज़ी है और अ़वाम के लिए है। चुनांचे हिन्दुस्तान में ख़ुदा-शनासी के तीन दर्जे क़रार दिए गए: अ़वाम के लिए देवताओं की परस्तिश, ख़्वास के लिए बराहे-रास्त ख़ुदा की परस्तिश, अख़स्सुल-ख़्वास[1] के लिए वहदतुल-वुजूद का मुशाहदा। यही हाल फ़लासफ़ए यूनान का था। वो ख़याल करते थे कि एक ग़ैर मरई और ग़ैर मुजस्सम ख़ुदा का तसव्वुर सिर्फ़ अहले इल्मो-हिकमत ही कर सकते हैं। अ़वाम के लिए इसी में अम्न है कि देवताओं की परस्तारी में मशग़ूल रहें।

लेकिन क़ुरआन ने हक़ीक़तो-मजाज़ या ख़ासो-आ़म का कोई

1-अति विशिष्ट वर्ग।

इम्तियाज़ बाक़ी न रखा। उसने सबको ख़ुदा परस्ती की एक ही राह दिखाई और सबके लिए सिफ़ाते इलाही का एक ही तसव्वुर पेश कर दिया। वो हुकमा व उरफ़ा से लेकर जुह्हाल व अ़वाम तक सबको हक़ीक़त का एक ही जल्वा दिखाता है और सब पर एतिक़ाद व ईमान का एक ही दरवाज़ा खोलता है। उसका तसव्वुर जिस तरह एक हकीम व आ़रिफ़ के लिए सरमायाए तफ़क्कुर है इसी तरह एक चरवाहे और दहक़ाँ के लिए सरमायाए तस्कीन है।

इस सिलसिले में मामले का एक और पहलू भी क़ाबिले ग़ौर है। हिन्दुस्तान में ख़्वास और अ़वाम के ख़ुदा परस्ताना तसव्वुरों में जो फ़र्क़े मरातिब मल्हूज़ रखा गया, वो मामले को इस रंग में भी नुमायाँ करता है कि यहाँ मज़हबी नुक़्तए ख़याल इब्तिदा से फ़िक्रो-अ़मल की रवादारी पर मब्नी रहा है, यानी किसी दायरए फ़िक्र को भी इतना तंग और बेलचक नहीं रखा गया कि किसी दूसरे दायरे की उसमें गुंजाइश ही न निकल सके। यहाँ ख़्वास तौहीद की राह पर गामज़न हुए, लेकिन अ़वाम के लिए देवताओं की परस्तिश और मूर्तियों की माबूदियत की राहें भी खुली छोड़ दी गईं। गोया हर अ़क़ीदे को जगह दी गई, हर अ़मल के लिए गुंजाइश निकाली गई और हर तौरो-तरीक़े को आज़ादाना नशो-नुमा का मौक़ा मिल गया। मज़हबी इख़्तिलाफ़ जो दूसरी क़ौमों में बाहमी जंगो-जिदाल का ज़रिया रहा है, यहाँ आपस के समझौतों का ज़रिया बना और हमेशा मुतआ़रिज़[1] उसूल बाहम-दिगर टकराने की जगह एक दूसरे के लिए जगहें निकालते रहे। तख़ालुफ़ की हालत में तफ़ाहुम और तआ़रुज़ की हालत में तताबुक़[2], गोया यहाँ के ज़ेहनी मिज़ाज की

1-विपरीत, प्रतिकूल। 2-समानता, बराबरी।

आ़म खुसूसियत थी। एक वेदांती जानता है कि अस्ल हक़ीक़त[1] इशराक और बुत-परस्ती के अ़क़ाइद से बालातर[2] है, ताहम ये जानने पर भी वो बुत-परस्ती का मुन्किर व मुख़ालिफ़ नहीं हो जाता, क्योंकि वो समझता है कि पसमांदगाने राह के लिए ये भी एक इब्तिदाई मन्ज़िल हुई और रह-रौ कोई राह इख़्तियार करे, मगर मक़सूदे अस्ली हर हाल में सबका एक ही है :

ख़्वाह अज़ तरीक़े मैकदा ख़्वाह अज़ रहे हरम
अज़ हर जिहत कि शाद शवी फ़त्हे बाब-गीर

चुनांचे चन्द साल हुए प्रोफ़ेसर सी. ई. एम. जॉड (Joad) ने हिन्दुस्तान के तारीख़ी ख़साइस पर नज़र डालते हुए इस खुसूसियत को सबसे ज़्यादा नुमायाँ जगह दी थी और इससे पहले दूसरे अहले क़मल भी इस पहलू पर ज़ोर दे चुके थे।

हमें चाहिए मामले के इस पहलू पर भी एक नज़र डाल लें।

हिन्दू रवादारी[3]

बिला-शुब्हा फ़िक्रो-अ़मल की उस रवादाराना सोच का जो हिन्दुस्तान की तारीख में बराबर उभरती रही है, हमें एतिराफ़ करना चाहिए, लेकिन मामला सिर्फ़ इतने ही पर ख़त्म नहीं हो जाता। ज़िन्दगी के हक़ाइक़ के तक़ाज़ों का यहाँ कुछ अ़जीब हाल है। यहाँ हम किसी एक गोशे ही के होकर नहीं रह सकते। दूसरे गोशों की भी ख़बर रखनी पड़ती है और फ़िक्रो-अ़मल की हर राह इतनी दूर तक चली गई है कि कहीं न कहीं जा कर हद-बन्दी की लकीरें खींचनी पड़ती हैं। अगर ऐसा न करें तो इल्मो-अख़्लाक़[4] के तमाम अहकाम मुतज़ल्ज़ल हो जाएँ और अख़्लाक़ी अक़्दार की कोई

1-मूल सत्य। 2-ऊपर। 3-सहिष्णुता। 4-ज्ञान व नैतिकता।

मुस्तक़िल हैसियत बाक़ी न रहे। रवादारी यक़ीनन एक ख़ूबी की बात है, लेकिन साथ ही अक़ीदे की मज़्बूती, राय की पुख़्तगी और फ़िक्र की इस्तिक़ामत व ख़ूबियों से भी इनकार नहीं किया जा सकता। पस यहाँ कोई न कोई हद-बन्दी का ख़त ज़रूर होना चाहिए जो इन तमाम ख़ूबियों को अपनी-अपनी जगह क़ायम रखे। अख़्लाक़ के तमाम अहकाम इन्हीं हद-बन्दियों के ख़ुतूत से बनते और उभरते हैं। जूँ-ही ये हिलने लगते हैं, अख़्लाक़ की पूरी दीवार हिल जाती है। अफ़्वो-दरगुज़र[1] बड़ी ही हुस्नो-ख़ूबी की बात है, लेकिन यही अफ़्वो-दरगुज़र जब अपनी हद-बन्दी के ख़त से आगे बढ़ जाता है तो अफ़्वो-दरगुज़र नहीं रहता, उसे बुज़दिली और बेहिम्मती के नाम से पुकारने लगते हैं। शुजाअत[2] इन्सानी सीरत का सबसे बड़ा वस्फ़ है, लेकिन यही वस्फ़ जब अपनी हद से गुज़र जाएगा तो न सिर्फ़ इसका हुक्म ही बदल जाएगा, बल्कि सूरत भी बदल जाएगी, अब उसे देखिये तो वो शुजाअत नहीं है, क़हरो-ग़ज़ब और ज़ुल्मो-तशद्दुद[3] हो गया है।

दो हालतें है और दोनों का हुक्म एक नहीं हो सकता। एक हालत ये है कि किसी ख़ास एतिक़ाद और अमल की रौशनी हमारे सामने आ गई है और हम एक ख़ास नतीजे तक पहुँच गए हैं, अब उसकी निस्बत हमारा तरज़े-अमल क्या होना चाहिए? हम इस पर मज़बूती के साथ जमे रहें या मुतज़लज़ल रहें? दूसरी हालत ये है कि जिस तरह हम किसी ख़ास नतीजे तक पहुँचे हैं, इसी तरह एक दूसरा शख़्स भी एक दूसरे नतीजे तक पहुँच गया है, और यहाँ फ़िक्रो-अमल की एक ही राह सबके आगे नहीं खुलती। अब हमारा

1-क्षमाशीलता। 2-बहादुरी, साहस। 3-अत्याचार व हिंसा।

तरज़े अ़मल उस शख़्स की निस्बत क्या होना चाहिए? हमारी तरह उसे अपनी राह चलने का हक़ है या नहीं? रवादारी का सहीह महल दूसरी हालत है, पहली नहीं है। अगर पहली हालत में वो आएगी तो ये रवादारी न होगी, एतिक़ाद की कमज़ोरी और यक़ीन का फ़ुक़्दान[1] होगा।

रवादारी ये है कि अपने हक़्क़े एतिक़ादो-अ़मल[2] के साथ दूसरे के हक़्क़े एतिक़ादो-अ़मल का भी एतिराफ़ कीजिए। और अगर दूसरे की राह आपको सरीह ग़लत दिखाई दे रही है, जब भी उसके उस हक़ से इनकार न कीजिए कि वो अपनी ग़लत राह पर भी चल सकता है। लेकिन अगर रवादारी के हुदूद यहाँ तक बढ़ा दिए गए कि वो आपके अ़क़ीदों में भी मुदाख़लत कर सकती है और आपके फ़ैसलों को भी नर्म कर सकती है तो फिर ये रवादारी न हुई, इस्तिक़ामते फ़िक्र[3] की नफ़ी[4] हो गई।

मुफ़ाहमत ज़िन्दगी की एक बुनियादी ज़रूरत है और हमारी ज़िन्दगी ही सर-तासर मुफ़ाहमत है, लेकिन हर राह की तरह यहाँ भी हद-बन्दी की कोई लकीर खींचनी पड़ेगी, और जिस हद पर भी जाकर लकीर खींची गई, मअ़न अ़क़ीदा पैदा हो गया। अब जब तक अ़क़ीदे की तब्दीली की कोई रौशनी सामने नहीं आती, आप मजबूर हैं कि उस पर जमे रहें और उसमें काट-छांट न करें। आप दूसरों के अ़क़ाइद का एहतिराम ज़रूर करेंगे, लेकिन अपने अ़क़ीदे को कमज़ोरी के हवाले नहीं होने देंगे।

कितनी ही मुसीबतें हैं जो एतिक़ाद और अ़मल के तमाम गोशों में इसी दरवाज़े से आईं कि इन दो मुख़्तलिफ़ हालतों का

1-संकट, कमी। 2-आस्था व धर्मकर्म का अधिकार। 3-विचार स्वातंत्र्य। 4-निषेध।

इम्तियाज़ी ख़त अपनी जगह से हिल गया। अगर एतिक़ाद की मज़बूती आई तो इतनी दूर तक चली गई कि रवादारी के तमाम तक़ाज़े भुला दिए गए। और दूसरों के एतिक़ादो-अ़मल में जबरन मुदाख़िलत की जाने लगी। अगर रवादारी आई तो इस बेएतिदाली[1] के साथ आई कि इस्तिक़ामते फ़िक्रो-राय के लिए कोई जगह न रही, हर अ़क़ीदा लचक गया, हर यक़ीन हिलने लगा। पहली बेएतिदाली की मिसालें हमें उन मज़हबी तंग-नज़रियों और सख़्तगीरों[2] में मिलती हैं जिनकी ख़ूँ-चकाँ[3] दास्तानों से तारीख़ के अवराक़[4] रंगीन हो चुके हैं। दूसरी बेएतिदाली के नताइज की मिसाल हमें हिन्दुस्तान की तारीख़ मुहैया कर देती है। यहाँ फ़िक्रो-अ़क़ीदे की कोई बुलन्दी भी वह्मो-जिहालत[5] की गिरावट से अपने आपको महफ़ूज़ न रख सकी और इल्मो-अ़क़्ल और वह्मो-जेहल में हमेशा समझौतों का सिलसिला जारी रहा। इन समझौतों ने हिन्दुस्तानी दिमाग़ की शक्लो-सूरत बिगाड़ दी। इसकी फ़िक्री तरक़्क़ियों का तमाम हुस्न अस्नामी अ़क़ीदों और वह्म-परस्तों के गर्दो-ग़ुबार में छुप गया।

ज़मान-ए-हाल के मुअर्रिख़ों[6] ने इस सूरते हाल का एतिराफ़ किया है। हमारे ज़माने का एक क़ाबिल हिन्दू मुसन्निफ़ उस अ़हद की फ़िक्री हालत पर नज़र डालते हुए, जब आर्याई तसव्वुरात हिन्दुस्तान के मक़ामी मज़ाहिब से मख़्लूत होने लगे थे, तस्लीम करता है कि "हिन्दू मज़हब की मख़्लूत नौइयत की तौज़ीह हमें इस सूरते हाल में मिल जाती है। सहेरा-नवर्द क़बाइल के वहशियाना तवहुमात से लेकर ऊँचे से ऊँचे दर्जे के तहिरस ग़ौरो-ख़ौज़ तक, हर दर्जे और

1-असंतुलन। 2-कट्टरता। 3-रक्तरंजित। 4-पन्ने। 5-संदेह व अज्ञान। 6-इतिहासकारों।

हर दायर-ए-फ़िक्र के ख़यालात यहाँ बाहम-दिगर मिलते और मख़्लूत होते रहे। आर्याई मज़हब अव्वल रोज़ से कुशादा दिल, ख़ुद-रौ और रवादार था। वो जब कभी किसी नये मोअस्सिर से दोचार हुआ तो ख़ुद सिमट गया और जगहें निकालता रहा, उसकी इस मिज़ाजी हालत में एक सच्चे इन्किसारे तबअ् और हमदर्दाना मुफ़ाहमत का शायस्ता रुझान महसूस करते हैं। हिन्दू दिमाग़ इसके लिए तैयार नहीं हुआ कि निचले दर्जे के मज़हबों को नज़र-अन्दाज़ कर दे या लड़ कर उनकी हस्ती मिटा दे। इसके अन्दर एक मज़हबी जुनून का ग़ुरूर नहीं था कि सिर्फ़ उसी का सच्चा मज़हब है। अगर इन्सानों के एक गिरोह को किसी एक माबूद की परस्तिश उसके तौरो-तरीक़े पर तस्कीने क़ल्ब मुहैया कर देती है तो तस्लीम कर लेना चाहिए कि ये भी सच्चाई की एक राह है। मुकम्मल सच्चाई पर कोई बयक-दफ़ा क़ाबिज़ नहीं हो जा सकता। वो सिर्फ़ बतदरीज और बतफ़रीक़ ही हासिल की जा सकती है और यहाँ इब्तिदाई और आरिज़ी दर्जों को भी उनकी एक जगह देनी पड़ती है।

हिन्दू दिमाग़ ने रवादारी और बाहमी मुफ़ाहमतों की ये राह इख़्तियार कर ली, लेकिन वो ये बात भूल गया कि बाज़ हालात ऐसे भी होते हैं जब रवादारी की जगह ना-रवादारी एक फ़ज़ीलत का हुकम पैदा कर लेती है और मज़हबी मामलात में भी ग्रेशम (Gresham) (103) के क़ानून की तरह का एक क़ानून काम करता रहता है। जब आर्याई और ग़ैर-आर्याई मज़ाहिब बाहम-दिगर मिले, एक शाइस्ता और दूसरा ना-शाइस्ता, एक अच्छी क़िस्म का, दूसरा निकम्मा, तो ग़ैर-शाइस्ता और निकम्मे अज्ज़ा में क़ुदरती तौर पर ये मैलान पैदा हो गया कि शाइस्ता और अच्छे अज्ज़ा को दबा कर

मुअ़त्तल कर दे" (104)।

बहरहाल क़ुरआन के तसव्वुरे इलाही की एक बुनियादी खुसूसियत ये है कि उसने किसी तरह की एतिक़ादी मुफ़ाहमत इस बारे में जारी नहीं रखी। वो अपने तौहीदी और तन्ज़ीही तसव्वुर में सर-तासर बेमेल और बेलचक रहा। उसकी ये मज़बूत जगह किसी तरह भी हमें रवादाराना तरज़े-अ़मल से रोकना नहीं चाहती, अलबत्ता एतिक़ादी मुफ़ाहमतों के तमाम दरवाज़े बंद कर देती है।

ख़ामिसन, क़ुरआन ने तसव्वुरे इलाही की बुनियाद इन्सान के आ़लमगीर विज्दानी एहसास पर रखी है। ये नहीं किया है कि उसे नज़रो-फ़िक्र की काविशों का एक ऐसा मोअ़म्मा बना दिया हो जिसे किसी ख़ास तबक़े का ज़ेहन ही हल कर सके। इन्सान का आ़लमगीर विज्दानी एहसास क्या है? ये है कि काइनाते हस्ती ख़ुद बख़ुद पैदा नहीं हो गई, पैदा की गई है, और इसलिए ज़रूरी है कि एक साने हस्ती मौजूद हो। पस क़ुरआन भी इस बारे में आ़म तौर पर जो कुछ बतलाता है, वो इतना ही है, इससे ज़्यादा जो कुछ है, वो मज़हबी अ़क़ीदे का मामला नहीं है, इन्फ़िरादी और ज़ाती तजुर्बे व अहवाल का मामला है। इसलिए वो इसका बोझ जमाअ़त के अफ़्कार पर नहीं डालता, इसे अस्हाबे जोहद व तलब के लिए छोड़ देता है :

وَالَّذِينَ جَاهَدُوا فِينَا لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا ط وَإِنَّ اللَّهَ لَمَعَ الْمُحْسِنِينَ ○

(٢٩:٦٩)

और जो लोग हम तक पहुँचने के लिए कोशिश करेंगे तो हम भी ज़रूर उनपर राह खोल देंगे। और अल्लाह नेक किरदारों से अलग कब है? वो तो उनके साथ है। (29: 69)

وَفِي الْأَرْضِ اٰيٰتٌ لِّلْمُوْقِنِيْنَ ۝ وَفِيْٓ اَنْفُسِكُمْ ۚ اَفَلَا تُبْصِرُوْنَ ۝ (٥١: ٢٠-٢١)

और उन लोगों के लिए जो यक़ीन रखते हैं, ज़मीन में कितनी ही हक़ीक़त की निशानियाँ हैं, और ख़ुद तुम्हारे अन्दर भी, फिर क्या तुम देखते नहीं ? (51: 20-21)

सादिसन, इसी मक़ाम से वो फ़रक़ भी नुमायाँ हो जाता है जो इस्लाम ने बिल्कुल एक दूसरी शक्लो-नौइयत में अवामो-ख़्वास का मलहूज़ रखा है। हिन्दू मुफ़क्किरों ने अवाम व ख़्वास में अलग-अलग तसव्वुर और अक़ीदे तक़्सीम किए। इस्लाम ने तसव्वुर और अक़ीदे के एतिबार से कोई इम्तियाज़ जाइज़ नहीं रखा। वो हक़ीक़त का एक ही अक़ीदा हर इन्सानी दिलो-दिमाग़ के आगे पेश करता है। लेकिन ये ज़ाहिर है कि तलब व जोहद के लिहाज़ से सबके मरातिब यक्साँ नहीं हो सकते और यहाँ एक ही दर्जे की प्यास लेकर हर तालिबे हक़ीक़त नहीं आता। आम्मतुन-नास[1] ब-हैसियत जमाअ़त के अपना एक ख़ास मिजाज़ और अपनी ख़ास एहतियाज रखते हैं। ख़ास अफ़्राद ब-हैसियत फ़र्द के अपनी तलब व इस्तेदाद का अलग-अलग दर्जा व मक़ाम रखते हैं। पस उसने जिस इम्तियाज़ से पहली सूरत में इनकार कर दिया था, उससे दूसरी सूरत में इनकार नहीं किया और मुख़्तलिफ़ मदारिज तलब के लिए इरफ़ानो-यक़ीन की मुख़्तलिफ़ राहें खुली छोड़ दीं।

सहीह बुख़ारी और मुस्लिम की एक मुत्तफ़क़ अ़लैह[2] रिवायत में जो हदीसे जिब्रील के नाम से मशहूर है, निहायत जामे व माने

1-आम लोग। 2-सर्वसम्मत।

लफ़्ज़ों में ये फ़र्के मरातिब वाज़ेह कर दिया गया है। ये हदीस तीन मरतबों का ज़िक्र करती है: इस्लाम, ईमान और एहसान। इस्लाम ये है कि इस्लामी अ़क़ीदे का इक़रार करना और अ़मल के चारों रुक्न, यानी नमाज़, रोज़ा, हज और ज़कात अंजाम देना। ईमान ये है कि इक़रार के मर्तबे से आगे बढ़ना और इस्लाम के बुनियादी अ़क़ाइद के हक़्क़ुल-यक़ीन का मर्तबा हासिल करना। एहसान ये है :

ان تعبدالله كانك تراه ، فان لم تكن تراه فانه يراك - (صحيحين)

तू अल्लाह की इस तरह इबादत कर कि गोया उसे अपने सामने देख रहा है, और अगर सामने नहीं देख रहा तो वो तुझे देख रहा है। (सहीहैन)

पस गोया इरफ़ाने हक़ीक़त के लिहाज़ से यहाँ तीन मर्तबे हुए: पहला मर्तबा इस्लामी दायरे के एतिक़ादो-अ़मल का है, ये इस्लाम है, यानी जिसने इस्लामी अ़क़ीदे का इक़रार कर लिया और उसके आमाल की ज़िन्दगी इख़्तियार कर ली, वो इस दायरे में आ गया। लेकिन दायरे में दाख़िल हो जाने से ये लाज़िम नहीं आ जाता कि इल्मो-यक़ीन के जो मक़ामात हैं वो भी हर वारिद व दाख़िल को हासिल हो गए। पस अब दूसरा मर्तबा नुमायाँ हुआ जिसे ईमान से ताबीर किया है। इस्लाम ज़ाहिर का इक़रारो-अ़मल था, ईमान दिलो-दिमाग़ का यक़ीनो-इज़आ़न है। ये मर्तबा जिसने हासिल कर लिया वो अ़वाम से निकल कर ख़्वास के ज़ुमरे में दाख़िल हो गया। लेकिन मामला इतने ही पर ख़त्म नहीं हो जाता, इरफ़ाने हक़ीक़त और ऐनुल-यक़ीनी ईक़ान का एक और मर्तबा भी बाक़ी रह जाता है, उसे एहसान से ताबीर किया गया। लेकिन ये मक़ाम महज़

एतिक़ाद और यक़ीन पैदा कर लेने का नहीं है जो एक गिरोह को बहैसियत गिरोह के हासिल हो जा सकता है। ये ज़ाती तजुर्बे का मक़ाम है, जो यहाँ तक पहुँचता है वो अपने ज़ाती तजुर्बे व कश्फ़[1] से ये दर्जा हासिल कर लेता है। तालीमी और अहकामी अ़क़ाइद को इसमें दख़ल नहीं, बहसो-नज़र की इसमें गुंजाइश नहीं। ये ख़ुद करने और पाने का मामला है, बतलाने और समझाने का मामला नहीं। जो यहाँ तक पहुँच गया, वो अगर कुछ बतलाएगा भी तो यही बतलाएगा कि मेरी तरह बन जाओ, फिर जो कुछ दिखाई देता है देख लो।

पुरसीद यके कि आ़शिक़ी चीस्त   गुफ़्तम कि चू मन् शवी बिदानी

इस्लाम ने इस तरह तलब व जोहद की हर प्यास के लिए दर्जा-बदर्जा सैराबी का समान कर दिया। अ़वाम के लिए पहला मर्तबा काफ़ी है, ख़्वास के लिए दूसरा मर्तबा ज़रूरी है और अख़स्सुल ख़्वास की प्यास बग़ैर तीसरे जाम के तस्कीन पाने वाली नहीं। उसके तसव्वुरे इलाही और अ़क़ीदे का मैख़ाना एक है, लेकिन जाम अलग-अलग हुए। हर तालिब के हिस्से में उसके ज़र्फ़ के मुताबिक़ एक जाम आ जाता है ओर उसकी सर-शारी की कैफ़ियतें मुहैया कर देता है। व लिल्लाहि दुर्रु मन क़ाल :

साक़ी ब-हमा बादा ज़-यक ख़म दहद अमा
दर मज्लिसे-ऊ-मस्ती हर कस ज़-शाराबीस्त

यहाँ ये अम्र भी वाज़ेह कर देना बेमहल न होगा कि क़ुरआन की मुतअ़द्दद तसरीहात हैं जिन्हें अगर वह्दतुल-वुजूदी तसव्वुर की

1-खुलना, उद्घाटित होना, पाना, बोधत्व।

तरफ़ ले जाया जाए तो बिला तकल्लुफ़ दूर तक जा सकती हैं। मसलन “هُوَالْاَوَّلُ وَالْاٰخِرُ وَالظَّاهِرُ وَالْبَاطِنُ” (57:3) और “اَيْنَمَا تُوَلُّوْا فَثَمَّ وَجْهُ اللّٰهِ” (2:115) और “وَنَحْنُ اَقْرَبُ اِلَيْهِ مِنْ حَبْلِ الْوَرِيْدِ” (50:16) और “كُلَّ يَوْمٍ هُوَ فِيْ شَاْنٍ” (55:29) या तमाम इस तरह की तसरीहात जिन में तमाम मौजूदात का बिल-आख़िर अल्लाह की तरफ़ लौटना बयान किया गया है। तौहीदे वुजूदी के क़ाइल इन तमाम आयात से मस्अल-ए-वह्दतुल-वुजूद पर इस्तेदलाल करते हैं। और शाह वलिउल्लाह ने तो यहाँ तक लिख दिया है कि “अगर मैं मस्अल-ए-वह्दतुल-वुजूद को साबित करना चाहूँ तो क़ुरआन व हदीस के तमाम नुसूस व ज़वाहिर से इसका इस्बात[1] कर सकता हूँ” लेकिन साफ़ बात जो इस बारे में मालूम होती है, वो यही है कि इन तमाम तसरीहात को उनके क़रीबी महामिल से दूर नहीं ले जाना चाहिए और उन मआनी से आगे नहीं बढ़ना चाहिए जो सदरे-अव्वल[2] के मुख़ातिबों ने समझे थे। बाक़ी रहा हक़ीक़त के कश्फ़ व इरफ़ान का वो मक़ाम जो उरफ़ा-ए-तरीक़[3] को पेश आता है तो वो किसी तरह भी क़ुरआन के तसव्वुरे इलाही के अक़ीदे के ख़िलाफ़ नहीं। उसका ससव्वुर एक जामे तसव्वुर है और हर तौहीदी तसव्वुर की उसमें गुंजाइश मौजूद है। जो अफ़रादे ख़ास्सा मक़ामे एहसान तक रसाई हासिल करते हैं, वो हक़ीक़त को उसकी पसे-पर्दा जल्वा-तराज़ियों[4] में भी देख लेते हैं और इरफ़ान का वो मुन्तहा मर्तबा जो फ़िक्रे इन्सानी के दस्तरस में है, उन्हें हासिल हो जाता है। व मन् लम् यज़ुक़् लम् यदरि :

1-सिद्ध। 2-पहले दौर। 3-ज्ञान-ध्यान को उपलब्ध सूफ़ियों। 4-पर्दे के पीछे के जल्वों।

तू नज़र बाज़नए वर्ना तग़ाफ़ुल निगह अस्त
तू ज़बाने फ़हम नए वर्ना ख़मूशी सुख़न अस्त

साबिअ़न, जिस तरतीब के साथ सूर: फ़ातिहा में ये तीनों सिफ़तें बयान की गई हैं, दरअसल फ़िक्रे इन्सानी की तलबो-मअ़रिफ़त की क़ुदरती मन्ज़िलें हैं और अगर ग़ौर किया जाए तो इसी तरतीब से पेश आती हैं। सबसे रुबूबियत का ज़िक्र किया गया, क्योंकि काइनाते हस्ती में सबसे ज़्यादा ज़ाहिर नुमूद इसी सिफ़त की है और हर वुजूद को सबसे ज़्यादा इसी की एहतियाज है। रुबूबियत के बाद रहमत का ज़िक्र किया गया, क्योंकि इसकी हक़ीक़त बमुक़ाबले रुबूबियत के मुतालआ़ व तफ़क्कुर की मोहताज थी और रुबूबियत के मुशाहदात से जब नज़र आगे बढ़ती है, तब रहमत का जल्वा नमूदार होता है। फिर रहमत के बाद अ़दालत[1] की सिफ़त जल्वा अफ़्रोज़ हुई, क्योंकि ये सफ़र की आख़िरी मन्ज़िल है। रहमत के मुशाहदात की मन्ज़िल से जब क़दम आगे बढ़ते हैं तो मालूम होता है, यहाँ अ़दालत की नुमूद भी हर जगह मौजूद है और इसलिए मौजूद है कि रुबूबियत और रहमत का मुक़्तज़ा यही है।

●❁●

1-न्याय, बदला।

(6)

اِهْدِ نَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ

इह्दिनस्-सिरातल्-मुस्तक़ीम

हिदायत

"हिदायत" के मअ़ना रहनुमाई करने, राह दिखाने, राह पर लगा देने के हैं। इज्मालन[1] इसका ज़िक्र ऊपर गुज़र चुका है। यहाँ हम चाहते हैं हिदायत के मुख़्तलिफ़ मरातिब व अक़्साम पर नज़र डालें जिनका क़ुरआने हकीम ने ज़िक्र किया है और जिन में से एक ख़ास मर्तबा वह्यो-नुबुव्वत की हिदायत का है।

तक्वीने वुजूद के मरातिबे अरबा[2]

तुम अभी पढ़ चुके हो कि ख़ुदा की रुबूबियत ने जिस तरह मख़्लूक़ात को उनके मुनासिबे हाल जिस्म व कुवा दिए हैं, इसी तरह उनकी हिदायत का फ़ित्री सामान भी मुहैया कर दिया है। फ़ित्रत की यही हिदायत है जो हर वुजूद को ज़िन्दगी व मईशत की राह पर लगाती और ज़रूरियते ज़िन्दगी की जुस्तुजू में रहनुमा होती है। अगर फ़ित्रत की ये हिदायत मौजूद न होती तो मुमकिन न था कि कोई मख़्लूक़ भी ज़िन्दगी व बक़ा का सामान बहम पहुँचा सकती। चुनांचे क़ुरआन ने जा-बजा इस हक़ीक़त पर तवज्जोह दिलाई है। वो कहता है: हर वुजूद के बनने और दर्जा-ए-तक्मील तक पहुँचने के मुख़्तलिफ़ मरातिब हैं और उनमें आख़िरी मर्तबा हिदायत का मर्तबा है। सूरए अअ़ला में बित्तरतीब चार मर्तबों का ज़िक्र किया है :

1-सारांश, खुलासा। 2-चार मर्तबे।

वो परवरदिगार जिसने हर चीज़ पैदा की, फिर उसे दुरुस्त किया, फिर एक अन्दाज़ा ठहरा दिया, फिर उस पर राहे (अ़मल) खोल दी। (87: 2-3)	اَلَّذِیْ خَلَقَ فَسَوّٰی ○ وَالَّذِیْ قَدَّرَ فَهَدٰی ○ (۸۷: ۲-۳)

यानी तक्वीने वुजूद के चार मर्तबे हुए: तख़्लीक़[1], तस्विया[2], तक़दीर[3], हिदायत[4]।

'तख़्लीक़' के मअ़ना पैदा करने के हैं। ये बात कि काइनाते ख़िल्क़त और उसके हर वुजूद का मवाद अ़दम से वुजूद में आ गया, तख़्लीक़ है।

'तस्विया' के मअ़ना ये हैं कि एक चीज़ को जिस तरह होना चाहिए, ठीक-ठीक उसी तरह दुरुस्त और आरास्ता कर देना।

'तक़दीर' के मअ़ना अन्दाज़ा ठहरा देने के हैं और इसकी तशरीह ऊपर गुज़र चुकी है।

'हिदायत' से मक़सूद ये है कि हर वुजूद पर उसकी ज़िन्दगी व मईशत की राह खोल दी जाए और इसकी तशरीह भी रुबूबियत के मब्हस में गुज़र चुकी है।

मसलन मख़्लूक़ात में एक ख़ास क़िस्म परिन्द की है :

1- ये बात कि उनका माद्दए ख़िल्क़त ज़ुहूर में आ गया, तख़्लीक़ है।

2- ये बात कि उनके तमाम ज़ाहिरी व बातिनी क़ुवा इस तरह बना दिए गए कि ठीक-ठीक क़वाम व एतिदाल की हालत पैदा

1-सृजन। 2-ठीक-दुरुस्त करना। 3-नियति, अंदाज़ा ठहराना। 4-मार्ग-दर्शन।

हो गई, तस्विया है।

3- ये बात कि उनके ज़ाहिरी व बातिनी क़ुवा के आमाल के लिए एक ख़ास तरह का अन्दाज़ा ठहरा दिया गया है जिससे वो बाहर नहीं जा सकते, तक़दीर है, मसलन ये कि हवा में उड़ेंगे, मछलियों की तरह पानी में तैरेंगे नहीं।

4- ये बात कि उनके अन्दर विज्दान व हवास की रौशनी पैदा हो गई जो उन्हें ज़िन्दगी व बक़ा की राहें दिखाती और सामने हयात के तलब व हुसूल में रहनुमाई करती है, हिदायत है।

क़ुरआन कहता है: ख़ुदा की रुबूबियत का मुक़्तज़ा यही था कि जिस तरह उसने हर वुजूद को उसका जाम-ए-हस्ती अ़ता फ़रमाया और उसके ज़ाहिरी व बातिनी क़ुवा दुरुस्त कर दिए और उसके आमाल के लिए एक मुनासिबे हाल अन्दाज़ा ठहरा दिया, इसी तरह उसकी हिदायत का भी सरो-सामान कर देता :

(मूसा ने) कहा : हमारा परवरदिगार वो है जिसने हर चीज़ को उसकी बनावट दी फिर उस पर राहे-अ़मल खोल दी। (20: 50)

قَالَ رَبُّنَا الَّذِيْٓ اَعْطٰى كُلَّ شَيْءٍ خَلْقَهٗ ثُمَّ هَدٰى ۝

(٢٠: ٥٠)

क़ुरआन ने हज़रत इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) और उनकी क़ौम का जो मुकालमा जा-बजा नक़्ल किया है, उसमें हज़रत इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) अपने अ़क़ीदे का एलान करते हुए कहते हैं :

और जब इब्राहीम ने अपने बाप और क़ौम से कहा था: तुम

وَاِذْ قَالَ اِبْرٰهِيْمُ لِاَبِيْهِ وَقَوْمِهٖٓ

اِنَّنِیْ بَرَآءٌ مِّمَّا تَعْبُدُوْنَ ○ اِلَّا الَّذِیْ فَطَرَنِیْ فَاِنَّهٗ سَیَهْدِیْنِ ○

(۲۷-۲۶:٤۳)

जिन (देवताओं) की परस्तिश करते हो, मुझे उनसे कोई सरोकार नहीं। मेरा अगर रिश्ता है तो उस ज़ात से जिसने मुझे पैदा किया है और वही मेरी रहनुमाई करेगी।
(43: 26-27)

اَلَّذِیْ فَطَرَنِیْ فَاِنَّهٗ سَیَهْدِیْنِ यानी जिस ख़ालिक़ ने मुझे जिस्म व वुजूद अ़ता फ़रमाया है, ज़रूरी है कि उसने मेरी हिदायत का भी सामान कर दिया हो। सूरः शुअ़रा में यही बात ज़्यादा वज़ाहत के साथ बयान की गई है :

اَلَّذِیْ خَلَقَنِیْ فَهُوَ یَهْدِیْنِ ○ وَالَّذِیْ هُوَ یُطْعِمُنِیْ وَیَسْقِیْنِ ○ وَاِذَا مَرِضْتُ فَهُوَ یَشْفِیْنِ ○

(۸۰-۷۸:۲٦)

जिस परवरदिगार ने मुझे पैदा किया है, वही मेरी हिदायत करेगा, और फिर वही है जो मुझे खिलाता और पिलाता है, और जब बीमार हो जाता हूँ तो शिफ़ा बख़्शता है।
(26: 78-80)

यानी जिस परवरदिगार की परवरदिगारी ने मेरी तमाम ज़रूरियात ज़िन्दगी का सामान कर दिया है, जो मुझे भूख के लिए ग़िज़ा, प्यास के लिए पानी और बीमारी में शिफ़ा अ़ता फ़रमाता है, क्यों कर मुमकिन है कि उसने मुझे पैदा तो कर दिया हो, लेकिन मेरी हिदायत का सामान न किया हो? अगर उसने मुझे पैदा किया है तो यक़ीनन वही है जो तलबो-सई में मेरी रहनुमाई भी करे।

सूर: साफ़्फ़ात में यही मतलब इन लफ़्ज़ों में अदा किया गया है :

وَقَالَ اِنِّیْ ذَاهِبٌ اِلٰی رَبِّیْ سَیَهْدِیْنِ ۝ (۹۹:۳۷)

और (इब्राहीम ने) कहा: मैं (हर तरफ़ से कट कर) अपने परवरदिगार का रुख़ करता हूँ, वो मेरी हिदायत करेगा। (37: 99)

'रब्बी' के लफ़्ज़ पर ग़ौर करो! वो मेरा 'रब' है और जब वो 'रब' है तो ज़रूरी है कि वही मुझ पर राहे अ़मल भी खोल दे।

हिदायत के इब्तिदाई तीन मर्तबे

फिर हिदायत के भी मुख़्तलिफ़ मरातिब हैं जो हम हैवानात में महसूस करते हैं :

सबसे पहला मर्तबा विज्दान[1] की हिदायत का है। विज्दान तबीअ़ते हैवानी का फ़ित्री और अंदरूनी इल्हाम है। हम देखते हैं कि एक बच्चा पैदा होते ही ग़िज़ा के लिए रोने लगता है और फिर बग़ैर इसके कि ख़ारिज की कोई रहनुमाई उसे मिली हो, माँ की छाती मुँह में लेते ही उसे चूसता और अपनी ग़िज़ा हासिल कर लेता है।

विज्दान के बाद हवास की हिदायत का मर्तबा है और वो इससे बुलन्द-तर है। ये हमें देखने, सुनने, चखने, छूने और सूंघने की क़ुव्वतें बख़्शती है और इन्हीं के ज़रिये हम ख़ारिज का इल्म हासिल करते हैं।

1-अवचेतन, अंत: करण, अंत: बोध।

हिदायते फ़ित्रत के ये दोनों मर्तबे इन्सान और हैवान सबके लिए हैं, लेकिन जहाँ तक इन्सान का तअ़ल्लुक़ है, हम देखते हैं कि एक तीसरा मर्तब-ए-हिदायत भी मौजूद है और वो अ़क्ल की हिदायत है। फ़ित्रत की यही हिदायत है जिसने इन्सान के आगे ग़ैर महदूद तरक़्क़ियात का दरवाज़ा खोल दिया है और उसे काइनाते अर्ज़ी की तमाम मख़्लूक़ात का हासिल और खुलासा बना दिया है।

विज्दान की हिदायत इसमें सई व तलब का वलवला पैदा करती है, हवास उसके लिए मालूमात ब-हम पहुँचाते हैं और अ़क्ल नताइज व अहकाम मुरत्तब करती है। हैवानात को इस आख़िरी मर्तबे की ज़रूरत न थी, इसलिए उनका क़दम विज्दान और हवास से आगे नहीं बढ़ा, लेकिन इन्सान में ये तीनों मर्तबे जमा हो गए।

जौहरे अ़क्ल क्या है? दरअसल उसी क़ुव्वत की एक तरक़्क़ी-याफ़्ता हालत है जिसने हैवानात में विज्दान और हवास की रौशनी पैदा कर दी है। जिस तरह इन्सान का जिस्म अज्सामे अर्ज़ी की सबसे आला कड़ी है, इसी तरह उसकी मअ़्नवी क़ुव्वत भी तमाम मअ़्नवी क़ुव्वतों का बरतरीन जौहर है। रूहे हैवानी का वो जौहरे इदराक जो नबातात में मख़्फ़ी और हैवानात के विज्दानो-मशाइर में नुमायाँ था, इन्सान के मर्तबे में पहुँच कर दर्जे-ए-कमाल तक पहुँच गया और जौहरे अ़क्ल के नाम से पुकारा गया।

हर मर्तब-ए-हिदायत एक ख़ास हद से आगे रहनुमाई नहीं कर सकता

फिर हम देखते हैं कि हिदायते फ़ित्रत के इन तीनों मर्तबों में से हर मर्तबा अपनी क़ुव्वतो-अ़मल का एक ख़ास दायरा रखता है,

उससे आगे नहीं बढ़ सकता। और अगर उस मर्तबे से एक दूसरा बुलन्द-तर मर्तबा मौजूद न होता तो हमारी मअ़नवी क़ुव्वतें इस हद तक तरक़्क़ी न कर सकतीं जिस हद तक फ़ित्रत की रहनुमाई से तरक़्क़ी कर रही हैं।

विज्दान की हिदायत हम में तलबो-सई़ का जोश पैदा करती है और मतलूबाते ज़िन्दगीत की राह पर लगाती है, लेकिन हमारे वुजूद से बाहर जो कुछ मौजूद है उसका इदराक हासिल नहीं कर सकती। ये काम मर्तब-ए-हवास की हिदायत का है। विज्दान की रहनुमाई जब दरमांदा हो जाती है तो हवास की दस्तगीरी नुमायाँ होती है, आँख देखती है, कान सुनता है, ज़बान चखती है, हाथ छूता है, नाक सूंघती है और इस तरह हम अपने वुजूद से बाहर की तमाम महसूस अशिया का इदराक हासिल कर लेते हैं।

लेकिन हवास की हिदायत भी एक ख़ास हद तक ही काम दे सकती है, उससे आगे नहीं बढ़ सकती। आँख देखती है, मगर सिर्फ़ उसी हालत में जबकि देखने की तमाम शर्तें मौजूद हों, अगर कोई शर्त भी न पाई जाए मसलन रौशनी न हो या फ़ासिला ज़्यादा हो तो हम आँख रखते हुए भी एक मौजूद चीज़ को बराहे-रास्त नहीं देख सकते। अ़लावा-बरीं हवास की हिदायत सिर्फ़ इतना ही कर सकती है कि अशिया का एहसास पैदा कर दे, लेकिन मुजर्रद एहसास काफ़ी नहीं है। हमें इस्तिंबात व इस्तिंताज की ज़रूरत है, अहकाम की ज़रूरत है, कुल्लियात की ज़रूरत है और ये काम अ़क़्ल की हिदायत का है। वो उन तमाम मुदरिकात को जो हवास के ज़रिये हासिल होती हैं, तरतीब देती है और उनसे अहकाम व कुल्लियात का इस्तिंबात करती है।

एतिक़ाद और यक़ीन पैदा कर लेने का नहीं है जो एक गिरोह को बहैसियत गिरोह के हासिल हो जा सकता है। ये ज़ाती तजुर्बे का मक़ाम है, जो यहाँ तक पहुँचता है वो अपने ज़ाती तजुर्बे व कश्फ़[1] से ये दर्जा हासिल कर लेता है। तालीमी और अहकामी अ़क़ाइद को इसमें दख़ल नहीं, बहसो-नज़र की इसमें गुंजाइश नहीं। ये ख़ुद करने और पाने का मामला है, बतलाने और समझाने का मामला नहीं। जो यहाँ तक पहुँच गया, वो अगर कुछ बतलाएगा भी तो यही बतलाएगा कि मेरी तरह बन जाओ, फिर जो कुछ दिखाई देता है देख लो।

पुरसीद यके कि आ़शिक़ी चीस्त गुफ़्तम कि चू मन् शवी बिदानी

इस्लाम ने इस तरह तलब व जोहद की हर प्यास के लिए दर्जा-बदर्जा सैराबी का समान कर दिया। अ़वाम के लिए पहला मर्तबा काफ़ी है, ख़्वास के लिए दूसरा मर्तबा ज़रूरी है और अख़स्सुल ख़्वास की प्यास बग़ैर तीसरे जाम के तस्कीन पाने वाली नहीं। उसके तसव्वुरे इलाही और अ़क़ीदे का मैख़ाना एक है, लेकिन जाम अलग-अलग हुए। हर तालिब के हिस्से में उसके ज़र्फ़ के मुताबिक़ एक जाम आ जाता है ओर उसकी सर-शारी की कैफ़ियतें मुहैया कर देता है। व लिल्लाहि दुर्रु मन क़ाल :

साक़ी ब-हमा बादा ज़-यक ख़म दहद अमा
दर मज्लिसे-ऊ-मस्ती हर कस ज़-शाराबीस्त

यहाँ ये अम्र भी वाज़ेह कर देना बेमहल न होगा कि क़ुरआन की मुतअ़द्दद तसरीहात हैं जिन्हें अगर वह्दतुल-वुजूदी तसव्वुर की

1-खुलना, उद्घाटित होना, पाना, बोधत्व।

तरफ़ ले जाया जाए तो बिला तकल्लुफ़ दूर तक जा सकती हैं। मसलन "هُوَ الْاَوَّلُ وَالْاٰخِرُ وَالظَّاهِرُ وَالْبَاطِنُ" (57:3) और "اَيْنَمَا تُوَلُّوْا فَثَمَّ وَجْهُ اللّٰهِ" (2:115) और "وَنَحْنُ اَقْرَبُ اِلَيْهِ مِنْ حَبْلِ الْوَرِيْدِ" (50:16) और "كُلَّ يَوْمٍ هُوَ فِيْ شَاْنٍ" (55:29) या तमाम इस तरह की तसरीहात जिन में तमाम मौजूदात का बिल-आख़िर अल्लाह की तरफ़ लौटना बयान किया गया है। तौहीदे वुजूदी के क़ाइल इन तमाम आयात से मस्अल-ए-वह्दतुल-वुजूद पर इस्तेदलाल करते हैं। और शाह वलिउल्लाह ने तो यहाँ तक लिख दिया है कि "अगर मैं मस्अल-ए-वह्दतुल-वुजूद को साबित करना चाहूँ तो क़ुरआन व हदीस के तमाम नुसूस व ज़वाहिर से इसका इस्बात[1] कर सकता हूँ" लेकिन साफ़ बात जो इस बारे में मालूम होती है, वो यही है कि इन तमाम तसरीहात को उनके क़रीबी महामिल से दूर नहीं ले जाना चाहिए और उन मआनी से आगे नहीं बढ़ना चाहिए जो सदरे-अव्वल[2] के मुख़ातिबों ने समझे थे। बाक़ी रहा हक़ीक़त के कश्फ़ व इरफ़ान का वो मक़ाम जो उरफ़ा-ए-तरीक़[3] को पेश आता है तो वो किसी तरह भी क़ुरआन के तसव्वुरे इलाही के अ़क़ीदे के ख़िलाफ़ नहीं। उसका ससव्वुर एक जामे तसव्वुर है और हर तौहीदी तसव्वुर की उसमें गुंजाइश मौजूद है। जो अफ़रादे ख़ास्सा मक़ामे एहसान तक रसाई हासिल करते हैं, वो हक़ीक़त को उसकी पसे-पर्दा जल्वा-तराज़ियों[4] में भी देख लेते हैं और इरफ़ान का वो मुन्तहा मर्तबा जो फ़िक्रे इन्सानी के दस्तरस में है, उन्हें हासिल हो जाता है। व मन् लम् यज़ुक़ लम् यदरि :

1-सिद्ध। 2-पहले दौर। 3-ज्ञान-ध्यान को उपलब्ध सूफ़ियों। 4-पर्दे के पीछे के जल्वों।

तू नज़र बाज़नए वर्ना तग़ाफ़ुल निगह अस्त
तू ज़बाने फ़हम नए वर्ना ख़मूशी सुख़न अस्त

साबिअ़न, जिस तरतीब के साथ सूर: फ़ातिहा में ये तीनों सिफ़तें बयान की गई हैं, दरअसल फ़िक्रे इन्सानी की तलबो-मअ़रिफ़त की क़ुदरती मन्ज़िलें हैं और अगर ग़ौर किया जाए तो इसी तरतीब से पेश आती हैं। सबसे रुबूबियत का ज़िक्र किया गया, क्योंकि काइनाते हस्ती में सबसे ज़्यादा ज़ाहिर नुमूद इसी सिफ़त की है और हर वुजूद को सबसे ज़्यादा इसी की एहतियाज है। रुबूबियत के बाद रहमत का ज़िक्र किया गया, क्योंकि इसकी हक़ीक़त बमुक़ाबले रुबूबियत के मुतालआ़ व तफ़क्कुर की मोहताज थी और रुबूबियत के मुशाहदात से जब नज़र आगे बढ़ती है, तब रहमत का जल्वा नमूदार होता है। फिर रहमत के बाद अ़दालत[1] की सिफ़त जल्वा अफ़्रोज़ हुई, क्योंकि ये सफ़र की आख़िरी मन्ज़िल है। रहमत के मुशाहदात की मन्ज़िल से जब क़दम आगे बढ़ते हैं तो मालूम होता है, यहाँ अ़दालत की नुमूद भी हर जगह मौजूद है और इसलिए मौजूद है कि रुबूबियत और रहमत का मुक़्तज़ा यही है।

●●●

1-न्याय, बदला।

(6)

اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ

इह्दिनस्-सिरातल्-मुस्तक़ीम

हिदायत

"हिदायत" के मअ़्ना रहनुमाई करने, राह दिखाने, राह पर लगा देने के हैं। इज्मालन[1] इसका ज़िक्र ऊपर गुज़र चुका है। यहाँ हम चाहते हैं हिदायत के मुख़्तलिफ़ मरातिब व अक़्साम पर नज़र डालें जिनका क़ुरआने हकीम ने ज़िक्र किया है और जिन में से एक ख़ास मर्तबा वह्यो-नुबुव्वत की हिदायत का है।

तक्वीने वुजूद के मरातिबे अरबा[2]

तुम अभी पढ़ चुके हो कि ख़ुदा की रुबूबियत ने जिस तरह मख़्लूक़ात को उनके मुनासिबे हाल जिस्म व क़ुवा दिए हैं, इसी तरह उनकी हिदायत का फ़ित्री सामान भी मुहैया कर दिया है। फ़ित्रत की यही हिदायत है जो हर वुजूद को ज़िन्दगी व मईशत की राह पर लगाती और ज़रूरियते ज़िन्दगी की जुस्तुजू में रहनुमा होती है। अगर फ़ित्रत की ये हिदायत मौजूद न होती तो मुमकिन न था कि कोई मख़्लूक़ भी ज़िन्दगी व बक़ा का सामान बहम पहुँचा सकती। चुनांचे क़ुरआन ने जा-बजा इस हक़ीक़त पर तवज्जोह दिलाई है। वो कहता है: हर वुजूद के बनने और दर्जा-ए-तक्मील तक पहुँचने के मुख़्तलिफ़ मरातिब हैं और उनमें आख़िरी मर्तबा हिदायत का मर्तबा है। सूरए अअ़्ला में बित्तरतीब चार मर्तबों का ज़िक्र किया है :

1-सारांश, खुलासा। 2-चार मर्तबे।

वो परवरदिगार जिसने हर चीज़ पैदा की, फिर उसे दुरुस्त किया, फिर एक अन्दाज़ा ठहरा दिया, फिर उस पर राहे (अ़मल) खोल दी। (87: 2-3)	اَلَّذِیْ خَلَقَ فَسَوّٰی ٥ وَالَّذِیْ قَدَّرَ فَهَدٰی ٥ (۸۷: ۲-۳)

यानी तक्वीने वुजूद के चार मर्तबे हुए: तख़्लीक़[1], तस्विया[2], तक़दीर[3], हिदायत[4]।

'तख़्लीक़' के मअ़्ना पैदा करने के हैं। ये बात कि काइनाते ख़िल्क़त और उसके हर वुजूद का मवाद अ़दम से वुजूद में आ गया, तख़्लीक़ है।

'तस्विया' के मअ़्ना ये हैं कि एक चीज़ को जिस तरह होना चाहिए, ठीक-ठीक उसी तरह दुरुस्त और आरास्ता कर देना।

'तक़दीर' के मअ़्ना अन्दाज़ा ठहरा देने के हैं और इसकी तशरीह ऊपर गुज़र चुकी है।

'हिदायत' से मक़सूद ये है कि हर वुजूद पर उसकी ज़िन्दगी व मईशत की राह खोल दी जाए और इसकी तशरीह भी रुबूबियत के मब्हस में गुज़र चुकी है।

मसलन मख़्लूक़ात में एक ख़ास क़िस्म परिन्द की है :

1- ये बात कि उनका माद्दए ख़िल्क़त ज़ुहूर में आ गया, तख़्लीक़ है।

2- ये बात कि उनके तमाम ज़ाहिरी व बातिनी क़ुवा इस तरह बना दिए गए कि ठीक-ठीक क़वाम व एतिदाल की हालत पैदा

1-सृजन। 2-ठीक-दुरुस्त करना। 3-नियति, अंदाज़ा ठहराना। 4-मार्ग-दर्शन।

हो गई, तस्विया है।

3- ये बात कि उनके ज़ाहिरी व बातिनी क़ुवा के आमाल के लिए एक ख़ास तरह का अन्दाज़ा ठहरा दिया गया है जिससे वो बाहर नहीं जा सकते, तक़दीर है, मसलन ये कि हवा में उड़ेंगे, मछलियों की तरह पानी में तैरेंगे नहीं।

4- ये बात कि उनके अन्दर विज्दान व हवास की रौशनी पैदा हो गई जो उन्हें ज़िन्दगी व बक़ा की राहें दिखाती और सामने हयात के तलब व हुसूल में रहनुमाई करती है, हिदायत है।

क़ुरआन कहता है: ख़ुदा की रुबूबियत का मुक़्तज़ा यही था कि जिस तरह उसने हर वुजूद को उसका जाम-ए-हस्ती अ़ता फ़रमाया और उसके ज़ाहिरी व बातिनी क़ुवा दुरुस्त कर दिए और उसके आमाल के लिए एक मुनासिबे हाल अन्दाज़ा ठहरा दिया, इसी तरह उसकी हिदायत का भी सरो-सामान कर देता :

قَالَ رَبُّنَا الَّذِیْٓ اَعْطٰی کُلَّ شَیْءٍ خَلْقَهٗ ثُمَّ هَدٰی ۝ (۲۰: ۵۰)

(मूसा ने) कहा : हमारा परवरदिगार वो है जिसने हर चीज़ को उसकी बनावट दी फिर उस पर राहे-अ़मल खोल दी। (20: 50)

क़ुरआन ने हज़रत इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) और उनकी क़ौम का जो मुकालमा जा-बजा नक़्ल किया है, उसमें हज़रत इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) अपने अ़क़ीदे का एलान करते हुए कहते हैं :

وَاِذْ قَالَ اِبْرٰهِیْمُ لِاَبِیْهِ وَقَوْمِهٖ

और जब इब्राहीम ने अपने बाप और क़ौम से कहा था: तुम

जिन (देवताओं) की परस्तिश करते हो, मुझे उनसे कोई सरोकार नहीं। मेरा अगर रिश्ता है तो उस ज़ात से जिसने मुझे पैदा किया है और वही मेरी रहनुमाई करेगी। (43: 26-27)	اِنَّنِیۡ بَرَآءٌ مِّمَّا تَعۡبُدُوۡنَ ۝ اِلَّا الَّذِیۡ فَطَرَنِیۡ فَاِنَّهٗ سَیَهۡدِیۡنِ ۝ (۴۳: ۲۶ـ۲۷)

اَلَّذِیۡ فَطَرَنِیۡ فَاِنَّهٗ سَیَهۡدِیۡنِ यानी जिस ख़ालिक़ ने मुझे जिस्म व वुजूद अ़ता फ़रमाया है, ज़रूरी है कि उसने मेरी हिदायत का भी सामान कर दिया हो। सूरः शुअ़रा में यही बात ज़्यादा वज़ाहत के साथ बयान की गई है :

जिस परवरदिगार ने मुझे पैदा किया है, वही मेरी हिदायत करेगा, और फिर वही है जो मुझे खिलाता और पिलाता है, और जब बीमार हो जाता हूँ तो शिफ़ा बख़्शता है। (26: 78-80)	اَلَّذِیۡ خَلَقَنِیۡ فَهُوَ یَهۡدِیۡنِ ۝ وَالَّذِیۡ هُوَ یُطۡعِمُنِیۡ وَیَسۡقِیۡنِ ۝ وَاِذَا مَرِضۡتُ فَهُوَ یَشۡفِیۡنِ ۝ (۲۶: ۷۸ـ۸۰)

यानी जिस परवरदिगार की परवरदिगारी ने मेरी तमाम ज़रूरियात ज़िन्दगी का सामान कर दिया है, जो मुझे भूख के लिए गिज़ा, प्यास के लिए पानी और बीमारी में शिफ़ा अ़ता फ़रमाता है, क्यों कर मुमकिन है कि उसने मुझे पैदा तो कर दिया हो, लेकिन मेरी हिदायत का सामान न किया हो? अगर उसने मुझे पैदा किया है तो यक़ीनन वही है जो तलबो-सई में मेरी रहनुमाई भी करे।

सूर: साफ़्फ़ात में यही मतलब इन लफ़्ज़ों में अदा किया गया है :

और (इब्राहीम ने) कहा: मैं (हर तरफ़ से कट कर) अपने परवरदिगार का रुख़ करता हूँ, वो मेरी हिदायत करेगा। (37: 99)	وَقَالَ اِنِّیْ ذَاهِبٌ اِلٰی رَبِّیْ سَیَهْدِیْنِ ○ (٩٩:٣٧)

'रब्बी' के लफ़्ज़ पर ग़ौर करो! वो मेरा 'रब' है और जब वो 'रब' है तो ज़रूरी है कि वही मुझ पर राहे अ़मल भी खोल दे।

हिदायत के इब्तिदाई तीन मर्तबे

फिर हिदायत के भी मुख़्तलिफ़ मरातिब हैं जो हम हैवानात में महसूस करते हैं :

सबसे पहला मर्तबा विज्दान[1] की हिदायत का है। विज्दान तबीअ़ते हैवानी का फ़ित्री और अंदुरूनी इल्हाम है। हम देखते हैं कि एक बच्चा पैदा होते ही ग़िज़ा के लिए रोने लगता है और फिर बग़ैर इसके कि ख़ारिज की कोई रहनुमाई उसे मिली हो, माँ की छाती मुँह में लेते ही उसे चूसता और अपनी ग़िज़ा हासिल कर लेता है।

विज्दान के बाद हवास की हिदायत का मर्तबा है और वो इससे बुलन्द-तर है। ये हमें देखने, सुनने, चखने, छूने और सूंघने की क़ुव्वतें बख़्शती है और इन्हीं के ज़रिये हम ख़ारिज का इल्म हासिल करते हैं।

1-अवचेतन, अंत: करण, अंत: बोध।

हिदायते फ़ित्रत के ये दोनों मर्तबे इन्सान और हैवान सबके लिए हैं, लेकिन जहाँ तक इन्सान का तअ़ल्लुक़ है, हम देखते हैं कि एक तीसरा मर्तब-ए-हिदायत भी मौजूद है और वो अ़क्ल की हिदायत है। फ़ित्रत की यही हिदायत है जिसने इन्सान के आगे ग़ैर महदूद तरक़्क़ियात का दरवाज़ा खोल दिया है और उसे काइनाते अर्ज़ी की तमाम मख़्लूक़ात का हासिल और ख़ुलासा बना दिया है।

विज्दान की हिदायत इसमें सई व तलब का वलवला पैदा करती है, हवास उसके लिए मालूमात ब-हम पहुँचाते हैं और अ़क्ल नताइज व अहकाम मुरत्तब करती है। हैवानात को इस आख़िरी मर्तबे की ज़रूरत न थी, इसलिए उनका क़दम विज्दान और हवास से आगे नहीं बढ़ा, लेकिन इन्सान में ये तीनों मर्तबे जमा हो गए।

जौहरे अ़क्ल क्या है? दरअसल उसी क़ुव्वत की एक तरक़्क़ी-याफ़्ता हालत है जिसने हैवानात में विज्दान और हवास की रौशनी पैदा कर दी है। जिस तरह इन्सान का जिस्म अज्सामे अर्ज़ी की सबसे आला कड़ी है, इसी तरह उसकी मअ़नवी क़ुव्वत भी तमाम मअ़नवी क़ुव्वतों का बरतरीन जौहर है। रूहे हैवानी का वो जौहरे इदराक जो नबातात में मख़्फ़ी और हैवानात के विज्दानो-मशाइर में नुमायाँ था, इन्सान के मर्तबे में पहुँच कर दर्जे-ए-कमाल तक पहुँच गया और जौहरे अ़क्ल के नाम से पुकारा गया।

हर मर्तब-ए-हिदायत एक ख़ास हद से आगे रहनुमाई नहीं कर सकता

फिर हम देखते हैं कि हिदायते फ़ित्रत के इन तीनों मर्तबों में से हर मर्तबा अपनी क़ुव्वतो-अ़मल का एक ख़ास दायरा रखता है,

उससे आगे नहीं बढ़ सकता। और अगर उस मर्तबे से एक दूसरा बुलन्द-तर मर्तबा मौजूद न होता तो हमारी मअ़नवी क़ुव्वतें इस हद तक तरक़्क़ी न कर सकतीं जिस हद तक फ़ित्रत की रहनुमाई से तरक़्क़ी कर रही हैं।

विज्दान की हिदायत हम में तलबो-सई का जोश पैदा करती है और मतलूबाते ज़िन्दगीत की राह पर लगाती है, लेकिन हमारे वुजूद से बाहर जो कुछ मौजूद है उसका इदराक हासिल नहीं कर सकती। ये काम मर्तब-ए-हवास की हिदायत का है। विज्दान की रहनुमाई जब दरमांदा हो जाती है तो हवास की दस्तगीरी नुमायाँ होती है, आँख देखती है, कान सुनता है, ज़बान चखती है, हाथ छूता है, नाक सूंघती है और इस तरह हम अपने वुजूद से बाहर की तमाम महसूस अशिया का इदराक हासिल कर लेते हैं।

लेकिन हवास की हिदायत भी एक ख़ास हद तक ही काम दे सकती है, उससे आगे नहीं बढ़ सकती। आँख देखती है, मगर सिर्फ़ उसी हालत में जबकि देखने की तमाम शर्तें मौजूद हों, अगर कोई शर्त भी न पाई जाए मसलन रौशनी न हो या फ़ासिला ज़्यादा हो तो हम आँख रखते हुए भी एक मौजूद चीज़ को बराहे-रास्त नहीं देख सकते। अ़लावा-बरीं हवास की हिदायत सिर्फ़ इतना ही कर सकती है कि अशिया का एहसास पैदा कर दे, लेकिन मुजर्रद एहसास काफ़ी नहीं है। हमें इस्तिंबात व इस्तिंताज की ज़रूरत है, अहकाम की ज़रूरत है, कुल्लियात की ज़रूरत है और ये काम अ़क़्ल की हिदायत का है। वो उन तमाम मुदरिकात को जो हवास के ज़रिये हासिल होती हैं, तरतीब देती है और उनसे अहकाम व कुल्लियात का इस्तिंबात करती है।

हर मर्तब-ए-हिदायत अपनी तस्हीह व निगरानी में बालातर मर्तब-ए-हिदायत का मोहताज है

अ़लावा-बरीं[1] जिस तरह विज्दान की निगरानी के लिए हवास व मशाइर की ज़रूरत थी, इसी तरह हवास की तस्हीह व निगरानी के लिए अ़क्ल की ज़रूरत हुई। हवास का ज़रिय-ए-इदराक न सिर्फ़ महदूद ही है, बल्कि बसा-औक़ात ग़लती व गुमराही से भी महफ़ूज़ नहीं। हम दूर से एक चीज़ देखते हैं और महसूस करते हैं कि एक सियाह नुक्ते से ज़्यादा हुज्म नहीं रखती, हालाँकि वो एक अ़ज़ीमुश-शान गुंबद होता है। हम बीमारी की हालत में शहद जैसी मीठी चीज़ चखते हैं, लेकिन हमारा हास्स-ए-ज़ौक़ यक़ीन दिलाता है कि मज़ा कड़वा है। हम तालाब में एक लकड़ी का अ़क्स देखते हैं, लकड़ी मुस्तक़ीम[2] होती है, लेकिन अ़क्स में टेढ़ी दिखाई देती है। बारहा ऐसा होता है कि किसी आ़रिज़े की वजह से कान बजने लगते हैं और हमें ऐसी सदाएँ सुनाई देती हैं जिनका ख़ारिज में कोई वुजूद नहीं। अगर मर्तब-ए- हवास से एक बुलन्दत-तर मर्तब-ए-हिदायत का वुजूद न होता तो मुमकिन न था कि हम हवास की इन दर-मांदगियों में हक़ीक़त का सुराग़ पा सकते। लेकिन इन तमाम हालतों में अ़क्ल की हिदायत नमूदार होती है, वो हवास की दर-मांदगियों में हमारी रहनुमाई करती है, वो हमें बताती है कि सूरज एक अ़ज़ीमुश-शान कुरा है, अगर्चे हमारी आँख उसे एक सुनहरी थाल से ज़्यादा महसूस नहीं करती। वो हमें बतलाती है कि शहद का मज़ा हर हाल में मीठा है और अगर हमें कड़वा महसूस हुआ है तो ये इसलिए है

1-इसके अतिरिक्त। 2-सीधी।

कि हमारे मुँह का मज़ा बिगड़ गया है। इसी तरह वो हमें बतलाती है कि बाज़ औक़ात खुश्की बढ़ जाने से कान बजने लगते हैं और उस हालत में जो सदाएँ सुनाई देती हैं वो ख़ारिज की सदाएँ नहीं होतीं, ख़ुद हमारे ही दिमाग़ की गूंज होती है।

हिदायते फ़ित्रत का चौथा मर्तबा

लेकिन जिस तरह विज्दान के बाद हवास की हिदायत नमूदार हुई, क्योंकि विज्दान की हिदायत एक ख़ास हद से आगे नहीं बढ़ सकती थी, और जिस तरह हवास के बाद अ़क्ल की हिदायत नमूदार हुई, क्योंकि हवास की हिदायत भी एक ख़ास हद से आगे नहीं बढ़ सकती थी, ठीक इसी तरह हम महसूस करते हैं कि अ़क्ल की हिदायत के बाद भी हिदायत का कोई मज़ीद मर्तबा होना चाहिए, क्योंकि अ़क्ल की हिदायत भी एक ख़ास हद से आगे नहीं बढ़ सकती और उसके दायर-ए-अ़मल के बाद भी एक दायरा बाक़ी रह जाता है। अ़क्ल की कार-फ़रमाई जैसी कुछ और जितनी कुछ भी है महसूसात के दायरे में महदूद है, यानी वो सिर्फ़ इसी हद तक काम दे सकती है जिस हद तक हमारे हवासे ख़मसा मालूमात बहम पहुँचाते रहते हैं। लेकिन महसूसात की सरहद से आगे क्या है? उस पर्दे के पीछे क्या है जिससे आगे हमारी चश्मे हवास नहीं बढ़ सकती? यहाँ पहुँच कर अ़क्ल यक-क़लम दरमांदा हो जाती है, उसकी हिदायत हमें कोई रौशनी नहीं दे सकती।

अ़लावा-बरीं जहाँ तक इन्सान की अ़मली ज़िन्दगी का तअ़ल्लुक़ है, अ़क्ल की हिदायत न तो हर हाल में काफ़ी है, न हर हाल में मोअस्सिर। नफ़्से इन्सानी तरह-तरह की ख़्वाहिशों और

जज़्बों से कुछ इस तरह मक़्हूर वाक़े हुआ है कि जब कभी अ़क़्ल और जज़्बात में कश-मकश होती है तो अक्सर हालतों में फ़त्ह जज़्बात ही के लिए होती है। बसा-औक़ात अ़क़्ल हमें यक़ीन दिलाती है कि फुलाँ फ़े'ल मुज़िर और मोहलिक है, लेकिन जज़्बात हमें तरग़ीब देते हैं और हम उसके इरतिकाब से अपने आप को नहीं रोक सकते। अ़क़्ल की बड़ी से बड़ी दलील भी हमें ऐसा नहीं बना दे सकती कि ग़ुस्से की हालत में बेक़ाबू न हो जाएँ और भूख की हालत में मुज़िर ग़िज़ा की तरफ़ हाथ न बढ़ाएँ।

अच्छा ! अगर ख़ुदा की रुबूबियत के लिए ज़रूरी था कि वो हमें विज्दान के साथ हवास भी दे, क्योंकि विज्दान की हिदायत एक ख़ास हद से आगे नहीं बढ़ सकती, और अगर ज़रूरी था कि हवास के साथ अ़क़्ल भी दे, क्योंकि हवास की हिदायत भी एक ख़ास हद से आगे नहीं बढ़ सकती तो क्या ये ज़रूरी न था कि अ़क़्ल के साथ कुछ और भी दे? क्योंकि अ़क़्ल की हिदायत भी एक ख़ास हद से आगे नहीं बढ़ सकती और आमाल की दुरुस्तगी व इंज़िबात के लिए काफ़ी नहीं (105) अगर उसने विज्दान के साथ हवास भी दिए ताकि विज्दान की लग़ज़िशों में निगरानी करें और अगर हवास के साथ अ़क़्ल भी दी ताकि हवास की ग़लतियों में क़ाज़ी[1] व हाकिम[2] हो, तो क्या ज़रूरी न था कि अ़क़्ल के साथ कुछ और भी देता? ताकि अ़क़्ल की दर-मांदगियों में रहनुमा और फ़ैसला-कुन होता।

क़ुरआन कहता है कि ज़रूरी था, और इसी लिए अल्लाह की रुबूबियत ने इन्सान के लिए एक चौथे मर्तब-ए-हिदायत का भी सामान कर दिया। यही मर्तब-ए-हिदायत है जिसे वो वह्यो-नुबुव्वत

1-निर्णयकर्त्ता, न्यायक। 2-नियंत्रक, प्रशासक।

की हिदायत से ताबीर करता है।

चुनांचे हम देखते हैं उसने जा-बजा उन मरातिबे हिदायत का ज़िक्र किया है और उन्हें रुबूबियते-इलाही की सबसे बड़ी बख़्शिश व मरहमत क़रार दिया है :

إِنَّا خَلَقْنَا الْإِنسَانَ مِن نُّطْفَةٍ أَمْشَاجٍ ۖ نَّبْتَلِيهِ فَجَعَلْنَاهُ سَمِيعًا بَصِيرًا ۝ إِنَّا هَدَيْنَاهُ السَّبِيلَ إِمَّا شَاكِرًا وَإِمَّا كَفُورًا ۝

(٧٦: ٢-٣)

हम ने इन्सानों को मिले-जुले नुत्फ़े से पैदा किया जिसे (एक के बाद एक) मुख़्तलिफ़ हालतों में पलटते हैं, फिर उसे ऐसा बना दिया कि सुनने वाला और देखने वाला वुजूद हो गया। हम ने उस पर राहे अ़मल खोल दी, अब ये उसका काम है कि या तो शुक्र करने वाला हो या ना शुक्रा (यानी या तो ख़ुदा की दी हुई क़ुव्वतें ठीक-ठीक इस्तेमाल में लाए और फ़लाहो-सआ़दत की राह इख़्तियार करे या उनसे काम न ले और गुमराह हो जाए।) (76: 2-3)

أَلَمْ نَجْعَل لَّهُ عَيْنَيْنِ ۝ وَلِسَانًا وَشَفَتَيْنِ ۝ وَهَدَيْنَاهُ النَّجْدَيْنِ ۝ (٩٠: ٨-١٠)

क्या हमने उसे एक छोड़ दो-दो आँखें नहीं दे दी हैं (जिन से वो देखता है) और ज़बान और होंट नहीं दिए हैं (जो गोयाई का ज़रिया हैं) और क्या उसको

हमने (सआदत व शक़ावत की) दोनों राहें नहीं दिखा दीं? (90: 8-10)

وَجَعَلَ لَكُمُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ وَالْاَفْئِدَةَ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝ (۷۸:۱٦)

और अल्लाह ने तुम्हारे लिए सुनने और देखने के हवास पैदा कर दिए और सोचने के लिए दिल (यानी अ़क्ल)(106) ताकि तुम शुक्र गुज़ार हो (यानी ख़ुदा की दी हुई क़ुव्वतें ठीक तरीक़े पर काम में लाओ।) (16: 78)

इन आयात और इनकी हम-मअ़ना आयात में हवास और मशाइर और अ़क्लो-फ़िक्र की हिदायत की तरफ़ इशारात किए गए हैं, लेकिन वो तमाम मक़ामात जहाँ इन्सान की रूहानी सआ़दत व शक़ावत का ज़िक्र किया गया है, वह्यो-नुबुव्वत की हिदायत से मुतअ़ल्लिक़ हैं, मसलन :

اِنَّ عَلَيْنَا لَلْهُدٰى ۝ وَاِنَّ لَنَا لَلْاٰخِرَةَ وَالْاُوْلٰى ۝ (۹۲:۱۲-۱۳)

बिला-शुब्हा ये हमारा काम है कि हम रहनुमाई करें और यक़ीनन आख़िरत और दुनिया दोनों हमारे ही लिए हैं। (107) (92: 12-13)

وَ اَمَّا ثَمُوْدُ فَهَدَيْنٰهُمْ فَاسْتَحَبُّوا الْعَمٰى عَلَى الْهُدٰى (٤١:١٧)

और बाक़ी रही क़ौमे समूद तो उसे भी हमने राहे (हक़) दिखला दी थी, लेकिन उसने हिदायत की राह छोड़ कर

अंधेपन का शेवा पसन्द किया।

(41: 17)

وَالَّذِينَ جَاهَدُوا فِينَا لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا ؕ وَإِنَّ اللَّهَ لَمَعَ الْمُحْسِنِينَ ۝

(٦٩:٢٩)

और जिन लोगों ने हमारी राह में जाँ-फ़शानी[1] की तो ज़रूरी है कि हम भी उनपर अपनी राहें खोल दें। और बिला-शुब्हा अल्लाह उन लोगों का साथी है जो नेक अ़मल हैं।

(29: 69)

● ❋ ●

1-कोशिश।

اَلْـهُدٰى

अल-हुदा

चुनांचे इस सिलसिले में वो अल्लाह की एक ख़ास हिदायत का ज़िक्र करता है और उसे 'अल-हुदा' के नाम से पुकारता है, यानी 'अलिफ़ लाम' तारीफ़ के साथ :

قُلْ اِنَّ هُدَى اللّٰهِ هُوَالْهُدٰى ؕ وَاُمِرْنَا لِنُسْلِمَ لِرَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝ (٦: ٧١)

(ऐ पैग़म्बर इनसे) कह दो! यक़ीनन अल्लाह की हिदायत तो 'अल-हुदा' है और हम सबको (इसी बात का) हुक्म दिया गया है कि तमाम जहानों के परवरदिगार के आगे सरे-अ़बूदियत झुका दें। (6: 71)

وَلَنْ تَرْضٰى عَنْكَ الْيَهُوْدُ وَلَاالنَّصٰرٰى حَتّٰى تَتَّبِعَ مِلَّتَهُمْ ط قُلْ اِنَّ هُدَى اللّٰهِ هُوَ الْهُدٰى ط (٢: ١٢٠)

और (याद रखो!) यहूदी तुम से ख़ुश होने वाले नहीं जब तक कि तुम उनकी मिल्लत की पैरवी न करो, और यही हाल नसारा का है। (ऐ पैग़म्बर तुम इनसे) कह दो! अल्लाह की हिदायत की राह तो वही है जो 'अल-हुदा' है (यानी हिदायत की हक़ीक़ी और आ़लमगीर राह) (108)। (2: 120)

ये 'अल-हुदा' यानी हिदायत की एक ही और हक़ीक़ी राह कौन सी है? क़ुरआन कहता है: वह्ये इलाही की आलमगीर हिदायत है जो अव्वल दिन से दुनिया में मौजूद है और बिला तफ़रीक़ व इम्तियाज़ तमाम नौए इन्सानी के लिए है। वो कहता है: जिस तरह ख़ुदा ने विज्दान, हवास और अक़्ल की हिदायत में न तो नस्ल व क़ौम का इम्तियाज़ रखा न ज़मानो-मकान[1] का, इसी तरह उसकी हिदायते वह्य भी हर तरह के तफ़रिक़े व इम्तियाज़ से पाक है। वो सब के लिए है और को दी गई है। और उस एक हिदायत के सिवा और जितनी हिदायतें भी इन्सानों ने समझ रखी हैं, सब इन्सानी बनावट की राहें है। ख़ुदा की ठहराई हुई राह सिर्फ़ यही एक राह है।

इसी लिए वो हिदायत की उन तमाम सूरतों से यक-क़लम इनकार करता है जो इस अस्ल से मुन्हरिफ़ हो कर तरह-तरह की मज़हबी गिरोह बन्दियों और मुताख़ालिफ़[2] टोलियों में बट गई हैं और सआदत व निजात की आलमगीर हक़ीक़त ख़ास-ख़ास गिरोहों और हल्क़ों की मीरास बना ली गई है। वो कहता है: इन्सानी बनावट की ये अलग-अलग राहें हिदायत की राह नहीं हो सकतीं। हिदायत की राह तो वही आलमगीर हिदायत की राह है। इसी आलमगीर हिदायते वह्य को वो 'अद्दीन' के नाम से पुकारता है, यानी नौए इन्सानी के लिए हक़ीक़ी दीन, और इसी का नाम उसकी ज़बान में 'अल-इस्लाम' है।

●✻●

1-देश-काल। 2-विरोधी।

वह्दते दीन की अस्ले अज़ीम और क़ुरआने हकीम

ये अस्ले अज़ीम क़ुरआन की दावत की सबसे पहली बुनियाद है। वो जो कुछ भी बताना चाहता है तमाम-तर इसी अस्ल पर मब्नी है। अगर इस अस्ल से क़तए नज़र कर ली जाए तो इसका तमाम कारख़ान-ए-दावत दर्हम-बर्हम हो जाए। लेकिन तारीख़े आलम के अजाइब तसर्रुफ़ात में से ये वाक़िआ भी समझना चाहिए कि जिस दर्जा क़ुरआन ने इस अस्ल पर ज़ोर दिया था, इतना ही ज़्यादा दुनिया की निगाहों ने इससे एराज़ किया, हत्ताकि कहा जा सकता है: आज क़ुरआन की कोई बात भी दुनिया की नज़रों से इस दर्जा पोशीदा नहीं है जिस क़द्र कि ये अस्ले अज़ीम। अगर एक शख़्स हर तरह के ख़ारिजी असरात से ख़ालियुज़-ज़ेहन[1] होकर क़ुरआन का मुतालआ करे और उसके सफ़हात में जा-बजा इस अस्ले अज़ीम के क़तई और वाज़ेह एलानात पढ़े और फिर दुनिया की तरफ़ नज़र उठाए जो क़ुरआन की हक़ीक़त इससे ज़्यादा नहीं समझती कि बहुत सी मज़हबी गिरोह-बन्दियों की तरह वो भी एक मज़हबी गिरोह-बन्दी है तो यक़ीनन वो हैरान होकर पुकार उठेगा: या तो उसकी निगाहें उसको धोका दे रही हैं या दुनिया हमेशा आँखें खोले बग़ैर ही अपने फ़ैसले सादिर कर दिया करती है।

दीन की हक़ीक़त और क़ुरआन की तसरीहात

इस हक़ीक़त की तौज़ीह के लिए ज़रूरी है कि एक मर्तबा

1-ख़ाली मास्तिष्क, निरपेक्ष।

तफ़्सील के साथ ये बात वाज़ेह कर दी जाए कि जहाँ तक वह्यो-नुबुव्वत का यानी दीन का तअल्लुक़ है, क़ुरआन की दावत क्या है और किस राह की तरफ़ नौए इन्सानी को ले जाना चाहती है ?

जमइय्यते बशरी की इब्तिदाई वह्दत, फिर इख़्तिलाफ़ और हिदायते वह्य का ज़ुहूर

इस बाब में क़ुरआन ने जो कुछ बयान किया है उसका ख़ुलासा हस्बेज़ैल है :

वो कहता है: इब्तिदा में इन्सानी जमइय्यत का ये हाल था कि लोग क़ुदरती ज़िन्दगी बसर करते थे और उनमें न तो किसी तरह का बाहमी इख़्तिलाफ़ था न किसी तर की मुख़ासमत[1]। सबकी ज़िन्दगी एक ही तरह की थी और सब अपनी क़ुदरती यगानगत पर क़ाने थे। फिर ऐसा हुआ कि नस्ले इन्सानी की कसरत और ज़रूरियाते मईशत की वुस्अत से तरह-तरह के इख़्तिलाफ़ात पैदा हो गए और इख़्तिलाफ़ात ने तफ़रिक़ा व इन्क़िताअ़ और ज़ुल्मो-फ़साद की सूरत इख़्तियार कर ली। हर गिरोह दूसरे गिरोह से नफ़रत करने लगा और हर ज़बर्दस्त[2] ज़ेरदस्त[3] के हुक़ूक़ पामाल करने लगा। जब ये सूरते हाल पैदा हुई तो ज़रूरी हुआ कि नौए इन्सानी की हिदायत और अ़दलो-सदाक़त के क़याम के लिए वह्ये इलाही की रौशनी नमूदार हो। चुनांचे ये रौशनी नमूदार हुई और ख़ुदा के रसूलों की दावतो-तब्लीग़ का सिलसिला क़ायम हो गया। वो उन तमाम रहनुमाओं को, जिनके ज़रिये इस हिदायत का सिलसिला क़ायम हुआ, 'रसूल' के नाम से ताबीर करता है, क्योंकि वो ख़ुदा की सच्चाई का

1-विरोध, शत्रुता, दुश्मनी। 2-बलशाली। 3-शक्तिहीन।

पैग़ाम पहुँचाने वाले थे और 'रसूल' के मअ़ना पैग़ाम पहुँचाने वाले के हैं :

وَمَا كَانَ النَّاسُ اِلَّآ اُمَّةً وَّاحِدَةً فَاخْتَلَفُوْا ط وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ مِنْ رَّبِّكَ لَقُضِيَ بَيْنَهُمْ فِيْمَا فِيْهِ يَخْتَلِفُوْنَ ٥

(١٩:١٠)

और इब्तिदा में तमाम इन्सानों का एक ही गिरोह था (अलग-अलग गिरोहों में मुतफ़र्रिक़ न थे) फिर ऐसा हुआ कि वो बाहम-दिगर[1] मुख़्तलिफ़ हो गए। और अगर इस बारे में तुम्हारे परवरदिगार ने पहले से एक फ़ैसला न कर दिया होता (यानी ये कि इन्सानों में इख़्तिलाफ़ होगा और मुख़्तलिफ़ राहें लोग इख़्तियार करेंगे) तो जिन बातों में लोग इख़्तिलाफ़ करते हैं, उनका (यहीं दुनिया में) फ़ैसला कर दिया जाता। (10: 19)

كَانَ النَّاسُ اُمَّةً وَّاحِدَةً فَبَعَثَ اللّٰهُ النَّبِيّٖنَ مُبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ وَاَنْزَلَ مَعَهُمُ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ لِيَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ فِيْمَا اخْتَلَفُوْا فِيْهِ ط (٢:٢١٣)

इब्तिदा में तमाम इन्सान एक ही गिरोह थे (फिर उन में इख़्तिलाफ़ पैदा हुआ) पस अल्लाह ने (यके बाद दीगरे) नबियों को मबऊस किया। वो (नेक अ़मली के नताइज की) बशारत देते और (बद अ़मली के नताइज से) मुतनब्बह[2] करते

1-परस्पर, आपस में। 2-सचेत करते।

नीज़ उनके साथ 'अल-किताब' (यानी वह्ये इलाही से लिखी जाने वाली तालीम) नाज़िल की, ताकि जिन बातों में लोग इख़्तिलाफ़ करने लगे थे, उनमें वो फ़ैसला कर देने वाली हो। (2: 213)

उमूमे हिदायत

ये हिदायत किसी ख़ास मुल्क व क़ौम या अ़हद के लिए मख़्सूस न थी, बल्कि तमाम नौअ़े इन्सानी[1] के लिए थी। चुनांचे हर ज़ामने और हर मुल्क में यक्साँ तौर पर इसका ज़ुहूर हुआ। क़ुरआन कहता है: दुनिया का कोई गोशा नहीं जहाँ नस्ले इन्सानी आबाद हुई हो और ख़ुदा का कोई रसूल मबऊस[2] न हुआ हो :

وَاِنْ مِّنْ اُمَّـةٍ اِلَّا خَلَا فِيْهَا نَـذِيْرٌ ○

(٢٧ :٣٥)

और कोई क़ौम दुनिया की ऐसी नहीं जिस में (बद-अ़मलियों[3] के नताइज से) मुतनब्बह करने वाला (ख़ुदा का कोई रसूल) न गुज़रा हो। (35: 27)

اِنَّمَآ اَنْتَ مُنْذِرٌ وَّلِـكُلِّ قَـوْمٍ هَـادٍ ○

(٧ :١٣)

(ऐ पैग़म्बर!) बिला-शुब्हा तुम इसके सिवा और क्या हो कि (बद अ़मलियों के नताइज से) मुतनब्बह करने वाले हो और दुनिया में हर क़ौम के लिए एक

1-मानव जाति। 2-भेजना। 3-बुरे कर्मों।

हिदायत करने वाला हुआ है। (13: 7)

और हर क़ौम के लिए एक रसूल है। पस जब रसूल ज़ाहिर होता है तो तमाम बातों का इन्साफ़ के साथ फ़ैसला कर दिया जाता है। (10: 47)	وَلِكُلِّ أُمَّةٍ رَّسُولٌ ۖ فَإِذَا جَآءَ رَسُولُهُمْ قُضِيَ بَيْنَهُم بِالْقِسْطِ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ۝ (١٠:٤٧)

नस्ले इन्सानी के इब्तिदाई अ़हद और ख़ुदा के रसूल

वो कहता है: नस्ले इन्सानी के इब्तिदाई अ़हदों में कितने ही पैग़म्बर गुज़रे हैं जो यके-बाद दीगर मबऊस हुए और क़ौमों को पैग़ामे हक़ पहुँचाया :

और कितने ही नबी हैं जो हमने पहलों में (यानी इब्तिदाई अ़हद की क़ौमों में) मबऊस किये। (43: 6)	وَكَمْ أَرْسَلْنَا مِن نَّبِيٍّ فِي الْأَوَّلِينَ ۝ (٤٣:٦)

अ़दले इलाही और बिअ़सते रुसुल

वो कहता है: ये बात अ़दले इलाही[1] के ख़िलाफ़ है कि एक गिरोह अपने आमाले बद के लिए जवाब-देह ठहराया जाए, हालाँकि उसकी हिदायत के लिए कोई रसूल न भेजा गया हो :

और (हमारा क़ानून ये है कि) जब तक हम एक पैग़म्बर	وَمَا كُنَّا مُعَذِّبِينَ حَتَّىٰ

1-ईश्वरीय न्याय।

نَبۡعَثَ رَسُوۡلًا ۝ (١٥:١٧)

मबऊस करके राहे हिदायत दिखा न दें, उस वक़्त तक (पादाशे अ़मल में) अ़ज़ाब देने वाले नहीं। (17: 15)

وَمَا كَانَ رَبُّكَ مُهۡلِكَ الۡقُرٰى حَتّٰى يَبۡعَثَ فِىۡۤ اُمِّهَا رَسُوۡلًا يَّتۡلُوۡا عَلَيۡهِمۡ اٰيٰتِنَا ۚ وَمَا كُنَّا مُهۡلِكِى الۡقُرٰۤى اِلَّا وَاَهۡلُهَا ظٰلِمُوۡنَ ۝ (٥٩:٢٨)

और (याद रखो!) तुम्हारे परवरदिगार का क़ानून ये है कि वो कभी इन्सान की बस्तियों को (पादाशे अ़मल में) हलाक नहीं करता, जबतक कि उनमें एक पैग़म्बर मबऊस न कर दे और वो ख़ुदा की आयतें पढ़ कर न सुना दे। और हम कभी बस्तियों को हलाक करने वाले नहीं, मगर सिर्फ़ उसी हालत में कि उनके बाशिन्दों ने ज़ुल्म का शेवा इख़्तियार कर लिया हो (109)। (28: 59)

बाज़ रसूलों का ज़िक्र किया गया, बाज़ का नहीं किया गया

ख़ुदा के इन रसूलों और दीने इलाही के दाइयों[1] में से बाज़ का ज़िक्र क़ुरआन में किया गया है, बाज़ का नहीं किया गया:

وَلَقَدۡ اَرۡسَلۡنَا رُسُلًا مِّنۡ

और (ऐ पैग़म्बर!) हमने तुमसे पहले कितने ही पैग़म्बर मबऊस

1-सच्चे रास्ते की तरफ़ बुलाने वाले।

قَبْلِكَ مِنْهُمْ مَّنْ قَصَصْنَا عَلَيْكَ وَمِنْهُمْ مَّنْ لَّمْ نَقْصُصْ عَلَيْكَ ط

(٧٨ :٤٠)

किये, उनमें से कुछ ऐसे हैं जिनके हालात तुम्हें सुनाए हैं और कुछ ऐसे हैं जिनके हालात नहीं सुनाए (यानी क़ुरआन में उनका ज़िक्र नहीं किया गया)। (40: 78)

बेशुमार क़ौमें और बेशुमार रसूल

क़ौमे-नूह और आद व समूद के बाद कितनी ही क़ौमें गुज़र चुकी हैं और उनमें कितने ही रसूल मबऊस हो चुके हैं जिनका ठीक-ठीक हाल अल्लाह ही को मालूम है :

اَلَمْ يَاْتِكُمْ نَبَؤُا الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ قَوْمِ نُوْحٍ وَّعَادٍ وَّثَمُوْدَ ط وَ الَّذِيْنَ مِنْۢ بَعْدِهِمْ ط لَا يَعْلَمُهُمْ اِلَّا اللّٰهُ ط جَآءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ فَرَدُّوْٓا اَيْدِيَهُمْ فِيْٓ اَفْوَاهِهِمْ

(٩ :١٤)

तुमसे पहले जो क़ौमें गुज़र चुकी हैं, क्या तुम तक उनकी ख़बर नहीं पहुँची? क़ौमे नूह, क़ौमे आद, क़ौमे समूद और वो क़ौमें जो इनके बाद हुईं जिनकी ठीक-ठीक तादाद अल्लाह ही को मालूम है। उन सबमें उनके पैग़म्बर सच्चाई की रोशनियों के साथ मबऊस हुए, मगर उन्होंने जेहल और सरकशी से उनकी तालीम उन्हीं पर लौटा दी और कान धरने से इनकार कर दिया। (14: 9)

हिदायत हमेशा एक ही रही और वो ईमान और अ़मले सालेह की दावत के सिवा कुछ न थी

फ़ित्रते इलाही की राह काइनाते हस्ती के हर गोशे में एक ही है। वो न तो एक से ज़्यादा हो सकती है न बाहम-दिगर मुख़्तलिफ़। पस ज़रूरी था कि ये हिदायत भी अव्वल दिन से एक ही होती और एक ही तरह पर तमाम इन्सानों को मुख़ातिब करती। चुनांचे क़ुरआन कहता है: ख़ुदा के जितने पैग़ाम्बर पैदा हुए, ख़्वाह वो किसी ज़माने और किसी गोशे में हुए हों, सबकी राह एक ही थी और सब ख़ुदा के एक ही आ़लमगीर क़ानूने सआ़दत की तालीम देने वाले थे। ये आ़लमगीर क़ानूने सआ़दत क्या है? ईमान और अ़मले सालेह का क़ानून है, यानी एक परवरदिगारे आ़लम की परस्तिश करना और नेक अ़मली की ज़िन्दगी बसर करना। इसके अ़लावा और इसके ख़िलाफ़ जो कुछ भी दीन के नाम से कहा जाता है, दीने हक़ीक़ी की तालीम नहीं है :

وَلَقَدْ بَعَثْنَا فِى كُلِّ اُمَّةٍ رَّسُوْلًا اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ وَاجْتَنِبُوا الطَّاغُوْتَ ج

(٣٦:١٦)

और बिला-शुब्हा हमने दुनिया की हर क़ौम में एक पैग़म्बर मबऊस किया (जिसकी तालीम ये थी) कि अल्लाह की इबादत करो और ताग़ूत से (यानी सरकश और शरीर[1] क़ुव्वतों के अग़वा से) इज्तिनाब करो। (16: 36)

1-बुरी।

قَبْلِكَ مِنْهُمْ مَّنْ قَصَصْنَا عَلَيْكَ وَمِنْهُمْ مَّنْ لَّمْ نَقْصُصْ عَلَيْكَ ؕ

(٧٨:٤٠)

किये, उनमें से कुछ ऐसे हैं जिनके हालात तुम्हें सुनाए हैं और कुछ ऐसे हैं जिनके हालात नहीं सुनाए (यानी क़ुरआन में उनका ज़िक्र नहीं किया गया)। (40: 78)

बेशुमार क़ौमें और बेशुमार रसूल

क़ौमे-नूह और आद व समूद के बाद कितनी ही क़ौमें गुज़र चुकी हैं और उनमें कितने ही रसूल मबऊस हो चुके हैं जिनका ठीक-ठीक हाल अल्लाह ही को मालूम है :

اَلَمْ يَاْتِكُمْ نَبَؤُا الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ قَوْمِ نُوْحٍ وَّعَادٍ وَّثَمُوْدَ ؕ وَ الَّذِيْنَ مِنْۢ بَعْدِهِمْ ؕ لَا يَعْلَمُهُمْ اِلَّا اللّٰهُ ؕ جَآءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ فَرَدُّوْا اَيْدِيَهُمْ فِيْۤ اَفْوَاهِهِمْ

(٩:١٤)

तुमसे पहले जो क़ौमें गुज़र चुकी हैं, क्या तुम तक उनकी ख़बर नहीं पहुँची? क़ौमे नूह, क़ौमे आद, क़ौमे समूद और वो क़ौमें जो इनके बाद हुईं जिनकी ठीक-ठीक तादाद अल्लाह ही को मालूम है। उन सबमें उनके पैग़म्बर सच्चाई की रोशनियों के साथ मबऊस हुए, मगर उन्होंने जेहल और सरकशी से उनकी तालीम उन्हीं पर लौटा दी और कान धरने से इनकार कर दिया। (14: 9)

हिदायत हमेशा एक ही रही और वो ईमान और अमले सालेह की दावत के सिवा कुछ न थी

फ़ित्रते इलाही की राह काइनाते हस्ती के हर गोशे में एक ही है। वो न तो एक से ज़्यादा हो सकती है न बाहम-दिगर मुख़्तलिफ़। पस ज़रूरी था कि ये हिदायत भी अव्वल दिन से एक ही होती और एक ही तरह पर तमाम इन्सानों को मुख़ातिब करती। चुनांचे क़ुरआन कहता है: ख़ुदा के जितने पैग़म्बर पैदा हुए, ख़्वाह वो किसी ज़माने और किसी गोशे में हुए हों, सबकी राह एक ही थी और सब ख़ुदा के एक ही आलमगीर क़ानूने सआदत की तालीम देने वाले थे। ये आलमगीर क़ानूने सआदत क्या है? ईमान और अमले सालेह का क़ानून है, यानी एक परवरदिगारे आलम की परस्तिश करना और नेक अमली की ज़िन्दगी बसर करना। इसके अलावा और इसके ख़िलाफ़ जो कुछ भी दीन के नाम से कहा जाता है, दीने हक़ीक़ी की तालीम नहीं है :

وَلَقَدْ بَعَثْنَا فِىْ كُلِّ اُمَّةٍ رَّسُوْلًا اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ وَاجْتَنِبُوا الطَّاغُوْتَ ج

(١٦:٣٦)

और बिला-शुब्हा हमने दुनिया की हर क़ौम में एक पैग़म्बर मबऊस किया (जिसकी तालीम ये थी) कि अल्लाह की इबादत करो और ताग़ूत से (यानी सरकश और शरीर[1] क़ुव्वतों के अग़वा से) इज्तिनाब करो। (16: 36)

1-बुरी।

और (ऐ पैग़म्बर!) हमने तुमसे पहले कोई रसूल दुनिया में नहीं भेजा मगर इस वह्य के साथ कि मेरे सिवा कोई माबूद नहीं, पस मेरी ही इबादत करो। (21: 25)

وَ مَآ اَرۡسَلۡنَا مِنۡ قَبۡلِكَ مِنۡ رَّسُوۡلٍ اِلَّا نُوۡحِیۡۤ اِلَیۡهِ اَنَّهٗ لَاۤ اِلٰهَ اِلَّاۤ اَنَا فَاعۡبُدُوۡنِ ۝ (۲۵:۲۱)

सबने एक ही दीन पर इकट्ठे रहने और तफ़रिक़ा व इख़्तिलाफ से बचने की तालीम दी

वो कहता है: दुनिया में कोई बानिये मज़हब भी ऐसा नहीं हुआ है जिसने एक ही दीन पर इकट्ठे रहने और तफ़रिक़ा व इख़्तिलाफ़ से बचने की तालीम न दी हो। सबकी तालीम यही थी कि ख़ुदा का दीन पिछड़े हुए इन्सानों को जमा कर देने के लिए है, अलग-अलग कर देने के लिए नहीं है। पस एक परवरदिगारे आ़लम की बन्दगी व नियाज़ में सब मुत्तहिद हो जाओ और तफ़रिक़ा व मुख़ासमत की जगह बाहमी मुहब्बत व यक-जेहती[1] की राह इख़्तियार करो।

और (देखो!) ये तुम्हारी उम्मत फ़िल-हक़ीक़त एक ही उम्मत है और मैं तुम सबका परवरदिगार हूँ, पस (मेरी अ़बूदियत व नियाज़ की राह में तुम सब एक हो जाओ और) नाफ़रमानी से बचो। (23: 52)

وَاِنَّ هٰذِهٖۤ اُمَّتُكُمۡ اُمَّةً وَّاحِدَةً وَّاَنَا رَبُّكُمۡ فَاتَّقُوۡنِ ۝ (۵۲:۲۳)

1-एकता।

वो कहता है: ख़ुदा ने तुम्हें एक ही जाम-ए-इन्सानियत दिया था, लेकिन तुम ने तरह-तरह के भेस और नाम इख़्तियार कर लिए और रिश्त-ए-इन्सानियत की वहदत सैंकड़ों टुकड़ों में बिखर गई। तुम्हारी नस्लें बहुत सी हैं, इसलिए तुम नस्ल के नाम पर एक दूसरे से अलग हो गए हो। तुम्हारे वतन बहुत से बन गए हैं, इसलिए इख़्तिलाफ़े वतन के नाम पर एक दूसरे से लड़ रहे हो। तुम्हारी क़ौमियतें बेशुमार हैं, इसलिए हर क़ौम दूसरी क़ौम से दस्तो-गिरेबाँ हो रही है। तुम्हारे रंग यक्साँ नहीं और ये भी बाहमी नफ़रत व इनाद का एक बड़ा ज़रिया बन गया है। तुम्हारी बोलियाँ मुख़्तलिफ़ हैं और ये भी एक दूसरे से जुदा रहने की बहुत बड़ी हुज्जत बन गई है। फिर इनके अ़लावा अमीरो-फ़क़ीर, नौकरो-आक़ा, वज़ी-ओ-शरीफ़, ज़ईफ़ो-क़वी, अदना व आला बेशुमार इख़्तिलाफ़ पैदा कर लिए गए हैं और सबका मन्शा यही है कि एक दूसरे से जुदा हो जाओ और एक दूसरे से नफ़रत करते रहो। ऐसी हालत में बतलाओ वो रिश्ता कौन सा रिश्ता है जो इतने इख़्तिलाफ़ात रखने पर भी इन्सानों को एक दूसरे से जोड़ दे और इन्सानियत का बिछड़ा हुआ घराना फिर अज़-सरे-नौ आबाद हो जाए? वो कहता है: सिर्फ़ एक ही रिश्ता बाक़ी रह गया है और वो ख़ुदा परस्ती का मुक़द्दस रिश्ता है। तुम कितने ही अलग-अलग हो गए हो, लेकिन तुम्हारे ख़ुदा अलग-अलग नहीं हो जा सकते। तुम सब एक ही परवरदिगार के बन्दे हो। तुम सबकी बन्दगी व नियाज़ के लिए एक ही माबूद की चौखट है। तुम बेशुमार इख़्तिलाफ़ात रखने पर भी एक ही रिश्तए अ़ब्दियत में जकड़े हुए हो। तुम्हारी कोई नस्ल हो, तुम्हारा कोई वतन हो, तुम्हारी कोई क़ौमियत हो, तुम किसी दर्जे में और किसी हल्क़े के इन्सान हो, लेकिन जब एक ही परवरदिगार के आगे सरे

नियाज़ झुका दोगे तो ये आसमानी रिश्ता तुम्हारे अर्ज़ी इख़्तिलाफ़ात मिटा देगा, तुम सबके बिछड़े हुए दिल एक दूसरे से जुड़ जाएँगे, तुम महसूस करोगे कि तमाम दुनिया तुम्हारा वतन है, तमाम नस्ले इन्सानी तुम्हारा घराना है और तुम सब एक ही "रब्बुल-आ़लमीन" की इयाल हो।

चुनांचे वो कहता है: ख़ुदा के जितने रसूल भी पैदा हुए सब की तालीम यही थी कि "अद्दीन" पर यानी बनी नौए़ इन्सानी के एक ही आ़लमगीर दीन पर क़ायम रहो और इस राह में एक दूसरे से अलग-अलग न हो जाओ :

شَرَعَ لَكُمْ مِنَ الدِّيْنِ مَا وَصّٰى بِهٖ نُوْحًا وَّالَّذِيْٓ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ وَمَا وَصَّيْنَا بِهٖٓ اِبْرٰهِيْمَ وَمُوْسٰى وَعِيْسٰٓى اَنْ اَقِيْمُوا الدِّيْنَ وَلَا تَتَفَرَّقُوْا فِيْهِ ط

(۱۳:٤۲)

और (देखो!) उसने तुम्हारे लिए दीन की वही राह क़रार दी है जिसकी वसिय्यत नूह को की गई थी और जिस पर चलने का हुक्म इब्राहीम, मूसा और ईसा को दिया था। (इन सबकी तालीम यही थी) कि अद्दीन (यानी ख़ुदा का एक ही दीन) क़ायम रखो और इस राह में अलग-अलग न हो जाओ।

(42: 13)

क़ुरआन की तहद्दी कि इस हक़ीक़त के ख़िलाफ़ कोई मज़हबी तालीम और रिवायत नहीं पेश की जा सकती है।

इसी बिना पर वो बतौर एक दलील के इस बात पर ज़ोर

देता है कि अगर तुम्हें मेरी तालीम की सच्चाई से इनकार है तो किसी मज़हब की इल्हामी किताब से भी साबित कर दिखाओ कि दीने हक़ीक़ी की राह इसके सिवा कुछ और भी हो सकती है। तुम जिस मज़हब की भी हक़ीक़ी तालीम देखोगे, अस्ल व बुनियाद यही मिलेगी :

قُلْ هَاتُوا بُرْهَانَكُمْ ۚ هَٰذَا ذِكْرُ مَنْ مَّعِيَ وَ ذِكْرُ مَنْ قَبْلِي ۗ بَلْ أَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ الْحَقَّ فَهُمْ مُعْرِضُونَ ۝ وَ مَا أَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ مِنْ رَّسُولٍ إِلَّا نُوحِيَ إِلَيْهِ أَنَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا أَنَا فَاعْبُدُونِ ۝

(٢١: ٢٤-٢٥)

(ऐ पैग़म्बर! इनसे) कह दो: (अगर तुम्हें मेरी तालीम से इनकार है तो) अपनी दलील पेश करो। ये तालीम मौजूद है जिस पर मेरे साथी यक़ीन रखते हैं और इसी तरह वो तमाम तालीमें भी मौजूद हैं जो मुझ से पहले क़ौमों को दी गईं (तुम साबित कर दिखाओ किसी ने भी मेरी तालीम के ख़िलाफ़ तालीम दी हो)। अस्ल ये है कि अक्सर आदमी ऐसे हैं जिन्हें सिरे से अम्रे-हक़[1] की ख़बर ही नहीं और इसलिए हक़ीक़त की तरफ़ से गर्दन मोड़े हुए हैं। (ऐ पैग़म्बर! यक़ीन कर) हमने तुझ से पहले कोई पैग़म्बर ऐसा नहीं भेजा जिसे इस बात के सिवा कोई दूसरी बात बतलाई गई हो

1-सत्य, सच्ची बात।

कि मेरे सिवा कोई माबूद नहीं,
पस मेरी ही इबादत करो।
(21: 24-25)

इतना ही नहीं, बल्कि वो कहता है: इल्मो-बसीरत के किसी क़ौल और रिवायत से तुम साबित कर दिखाओ कि जो कुछ मैं बतला रहा हूँ, यही तमाम पिछली दावतों की तालीम नहीं रही है :

ائْتُونِي بِكِتَابٍ مِّن قَبْلِ هَٰذَا أَوْ أَثَارَةٍ مِّنْ عِلْمٍ إِن كُنتُمْ صَادِقِينَ ۝
(٤٦: ٤)

अगर तुम (अपने इनकार में) सच्चे हो तो (सबूत में) कोई किताब पेश करो जो अब से पहले नाज़िल हुई हो या (कम अज़ कम) इल्मो-बसीरत की कोई पिछली रिवायत ही ला दिखाओ जो तुम्हारे पास मौजूद हो। (46: 4)

तमाम मुक़द्दस किताबों की बाहम-दिगर तस्दीक़ और इससे क़ुरआन का इस्तेदलाल

इसी बिना पर तमाम मज़ाहिबे आ़लम की बाहम-दिगर तस्दीक़ को भी बतौर एक दलील के पेश करता है। यानी वो कहता है: इनमें से हर तालीम दूसरी तालीम की तस्दीक़ करती है, झुटलाती नहीं। और जब हर तालीम दूसरी तालीम की तस्दीक़ करती है तो इससे मालूम हुआ इन तमाम तालीमात के अन्दर कोई एक ही साबित व क़ायम हक़ीक़त ज़रूर काम कर रही है, क्योंकि अगर मुख़्तलिफ़ गोशों, मुख़्तलिफ़ क़ौमों, मुख़्तलिफ़ नामों, मुख़्तलिफ़ पैरायों

ओर मुख़्तलिफ़ ज़बानों से कोई बात कही गई हो और बावजूद इन तमाम इख़्तिलाफ़ात के, बात हमेशा एक ही हो और एक ही मक़सद पर ज़ोर देती हो तो क़ुदरती तौर पर तुम्हें मानना पड़ेगा कि ऐसी बात असलियत से ख़ाली नहीं हो सकती :

نَزَّلَ عَلَيْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ وَاَنْزَلَ التَّوْرٰةَ وَالْاِنْجِيْلَ ○ مِنْ قَبْلُ هُدًى لِّلنَّاسِ

(٣: ٣-٤)

(ऐ पैग़म्बर!) अल्लाह ने तुमपर ये किताब सच्चाई के साथ नाज़िल की है जो उन किताबों की तस्दीक़ करती है जो इससे पहले नाज़िल हो चुकी हैं। और इसी तरह लोगों की हिदायत के लिए उसने तौरात और इंजील नाज़िल की थी। (3: 3-4)

وَاٰتَيْنٰهُ الْاِنْجِيْلَ فِيْهِ هُدًى وَّنُوْرٌ وَّمُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ التَّوْرٰةِ

(٥: ٤٦)

और हमने ईसा को इंजील अता की, उसमें इन्सान के लिए हिदायत और रौशनी है, और इससे पहले जो तौरात नाज़िल हो चुकी थी वो इसकी तस्दीक़ करती है। (5: 46)

यही वजह है कि हम देखते हैं इसके बयानो-मौइज़त का एक बड़ा मौज़ू पिछले अहदों की हिदायतों और रिसालतों का तज़्किरा है। वो उनकी यक्सानी, हमआहंगी और वहदते तालीम से मज़हबी सदाक़त के तमाम मक़ासिद पर इस्तिशहाद करता है।

'अद-दीन' और अश-शर्अ़

अदयान का इख़्तिलाफ़

अच्छा! अगर तमाम नौअ़े इन्सानी के लिए दीन एक ही है और तमाम बानियाने मज़ाहिब ने एक ही अस्ल व क़ानून की तालीम दी है तो फिर मज़ाहिब में इख़्तिलाफ़ क्यों हुआ? क्यों तमाम मज़हबों में एक ही तरह के अहकाम, एक ही तरह के आमाल, एक ही तरह के रुसूमो-ज़वाहिर न हुए? कसी मज़हब में इबादत की एक ख़ास शक्ल इख़्तियार की गई है, किसी में दूसरी। किसी मज़हब के मानने वाले एक तरफ़ मुँह करके इबादत करते हैं, किसी मज़हब के मानने वाले दूसरी तरफ़। किसी के यहाँ अहकामो-क़वानीन[1] एक ख़ास तरह की नौइयत के हैं, किसी के यहाँ दूसरी तरह के।

इख़्तिलाफ़ दीन में नहीं हुआ, शर्अ़ व मिन्हाज में हुआ और ये नागुज़ीर था

क़ुरआन कहता है: मज़ाहिब का इख़्तिलाफ़ दो तरह का है। एक इख़्तिलाफ़ तो वो है जो पैरवाने मज़ाहिब ने मज़हब की हक़ीक़ी तालीम से मुन्हरिफ़[2] होकर पैदा कर लिया है। ये इख़्तिलाफ़ मज़ाहिब का इख़्तिलाफ़ नहीं है, पैरवाने मज़हबं की गुमराही का नतीजा है। दूसरा इख़्तिलाफ़ वो है जो फ़िल-हक़ीक़त मज़ाहिब के अहकाम व आमाल में पाया जाता है। मसलन एक मज़हब में इबादत की कोई ख़ास शक्ल इख़्तियार की गई है, दूसरे में कोई दूसरी शक्ल तो ये इख़्तिलाफ़, अस्ल व हक़ीक़त का इख़्तिलाफ़ नहीं

1-आदेश-नियम। 2-हट कर, भटक कर।

है, महज़ फ़ुरू व ज़वाहिर का इख़्तिलाफ़ है और ज़रूरी था कि ज़ुहूर में आता।

वो कहता है: मज़ाहिब की तालीम दो क़िस्म की बातों से मुरक्कब है। एक क़िस्म तो वो है जो उनकी रूहो-हक़ीक़त है, दूसरी वो है जिन से उनकी ज़ाहिरी शक्लो-सूरत आरास्ता की गई है। पहली चीज़ अस्ल है, दूसरी फ़रा है। पहली चीज़ को वो 'दीन' से ताबीर करता है, दूसरी को 'शर्अ़' और 'नुसुक' से और इसके लिए मिन्हाज का लफ़्ज़ भी इस्तेमाल किया गया है। 'शर्अ़' और 'मिन्हाज' के मअ़ना राह के हैं और 'नुसुक' से मक़सूद इबादत का तौरो-तरीक़ा है। फिर इस्तिलाह में 'शर्अ़' क़ानूने मज़हब को कहने लगे और 'नुसुक' इबादत को। वो कहता है: मज़ाहिब में जिस क़द्र भी इख़्तिलाफ़ है उनका अस्ली इख़्तिलाफ़ है, वो 'दीन' का इख़्तिलाफ़ नहीं, महज़ शर्अ़ व मिन्हाज का इख़्तिलाफ़ है, यानी अस्ल का नहीं है फ़रा का है, हक़ीक़त का नहीं है ज़वाहिर का है, रूह का नहीं है सूरत का है और ज़रूरी था कि ये इख़्तिलाफ़ ज़ुहूर में आता। मज़हब का मक़सूद इन्सानी जमइय्यत की सआ़दत व इस्लाह है, लेकिन इन्सानी जमइय्यत के अहवालो-ज़ुरूफ़ हर अ़हद और हर मुल्क में यक्साँ नहीं रहे हैं और न यक्साँ रह सकते थे। किसी ज़माने की मुआ़शरती और ज़ेहनी इस्तेदाद एक ख़ास तरह की नौइयत रखती थी, किसी ज़माने में एक ख़ास तरह की। किसी मुल्क के हालात एक ख़ास तरह की मईशत चाहते हैं, किसी दूसरे मुल्क के हालात दूसरी तरह की। पस जिस मज़हब का ज़ुहूर जैसे ज़माने में और जैसी इस्तेदाद व तबीअ़त के लोगों में हुआ, उसी के मुताबिक़ शर्अ़ व मिन्हाज की सूरत भी इख़्तियार की गई। जिस अ़हद और जिस मुल्क

में जो सूरत इख़्तियार की गई वही उसके लिए मौज़ूँ थी। इसलिए हर सूरत अपनी जगह बेहतर और हक़ है। और ये इख़्तिलाफ़ इससे ज़्यादा अहमियत नहीं रखता जितनी अहमियत नौए बशरी के तमाम मुआशरती और तबीई इख़्तिलाफ़ात को दी जा सकती है :

لِكُلِّ اُمَّةٍ جَعَلْنَا مَنْسَكًا هُمْ نَاسِكُوْهُ فَلَا يُنَازِعُنَّكَ فِى الْاَمْرِ وَادْعُ اِلٰى رَبِّكَ ط اِنَّكَ لَعَلٰى هُدًى مُّسْتَقِيْمٍ ٥

(٢٢:٦٨)

(ऐ पैग़म्बर!) हमने हर गिरोह के लिए इबादत का एक ख़ास तौरो-तरीक़ा ठहरा दिया है जिस पर वो चलता है। पस लोगों को चाहिए इस मामले में तुमसे झगड़ा न करें। तुम लोगों को अपने परवरदिगार की तरफ़ दावत दो, यक़ीनन तुम हिदायत के सीधे रास्ते पर गामज़न हो। (22: 68)

तहवीले क़िब्ला का मामला और क़ुरआन का एलाने हक़ीक़त

जब तहवीले क़िब्ला का मामला पेश आया, यानी पैग़म्बरे इस्लाम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) बैतुल मुक़द्दस की जगह ख़ाना काबा की तरफ़ मुँह करके नमाज़ पढ़ने लगे तो ये बात यहूदियों और ईसाइयों पर बहुत शाक़ गुज़री। उनके नज़दीक मज़हब का तमाम दारो-मदार इसी तरह की ज़ाहिरी और फ़ुरूई बातों पर था और

इन्हीं को वो हक़्क़ो-बातिल का मे'यार समझते थे। लेकिन हम देखते हैं क़ुरआन ने इस मामले को बिल्कुल दूसरी ही नज़र से देखा है। वो कहता है: तुम इस तरह की बातों को इक क़द्र अहमियत क्यों देते हो? ये न तो हक़्क़ो-बातिल का मे'यार हैं न मज़हब की अस्ल व हक़ीक़त में इन्हें कोई दख़ल है। हर मज़हब ने अपने-अपने हालात और मुक़्तज़यात के मुताबिक़ कोई एक तरीक़ा इबादत का इख़्तियार कर लिया था और उस पर लोग कारबन्द हो गए, मक़सूदे अस्ली सबका एक ही है और वो ख़ुदा परस्ती और नेक अमली है। पस जो शख़्स सच्चाई का तलबगार है, उसे चाहिए कि अस्ल मक़सूद पर नज़र रखे और उसी के लिहाज़ से हर बात को जांचे, परखे, उन बातों को हक़्क़ो-बातिल का मे'यार न बना ले :

وَلِكُلٍّ وِّجْهَةٌ هُوَ مُوَلِّيْهَا فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرَاتِ ط اَيْنَ مَا تَكُوْنُوْا يَاْتِ بِكُمُ اللّٰهُ جَمِيْعًا ط اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ قَدِيْرٌ ٥

(۱٤۸:۲)

और (देखो!) हर गिरोह के लिए कोई न कोई सिम्त है जिस की तरफ़ इबादत करते हुए वो अपना मुँह कर लेता है, पस (इस मामले को इस क़द्र तूल न दो) नेकी की राह में एक दूसरे से आगे बढ़ जाने की कोशिश करो (कि अस्ली काम यही है)। तुम किसी जगह भी हो अल्लाह तुम सबको पा लेगा, यक़ीनन अल्लाह की क़ुदरत से कोई चीज़ बाहर नहीं।

(2: 148)

क़ुरआन के नज़दीक दीन के एतिक़ादो-अ़मल की अस्ली बातें क्या-क्या हैं?

फिर इसी सूरत में आगे चलकर साफ़-साफ़ लफ़्ज़ों में वाज़ेह कर दिया है कि अस्ल दीन क्या है और किन बातों से एक इन्सान दीन की सआ़दत व फ़लाह हासिल कर सकता है। वो कहता है: दीन महज़ इस तरह की बातों में नहीं धरा है कि एक शख़्स ने इबादत के वक़्त पच्छिम की तरफ़ मुँह कर लिया या पूरब की तरफ़। अस्ल दीन तो ये है कि देखा जाए ख़ुदा परस्ती और नेक अ़मली के लिहाज़ से एक इन्सान का क्या हाल है। फिर तफ़्सील के साथ बतलाया है कि ख़ुदा परस्ती और नेक अ़मली की बातें क्या-क्या हैं :

لَيْسَ الْبِرَّ اَنْ تُوَلُّوا وُجُوهَكُمْ قِبَلَ الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ وَلٰكِنَّ الْبِرَّ مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَ الْمَلٰٓئِكَةِ وَالْكِتٰبِ وَالنَّبِيّٖنَ ۚ وَاٰتَى الْمَالَ عَلٰى حُبِّهٖ ذَوِي الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى

और (देखो!) नेकी ये नही है कि तुमने (इबादत के वक़्त) अपना मुँह पूरब की तरफ़ और पच्छिम की तरफ़ कर लिया (या इसी तरह की कोई दूसरी बात ज़ाहिरी रस्म और ढंग की कर ली)। नेकी की राह तो उस की राह है जो अल्लाह पर, आख़िरत के दिन पर, मलाइका पर, तमाम किताबों पर और तमाम नबियों पर ईमान लाता है, और अपना माल ख़ुदा की मुहब्बत की राह में रिश्तेदारों,

وَالْمَسٰكِيْنَ وَابْنَ السَّبِيْلِ لا وَالسَّآئِلِيْنَ وَفِى الرِّقَابِ ج وَاَقَامَ الصَّلٰوةَ وَاٰتَى الزَّكٰوةَ ج وَالْمُوْفُوْنَ بِعَهْدِهِمْ اِذَا عٰهَدُوْا ج وَالصّٰبِرِيْنَ فِى الْبَاْسَآءِ وَالضَّرَّآءِ وَحِيْنَ الْبَاْسِ ط اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ صَدَقُوْا ط وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُتَّقُوْنَ ٥ (٢: ١٧٧)

यतीमों, मिस्कीनों, मुसाफ़िरों और साइलों को देता है और गुलामों के आज़ाद कराने में ख़र्च करता है, ज़कात अदा करता है, क़ौलो-क़रार का पक्का होता है, तंगी और मुसीबत की घड़ी हो या ख़ौफ़ो-हिरास का वक़्त, हर हाल में साबित क़दम रहता है। (सो याद रखो!) ऐसे ही लोग हैं (जो दीनदारी में) सच्चे हैं और यही हैं जो बुराइयों से बचने वाले हैं। (2: 177)

जिस किताब में तेरह (13) सौ बरस से ये आयत मौजूद है, अगर दुनिया इसकी दावते अस्ली का मक़्सद नहीं समझ सकती तो फिर कौन-सी बात है जिसे दुनिया समझ सकती है ?

ख़ुदा की हिकमत इसी की मुक़्तज़ी हुई कि इख़्तिलाफ़े शराय ज़ुहूर में आए

सूरः माइदा में हम देखते हैं एक ख़ास तरतीब के साथ मुख़्तलिफ़ दावतों का ज़िक्र किया गया है। ज़िक्र हज़रत मूसा और तौरात से शुरू होता है : اِنَّآ اَنْزَلْنَا التَّوْرٰةَ فِيْهَا هُدًى وَّنُوْرٌ ج (5:55) फिर हज़रत मसीह के ज़ुहूर का ज़िक्र किया जाता है : وَقَفَّيْنَا عَلٰٓى اٰثَارِهِمْ بِعِيْسَى ابْنِ مَرْيَمَ (5:46) हज़रत मसीह के बाद

पैग़म्बरे इस्लाम का जुहूर हुआ: وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ (5:48) फिर इन मुख़्तलिफ़ दावतों के ज़िक्र के बाद वो लोगों को मुख़ातिब करता है और कहता है :

لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنْكُمْ شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا ط وَ لَوْشَآءَ اللّٰهُ لَجَعَلَكُمْ اُمَّةً وَّاحِدَةً وَّلٰكِنْ لِّيَبْلُوَكُمْ فِىْ مَآ اٰتٰكُمْ فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرَاتِ ط

(٥: ٤٨)

हम ने तुम में से हर एक के लिए (यानी हर दावत के पैरवों के लिए) एक ख़ास शरीअ़त और राह ठहरा दी। अगर अल्लाह चाहता तो (शरीअ़तों को कोई इख़्तिलाफ़ न होता) तुम सबको एक ही उम्मत बना देता, लेकिन ये इख़्तिलाफ़ इस लिए हुआ कि (हर वक़्त व हालत के मुताबिक़) तुम्हें जो अहकाम दिए गए हैं, उनमें तुम्हारी आज़माइश करे। पस (इस इख़्तिलाफ़ के पीछे न पड़ो) नेकी की राहों में एक दूसरे से आगे निकल जाने की कोशिश करो। (5: 48)

पैरवाने मज़हब ने दीन की वहदत भुला दी और शर्अ़ के इख़्तिलाफ़ को बिनाए निज़ाअ़ बना लिया

इस आयत पर सरसरी नज़र डाल कर आगे न बढ़ जाओ, बल्कि इसके एक-एक लफ़्ज़ पर ग़ौर करो। क़ुरआन का जब जुहूर

हुआ तो दुनिया का ये हाल था कि तमाम पैरवाने मज़ाहिब मज़हब को सिर्फ़ उसके ज़वाहिर[1] व रुसूम ही में देखते थे और मज़हबी एतिक़ाद का तमाम जोशो-ख़रोश इसी तरह की बातों में सिमट अया था। हर गिरोह यक़ीन करता था कि दूसरा गिरोह निजात से महरूम है, क्योंकि वो देखता था दूसरे के आमालो-रुसूम वैसे नहीं हैं जैसे ख़ुद उसने इख़्तियार कर रखे हैं। लेकिन क़ुरआन कहता है कि नहीं, ये आमालो-रुसूम न तो दीन की अस्ल व हक़ीक़त है न इनका इख़्तिलाफ़ हक़ो-बातिल का इख़्तिलाफ़ है। ये महज़ मज़हब की अ़मली ज़िन्दगी का ज़ाहिरी ढांचा है, मगर रूह व हक़ीक़त इनसे बालातर है और वही अस्ल दीन है। ये अस्ल दीन क्या है? एक ख़ुदा की परस्तिश और नेक अ़मली की ज़िन्दगी। ये किसी एक गिरोह ही की मीरास नहीं है कि उसके सिवा किसी इन्सान को न मिली हो। ये तमाम्म मज़ाहिब में यक्साँ तौर पर मौजूद है। और चूंकि ये अस्ले दीन है, इसलिए न तो इसमें तग़ैयुर हुआ न किसी का इख़्तिलाफ़ रू-नुमा हुआ। आमालो-रुसूम फ़रा हैं, इसलिए हर ज़माने और हर मुल्क की हालत के मुताबिक़ बदलते रहे और जिस क़द्र भी इख़्तिलाफ़ हुआ इन्हीं में हुआ।

फिर वो कहता है: आमालो-रुसूम के इस इख़्तिलाफ़ को तुम इस क़द्र अहमियत क्यों दे रहे हो? ख़ुदा ने हर ज़माने और हर मुल्क के लिए एक ख़ास तरह का तौरो-तरीक़ा ठहरा दिया था जो उसकी हालत और ज़रूरत के मुताबिक़ मुनासिब था और वो उस पर कारबन्द हो गया। अगर ख़ुदा चाहता तो तमाम नौए़ इन्सानी को एक ही क़ौम व जमाअ़त बना देता और फ़िक्रो-अ़मल का कोई

1-बाहरी रूप।

इख़्तिलाफ़ वुजूद में ही न आता, लेकिन मालूम है कि ख़ुदा ने ऐसा नहीं चाहा। उसकी हिकमत का मुक़्तज़ा यही हुआ कि फ़िक्रो-अ़मल की मुख़्तलिफ़ हालतें पैदा हों। पस इस इख़्तिलाफ़ को हक़्क़ो-बातिल का इख़्तिलाफ़ क्यों बना लिया जाए? क्यों इस इख़्तिलाफ़ की बिना पर एक जमाअ़त दूसरी जमाअ़त से बरसरे-पैकार रहे? अस्ली चीज़ जिस पर तमाम-तर तवज्जोह मब्ज़ूल करनी चाहिए "ख़ैरात" है यानी नेकी के काम है और तमाम आमालो-रुसूम भी इन्हीं के लिए हैं।

ग़ौर करो इस आयत में "لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنكُمْ شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا" कहा, यानी तुममें से हर जमाअ़त के लिए हम ने "शर्अ़" और "मिन्हाज" ठहरा दी। ये नहीं कहा कि एक "दीन" ठहरा दिया। क्योंकि दीन तो सबके लिए एक ही है। इसमें तअ़द्दुद और तनव्वो नहीं हो सकता। अलबत्ता शर्अ़ व मिन्हाज सबके लिए यक्साँ नहीं हो सकते, ज़रूरी था कि हर अ़हद और हर मुल्क के अहवाल व ज़ुरूफ़ के मुताबिक़ मुख़्तलिफ़ हों। पस मज़ाहिब का इख़्तिलाफ अस्ल का इख़्तिलाफ़ नहीं हुआ, महज़ फ़रा का इख़्तिलाफ़ हुआ।

इस मौक़े पर ये बात याद रखनी चाहिए कि जहाँ कहीं क़ुरआन ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि "अगर ख़ुदा चाहता तो तमाम इन्सान एक ही राह पर जमा हो जाते" या "एक ही क़ौम बन जाते" जैसा कि आयत मुन्दर्जा-ए-सदर में है तो इन सबसे मक़सूद इसी हक़ीक़त का इज़्हार है। वो चाहता है ये बात लोगों के दिलों में उतार दे कि फ़िक्रो-अ़मल का इख़्तिलाफ़ तबीअ़ते बशरी का क़ुदरती ख़ास्सा है और जिस तरह हर गोशे में मौजूद है, इसी तरह

मज़हब के मामले में भी मौजूद है। पस इस इख़्तिलाफ़ को हक़ो-बातिल का मे'यार नहीं समझना चाहिए। वो कहता है: जब ख़ुदा ने इन्सान की तबीअ़त ही ऐसी बनाई है कि हर इन्सान, हर क़ौम, हर अ़हद अपनी- अपनी समझ, अपनी-अपनी पसन्द और अपना-अपना तौरो-तरीक़ा रखता है और मुमकिन नहीं किसी एक छोटी-सी छोटी बात में भी तमाम इन्सानों की तबीअ़त एक तरह की हो जाए तो फिर क्यों कर मुमकिन था कि मज़हबी आमालो-रुसूम की राहें मुख़्तलिफ़ न होतीं और सब एक ही तरह की वज़ा व हालत इख़्तियार कर लेते? यहाँ भी इख़्तिलाफ़ होना था और इख़्तिलाफ़ हुआ, किसी ने एक तरीक़े से अस्ल मक़सूद हासिल करना चाहा, किसी ने दूसरे तरीक़ से, लेकिन अस्ल मक़सूद यानी ख़ुदा परस्ती और नेक अ़मली की तालीम तो इसमें सब मुत्तफ़िक़ रहे। पस जब अस्ल मक़सूद सबका एक है तो महज़ ज़वाहिर व आमाल के इख़्तिलाफ़ से क्यों एक दूसरे के मुख़ालिफ़ व मोआ़निद हो जाएँ? क्यों हर गिरोह दूसरे गिरोह को झुठलाए? क्यों मज़हबी सच्चाई किसी एक ही नस्ल व गिरोह की मीरास समझ ली जाए ?

चुनांचे हम देखते हैं कि वो शरीअ़तों के इस इख़्तिलाफ़ ही के लिए नहीं, बल्कि फ़िक्रो-अ़मल के हर इख़्तिलाफ़ के लिए रवादारी और वुस्अ़ते नज़र की तालीम देता है, यहाँ तक कि जो लोग उसकी दावत के ख़िलाफ़ जब्रो-तशद्दुद काम में ला रहे थे, उनकी तरफ़ से भी उसे माज़िरत करने में तअम्मुल नहीं। एक मौक़े पर ख़ुदा पैग़म्बरे इस्लाम को मुख़ातिब करते हुए कहता है: तुम जोशे दावत में चाहते हो कि हर इन्सान को राहे हक़ीक़त दिखा दो, लेकिन तुम्हें

ये बात नहीं भूलनी चाहिए कि इख़्तिलाफ़े फ़िक्रो-अ़मल तबीअ़ते इन्सानी का क़ुद्रती ख़ास्सा है। तुम ब-जबर[1] किसी के अन्दर एक बात नहीं उतार दे सकते :

وَلَوْشَآءَ رَبُّكَ لَاٰمَنَ مَنْ فِى الْاَرْضِ كُلُّهُمْ جَمِيْعًا ط اَفَاَنْتَ تُكْرِهُ النَّاسَ حَتّٰى يَكُوْنُوْا مُؤْمِنِيْنَ ۝ (٩٩:١٠)

और अगर तुम्हारा परवरदिगार चाहता तो ज़मीन में जितने इन्सान हैं सब ईमान ले आते (लेकिन तुम देख रहे हो कि उसकी हिकमत का फ़ैसला यहीहुआ कि हर इन्सान अपनी-अपनी समझ और अपनी-अपनी राह रखे)। फिर क्या तुम चाहते हो लोगों को मजबूर कर दो कि मोमिन हो जाएँ ?
(10: 99)

वो कहता है: इन्सान की तबीअ़त ऐसी वाक़े हुई है कि हर जमाअ़त को अपना ही तौरो-तरीक़ा अच्छा दिखाई देता है, वो अपनी बातों को दूसरों की मुख़ालिफ़ाना निगाह से नहीं देख सकता। जिस तरह तुम्हारी नज़र में सबसे बेहतर राह तुम्हारी है, ठीक इसी तरह दूसरों की नज़र में सबसे बेहतर राह उनकी है। पस इसके सिवा चारा नहीं कि इस बारे में तहम्मुल और रवादारी अपने अन्दर पैदा करो :

وَلَا تَسُبُّوا الَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ مِنْ

और (देखो!) जो लोग ख़ुदा को छोड़ कर दूसरे माबूदों को

1-बलात्, जबरदस्ती।

دُوْنِ اللّٰهِ فَيَسُبُّوا اللّٰهَ عَدْوًا
بِغَيْرِ عِلْمٍ ط كَذٰلِكَ زَيَّنَّا
لِكُلِّ أُمَّةٍ عَمَلَهُمْ ص ثُمَّ إِلٰى
رَبِّهِمْ مَرْجِعُهُمْ فَيُنَبِّئُهُمْ
بِمَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ٥

(١٠٨:٦)

पुकारते हैं, तुम उनपर सबो-शत्म न करो, क्योंकि नतीजा ये निकलेगा कि ये लोग भी अज़ राहे जेहल व नादानी ख़ुदा को बुरा भला कहने लगेंगे। (याद रखो!) हमने इन्सान की तबीअ़त ही ऐसी बनाई है कि हर गिरोह को अपना ही अ़मल अच्छा दिखाई देता है। फिर बिल-आख़िर सबको अपने परवरदिगार की तरफ़ लौटना है और वहीं हर गिरोह पर उसके आमाल की हक़ीक़त खुलने वाली है। (6: 108)

● ✻ ●

'तशय्यो' और 'तहज़्ज़ुब' की गुमराही और तज्दीदे दावत की ज़रूरत

अच्छा! जब तमाम मज़ाहिब का अस्ल मक़्सद एक ही है और सबकी बुनियाद सच्चाई पर है तो फिर क़ुरआन के ज़ुहूर की ज़रूरत क्या थी ?

वो कहता है: इसलिए कि अगर्चे तमाम मज़ाहिब सच्चे हैं, लेकिन तमाम मज़ाहिब के पैरौ सच्चाई से मुन्हरिफ़ हो गए हैं। इस लिए ज़रूरी है कि सबको उनकी गुमशुदा सच्चाई पर अज़ सरे-नौ जमा कर दिया जाए।

इस सिलसिले में उसने पैरवाने मज़ाहिब की तमाम गुमराहियाँ एक-एक करके गिनाई हैं। वो एतिक़ादी और अमली दोनों तरह की हैं। मिन-जुम्ला उनके एक सबसे बड़ी गुमराही जिस पर जा-बजा ज़ोर देता है, वो है जिसे उसने 'तशय्यो' और 'तहज़्ज़ुब' के अलफ़ाज़ से ताबीर किया है। अ़रबी में 'तशय्यो' और 'तहज़्ज़ुब' के मअ़ना ये हैं कि अलग-अलग जत्थे बना लेना और उनमें ऐसी रूह का पैदा हो जाना जिसे उर्दू में गिरोह परस्ती[1] की रूह से ताबीर किया जा सकता है :

إِنَّ الَّذِينَ فَرَّقُوا دِينَهُمْ وَكَانُوا شِيَعًا لَّسْتَ مِنْهُمْ فِي شَيْءٍ ۚ إِنَّمَا أَمْرُهُمْ إِلَى اللَّهِ ثُمَّ	जिन लोगों ने अपने एक ही दीन के टुकड़े-टुकड़े कर दिए और अलग-अलग गिरोह बन्दियों में बट गए, तुम्हें उनसे कोई वास्ता

1-वर्गवाद, पंथवाद, सम्प्रदायवाद।

نہیں، उनका मामला ख़ुदा के हवाले है, जैसे कुछ उनके अ़मल रहे हैं उसका नतीजा ख़ुदा उन्हें बता देगा। (6: 159)

يُنَبِّئُهُم بِمَا كَانُوا يَفْعَلُونَ ۝ (١٥٩:٦)

फिर लोगों ने एक दूसरे से कट कर जुदा-जुदा दीन बना लिए, हर टोली के पल्ले जो कुछ पड़ गया है उसी में मगन है। (23: 53)

فَتَقَطَّعُوٓا أَمْرَهُم بَيْنَهُمْ زُبُرًا ۖ كُلُّ حِزْبٍۭ بِمَا لَدَيْهِمْ فَرِحُونَ ۝ (٥٣:٢٣)

"तशय्यो" और "तहज़्ज़ुब" की हक़ीक़त

'तशय्यो' और 'तहज़्ज़ुब' की गुमराही से क्या मक़सूद है, इसे पूरी वज़ाहत के साथ समझ लेना चाहिए। वो कहता है: ख़ुदा के ठहराए हुए दीन की हक़ीक़त तो ये थी कि नौऐ इन्सानी पर ख़ुदा परस्ती और नेक अ़मली की राह खोलता था, यानी ख़ुदा के इस क़ानून का एलान करता था कि दुनिया की हर चीज़ की तरह इन्सानी अफ़्कारो-आमाल के भी ख़्वास व नताइज हैं। अच्छे फ़िक्रो-अ़मल का बदला अच्छा है, बुरे फ़िक्रो-अ़मल का बदला बुरा है। लेकिन लोगों ने ये हक़ीक़त फ़रामोश कर दी और दीनो-मज़हब को नस्लों, क़ौमों, मुल्कों और तरह-तरह की रस्मों और रिवाजों का एक जत्था बना लिया। नतीजा ये निकला कि अब इन्सान की निजातो-सआ़दत की राह ये नहीं समझी जाती कि किस का एतिक़ाद और अ़मल कैसा है, बल्कि सारा दारो-मदार इस पर आके ठहर गया है कि कौन किस जत्थे और गिरोह-बन्दी में दाख़िल है। अगर एक

आदमी किसी ख़ास मज़हबी गिरोह-बन्दी में दाख़िल है तो यक़ीन किया जाता है कि वो निजात-याफ़्ता है और दीन की सच्चाई उसे मिल गई। अगर दाख़िल नहीं है तो यक़ीन किया जाता है कि निजात का दरवाज़ा उस पर बन्द हो गया और दीन की सच्चाई में उसका कोई हिस्सा नहीं। गोया दीन की सच्चाई, आख़िरत की निजात और हक़ो-बातिल का मे'यार तमामतर गिरोह-बन्दी और गिरोह-परस्ती हो गई, एतिक़ाद और अ़मल कोई चीज़ नहीं है। फिर बावजूदे कि तमाम मज़ाहिब का मक़सूदे अस्ली एक ही है और सब एक ही परवरदिगारे आ़लम की परस्तिश करने के मुद्दई हैं, लेकिन हर गिरोह यक़ीन करता है कि दीन की सच्चाई सिर्फ़ उसी के हिस्से में आई है, बाक़ी तमाम नौऐ इन्सानी इससे महरूम हैं। चुनांचे हर मज़हब का पैरौ दूसरे मज़हब के ख़िलाफ़ नफ़रत व तअ़स्सुब[1] की तालीम देता है और दुनिया में ख़ुदा परस्ती और दीनदारी की राह सर-तासर बुग़ज़ व अ़दावत, नफ़रत व तवहुश और क़त्लो-ख़ूँ-रेज़ी की राह बन गई है।

इस बारे में दावते क़ुरआनी की तीन मुहिम्मात

इस सिलसिले में क़ुरआन ने जिन मुहिम्मात पर ज़ोर दिया है, उनमे तीन बातें सबसे नुमायाँ हैं :

1- इन्सान की निजात व सआ़दत का दारो-मदार एतिक़ादो-अ़मल पर है, न कि किसी ख़ास गिरोह-बन्दी पर।

2- नौऐ इन्सानी के लिए दीने इलाही एक ही है और यक्साँ तौर पर सबको इसी की तालीम दी गई। पस ये जो पैरवाने मज़हब

1-पक्षापात, द्वेष।

ने दीन की वह्दत और आ़लमगीर हक़ीक़त ज़ाय करके बहुत से मुतख़ालिफ़ व मुतख़ासिम जत्थे बना लिए हैं, ये सरीह गुमराही है।

3- अस्ल दीन तौहीद है, यानी एक परवरदिगारे आ़लम की बराहे-रास्त परस्तिश करना, और तमाम बानियाने मज़ाहिब ने इसी की तालीम दी है। इसके बर-ख़िलाफ़ जिस क़द्र अ़क़ाइद और आमाल इख़्तियार कर लिए गए हैं, असलियत से इन्हिराफ़ का नतीजा हैं।

यहूदियत और नसरानियत की गिरोह बन्दी और उसका रद

चुनांचे आयाते मुन्दर्जा-ए-सदर के अ़लावा हस्ब-ज़ैल आयात में भी इसी हक़ीक़त पर ज़ोर दिया गया है :

وَقَالُوْا لَنْ يَّدْخُلَ الْجَنَّةَ اِلَّا مَنْ كَانَ هُوْدًا اَوْ نَصٰرٰى ط تِلْكَ اَمَانِيُّهُمْ ط قُلْ هَاتُوْا بُرْهَانَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ٥ بَلٰى ق

और यहूद और नसारा ने कहा: जन्नत में कोई इन्सान दाख़िल नहीं हो सकता जबतक यहूद और नसारा न हो (यानी जब तक यहूदियत और नसरानियत की गिरोह बन्दियों में दाख़िल न हो)। ये इन लोगों की जाहिलाना उमंगें हैं। (ऐ पैग़म्बर!) इनसे कह दो: अगर तुम (इस ज़ोमे बातिल में) सच्चे हो तो बताओ तुम्हारी दलील क्या है? हाँ! (बिला-

مَنْ اَسْلَمَ وَجْهَهٗ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ فَلَهٗٓ اَجْرُهٗ عِنْدَ رَبِّهٖ ۪ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ○

(٢: ١١١-١١٢)

शुब्हा निजात की राह खुली हुई है, मगर वो किसी ख़ास गिरोह बन्दी की राह नहीं हो सकती, वो तो ईमानो-अ़मल की राह है)। जिस किसी ने भी ख़ुदा के आगे सर झुका दिया और वो नेक अ़मल भी हुआ तो (ख़्वाह वो यहूदी और नसरानी हो, ख़्वाह कोई हो) वो अपने परवरदिगार से अपना अज्र पाएगा, उसके लिए न तो किसी तरह का खटका है, न किसी तरह की ग़मगीनी। (2: 111-112)

दूसरी जगह यही हक़ीक़त ज़्यादा वाज़ेह लफ़्ज़ों में बयान की गई है :

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَالَّذِيْنَ هَادُوْا وَالنَّصٰرٰى وَالصّٰبِئِيْنَ مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ ۚ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ○ (٢: ٦٢)

जो लोग (पैग़म्बरे इस्लाम पर) ईमान लाए हैं, वो हों या वो लोग हों जो यहूदी कहलाते हैं या नसारा और साबी हों (कोई भी हो) लेकिन जो कोई भी अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान लाया और उसके काम भी अच्छे हुए तो वो अपने ईमानो-अ़मल का अज्र अपने

परवरदिगार से ज़रूर पाएगा,
उसके लिए न तो किसी तरह
का खटका है, न किसी तरह की
ग़मगीनी। (2: 62)

यानी दीन से मक़सूद तो ख़ुदा परस्ती और नेक अ़मली की राह थी, वो किसी ख़ास हल्क़ा बन्दी का नाम न था। कोई इन्सान हो, किसी नस्ल व क़ौम से हो, किसी नाम से पुकारा जाता हो, लेकिन अगर ख़ुदा पर सच्चा ईमान रखता है और उसके आमाल भी नेक हैं तो दीने इलाही पर चलने वाला है और उसके लिए निजात है। लेकिन यहूदियों और ईसाइयों ने एक ख़ास तरह की नस्ली और जमाअ़ती गिरोह बन्दी का क़ानून बना दिया! यहूदियों ने गिरोह बन्दी का एक दायरा खींचा और उसका नाम "यहूदियत" रख दिया। जो इस दायरे के अन्दर है वो सच्चाई पर है और उसके लिए निजात है, जो इससे बाहर है वो बातिल पर है और उसके लिए निजात नहीं। इसी तरह ईसाइयों ने भी एक दायरा खींच लिया और उसका नाम "मसीहियत" या कलीसा रख दिया। जो इसमें दाख़िल है सिर्फ़ वही सच्चाई पर है और सिर्फ़ उसी के लिए निजात है। जो इससे बाहर है उसका सच्चाई में कोई हिस्सा नहीं और निजात से क़तअ़न महरूम है। बाक़ी रहा अ़मल व एतिक़ाद तो इसका क़ानून यक-क़लम ग़ैर-मोअस्सिर हो गया। एक शख़्स कितना ही ख़ुदा परस्त और नेक अ़मल हो, लेकिन अगर "यहूदियत" की नस्ली गिरोह बन्दी या "मसीहियत" की जमाअ़ती गिरोह बन्दी में दाख़िल नहीं तो उसे कोई यहूदी और ईसाई हिदायत-याफ़्ता इन्सान तस्लीम नहीं कर सकता। लेकिन एक सख़्त से सख़्त बद अ़मल और बद एतिक़ाद

इन्सान भी निजात-याफ़्ता समझ लिया जाएगा, अगर इन गिरोह बन्दियों में दाख़िल होगा। क़ुरआन इनके इसी एतिक़ाद को इन लफ़्ज़ो में नक़ल करता है: كُونُوا هُودًا اَوْ نَصٰرٰى تَهْتَدُوا (2: 135) यानी हिदायत की राह एतिक़ाद और अ़मल की राह नहीं है, बल्कि यहूदियत और नसरानियत की गिरोह बन्दी की राह है। जबतक कोई यहूदी या नसरानी न हो जाए, हिदायत-याफ़्ता नहीं हो सकता। फिर इसका रद करते हुए कहता है: ख़ुदा की हिदायत जो दुनिया का आ़लमगीर क़ानून है, वो भला इन ख़ुद-साख़्ता गिरोह बन्दियों में क्यों कर महदूद हो जा सकती है? بَلٰى مَنْ اَسْلَمَ وَجْهَهٗ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ (2: 112) के ज़ोर और उमूम पर ग़ौर करो! कोई इन्सान हो, किसी नस्लो-क़ौम और गिरोह बन्दी का हो, लेकिन जिस किसी ने भी अल्लाह के आगे अबूदियत का सर झुका दिया और नेक अ़मली की ज़िन्दगी इख़्तियार की, उसने दीन की निजातो-सआ़दत पा ली और उसके लिए कोई ग़म और खटका नहीं।

ग़ौर करो! मज़हबी सदाक़त की आ़लमगीर वुस्अ़त का इससे ज़्यादा वाज़ेह और हमागीर एलान और क्या हो सकता है :

وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ لَيْسَتِ النَّصٰرٰى عَلٰى شَيْءٍ ۪ وَّقَالَتِ النَّصٰرٰى لَيْسَتِ الْيَهُوْدُ عَلٰى شَيْءٍ وَّهُمْ يَتْلُوْنَ الْكِتٰبَ ؕ كَذٰلِكَ قَالَ الَّذِيْنَ لَا يَعْلَمُوْنَ

और यहूदियों ने कहा: ईसाइयों का दीन कुछ नहीं है। इसी तरह ईसाइयों ने कहा: यहूदियों के पास क्या धरा है? हालाँकि दोनों (अल्लाह की) किताब पढ़ते हैं (और दोनों का सर-चश्म-ए-दीन एक ही है)। ठीक ऐसी ही बात उन लोगों ने भी

مثل قولهم ج فالله يحكم بينهم يوم القيمة فيما كانوا فيه يختلفون ○

(٢:١١٣)

कही जो (मुक़द्दस नविश्तों का) इल्म नहीं रखते (यानी मुश्रिकीने अरब ने कि वो भी सिर्फ़ अपने ही को निजात का वारिस समझते हैं)। अच्छा! जिस बात में बाहम-दिगर झगड़ रहे हैं, क़ियामत के दिन अल्लाह उसका फ़ैसला कर देगा (और उस वक़्त हक़ीक़ते हाल सबपर खुल जाएगी)। (2: 113)

यानी बावजूदे कि ख़ुदा का दीन एक ही है और किताबे इलाही यानी तौरात दोनों के सामने है, बई-हमा[1] मज़हबी गिरोह बन्दी का नतीजा ये है कि बाहम-दिगर मुख़ालिफ़ और मुकज़्ज़िब जत्थे क़ायम हो गए हैं। हर जत्था दूसरे जत्थे को झुठलाता है और हर जत्था सिर्फ़ अपने ही को निजात व सआदत का मालिक समझता है।

सच्चाई अस्लन सबके पास है मगर अ़मलन सबने खो दी है

सवाल ये है कि जब दीन की राह एक होने की जगह बेशुमार जत्थों और टोलियों में बट गई और हर जत्था एक ही तरीक़े पर अपनी सच्चाई का मुद्दई है और एक ही तरीक़े पर दूसरों को झुठला रहा है तो अब इस बात का फ़ैसला क्योंकर हो कि फिल-हक़ीक़त सच्चाई है कहाँ? क़ुरआन कहता है: सच्चाई अस्लन सबके पास है,

1-इसके बावजूद।

मगर अ़मलन सबने खो दी है। सबको एक ही दीन की तालीम दी गई थी और सबके लिए एक ही आ़लमगीर क़ानूने हिदायत था, लेकिन सबने अस्ल हक़ीक़त ज़ाय कर दी और "अद्दीन" पर क़ायम रहने की जगह अलग-अलग गिरोह बन्दियाँ कर लीं। अब हर गिरोह दूसरे गिरोह से लड़ रहा है और समझता है दीन की सआ़दत और निजात सिर्फ़ उसी के वरसे में आई है, दूसरों का उसमें कोई हिस्सा नहीं।

इबादतगाहों में तफ़रिक़ा

सूरः बक़रा में मुन्दर्जे-ए-सदर आयत के बाद भी हस्बे-जैल बयान शुरू हो जाता है :

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ مَّنَعَ مَسٰجِدَ اللّٰهِ اَنْ يُّذْكَرَ فِيْهَا اسْمُهٗ وَسَعٰى فِىْ خَرَابِهَا ؕ اُولٰٓئِكَ مَا كَانَ لَهُمْ اَنْ يَّدْخُلُوْهَآ اِلَّا خَآئِفِيْنَ ؕ لَهُمْ فِى الدُّنْيَا خِزْىٌ وَّلَهُمْ فِى الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝

(٢: ١١٤)

और ग़ौर करो! उससे बढ़कर ज़ुल्म करने वाला इन्सान कौन हो सकता है जो अल्लाह की इबादतगाहों में उसके नाम की याद से माने[1] आए और उनकी वीरानी में कोशाँ हो? जिन लोगों के ज़ुल्मो-शरारत का ये हाल है, यक़ीनन वो इस लायक़ नहीं कि ख़ुदा की इबादतगाहों में क़दम रखें, बजुज़ उस हालत के कि (दूसरों को अपनी ताक़त से डराने की जगह ख़ुद दूसरों की ताक़त से) डरे-सहमे हुए

1-रुकावट बने, रोके।

हों। याद रखो! ऐसे लोगों के लिए दुनिया में भी रुस्वाई है और आख़िरत में भी सख़्ततरीन अज़ाब है। (2: 114)

यानी मज़हबी गिरोह बन्दी की गुमराही का नतीजा ये है कि ख़ुदा की इबादतगाहें तक अलग-अलग हो गईं और बावजूदे कि तमाम पैरवाने मज़ाहिब एक ही ख़ुदा के नामलेवा हैं, लेकिन मुमकिन नहीं एक मज़हब का पैरो दूसरे मज़हब की बनाई हुए इबादगाह में जाकर ख़ुदा का नाम ले सके। इतना ही नहीं, बल्कि हर गिरोह सिर्फ़ अपनी इबादतगाह को ख़ुदा की इबादतगाह समझता है, दूसरे गिरोह की इबादतगाह उसकी नज़रों में कोई एहतिराम नहीं रखती, हत्ताकि बसा-औक़ात वो मज़हब के नाम पर उठता है और दूसरों की इबादतगाहें मुन्हदिम[1] कर डालता है। क़ुरआन कहता है: इससे बढ़कर इन्सान का ज़ुल्म और क्या हो सकता है कि ख़ुदा के बन्दों को ख़ुदा की याद से रोका जाए और सिर्फ़ इसलिए रोका जाए कि वो एक दूसरे मज़हबी गिरोह से तअल्लुक़ रखते हैं या एक इबादतगाह ढा दी जाए और इसलिए ढा दी जाए कि वो हमारी बनाई हुई नहीं है, दूसरे गिरोह की बनाई हुई है। क्या तुम्हारे बनाए हुए मज़हबी जत्थों के इख़्तिलाफ़ से ख़ुदा भी मुख़्तलिफ़ हो गए? और इसलिए एक जत्थे की बनाई हुई इबादतगाह तो ख़ुदा की इबादतगाह हुई, मगर दूसरे की बनाई हुई इबादतगाह ख़ुदा की इबादतगाह नहीं :

1-गिराना, ढाना।

وَلَاتُؤْمِنُوْٓا اِلَّا لِمَنْ تَبِعَ دِيْنَكُمْ ط قُلْ اِنَّ الْهُدٰى هُدَى اللّٰهِ لا اَنْ يُّؤْتٰٓى اَحَدٌ مِّثْلَ مَآ اُوْتِيْتُمْ اَوْيُحَآجُّوْكُمْ عِنْدَ رَبِّكُمْ ط قُلْ اِنَّ الْفَضْلَ بِيَدِ اللّٰهِ ج يُؤْتِيْهِ مَنْ يَّشَآءُ ط وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ○

(٣: ٧٣)

और (ये लोग आपस में एक दूसरे से कहते हैं) ये बात कभी न मानो कि दीन की जो सआदत तुम्हें दी गई है (यानी यहूदियों को दी गई है) वैसी अब किसी दूसरे इन्सान को मिल सके या अल्लाह के हुज़ूर तुम्हारे ख़िलाफ़ किसी की कोई हुज्जत चल सके। (ऐ पैग़म्बर!) इन लोगों से कह दो: हिदायत तो वही है जो अल्लाह की हिदायत है (और उसकी राह सबके लिए खुली हुई है)। और फ़ज़्ल और बख़्शिश का सर-रिश्ता तुम्हारे हाथ नहीं है, अल्लाह के हाथ है, जिसे चाहे दे दे। वो (अपने फ़ज़्ल में) बड़ी वुस्अ़त रखने वाला और सब कुछ जानने वाला है। (3: 73)

यानी यहूदियों को एतिक़ाद ये है कि वह्यो-नुबुव्वत की हिदायत जो उन्हें दी गई है, वो सिर्फ़ उन्हीं के लिए है, मुमकिन नहीं किसी दूसरे इन्सान या क़ौम को ये बात हासिल हो सके। चुनांचे इसी बिना पर वो कहते हैं: अपने मज़हब के आदमियों के अ़लावा और किसी आदमी की सच्चाई और बुज़ुर्गी तस्लीम न करो और न ये बात मानो कि तुम्हारे ख़िलाफ़ (यानी यहूदियों के ख़िलाफ़) किसी

आदमी की कोई दलील ख़ुदा के हुज़ूर मक़बूल हो सकती है। क़ुरआन इस ज़ोमे-बातिल का रद करता है और कहता है إِنَّ الْهُدَىٰ هُدَى اللَّهِ हिदायत की राह तो वही है जो अल्लाह की हिदायत है और अल्लाह का फ़ज़्ल किसी एक इन्सान या गिरोह ही के लिए नहीं है, सबके लिए है। पस जो इन्सान भी हिदायत की राह चलेगा, हिदायत-याफ़्ता होगा, ख़्वाह यहूदी हो या कोई हो।

यहूदी अपने आपको निजात-याफ़्ता उम्मत समझते थे और कहते थे दोज़ख़ की आग हमपर हराम कर दी गई है

यहूदियों की गिरोह बन्दी का ग़ुरूर यहाँ तक बढ़ गया था कि वो कहते थे: ख़ुदा ने दोज़ख़ की आग हमपर हराम कर दी है। अगर हममें से कोई आदमी जहन्नम में डाला भी जाएगा तो इसलिए नहीं कि उसे अज़ाब में डाला जाए, बल्कि इसलिए कि गुनाह के दाग़-धब्बों से पाको-साफ़ कर दिया जाए और फिर जन्नत में जा दाख़िल हो। क़ुरआन उनका ये ज़ोमे-बातिल जा-बजा नक़ल करता है और फिर उसका रद करते हुए पूछता है: ये बात तुम्हें कहाँ से मालूम हो गई कि यहूदी गिरोह बन्दी का हर फ़र्द निजात-याफ़्ता है और अज़ाबे उख़रवी से उसे छुटकारा मिल चुका है? क्या तुम्हें ख़ुदा ने ग़ैर-मशरूत[1] निजात का कोई पट्टा लिख कर दे दिया है कि जहाँ एक इन्सान यहूदी हुआ और आतिशे दोज़ख़[2] उस पर हराम हो गई? अगर नहीं दिया है तो फिर बताओ ऐसा एतिक़ाद रखना ख़ुदा पर इफ़्तरा नहीं है तो और क्या है? इसके बाद साफ़-साफ़ लफ़्ज़ों में

1-बिना शर्त। 2-नर्क की आग।

ख़ुदा के क़ानूने अ़मल का एलान करता है: "जिस किसी ने भी अपने अ़मल से बुराई कमाई, उसके लिए बुराई है। जिस किसी ने भी भलाई कमाई, उसके लिए भलाई है" यानी जिस तरह संखिया खाने से हर खाने वाला हलाक हो जाता है, ख़्वाह यहूदी हो या ग़ैर-यहूदी और दूध पीने से सेहतो-तवानाई मिलती है, ख़्वाह पीने वाला किसी नस्ल व क़ौम और गिरोह से तअ़ल्लुक़ रखता हो, इसी तरह आ़लमे मअ़्नवियात[1] में भी हर अ़मल का एक ख़ास्सा है और वो इसलिए बदला नहीं जा सकता कि अ़मल करने वाले की नस्ल या गिरोह बन्दी क्या है। चुनांचे सूर: बक़रा में है :

وَقَالُوْا لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ اِلَّا اَيَّامًا مَّعْدُوْدَةً ؕ قُلْ اَتَّخَذْتُمْ عِنْدَ اللّٰهِ عَهْدًا فَلَنْ يُّخْلِفَ اللّٰهُ عَهْدَهٗۤ اَمْ تَقُوْلُوْنَ عَلَى اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُوْنَ ۝

और उन लोगों ने (यानी यहूदियों ने) कहा: हमें जहन्नम की आग कभी छूने वाली नहीं, और अगर छुए भी तो इससे ज़्यादा नहीं कि चन्द दिनों के लिए छुए। (ऐ पैग़म्बर!) इनसे कहो: ये जो तुम कहते हो तो क्या तुमने ख़ुदा से कोई क़ौलो-क़रार[2] करा लिया है और अब वो अपने क़ौलो-क़रार से फिर नहीं सकता या फिर तुम ख़ुदा के नाम से एक ऐसी (झूठी) बात कह रहे हो जिसका तुम्हें कोई इल्म नहीं।

1-आध्यात्मिक जगत। 2-समझौता, वचन लेना।

بلٰى من كسب سيّئة و احاطت به خطيئته فاولٰئك اصحٰب النّار ج هم فيها خٰلدون ○ والّذين امنوا وعملوا الصّٰلحٰت اولٰئك اصحٰب الجنّة ج هم فيها خٰلدون ○

(٢: ٨٠-٨٢)

नहीं! (ख़ुदा का क़ानून तो ये है कि किसी नस्ल और किसी गिरोह का इन्सान हो, लेकिन) जिस किसी ने भी बुराई कमाई और अपने गुनाहों में घिर गया तो वो दोज़ख़ी गिरोह में से है, हमेशा दोज़ख़ में रहने वाला। और जिस किसी ने भी ईमान की राह इख़्तियार की और नेक अमल हुआ तो वो बहिश्ती गिरोह में से है, हमेशा बहिश्त में रहने वाला है। (2: 80-82)

क़ानूने निजात का एलाने आम

सूर: निसा में न सिर्फ़ यहूदियों और ईसाइयों को बल्कि सबको मुख़ातिब करके साफ़-साफ़ एलान कर दिया है, ऐसा एलान जिसके बाद किसी तरह के शको-शुब्हा की गुंजाइश बाक़ि नहीं रही :

ليس بامانيّكم ولا امانىّ اهل الكتٰب ط من يّعمل سوٓءًا يّجز به ولا يجد له من دون الله وليًّا وّلا نصيرًا ○

(٤: ١٢٣)

(मुसलमानों! याद रखो निजात और सआदत) न तो तुम्हारी आर्ज़ुओं पर मौक़ूफ़ है न अहले किताब की आर्ज़ुओं[1] पर (ख़ुदा का क़ानून ये है कि) जो कोई भी बुराई करेगा उसका नतीजा उसके सामने आएगा और फिर

1- आकांक्षाओं पर आधारित है।

न तो किसी की दोस्ती बचा सकेगी न किसी ताक़त की मददगारी। (4: 123)

यहूदी समझते थे ग़ैर-मज़हब वालों के साथ मामलात में दियानतदारी ज़रूरी नहीं, क़ुरआन का इस पर इनकार

इसी मज़हबी गिरोह बन्दी का नतीजा था कि यहूदी समझते थे सच्चाई और दियानतदारी के जिस क़द्र भी अहकाम हैं वो इसलिए नहीं हैं कि तमाम इन्सानों के साथ अ़मल में लाए जाएँ बल्कि महज़ इसलिए हैं कि एक यहूदी दूसरे यहूदी के साथ बद-दियानती न करे। वो कहते थे: अगर एक आदमी हमारा हम-मज़हब नहीं है तो हमारे लिए जाइज़ है कि जिस तरह भी चाहें उसका माल खा लें, कुछ ज़रूरी नहीं कि रास्तबाज़ी व दियानत के उसूल मलहूज़[1] रखे जाएँ। चुनांचे लेन-देन में सूद की मुमानिअ़त को उन्होंने सिर्फ़ अपने हम-मज़हबों के साथ मख़्सूस कर दिया था और आज तक उनका तर्ज़े-अ़मल यही है। वो कहते हैं कि एक यहूदी को दूसरे यहूदी से ज़ालिमाना सूद नहीं लेना चाहिए, लेकिन एक यहूदी ग़ैर-यहूदी से ले तो कोई मुज़ाइक़ा[2] नहीं। क़ुरआन उनके इस अ़क़ीदे का ज़िक्र करता है और इसे उनकी बड़ी गुमराही क़रार देता है :

और उनका सूद खाना, हालाँकि वो इससे रोक दिये गए थे, और उनकी ये बात कि लोगों का	وَاَخْذِهِمُ الرِّبٰوا وَقَدْ نُهُوْا عَنْهُ وَاَكْلِهِمْ اَمْوَالَ النَّاسِ

1-ध्यान रखा जाए। 2-हर्ज नहीं, बुराई नहीं।

بِالْبَاطِلِ ۭ (٤: ١٦١)

माल नाजाइज़ तरीक़े पर खा लेते थे। (4: 161)

इसी तरह जो यहूदी अ़रब में आबाद थे वो कहते थे: अ़रब के अन-पढ़ बाशिन्दों के साथ मामला करने में रास्त-बाज़ी व दियानतदारी कुछ ज़रूरी नहीं। ये लोग बुत-परस्त हैं, हम इन लोगों का माल जिस तरह भी खा लें हमारे लिए जाइज़ है :

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوْا لَيْسَ عَلَيْنَا فِى الْاُمِّيّٖنَ سَبِيْلٌ ۚ وَيَقُوْلُوْنَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ وَهُمْ يَعْلَمُوْنَ ٥ بَلٰى مَنْ اَوْفٰى بِعَهْدِهٖ وَاتَّقٰى فَاِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِيْنَ ٥

(٣: ٧٥-٧٦)

(यहूदियों की) ये (बद-मामलगी) इसलिए है कि वो कहते हैं (अ़रब के इन) अनपढ़ लोगों से (बद-मामलगी करने में) हमसे कोई बाज़-पुर्स नहीं होगी, (जिस तरह भी हम चाहें इनका माल खा सकते हैं, हालाँकि) ऐसा कहते हुए वो सरीह अल्लाह पर इफ़्तरा करते हैं। हाँ ! (इनसे बाज़-पुर्स हो और ज़रूर हो, क्योंकि अल्लाह का क़ानून तो ये है कि) जो कोई अपना क़ौलो-क़रार सच्चाई के साथ पूरा करता है और बुराई से बचता है तो वही अल्लाह की ख़ुशनूदी हासिल करता है। और अल्लाह बुराई से बचने वालों को दोस्त रखता है।

(3: 75-76)

यानी ऐसा अक़ीदा रखना ख़ुदा के दीन पर सरीह इफ़्तरा[1] है। ख़ुदा का दीन तो ये है कि हर इन्सान के साथ नेकी करनी चाहिए और हर हाल में रास्तबाज़ी व दियानतदारी का राह चलनी चाहिए, ख़्वाह कोई इन्सान हो और किसी अक़ीदे और गिरोह का हो, क्योंकि सफ़ेद हर हाल में सफ़ेद है और सियाह हर हाल में सियाह। कोई सफ़ेद चीज़ इसलिए काली नहीं हो सकती कि किस आदमी को दी गई है। और कोई काली चीज़ इसलिए सफ़ेद नहीं हो जा सकती कि किस नस्ल और किस गिरोह के हाथों निकली है। पस दियानतदारी हर हाल में दियानतदारी है और बद-दियानती हर हाल में बद-दियानती।

हज़रत इब्राहीम की शख़्सियत से इस्तिशहाद

नुज़ूले क़ुरआन के वक़्त बड़े मज़हबी गिरोह अ़रब में तीन थे: यहूदी, ईसाई और मुश्रिकीने अ़रब। और ये तीनों हज़रत इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) की शख़्सियत को यकसाँ तौर पर इज़्ज़तो-एहतिराम की नज़र से देखते थे, क्योंकि तीनों गिरोहों के मूरिसे-आला[2] वही थे। पस क़ुरआन मज़हबी गिरोह बन्दी की गुमराही को वाज़ेह करने के लिए एक निहायत सीधा सादा सवाल इन तीनों के आगे पेश करता है। अगर दीन की सच्चाई गिरोह बन्दियों के साथ वाबस्ता है तो बताओ हज़रत इब्राहीम किस गिरोह बन्दी के आदमी थे? ये ज़ाहिर है कि उस वक़्त तक न तो यहूदियत का ज़ुहूर हुआ था, न मसीहियत का और न कोई दूसरी गिरोह बन्दी ही मौजूद थी। फिर अगर इब्राहीम किसी गिरोह बन्दी में दाख़िल न होने पर भी दीने

1-दीन से हटना, दीन के साथ न्याय न करना। 2-पितामह।

हक़ की राह पर थे तो बताओ वो राह कौन-सी थी? क़ुरआन कहता है: वो इसी दीने हक़ीक़ी की राह थी जो तुम्हारी तमाम बनाई हुई गिरोह बन्दियों से बालातर और नौए इन्सानी के लिए आलमगीर क़ानूने निजात है, यानी ख़ुदा की मोवहिदाना परस्तिश और नेक अमली की ज़िन्दगी :

وَقَالُوْا كُوْنُوْا هُوْدًا اَوْ نَصٰرٰى تَهْتَدُوْا ؕ قُلْ بَلْ مِلَّةَ اِبْرٰهٖمَ حَنِيْفًا ؕ وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝

(۲:۱۳۵)

और यहूदी कहते हैं: यहूदी हो जाओ, हिदायत पाओगे। नसारा कहते हैं: नस्रानी हो जाओ हिदायत पाओगे। (ऐ पैग़म्बर!) तुम कहो: नहीं! (अल्लाह की आलमगीर हिदायत तुम्हारी इन गिरोह बन्दियों की पाबन्द नहीं हो जा सकती)। हिदायत की राह तो वही हनीफ़ी[1] राह है जो इब्राहीम का तरीक़ा था और वो मुश्रिकों मे से न था।
(2: 135)

सूर: आले इमरान में यही मज़्मून ज़्यादा वज़ाहत के साथ बयान किया है:

يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تُحَآجُّوْنَ فِیْۤ اِبْرٰهِیْمَ وَمَاۤ اُنْزِلَتِ التَّوْرٰىةُ

ऐ अहले किताब! तुम इब्राहीम के बारे में क्यों हुज्जत करते हो, हालाँकि ये बात बिल्कुल ज़ाहिर है कि तौरात और इंजील

1-सच्ची राह।

وَالْاِنْجِيْلُ اِلَّا مِنْ بَعْدِهٖ ؕ اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ٥ (٣: ٦٥)

नाज़िल नहीं हुई मगर उसके बाद। फिर क्या इतनी साफ़ बात भी समझ नहीं सकते? (3: 65)

यानी वो यहूदियों और ईसाइयों से सवाल करता है: तुम्हारी इन गिरोह बन्दियों की तारीख़ ज़्यादा से ज़्यादा तौरात और इंजील के ज़ुहूर तक जा सकती है, क्योंकि इन्हीं की निस्बत से गिरोह बन्दियों के हल्के खींचे गए हैं। अच्छा! बताओ तौरात से पहले भी हिदायत-याफ़्ता इन्सान मौजूद थे या नहीं? अगर थे तो उनकी राह क्या थी? ख़ुद तुम्हारे इस्राईली घराने के तमाम नबियों की राह क्या थी? हज़रत इब्राहीम ने अपने बेटों और पोतों को जिस दीन की तल्क़ीन की वो दीन कौन-सा था? हज़रत याक़ूब जब बिस्तरे-मर्ग[1] पर थे और अपने बेटों को दीने इलाही पर क़ायम रहने की वसिय्यत कर रहे थे तो उस दीन से मक़सूद कौन-सा दीन था? ये तो ज़ाहिर है कि वो यहूदियत या मसीहियत की गिरोह बन्दी नहीं हो सकती, क्योंकि ये दोनों गिरोह बन्दियाँ हज़रत मूसा और हज़रत मसीह के नाम पर की गई हैं और वो हज़रत इब्राहीम और हज़रत याक़ूब से कई सौ बरस बाद पैदा हुए। पस मालूम हुआ तुम्हारे इन ख़ुद-साख़्ता हल्क़हाए-निजात[2] से भी कोई बालातर राहे निजात मौजूद है जो उस वक़्त भी नौए इन्सानी के सामने मौजूद थी जब इन हल्क़ा बन्दियों का नामो-निशान तक न था। क़ुरआन कहता है: यही राहे निजात दीन की अस्ली राह है और इसे हासिल करने के लिए किसी गिरोह बन्दी की नहीं, बल्कि एतिक़ाद और अमल की ज़रूरत है :

1-मृत्यु शय्या। 2-स्वयंभू मुक्ति मार्ग।

ام كُنْتُمْ شُهَدَآءَ اِذْ حَضَرَ يَعْقُوْبَ الْمَوْتُ اِذْ قَالَ لِبَنِيْهِ مَا تَعْبُدُوْنَ مِنْ بَعْدِيْ قَالُوْا نَعْبُدُ اِلٰهَكَ وَاِلٰهَ اٰبَآئِكَ اِبْرٰهِيْمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ اِلٰهًا وَّاحِدًا وَّنَحْنُ لَهٗ مُسْلِمُوْنَ ○

(۲:۱۳۳)

फिर क्या तुम उस वक़्त मौजूद थे जब याकूब के सरहाने मौत आ खड़ी हुई थी और उसने अपनी औलाद से पूछा था: बताओ मेरे बाद किस की इबादत करोगे? उन्होंने जवाब में कहा था: एक ख़ुदा की इबादत करेंगे जिसकी तू ने इबादत की है और तेरे बुज़ुर्गों इब्राहीम, इसमाईल और इसहाक़ ने की है, और हम ख़ुदा के हुक्मों के फ़रमाँबरदार हैं। (2: 133)

अस्ल दीन वह्दतो-उखुव्वत है न कि तफ़रिक़ा व मुनाफ़िरत

वो कहता है: दीने इलाही की अस्ल नौऐ इन्सानी की उखुव्वतो-वह्दत[1] है न कि तफ़रिक़ा[2] व मुनाफ़िरत। ख़ुदा के जितने रसूल भी दुनिया में आए, सबने यही तालीम दी कि तुम सब अस्लन एक ही उम्मत हो और तुम सब का परवरदिगार एक ही परवरदिगार है। पस चाहिए कि सब उसी एक परवरदिगार की बन्दगी करें और एक घराने के भाइयों की तरह मिल-जुल कर रहें। अगर्चे हर मज़हब के दाई[3] ने इसी राह की तालीम दी, लेकिन हर मज़हब के

1-एकता, साम्यता। 2-भेदभाव, अंतर करना। 3-आमंत्रणकर्ता।

पैरवों ने इससे इन्हिराफ़[1] किया, नतीजा ये निकला कि हर मुल्क, हर कौम, हर नस्ल ने अपने-अपने जत्थे अलग-अलग बना लिए और हर जत्था अपने तौर-तरीके में मगन हो गया।

कुरआन ने पिछले रसूलों और मज़हब के बानियों में से जिन जिन रहनुमाओं के मवाइज़ नकल किए हैं उन सब में भी अस्ले उसूल यही हकीकत है और उमूमन अक्सर मवाइज़ का ख़ातिमा दीन की वह्दत और इन्सान की आलमगीर उखुव्वत[2] की तालीम पर ही होता है। मसलन सूर: मोमिनून में सबसे पहले हज़रत नूह (अलैहि०) की दावत का ज़िक्र किया है :

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا نُوْحًا اِلٰى قَوْمِهٖ فَقَالَ يٰقَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِّنْ اِلٰهٍ غَيْرُهٗ ؕ اَفَلَا تَتَّقُوْنَ ۝ (23 :23)

इसके बाद उन दावतों की तरफ़ इशारा किया है जो हज़रत नूह (अलैहिस्सलाम) के बाद होती रहीं :

ثُمَّ اَنْشَاْنَا مِنْۢ بَعْدِهِمْ قَرْنًا اٰخَرِيْنَ ۝ فَاَرْسَلْنَا فِيْهِمْ رَسُوْلًا مِّنْهُمْ اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِّنْ اِلٰهٍ غَيْرُهٗ ؕ (23: 31-32)

फिर हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) का ज़िक्र किया है :

ثُمَّ اَرْسَلْنَا مُوْسٰى وَاَخَاهُ هٰرُوْنَ ۙ (23: 45)

हज़रत मूसा के बाद हज़रत मसीह की दावत नुमायाँ हुई :

وَجَعَلْنَا ابْنَ مَرْيَمَ وَاُمَّهٗۤ اٰيَةً (23: 50)

फिर इन तमाम दावतों के बाद ये सदाए हक़ बुलन्द होती है:

1-हटना, भटकना। 2-सार्वभौमिक मानव एकता।

يٰٓاَيُّهَا الرُّسُلُ كُلُوْا مِنَ الطَّيِّبٰتِ وَاعْمَلُوْا صَالِحًا ؕ اِنِّىْ بِمَا تَعْمَلُوْنَ عَلِيْمٌ ۝ وَاِنَّ هٰذِهٖٓ اُمَّتُكُمْ اُمَّةً وَّاحِدَةً وَّاَنَا رَبُّكُمْ فَاتَّقُوْنِ ۝ فَتَقَطَّعُوْٓا اَمْرَهُمْ بَيْنَهُمْ زُبُرًا ؕ كُلُّ حِزْبٍۢ بِمَا لَدَيْهِمْ فَرِحُوْنَ ۝

(٢٣: ٥١-٥٣)

(और) हमने तमाम रसूलों को यही हुक्म दिया था कि पाको-साफ़ चीज़ें खाओ और नेक अमली की ज़िन्दगी बसर करो। तुम जो कुछ करते हो उससे मैं बेख़बर नहीं हूँ। और (देखो!) ये तुम्हारी क़ौम दरअसल एक ही क़ौम है और मैं तुम सबका परवरदिगार हूँ, पस नाफ़रमानी से बचो। लेकिन फिर ऐसा हुआ कि लोगों ने एक दूसरे से कट कर जुदा-जुदा दीन बना लिए ,हर टोली के पल्ले जो कुछ पड़ गया है उसी में मगन है।

(23: 51-53)

यानी तमाम रसूलों ने यके-बाद दीगरे यही तालीम दी थी कि ख़ुदा की बन्दगी करो और नेक अमली की ज़िन्दगी इख़्तियार करो। तुम सब ख़ुदा के नज़दीक एक ही उम्मत हो और तुम सबका परवरदिगार एक ही परवरदिगार है। तुममें से कोई गिरोह दूसरे गिरोह को अपने से अलग न समझे, न कोई गिरोह दूसरे गिरोह का मुख़ालिफ़ हो जाए।

"فَتَقَطَّعُوْٓا اَمْرَهُمْ بَيْنَهُمْ زُبُرًا ؕ" लेकिन लोगों ने ये तालीम फ़रामोश कर दी और अपनी अलग-अलग टोलियाँ बना लीं। "كُلُّ حِزْبٍۢ بِمَا لَدَيْهِمْ فَرِحُوْنَ ۝" अब हर टोली उसी में मगन है

जो उसके पल्ले पड़ गया है।

रस्मे इस्तिबाग़

मज़हबी गिरोह बन्दी की रस्मों में से एक रस्म वो है जो ईसाई कलीसा ने इख़्तियार कर रखी है और जिसे वो इस्तिबाग़ (बप्तिस्मा) से ताबीर करते हैं। ये दरअसल एक यहूदी रस्म थी जो उस वक़्त अदा की जाती थी जब लोग गुनाहों से तौबा किया करते थे और इसलिए फ़ी-नफ़्सिही एक मुक़र्रर रस्म से ज़्यादा अहमियत नहीं रखती थी। लेकिन ईसाइयों ने इसे इन्सानी निजातो-सआदत की बुनियाद समझ लिया है। जब तक एक शख़्स मसीह अलैहिस्सलाम के नाम पर इस्तिबाग़ न ले वो निजात-याफ़्ता इन्सान नहीं समझा जाता। क़ुरआन कहता है: ये कैसी गुमराही है कि इन्सानी निजात व सआदत जिस का दारो-मदार अमल व एतिक़ाद पर है, महज़ एक मुक़र्ररा रस्म के साथ वाबस्ता[1] कर दी जाए! इन्सानों का ये ठहराया हुआ इस्तिबाग़ अल्लाह का इस्तिबाग़ नहीं है, अल्लाह का इस्तिबाग़ तो ये है कि तुम्हारे दिल ख़ुदा परस्ती के रंग में रंग जाएँ :

صِبْغَةَ اللّٰهِ ج وَمَنْ اَحْسَنُ مِنَ اللّٰهِ صِبْغَةً ز وَّنَحْنُ لَهٗ عٰبِدُوْنَ ۝ (۲:۱۳۸)

ये अल्लाह का रंग है (यानी दीने इलाही का क़ुदरती इस्तिबाग़ है) और अल्लाह से बेहतर रंग देने में और कौन हो सकता है? हम तो उसी की बन्दगी करने वाले हैं (2: 138)

1-जोड़ना।

क़ानूने अ़मल

इसी तरह सूर: बक़रा में बार-बार कहा गया है: दीने इलाही अ़मल का क़ानून है और हर इन्सान के लिए वही होना है जो उसके अ़मल की कमाई है। ये बात कि एक गिरोह में बहुत से नबी और बर्गुज़ीदा इन्सान हो चुके हैं या नेक इन्सानों की नस्ल में से है या किसी पिछली क़ौम से रिश्तए क़दामत[1] रखता है निजातो-सआ़दत के लिए सूदमन्द नहीं :

تِلْكَ اُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ ۚ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَّا كَسَبْتُمْ ۚ وَ لَا تُسْئَلُوْنَ عَمَّا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝

(٢: ١٣٤)

ये एक उम्मत थी जो गुज़र चुकी और इसके लिए वो था जो इसने अपने अ़मल से कमाया और तुम्हारे लिए वो है जो अपने अ़मल से कमाओ, तुमसे इसकी बाज़-पुर्स नहीं होगी कि उनके अ़मल कैसे थे।

(2: 134)

● ❋ ●

1-पुराना रिश्ता।

क़ुरआन की दावत

चुनांचे हम देखते हैं, कोई बात भी क़ुरआन के सफ़्हों पर इस दर्जा नुमायाँ नहीं है जिस क़द्र ये बात है। उसने बार-बार साफ़ और क़तई लफ़्ज़ों में इस हक़ीक़त का एलान कर दिया है कि वो किसी नई मज़हबी गिरोह बन्दी की दावत लेकर नहीं आया है, बल्कि चाहता है तमाम मज़हबी गिरोह बन्दियों की जंगो-निज़ाअ़ से दुनिया को निजात दिला दे और सबको उसी एक राह पर जमा कर दे जो सबकी मुश्तरक और मुत्तफ़िक़ा राह है।

वो बार-बार कहता है: जिस राह की मैं दावत देता हूँ वो कोई नई राह नहीं है और न सच्चाई की राह नई हो सकती है। ये वही राह है जो अव्वल रोज़ से मौजूद है और तमाम मज़ाहिब के दाइयों ने इसी की तरफ़ बुलाया है :

شَرَعَ لَكُمْ مِنَ الدِّيْنِ مَا وَصّٰى بِهٖ نُوْحًا وَّالَّذِيْٓ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ وَمَا وَصَّيْنَا بِهٖٓ اِبْرٰهِيْمَ وَمُوْسٰى وَعِيْسٰٓى اَنْ اَقِيْمُوا الدِّيْنَ وَلَا تَتَفَرَّقُوْا فِيْهِ ۭ (٤٢:١٣)

और (देखो!) उसने तुम्हारे लिए दीन की वही राह ठहराई है जिकी वसिय्यत नूह को की गई थी और जिस पर चलने का इब्राहीम और मूसा और ईसा (अ़लैहिमुस्सलाम) को हुक्म दिया था। (इन सबकी तालीम यही थी) कि अद्दीन (यानी ख़ुदा का एक ही दीन) क़ायम रखो और इस राह में अलग-अलग न हो जाओ। (42: 13)

सूर: निसा में है :

إِنَّا أَوْحَيْنَا إِلَيْكَ كَمَا أَوْحَيْنَا إِلَىٰ نُوحٍ وَالنَّبِيِّينَ مِنْ بَعْدِهِ ۚ وَأَوْحَيْنَا إِلَىٰ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ وَإِسْحَاقَ وَيَعْقُوبَ وَالْأَسْبَاطِ وَعِيسَىٰ وَأَيُّوبَ وَيُونُسَ وَهَارُونَ وَسُلَيْمَانَ ۚ وَآتَيْنَا دَاوُودَ زَبُورًا ۝ وَرُسُلًا قَدْ قَصَصْنَاهُمْ عَلَيْكَ مِنْ قَبْلُ وَرُسُلًا لَمْ نَقْصُصْهُمْ عَلَيْكَ ۚ

(٤: ١٦٣-١٦٤)

(ऐ पैग़म्बर!) हमने तुम्हें उसी तरह अपनी वह्य से मुख़ातिब किया है जिस तरह नूह को किया था और उन तमाम नबियों को किया था जो नूह के बाद हुए। नीज़ जिस तरह इब्राहीम, इसमाईल, इसहाक़, याक़ूब, औलादे याक़ूब, ईसा, अय्यूब, यूनुस, हारून, सुलैमान (वग़ैरहुम) को मुख़ातिब किया और दाऊद को ज़बूर अता की। अलावा बरीं वो रसूल जिन में से बाज़ का हाल हम तुम्हें पहले सुना चुके हैं और बाज़ ऐसे हैं जिनका हाल तुम्हें नहीं सुनाया। (4: 163-164)

सूर: अन्आम में पिछले रसूलों का ज़िक्र करके पैग़म्बरे इस्लाम को मुख़ातिब किया है और कहा है :

أُولَٰئِكَ الَّذِينَ هَدَى اللَّهُ ۖ فَبِهُدَاهُمُ اقْتَدِهْ ۗ

(٦: ٩٠)

ये वो लोग हैं जिन्हें अल्लाह ने राहे हक़ दिखाई, पस (ऐ पैग़म्बर!) तुम भी इन्हीं की हिदायत की पैरवी करो। (6: 09)

सबकी यक्साँ तस्दीक़ और सबके मुत्तफ़िक़ा दीन की पैरवी इसकी दावत का अस्ले उसूल है

इसी लिए इसकी दावत की पहली बुनियाद ही ये है कि तमाम बानियाने मज़ाहिब की यक्साँ तौर पर तस्दीक़ की जाए, यानी यक़ीन किया जाए कि सब हक़ पर थे, सब ख़ुदा की सच्चाई के पैग़ाम्बर थे, सबने एक ही अस्ल व क़ानून की तालीम दी और सबकी इस मुत्तफ़िक़ा तालीम पर कारबन्द होना ही हिदायतो-सआदत की तन्हा राह है :

(ऐ पैग़म्बर !) कह दो: हमारा तरीक़ा तो ये है कि हम अल्लाह पर ईमान लाए हैं और जो कुछ उसने हमपर नाज़िल किया है उस पर ईमान लाए हैं। नीज़ जो कुछ इब्राहीम, इसमाईल, इसहाक़ याक़ूब, और औलादे याक़ूब (अलैहिमुस्सलाम) पर नाज़िल हुआ है, उन सब पर ईमान रखते हैं। इसी तरह जो कुछ मूसा और ईसा को और दुनिया के तमाम नबियों को उनके परवरदिगार से दिया गया है, सब पर हमारा ईमान है। हम उनमें से किसी एक को भी

قُلْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَآ اُنْزِلَ عَلَيْنَا وَمَآ اُنْزِلَ عَلٰٓى اِبْرٰهِيْمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ وَالْاَسْبَاطِ وَمَآ اُوْتِيَ مُوْسٰى وَعِيْسٰى وَالنَّبِيُّوْنَ مِنْ رَّبِّهِمْ ۔

لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ ز وَنَحْنُ لَهٗ مُسْلِمُوْنَ ○

(٣: ٨٧)

दूसरे से जुदा नहीं करते (कि उसे न मानें, दूसरों को मानें, हम सबकी यक्साँ तौर पर तस्दीक़ करते हैं) और हम अल्लाह के फ़रमाँबरदार हैं (उसकी सच्चाई जहाँ कहीं भी और जिस किसी की ज़बानी भी आई हो, उस पर हमारा ईमान है)। (3: 87)

तफ़्रीक़ बैनर्रुसुल

क़ुरआन ने इस आयत में और नीज़ मुतअ़द्दिद मौक़ों पर 'तफ़्रीक़ बैनर्रुसुल'[1] को एक बहुत बड़ी गुमराही क़रार दिया है और सच्चाई की राह ये बतलाई है कि 'तफ़्रीक़ बैनर्रुसुल' से इनकार किया जाए। 'तफ़्रीक़ बैनर्रुसुल' के मअ़ना ये हैं कि ख़ुदा के रसूलों में बएतिबारे तस्दीक़ तफ़रिक़ा व इम्तियाज़ करना, यानी ऐसा समझना कि उनमें से फुलाँ सच्चा था, फुलाँ सच्चा न था या किसी एक की तस्दीक़ करना, बाक़ी सबसे इनकार कर देना या सबकी तस्दीक़ करना, किसी एक से इनकार कर देना। क़ुरआन कहता है: हर रास्तबाज़ इन्सान का जो ख़ुदा के सच्चे दीन पर चलना चाहता है, फ़र्ज़ है कि बिला किसी इम्तियाज़ के तमाम रसूलों, तमाम किताबों, तमाम मज़हबी दावतों पर ईमान लाए और किसी एक का भी इनकार न करे। उसका शेवा ये होना चाहिए कि वो कहे:

1-रसूलों में भेद करना।

सच्चाई जहाँ कहीं भी ज़ाहिर हुई है और जिस किसी की ज़बान पर भी ज़ाहिर हुई है, सच्चाई है और मेरा उस पर ईमान है :

اٰمَنَ الرَّسُوْلُ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِ مِنْ رَّبِّهٖ وَالْمُؤْمِنُوْنَ ؕ كُلٌّ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَمَلٰٓئِكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ قف لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْ رُّسُلِهٖ قف وَقَالُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا غُفْرَانَكَ رَبَّنَا وَاِلَيْكَ الْمَصِيْرُ ٥ (٢: ٢٨٥)

अल्लाह का रसूल उस (कलामे हक़) पर ईमान रखता है जो उसके परवरदिगार की तरफ़ से उस पर नाज़िल हुआ है और वो लोग भी जो ईमान लाए हैं। ये सब अल्लाह पर उसके मलाइका पर, उसकी किताबों पर, उसके रसूलों पर ईमान रखते हैं। (उनके ईमान का दस्तूरुल-अ़मल ये है कि वो कहते हैं) हम अल्लाह के रसूलों में से किसी को दूसरे से जुदा नहीं करते (किसी को मानें, किसी को न मानें)। उन्होंने कहा: ख़ुदाया! हमने तेरा प्याम सुना और तेरी फ़रमाँबरदारी की। हमें तेरी मग़्फ़िरत नसीब हो। हम सबको बिल-आख़िर तेरी ही तरफ़ लौटना है। (2: 285)

वो कहता है: ख़ुदा एक है, उसकी सच्चाई एक है, लेकिन सच्चाई का पैग़ाम बहुत सी ज़बानों ने पहुँचाया है। फिर अगर तुम किसी एक पैग़म्बर की तस्दीक़ करते हो, दूसरों का इनकार कर देते

हो तो इसके मअ़ना ये हुए कि एक ही हक़ीक़त को एक जगह मान लेते हो, दूसरी जगह ठुकरा देते हो या एक ही बात को मानते भी हो, रद भी करते हो। ज़ाहिर है कि ऐसा मानना, मानना नहीं है, बल्कि एक ज़्यादा बुरी क़िस्म का इनकार है।

ख़ुदा की सच्चाई उसकी आ़लमगीर बख़्शिश है

वो कहता है: ख़ुदा की सच्चाई, उसकी सारी बातों की तरह, उसकी आ़लमगीर बख़्शिश[1] है, वो न तो किसी ख़ास ज़माने से वाबस्ता की जा सकती है, न किसी ख़ास नस्लो-क़ौम से और न किसी ख़ास मज़हबी गिरोह बन्दी से। तुमने अपने लिए तरह-तरह की क़ौमियतें और जुग़राफ़ियाई[2] और नस्ली हद-बन्दियाँ बना ली हैं, लेकिन तुम ख़ुदा की सच्चाई के लिए कोई ऐसा इम्तियाज़ नहीं घढ़ सकते, उसकी न तो कोई क़ौमियत है, न नस्ल है, न जुग़राफ़ियाई हद बन्दी है, न जमाअ़ती हल्क़ा बन्दी। वो ख़ुदा के सूरज की तरह हर जगह चमकती और नौअ़े इन्सानी के हर फ़र्द को रौशनी बख़्शती है। अगर तुम ख़ुदा की सच्चाई की ढूंढ में हो तो उसे किसी एक ही गोशे में न ढूंढो, वो हर जगह नमूदार हुई है, वो हर अ़हद में अपना ज़ुहूर रखती है। तुम्हें ज़मानों का, क़ौमों का, वतनों का, ज़बानों का और तहर-तरह की गिरोह बन्दियों का परिस्तार नहीं होना चाहिए। सिर्फ़ ख़ुदा का और उसकी आ़लगीर सच्चाई का परिस्तार होना चाहिए। उसकी सच्चाई जहाँ कहीं भी आई हो ओर जिस भेस में भी आई हो, तुम्हारी मताअ़ है और तुम उसके वारिस हो।

1-सार्वभौमिक वरदान। 2-भौगोलिक।

राहें सिर्फ़ दो हैं: ईमान की ये है कि सबको मानों, इनकार की ये है कि सबका या किसी एक का इनकार कर दो

चुनाँचे उसने जा-बजा ''तफ़रीक़ बैनर्रुसुल'' की राह को इनकार की राह क़रार दिया है और ईमान की राह ये बताई है कि बिला तफ़रीक़ सबकी तस्दीक़ की जाए। वो कहता है: यहाँ राहें सिर्फ़ दो ही हैं, तीसरी नहीं हो सकती। ईमान की राह ये है कि सबको मानो, इनकार की राह ये है कि सबका या किसी एक का इनकार करो। यहाँ किसी एक का इनकार भी वही हुक्म रखता है जो सबके इनकार का है :

اِنَّ الَّـذِيْنَ يَـكْـفُـرُوْنَ بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَيُـرِيْـدُوْنَ اَنْ يُّـفَـرِّقُوْا بَيْنَ اللّٰهِ وَرُسُلِـهٖ وَيَـقُـوْلُـوْنَ نُؤْمِنُ بِبَعْضٍ وَّنَكْفُرُ بِـبَعْضٍ ۙ وَيُـرِيْدُوْنَ اَنْ يَّـتَّخِذُوْا بَـيْنَ ذٰلِكَ سَبِـيْـلًا ۝ اُولٰٓـئِـكَ هُـمُ الْـكٰفِرُوْنَ حَـقًّا ۚ وَاَعْـتَـدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ عَـذَابًا مُّهِـيْـنًا ۝

जो लोग अल्लाह और उसके पैग़म्बरों से बरगश्ता हैं और चाहते हैं अल्लाह और उसके रसूलों में तफ़रिक़ा करें (यानी किसी को ख़ुदा का रसूल मानें, किसी को न मानें) और कहते हैं: इनमें से बाज़ को हम मानते हैं, बाज़ का इनकार करते हैं और फिर इस तरह चाहते हैं कुफ़्र और ईमान के दरमियान कोई तीसरा रास्ता इख़्तियार कर लें तो यक़ीन करो यही लोग हैं कि इनके कुफ़्र में कोई

وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَلَمْ يُفَرِّقُوْا بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ اُولٰٓئِكَ سَوْفَ يُؤْتِيْهِمْ اُجُوْرَهُمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ۝

(١٥٢_١٥٠ :٤)

शुब्हा नहीं और जिन लोगों की राह कुफ़्र की राह है तो उनके लिए रुस्वाकुन अ़ज़ाब तैयार है। लेकिन हाँ! जो लोग अल्लाह और उसके पैग़म्बरों पर ईमान लाए और किसी एक पैग़म्बर को भी दूसरों से जुदा नहीं किया (यानी किसी एक की सच्चाई से भी इनकार नहीं किया) तो बिला शुब्हा यही लोग हैं जिन्हें अनक़रीब अल्लाह उनके अज्र अ़ता फ़रमाएगा और वो बड़ा ही बख़्शने वाला मेहरबान है। (4: 150-152)

सूरः बक़रा में, जो सूरः फ़ातिहा के बाद क़ुरआन की पहली सूरत है, सच्चे मोमिनों की राह ये बतलाई है :

وَالَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ ۚ وَبِالْاٰخِرَةِ هُمْ يُوْقِنُوْنَ ۝ اُولٰٓئِكَ عَلٰى هُدًى مِّنْ رَّبِّهِمْ ۚ

और वो लोगों जो उस सच्चाई पर ईमान लाए जो पैग़म्बरे इस्लाम पर नाज़िल हुई है और उन तमाम सच्चाइयों पर जो इनसे पहले नाज़िल हो चुकी हैं और नीज़ आख़िरत की ज़िन्दगी पर भी यक़ीन रखते हैं सो यही लोग हैं जो अपने परवरदिगार

وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ ٥

(٢: ٤-٥)

की ठहराई हुई हिदायत पर हैं और यही हैं जिन्होंने फ़लाह[1] पाई। (2: 4-5)

जब सब एक ही ख़ुदा के परिस्तार हैं और सबको अपने-अपने अ़मल के मुताबिक़ नतीजा मिलना है तो फिर दीन के नाम पर निज़ाअ़ क्यों हो

वो कहता है: अगर तुम्हें इस बात से इनकार नहीं कि तमाम कारख़ान-ए-हस्ती का ख़ालिक़ एक ही ख़ालिक़ है और उसी की परवरदिगारी यक्साँ तौर पर हर मख़्लूक़ की परवरिश कर रही है तो फिर तुम्हें इस बात में क्यों इनकार हो कि उसकी रूहानी सच्चाई का क़ानून भी एक ही है और एक ही तरह पर तमाम नौअ़े इन्सानी को दिया गया है? वो कहता है: तुम सबका परवरदिगार एक है, तुम सब एक ही ख़ुदा के नाम लेवा हो, तुम सबके रहनुमाओं ने तुम्हें एक ही राह दिखलाई है। फिर ये कैसी गुमराही की इन्तहा[2] और अ़क्ल की मौत है कि रिश्ता एक है, मक़्सद एक है, राह एक है, लेकिन हर गिरोह दसूरे गिरोह का दुशमन है और हर इन्सान दूसरे इन्सान से मुतनफ़्फ़िर। और फिर ये तमाम जंगो-निज़ाअ़[3] किस के नाम पर की जा रही है? उसी ख़ुदा के नाम पर और उसी ख़ुदा के दीन के नाम पर जिसने सबको एक ही चौखट पर झुका दिया था और सबको एक ही रिश्तए उखुव्वत में जकड़ दिया था :

1-सफलता, शुभत्व। 2-पराकाष्ठा। 3-टकराव, लड़ाई।

قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ هَلْ تَنْقِمُوْنَ مِنَّآ اِلَّآ اَنْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْنَا وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلُ لا وَاَنَّ اَكْثَرَكُمْ فٰسِقُوْنَ ٥ (٥٩:٥)

इन लोगों से कहो कि ऐ अहले किताब! तुम जो हमारी मुख़ालफ़त में कमरबस्ता हो गए हो तो बतलाओ इसके सिवा हमारा जुर्म क्या है कि हम अल्लाह पर ईमान लाए हैं और जो कुछ हमपर नाज़िल हुआ है और जो कुछ हमसे पहले नाज़िल हो चुका है, सब पर ईमान रखते हैं! (फिर क्या ख़ुदा परस्ती और ख़ुदा के तमाम रसूलों की तस्दीक़ तुम्हारे नज़दीक जुर्म और ऐब है? अफ़सोस तुमपर!) तुममें अक्सर ऐसे ही हैं जो राहे हक़ से यक्सर बरगश्ता हैं। (5: 59)

وَاِنَّ اللّٰهَ رَبِّىْ وَرَبُّكُمْ فَاعْبُدُوْهُ ط هٰذَا صِرَاطٌ مُّسْتَقِيْمٌ ٥ (١٩:٣٦)

(देखो!) ख़ुदा तो मेरा और तुम्हारा दोनों का परवरदिगार है, पस उसी की बन्दगी करो, यही दीन की सीधी राह है। (19: 36)

قُلْ اَتُحَآجُّوْنَنَا فِى اللّٰهِ وَهُوَ رَبُّنَا وَرَبُّكُمْ ج وَلَنَآ اَعْمَالُنَا

(ऐ पैग़म्बर! इनसे) कहो! क्या तुम ख़ुदा के बारे में हमसे झगड़ा करते हो? हालाँकि

وَلَكُمْ اَعْمَالُكُمْ ۚ وَنَحْنُ لَهٗ مُخْلِصُوْنَ ۝ (٢:١٣٩)

हमारा और तुम्हारा दोनों का परवरदिगार वही है और हमारे लिए हमारे आमाल हैं, तुम्हारे लिए तुम्हारे आमाल (यानी हर इन्सान को उसके अ़मल के मुताबिक़ नतीजा मिलना है, फिर इस बारे में झगड़ा क्यों?) (2: 139)

ये बात याद रखनी चाहिए कि क़ुरआन में जहाँ कहीं इस तरह के मुख़ातिबात हैं, जैसा कि आयाते मुन्दरज-ए-सदर में हैं : " اِنَّ اللّٰهَ رَبِّیْ وَرَبُّكُمْ " अल्लाह हमारा और तुम्हारा दोनों का परवरदिगार है या " اِلٰهُنَا وَاِلٰهُكُمْ وَاحِدٌ "(29:46) हमारा और तुम्हारा दोनों का ख़ुदा एक ही है या :

اَتُحَآجُّوْنَنَا فِی اللّٰهِ وَهُوَ رَبُّنَا وَرَبُّكُمْ ۚ وَلَنَآ اَعْمَالُنَا وَلَكُمْ اَعْمَالُكُمْ ۚ

क्या तुम ख़ुदा के बारे में हमसे झगड़ा करते हो? हालाँकि वो हमारा और तुम्हारा दोनों का परवरदिगार है। तो इन तमाम मुख़ातिबात से मक़सूद इसी हक़ीक़त पर ज़ोर देना है, यानी जब सबका परवरदिगार एक है और हर इन्सान के लिए वैसा ही नतीजा है जैसा उसका अ़मल है तो फिर ख़ुदा और मज़हब के नाम पर ये आ़लमगीर जंगो-जिदाल क्यों बरपा है? वो बार-बार कहता है: मेरी तालीम इसके सिवा कुछ नहीं कि ख़ुदा परस्ती और नेक अ़मली की तरफ़ बुलाता हूँ, मैं किसी मज़हब को नहीं झुठलाता, मैं किसी रहनुमा से इनकार नहीं करता। 'सबकी यक्साँ तस्दीक़' और 'सबकी

मुश्तरका और मुत्तफ़िक़ा तालीम' मेरा दस्तूरुल-अ़मल है। फिर मेरे ख़िलाफ़ तमाम पैरवाने मज़हब ने क्यों एलाने जंग कर दिया है ?

क़ुरआन का पैरवाने मज़ाहिब से मुतालबा

और यही वजह है कि हम देखते हैं उसने किसी मज़हब के पैरौ से भी ये मुतालबा नहीं किया कि वो कोई नया दीन क़बूल कर ले, बल्कि हर गिरोह से यही मुतालबा करता है कि अपने-अपने मज़ाहिब की हक़ीक़ी तालीम पर जिसे तुमने तरह-तरह की तहरीफ़ों और इज़ाफ़ों से मस्ख़ कर दिया है, सच्चाई के साथ कारबन्द हो जाओ। वो कहता है: अगर तुमने ऐसा कर लिया तो मेरा काम पूरा हो गया, क्योंकि जूँ ही तुम अपने मज़हब की तालीम की तरफ़ लौटोगे, तुम्हारे सामने वही हक़ीक़त आ मौजूद होगी जिसकी तरफ़ मैं तुम्हें बुला रहा हूँ, मेरा प्याम कोई नया प्याम नहीं है, वही क़दीम और आ़लमगीर प्याम है जो तमाम बानियाने मज़हब[1] दे चुके हैं :

قُلْ يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ لَسْتُمْ عَلٰى شَیْءٍ حَتّٰى تُقِيْمُوا التَّوْرٰةَ وَالْاِنْجِيْلَ وَمَاۤ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِّنْ رَّبِّكُمْ ؕ وَلَيَزِيْدَنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ مَّاۤ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ طُغْيَانًا وَّكُفْرًا ۚ فَلَا تَاْسَ عَلٰى

[(ऐ पैग़म्बर! इन लोगों से) कह दो (110)] ऐ अहले किताब! जब तक तुम तौरात और इंजील की और उन तमाम सहीफ़ों की जो तुम पर नाज़िल हुए हैं, हक़ीक़त क़ायम न करो उस वक़्त तक तुम्हारे पास दीन में से कुछ भी नहीं है। और (ऐ पैग़म्बर!) तुम्हारे परवरदिगार

1-धर्म-प्रवर्तक।

الْقَوْمِ الْكَافِرِيْنَ ۝

की तरफ़ से जो कुछ तुमपर नाज़िल हुआ है (बजाए इसके कि ये लोग उससे हिदायत हासिल करें, तुम देखोगे कि) उनमें से बहुतों का कुफ़्रो-तुग्यान उसकी वजह से और ज़्यादा बढ़ जाएगा। तो जिन लोगों ने इनकारे हक़ की राह इख़्तियार कर ली, तुम उनकी हालत पर बेकार को ग़म न खाओ।

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَالَّذِيْنَ هَادُوْا وَالصّٰبِـُٔوْنَ وَالنَّصٰرٰى مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَ عَمِلَ صَالِحًا فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝

(٥:٦٨-٦٩)

जो लोग तुमपर ईमान लाए हैं, जो यहूदी हैं, जो साबी हैं, जो नसारा हैं (ये हों या कोई हो) जो कोई भी अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान लाया और उसके अमल भी नेक हुए तो उसके लिए न तो किसी तरह का ख़ौफ़ है, न किसी तरह की ग़मगीनी।

(5: 68-69)

यही वजह है कि क़ुरआन ने उन रास्तबाज़ इन्सानों के ईमानो- अमल का पूरी फ़राख़-दिली के साथ एतिराफ़ किया है जो नुज़ूले क़ुरआन के वक़्त मुख़्तलिफ़ मज़ाहिब में मौजूद थे और जिन्होंने अपने मज़हबों की हक़ीक़ी रूह ज़ाय नहीं की थी। अलबत्ता

वो कहता है: ऐसे लोगों की तादाद बहुत ही कम है। ग़ालिब तादाद उन्हीं लोगों की है जिन्होंने दीने इलाही की एतिक़ादी और अ़मली हक़ीक़त यक- क़लम ज़ाय कर दी है :

ये बात नहीं है कि सब एक ही तरह के हों। इन्हीं अहले किताब में से ऐसे लोग भी हैं कि अस्ल दीन पर क़ायम हैं, वो रातों को उठ-उठ कर अल्लाह के कलाम की तिलावत करते हैं और उनके सर उसके सामने झुके होते हैं। और वो अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर ईमान रखते हैं, नेकी का हुक्म देते हैं, बुराई से रोकते हैं, नेकी की राहों में तीज़गाम हैं। और बिला-शुब्हा यही लोग हैं जो नेक इन्सानों में से हैं। और (याद रखो!) ये लोग जो कुछ भी नेकी करते हैं तो हरगिज़ ऐसा नहीं होगा कि उसकी क़द्र न की जाए। वो जानता है कि (कि किस गिरोह में) कौन परहेज़गार है।

(3: 113-115)

لَيْسُوْا سَوَآءً ط مِنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اُمَّةٌ قَآئِمَةٌ يَّتْلُوْنَ اٰيٰتِ اللّٰهِ اٰنَآءَ الَّيْلِ وَهُمْ يَسْجُدُوْنَ ۝ يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَيَاْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَيُسَارِعُوْنَ فِى الْخَيْرٰتِ ط وَاُولٰٓئِكَ مِنَ الصّٰلِحِيْنَ ۝ وَمَا يَفْعَلُوْا مِنْ خَيْرٍ فَلَنْ يُّكْفَرُوْهُ ط وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ بِالْمُتَّقِيْنَ ۝

(۳: ۱۱۳-۱۱۵)

مِنْهُمْ أُمَّةٌ مُّقْتَصِدَةٌ ط وَكَثِيرٌ مِّنْهُمْ سَآءَ مَا يَعْمَلُونَ ٥ (٥: ٦٦)

इनमें एक गिरोह ऐसे लोगों का भी है जो मियाना-रौ हैं, लेकिन बड़ी तादाद ऐसे लोगों की है कि जो कुछ करते हैं, बुरा ही करते हैं। (5: 66)

ये जो क़ुरआन जा-बजा इस बात पर ज़ोर देता है कि वो पिछली आसमानी किताबों की तस्दीक़ करने वाला है, झुठलाने वाला नहीं, और अहले किताब से बार-बार कहता है :

(2:41)"وَاٰمِنُوْا بِمَآ اَنْزَلْتُ مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ" और उस किताब पर ईमान लाओ जो तुम्हारी किताब की तस्दीक़ करती हुई नुमायाँ हुई है" तो इससे मक़सूद भी इसी हक़ीक़त पर ज़ोर देना है, यानी जब मेरी तालीम तुम्हारे मुक़द्दस नविश्तों[1] के ख़िलाफ़ कोई नया दीन नहीं पेश करती और न उनसे तुम्हें मुन्हरिफ़ करना चाहती है, बल्कि सर-तासर मुसद्दिक़ व मुअय्यिद है तो फिर तुममें और मुझ में निज़ाअ़[2] क्यों है? क्यों तुम मेरे ख़िलाफ़ एलाने जंग कर दो?

इस्तिलाहे क़ुरआनी में 'अल-मारूफ़' और 'अल-मुन्कर'

और फिर यही वजह है कि हम देखते हैं उसने नेकी के लिए "मारूफ़" का और बुराई के लिए "मुन्कर" का लफ़्ज़ इख़्तियार किया है: وَاْمُرْ بِالْمَعْرُوْفِ وَانْهَ عَنِ الْمُنْكَرِ (31: 17)। मारूफ़ "उर्फ़" से है जिसके मअ़ना पहचानने के हैं, पस "मारूफ़" वो बात हुई जो

1-किताबों, धर्मग्रंथों। 2-झगड़ा, विवाद।

जानी पहचानी बात हो। "मुन्कर" के मअ़ना इनकार करने के हैं, यानी ऐसी बात जिससे आ़म तौर से इनकार किया गया हो। पस क़ुरआन ने नेकी और बुराई के लिए ये अल्फ़ाज़ इसलिए इख़्तियार किये कि वो कहता है: दुनिया में अ़क़ाइद व अफ़्कार का कितना ही इख़्तिलाफ़ क्यों न हो, लेकिन कुछ बातें ऐसी हैं जिनके अच्छे होने पर सबका इत्तिफ़ाक़ है और कुछ बातें ऐसी हैं जिनके बुरे होने पर सब मुत्तफ़िक़ हैं। मसलन इस बात में सबका इत्तिफ़ाक़ है कि सच बोलना चाहिए, झूठ बोलना बुरा है। इसमें सबका इत्तिफ़ाक़ है कि दियानतदारी अच्छी बात है, बद-दियानती बुरी बात है। इससे किसी को इख़्तिलाफ़ नहीं कि माँ-बाप की ख़िदम, हमसाया से सुलूक, मिसकीनों की ख़बरगीरी, मज़्लूम की दादरसी इन्सान के अच्छे आमाल हैं और ज़ुल्म और बद-सुलूकी बुरे आमाल हैं। गोया ये वो बातें हुईं जिनकी अच्छाई आ़म तौर जानी-बूझी हुई है और जिनके ख़िलाफ़ जाना आ़म तौर पर क़ाबिले इनकार व एतिराज़ है। दुनिया के तमाम मज़ाहिब, दुनिया के तमाम इख़्लाक़, दुनिया की तमाम हिकमतें, दुनिया की तमाम जमाअ़तें दूसरी बातों में कितना ही इख़्तिलाफ़ रखती हों, लेकिन जहाँ तक इन आमाल का तअ़ल्लुक़ है सब हमआहंग व हमराय हैं।

क़ुरआन कहता है: ये आमाल जिनकी अच्छाई आ़म तौर पर नौए़ इन्सानी की जानी-बूझी हुई है, दीने इलाही के मतलूबा आमाल हैं। इसी तरह वो आमाल जिनसे आ़म तौर पर इनकार किया गया है और जिनकी बुराई पर तमाम मज़ाहिब मुत्तफ़िक़ हैं, दीने इलाही

के मम्नूआ[1] आमाल हैं। ये बात चूंकि दीन की अस्ल हक़ीक़त थी, इसलिए इसमें इख़्तिलाफ़ न हो सका और मज़हबी गिरोहों की बेशुमार गुमराहियों और हक़ीक़त फ़रामोशियों पर भी हमेशा मालूम व मुसल्लम रही।

इन आमाल की अच्छाई और बुराई पर नौअ़े इन्सानी के तमाम अ़हदों, तमाम मज़हबों और तमाम क़ौमों का आ़लमगीर इत्तिफ़ाक़ उनकी फ़ित्री असलियत पर एक बहुत बड़ी दलील है। पस जहाँ तक आमाल का तअ़ल्लुक़ है, मैं उन्हीं बातों के करने का हुक्म देता हूँ जिनकी अच्छाई आ़म तौर पर जानी-बूझी हुई है और उन्हीं बातों से रोकता हूँ जिनसे आ़म तौर पर नौअ़े इन्सानी ने इन्कार किया है, यानी मैं मारूफ़ का हुक्म देता हूँ, मुन्कर से रोकता हूँ। पस जब मेरी दावत का ये हाल है तो फिर किसी इन्सान को भी जिसे रास्तबाज़ी से इख़्तिलाफ़ नहीं, क्यों मुझ से इख़्तिलाफ़ हो ?

'अद्दीनुल-क़ैयिम' और 'फ़ित्रतल्लाह'

वो कहता है: यही राहे अ़मल नौअ़े इन्सानी के लिए ख़ुदा का ठहराया हुआ फ़ित्री दीन है और फ़ित्रत के क़वानीन में कभी तब्दीली नहीं हो सकती। यही 'अद्दीनुल-क़ैयिम' है, यानी सीधा और दुरुस्त दीन जिसमें किसी तरह की कजी और ख़ामी नहीं। यही 'दीने हनीफ़'[2] है जिसकी दावत हज़रत इब्राहीम ने दी थी। इसी का नाम मेरी इस्तिलाह में 'अल-इस्लाम' है, यानी ख़ुदा के ठहराए हुए क़वानीन की फ़रमाँबर्दारी :

1-निषिद्ध, वर्जित। 2-सत्य-धर्म।

فاقم وجهك للدين حنيفا ط فطرت الله التى فطر الناس عليها ط لاتبديل لخلق الله ط ذلك الدين القيم ق ولكن اكثر الناس لايعلمون ٥ منيبين اليه واتقوه واقيموا الصلوة ولا تكونوا من المشركين ٥ من الذين فرقوا دينهم وكانوا شيعا ط كل حزب بما لديهم فرحون ٥

(٣٠: ٣٠-٣٢)

तुम हर तरफ़ से मुँह फेर कर "अद्दीन" की तरफ़ रुख़ करो, यही ख़ुदा की बनावट है जिस पर उसने इन्सानों को पैदा किया है। अल्लाह की बनावट में कभी तब्दीली नहीं हो सकती। यही "अद्दीनुल-क़ैयिम" (यानी सीधा और सच्चा दीन) है, लेकिन अक्सर इन्सान ऐस हैं जो नहीं जानते। (देखो!) उसी (एक ख़ुदा) की तरफ़ मुतवज्जह रहो, उसकी नाफ़रमानी से बचो, नमाज़ क़ायम करो और मुश्रिकों में से न हो जाओ जिन्होंने अपने दीन के टुकड़े-टुकड़े कर दिए और गिरोह बन्दियों में बट गए। हर गिरोह के पास जो कुछ है वो उसी में मगन है।

(30: 30-32)

"अल-इस्लाम"

वो कहता है: ख़ुदा का ठहराया हुआ दीन जो कुछ है यही है। इसके सिवा जो कुछ बना लिया गया है वो इन्सानी गिरोह बन्दियों की गुमराहियाँ हैं। पस अगर तुम ख़ुदा परस्ती और अमले सालेह की अस्ल पर जो तुम सबके यहाँ अस्ले दीन है, जमा हो

जाओ और ख़ुद-साख़्ता गुमराहियों से बाज़ आ जाओ तो मेरा मक़्सद पूरा हो गया, मैं इस,से ज़्यादा और क्या चाहता हूँ ?

إِنَّ الدِّيْنَ عِنْدَ اللّٰهِ الْإِسْلَامُ قف وَمَا اخْتَلَفَ الَّذِيْنَ أُوْتُوا الْكِتٰبَ إِلَّا مِنْ ۢ بَعْدِ مَا جَآءَهُمُ الْعِلْمُ بَغْيًا ۢ بَيْنَهُمْ ط وَمَنْ يَّكْفُرْ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ فَإِنَّ اللّٰهَ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ○

अल्लाह के नज़दीक दीन एक ही है और वो "अल-इस्लाम" है और ये जो अहले किताब ने इख़्तिलाफ़ किया (और एक दीन पर मुजतमा रहने की जगह यहूदियत और नस्रानियत की गिरोह बन्दियों में बट गए) तो ये इसलिए हुआ कि अगर्चे इल्मो-हक़ीक़त की राह उनपर खुल चुकी थी, लेकिन आपस की ज़िद और सरकशी से इख़्तिलाफ़ में पड़ गए। और (याद रखो!) जो कोई अल्लाह की आयतों से इनकार करता है तो अल्लाह (का क़ानूने मुकाफ़ात भी) हिसाब लेने में सुस्त-रफ़्तार नहीं।

فَإِنْ حَآجُّوْكَ فَقُلْ أَسْلَمْتُ وَجْهِيَ لِلّٰهِ وَمَنِ اتَّبَعَنِ ط وَقُلْ لِّلَّذِيْنَ أُوْتُوا الْكِتٰبَ وَالْأُمِّيّٖنَ

फिर अगर ये लोग तुमसे इस बारे में झगड़ा करें तो तुम कहो: मेरी और मेरे पैरवों की राह तो ये है कि अल्लाह के आगे सरे इताअ़त झुका देना, और हमने

ءَ اَسْلَمْتُمْ ؕ فَاِنْ اَسْلَمُوْا فَقَدِ اهْتَدَوْا ۚ وَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلٰغُ ؕ وَاللّٰهُ بَصِيْرٌ ۢ بِالْعِبَادِ ۝

(۳:۱۹۔۲۰)

सर झुका दिया है। फिर अहले किताब से और अनपढ़ लोगों से (यानी मुश्रिकीने अ़रब से) पूछो: तुम भी अल्लाह के आगे झुकते हो या नहीं? (यानी सारी बातें झगड़े की छोड़ो, ये बताओ तुम्हें ख़ुदा परस्ती मनज़ूर है या नहीं?) अगर वो झुक गए तो (सारा झगड़ा ख़त्म हो गया और) उन्होंने राह पा ली। अगर रू-गर्दानी करें तो तुम्हारे ज़िम्मे जो कुछ है वो प्यामे हक़ पहुँचा देना है और अल्लाह की नज़रों से बन्दों का हाल पोशीदा नहीं। (3: 19-20)

उसने दीन के लिए "अल-इस्लाम" का लफ़्ज़ इसी लिए इख़्तियार किया है कि "इस्लाम" के मअ़ना किसी बात के मान लेने और फ़रमाँबर्दारी करने के हैं: वो कहता है: दीन की हक़ीक़त यही है कि ख़ुदा ने जो क़ानूने सआ़दत इन्सान के लिए ठहरा दिया है उसकी ठीक-ठीक इताअ़त की जाए। वो कहता है: ये कुछ इन्सान ही के लिए नहीं है, बल्कि तमाम काइनाते हस्ती इसी अस्ल पर क़ायम है। सबके बक़ा व क़ियाम के लिए ख़ुदा ने कोई न कोई क़ानूने अ़मल ठहरा दिया है और सब उसकी इताअ़त कर रहे हैं। अगर एक लमहा के लिए भी रू-गर्दानी करें तो कारख़ान-ए-हस्ती दर्हम-बर्हम

हो जाए :

फिर क्या ये लोगो चाहते हैं अल्लाह का ठहराया हुआ दीन छोड़ कर कोई दूसरा दीन ढूंढ निकालें, हालांकि आसमान और ज़मीन में जो कोई भी है सब चारो-नाचार उसी के ठहराए हुए क़ानूने अ़मल के आगे झुके हुए हैं और (बिल-आख़िर) सबको उसी की तरफ़ लौटना है। (3: 83)

اَفَغَيۡرَ دِيۡنِ اللّٰهِ يَبۡغُوۡنَ وَلَهٗۤ اَسۡلَمَ مَنۡ فِى السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضِ طَوۡعًا وَّكَرۡهًا وَّاِلَيۡهِ يُرۡجَعُوۡنَ ۝

(٣: ٨٣)

वो जब कहता है: ''अल-इस्लाम के सिवा कोई दीन अल्लाह के नज़दीक मक़्बूल नहीं'' तो इसका मतलब यही होता है कि दीने हक़ीक़ी के सिवा जो एक ही है और तमाम रसूलों की मुश्तरक तालीम है, इन्सानी साख़्त की कोई गिरोह बन्दी मक़्बूल नहीं। सूर: आले इमरान में जहाँ ये बात बयान की है कि दीने हक़ीक़ी की राह तमाम मज़हबी रहनुमाओं की तस्दीक़ और पैरवी की राह है, वहीं मुत्तसिलन ये भी कह दिया है :

और जो कोई इस्लाम के सिवा कोई दूसरा दीन चाहेगा तो याद रखो! उसकी राह कभी क़बूल न की जाएगी और वो आख़िरत के दिन (देखेगा कि) तबाह होने वालों में से है। (3: 85)

وَمَنۡ يَّبۡتَغِ غَيۡرَ الۡاِسۡلَامِ دِيۡنًا فَلَنۡ يُّقۡبَلَ مِنۡهُ ۚ وَهُوَ فِى الۡاٰخِرَةِ مِنَ الۡخٰسِرِيۡنَ ۝

(٣: ٨٥)

और इसी लिए वो तमाम पैरवाने दावत को बार-बार मुतनब्बह करता है कि दीन में तफ़रिक़ा और गिरोह बन्दी से बचें और उसी गुमराही में मुब्तला न हो जाएँ जिससे क़ुरआन ने निजात दिलाई है। वो कहता है: मेरी दावत ने तमाम इन्सानों को जो मज़हब के नाम पर एक दूसरे के दुशमन हो रहे थे, ख़ुदा परस्ती की राह में इस तरह जोड़ दिया कि एक दूसरे के जाँ-निसार भाई बन गए।

एक यहूदी जो पहले हज़रत मसीह का नाम सुनते ही नफ़रत से भर जाता था, एक ईसाई जो हर यहूदी के ख़ून का प्यासा था, एक मजूसी जिसके नज़दीक तमाम ग़ैर मजूसी नापाक थे, एक अरब जो अपने सिवा सबको इन्सानी शर्फ़ो-महासिन से तही-दस्त समझता था, एक साबी जो यक़ीन करता था कि दुनिया की क़दीम सच्चाई सिर्फ़ उसी के हिस्से में आई है, इन सबको दावते क़ुरआनी ने एक सफ़ में खड़ा कर दिया है और अब ये सब एक दूसरे से नफ़रत करने की जगह एक दूसरे के मज़हबी रहनुमाओं की तम्दीक़ करते और सबकी बताई हुई मुत्तफ़िक़ा राहे हिदायत पर गामज़न हैं :

और (देखो!) सब मिल-जुल कर अल्लाह की रस्सी मज़बूत पकड़ लो और जुदा-जुदा न हो, अल्लाह ने तुमपर जो फ़ज़्लो-करम किया है उसे याद करो। तुम्हारा हाल ये था कि एक दूसरे के दुशमन हो रहे थे, फिर अल्लाह ने तुम्हारे दिलों में	وَاعْتَصِمُوا بِحَبْلِ اللّٰهِ جَمِيعًا وَّلَا تَفَرَّقُوا ۔ وَاذْكُرُوا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ كُنْتُمْ اَعْدَآءً فَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوبِكُمْ فَاَصْبَحْتُمْ بِنِعْمَتِهٖٓ اِخْوَانًا ۚ وَكُنْتُمْ عَلٰى

شَفَا حُفْرَةٍ مِّنَ النَّارِ فَاَنْقَذَكُمْ مِنْهَا ؕ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُوْنَ ○

(۳: ۱۰۳)

बाहम-दिगर उल्फ़त पैदा कर दी, फिर ऐसा हुआ कि इनामे इलाही से भाई-भाई हो गए। और (देखो!) तुम्हारा हाल ये था गोया आग से भरा हुआ गढ़ा है और उसके किनारे खड़े हो, लेकिन अल्लाह ने तुम्हें बचा लिया। अल्लाह इसी तरह अपनी कार-फ़रमाइयों की निशानियाँ तुमपर वाज़ेह करता है, ताकि हिदायत पाओ।

(3: 103)

وَلَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ تَفَرَّقُوْا وَاخْتَلَفُوْا مِنْۢ بَعْدِ مَا جَآءَهُمُ الْبَيِّنٰتُ ؕ وَاُولٰٓئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ○

(۳: ۱۰۵)

और (देखो!) उन लोगों की सी चाल इख़्तियार न कर लेना जो (एक दीन पर क़ायम रहने की जगह) जुदा-जुदा हो गए और इख़्तिलाफ़ में पड़ गए, बावजूदे कि रौशन दलीलें उनके सामने आ चुकी थीं। (याद रखो!) यही लोग हैं जिनके लिए (कामयाबी व फ़लाह की जगह) बड़ा (भारी) अज़ाब है।

(3: 105)

وَاَنَّ هٰذَا صِرَاطِىْ مُسْتَقِيْمًا فَاتَّبِعُوْهُ ۚ وَلَا تَتَّبِعُوا السُّبُلَ فَتَفَرَّقَ بِكُمْ عَنْ سَبِيْلِهٖ ۭ ذٰلِكُمْ وَصّٰىكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ۝
(٦:١٥٣)

और (देखो!) ये मेरी राह है, बिल्कुल सीधी राह, पस इसी एक राह पर चलो, तरह-तरह की राहों के पीछे न पड़ जाओ कि वो तुम्हें ख़ुदा की राह से हटा कर जुदा-जुदा कर देंगी। यही बात है जिसका ख़ुदा तुम्हें हुक्म देता ताकि तुम (ना फ़रमानी से) बचो। (6: 153)

क़ुरआन और उसके मुख़ालिफ़ों में बिना-ए-निज़ाअ़

अब चन्द लम्हों के लिए उस निज़ाअ़[1] पर ग़ौर करो जो क़ुरआन और उसके मुख़लिफ़ों में पैदा हो गई थी, ये मुख़ालिफ़ कौन थे? पिछले मज़ाहिब के पैरौ थे जिन में बाज़ के पास किताब थी, बाज़ के पास न थी।

अच्छा ! बिनाए. निज़ाअ़ क्या थी ?

क्या ये थी कि क़ुरआन ने उनके बानियों और रहनुमाओं को झुठलाया था या उनकी मुक़द्दस किताबों से इनकार किया था? और इसलिए. वो इसकी मुख़ालफ़त में कमरबस्ता हो गए. थे।

क्या ये थी कि उसने दावा किया था ख़ुदा की सच्चाई सिर्फ़ मेरे ही हिस्से में आई है और तमाम पैरवाने मज़ाहिब को चाहिए. अपने-अपने नबियों से बरगश्ता हो जाएँ. ?

या फिर उसने दीन के नाम से कोई ऐसी बात कर दी थी जो पैरवाने मज़हब के लिए. बिल्कुल नई बात थी और इसलिए. क़ुदरती तौर पर उन्हें मानने में तअम्मुल था ?

क़ुरआन के सफ़्हे खुले हुए. हैं और उसके नुज़ूल की तारीख़ भी दुनिया के सामने है। ये दोनों हमें बतलाते हैं कि इन तमाम बातों में से कोई बात भी न थी और न हो सकती थी। उसने न सिर्फ़ उन तमाम रहनुमाओं की तस्दीक़ की जिनके नामलेवा उसके सामने थे, बल्कि साफ़-साफ़ लफ़्ज़ों में कह दिया: मुझसे पहले जितने

1-झगड़े का कारण, विवाद की जड़।

भी पैग़म्बर आ चुके हैं, मैं सबकी तस्दीक़ करता हूँ और उनमें से किसी एक के इनकार को भी ख़ुदा की सच्चाई का इनकार समझता हूँ। उसने किसी मज़हब के मानने वाले से ये मुतालबा नहीं किया कि वो अपने मज़हब की दावत से इनकार कर दे, बल्कि जब कभी मुतालबा किया तो यही किया कि अपने-अपने मज़हबों की हक़ीक़ी तालीम पर कारबन्द हो जाओ, क्योंकि तमाम मज़हबों की अस्ल तालीम एक ही है। उसने न तो कोई नया उसूल पेश किया, न कोई नया अ़मल बताया। उसने हमेशा उन्हीं बातों पर ज़ोर दिया जो दुनिया के तमाम मज़ाहिब की सबसे ज़्यादा जानी-बूझी हुई बातें रही हैं। यानी ईमान और अ़मले-सालेह[1]। उसने जब कभी लोगों को अपनी तरफ़ बुलाया तो यही कहा है: अपने-अपने मज़हबों की हक़ीक़त अज़-सरे नौ[2] ताज़ा कर लो, तुम्हारा ऐसा करना ही मुझे क़बूल कर लेना है।

सवाल ये है कि जब क़ुरआन की दावत का ये हाल था तो फिर आख़िर इसमें और इसके मुख़ालिफ़ों में वजहे-निज़ाअ़ क्या थी? एक शख़्स जो किसी को बुरा नहीं कहता, सबको मानता और सबकी ताज़ीम[3] करता है और हमें उन्हीं बातों की तलक़ीन करता है जो सबके यहाँ मानी हुई हैं, कोई उससे लड़े तो क्यों लड़े और क्यों लोगों को उसका साथ देने से इनकार हो ?

कहा जाता है कि क़ुरैशे मक्का की मुख़ालफ़त इस बिना पर थी कि क़ुरआन ने बुत परस्ती से इनकार कर दिया था और वो बुत परस्ती के तरीक़ों से मालूफ़ हो चुके थे। बिला-शुब्हा एक वजहे निज़ाअ़ ये भी है। लेकिन सिर्फ़ यही वजहे निज़ाअ़ नहीं हो सकती।

1-सद् कर्म। 2-नये सिरे से। 3-सम्मान।

सवाल ये है कि यहूदियों ने क्यों मुख़ालफ़त की जो बुत परस्ती से क़तअ़न किनाराकश थे? ईसाई क्यों बरसरे-पैकार हो गए जिन्होंने कभी बुत परस्ती की हिमायत का दावा नहीं किया ?

पैरवाने मज़हब की मुख़ालफ़त इसलिए न थी कि झुठलाता क्यों है, बल्कि इसलिए कि झुठलाता क्यों नहीं ?

अस्ल ये है कि पैरवाने मज़ाहिब की मुख़ालफ़त इसलिए न थी कि वो उन्हें झुठलाता क्यों है, बल्कि इसलिए थी कि झुठलाता क्यों नहीं? हर मज़हब का पैरौ चाहता था कि वो सिर्फ़ उसी को सच्चा कहे, बाक़ी सबको झुठलाए। और चूंकि वो यक्साँ तौर पर सबकी तस्दीक़ करता था, इसलिए कोई भी इससे ख़ुश नहीं हो सकता था। यहूदी इस बात से तो बहुत ख़ुश थे कि क़ुरआन हज़रत मूसा की तस्दीक़ करता है, लेकिन वो सिर्फ़ इतना ही नहीं करता था, वो हज़रत मसीह की भी तस्दीक़ करता था और यहीं आकर इसमें और यहूदियों में निज़ाअ़ शुरू हो जाती थी। ईसाइयों को इस पर क्या एतिराज़ हो सकता था कि हज़रत मसीह और हज़रत मरयम की पाकी व सदाक़त का एलान किया जाए? लेकिन क़ुरआन सिर्फ़ इतना ही नहीं करता था, वो ये भी कहता था कि निजात का दारो-मदार एतिक़ादो-अ़मल पर है, न कि कफ़्फ़ारा[1] और इस्तिबाग़ पर। और क़ानूने निजात की ये आ़लमगीर वुस्अ़त ईसाई कलीसा के लिए ना क़ाबिले बर्दाश्त थी।

1-पश्चात्ताप।

इसी तरह क़ुरैशे-मक्का के लिए इससे बढ़ कर कोई दिलख़ुश सदा नहीं हो सकती थी कि हज़रत इब्राहीम और हज़रत इसमाईल की बुज़ुर्गी का एतिराफ़ किया जाए, लेकिन जब वो देखते थे कि क़ुरआन जिस तरह इन दोनों की बुज़ुर्गी का एतिराफ़ करता है, उसी तरह यहूदियों के पैग़म्बरों और ईसाइयों के दाई का भी मोतरिफ़[1] है तो उनके नस्ली और जमाअ़ती ग़ुरूर को ठेस लगती थी। वो कहते थे: ऐसे लोग हज़रत इब्राहीम और हज़रत इसमाईल के पैरौ क्यों कर हो सकते हैं जो उनकी बुज़ुर्गी और सदाक़त की सफ़ मे दूसरों को भी ला खड़ा करते हैं।

तीन उसूल जो क़ुरआन में और उसके मुख़ालिफ़ों में बिनाए निज़ाअ़ हुए

मुख़्तसरन यूँ समझना चाहिए कि क़ुरआन के तीन उसूल ऐसे थे जो उसमें और तमाम पैरवाने मज़ाहिब में वजहे-निज़ाअ़ हो गए :

1- वो मज़हबी गिरोह बन्दी की रूह का मुख़ालिफ़ था और दीन की वह्दत यानी एक होने का एलान करता था। अगर पैरवाने मज़ाहिब ये मान लेते तो उन्हें तस्लीम करना पड़ता कि दीन की सच्चाई किसी एक ही गिरोह के हिस्से में नहीं आई है। सबको यक्साँ तौर पर मिली है। लेकिन यही मानना उनकी गिरोह परस्ती पर शाक़ गुज़रता था।

2- क़ुरआन कहता था: निजात और सआ़दत का दारो-मदार एतिक़ादो-अ़मल पर है, नस्ल, क़ौम, गिरोह बन्दी और ज़ाहिरी

1-एतिराफ़ करने वाला।

रस्मो-रीत पर नहीं है। अगर ये अस्ल वो तस्लीम कर लेते हैं तो फिर निजात का दरवाज़ा बिला इम्तियाज़ तमाम नौए़ इन्सानी पर खुल जाता और किसी एक मज़हबी हल्के़ की ठेकेदारी बाक़ी न रहती। लेकिन इस बात के लिए उनमें से कोई भी तैयार न था।

3- वो कहता था: अस्ल दीन ख़ुदा परस्ती है और ख़ुदा परस्ती ये है कि एक ख़ुदा की बराहे-रास्त परस्तिश की जाए। लेकिन पैरवाने मज़हब ने किसी न किसी शक्ल में शिर्क व बुत परस्ती के तरीके़ इख़्तियार कर लिए थे और गो उन्हें इस बात से इनकार न था कि अस्ल दीन ख़ुदा परस्ती ही है, लेकिन ये बात शाक़ गुज़रती थी कि अपने मालूफ़ व मोताद तरीक़ों से दस्तबर्दार[1] हो जाएँ।

ख़ुलासए बहस

मुतज़क्किर-ए-सदर तफ़्सीलात का माहसल हस्बेज़ैल दफ़आ़त में बयान किया जा सकता है :

1- नुज़ूले क़ुरआन के वक़्त दुनिया का मज़हबी तख़ैयुल इससे ज़्यादा वुस्अ़त नहीं रखता है कि नस्लों, ख़ानदानों और क़बीलों की मुआ़शरती हद बन्दियों की तरह मज़हब की भी एक ख़ास गिरोह बन्दी कर ली गई थी। हर गिरो बन्दी का आदमी समझता था दीन की सच्चाई सिर्फ़ उसी के हिस्से में आई है। जो इन्सान उसकी मज़हबी हद बन्दी में दाख़िल है निजात-याफ़्ता है, जो दाख़िल नहीं है निजात से महरूम है।

2- हर गिरोह के नज़दीक मज़हब की अस्ल व हक़ीक़त महज़

1-हट जाएं, छोड़ दें।

उसके ज़ाहिरी आमालो-रुसूम थे। जूँ-ही एक इन्सान उन्हें इख़्तियार कर लेता, यक़ीन किया जाता कि निजातो-सआ़दत उसे हासिल हो गई, मसलन इबादत की शक्ल, क़ुर्बानियों की रुसूम, किसी ख़ास तआ़म का खाना या न खाना, किसी ख़ास वज़्ओ-क़ता का इख़्तियार करना या न करना।

3- चूंकि ये आमालो-रुसूम हर मज़हब में अलग-अलग थे और हर गिरोह के इज्तिमाई मुक़्तज़यात यकसाँ नहीं हो सकते थे, इसलिए हर मज़हब का पैरौ यक़ीन करता था कि दूसरा मज़हब मज़हबी सदाक़त से ख़ाली है, क्योंकि उसके आमालो-रुसूम वैसे नहीं हैं जैसे ख़ुद उसने इख़्तियार कर रखे हैं।

4- हर मज़हबी गिरोह का दावा सिर्फ़ यही न था कि वो सच्चा है, बल्कि ये भी था कि दूसरा झूठा है। नतीजा ये था कि हर गिरोह सिर्फ़ इतने ही पर क़ाने नहीं रहता कि अपनी सच्चाई का एलान करे, बल्कि ये भी ज़रूरी समझता कि दूसरों के ख़िलाफ़ तअ़स्सुब व नफ़रत फैलाए। इस सूरते हाल ने नौअ़े इन्सानी को एक दाइमी जंगो-जिदाल[1] की हालत में मुब्तला कर दिया था। मज़हब और ख़ुदा के नाम पर हर गिरोह दूसरे गिरोह से नफ़रत करता और उसका ख़ून बहाना जाइज़ समझता।

5- लेकिन क़ुरआन ने नौअ़े इन्सानी के सामने मज़हब की आ़लमगीर सच्चाई का उसूल पेश किया :

अ- उसने सिर्फ़ यही नही बताया कि हर मज़हब में सच्चाई है, बल्कि साफ़-साफ़ कह दिया कि तमाम मज़ाहिब सच्चे हैं। उसने

1-शाश्वत युद्ध।

कहा: दीन ख़ुदा की आ़म बख़्शिश है, इसलिए मुमकिन नहीं कि किसी एक जमाअ़त ही को दिया गया हो, दूसरों का उसमें कोई हिस्सा न हो।

ब- उसने कहा: ख़ुदा के तमाम क़वानीने फ़ित्रत की तरह इन्सान की रूहानी सआ़दत का क़ानून भी एक ही है और सबके लिए है। पस पैरवाने मज़हब की सबसे बड़ी गुमराही ये है कि उन्होंने दीने इलाही की वह्दत फ़रामोश करके अलग-अलग गिरोह बन्दियाँ कर ली हैं और हर गिरोह बन्दी दूसरी गिरोह बन्दी से लड़ रही है।

ज- उसने बताया कि ख़ुदा का दीन इसलिए था कि नौए़ इन्सानी का तफ़रिक़ा और इख़्तिलाफ़ दूर हो, इसलिए न था कि तफ़रिक़ा व निज़ाअ़ की इल्लत बन जाए। पस इससे बढ़कर गुमराही और क्या हो सकती है कि जो चीज़ तफ़रिक़ा दूर करने के लिए आई थी, उसी को तफ़रिक़ा की बुनियाद बना लिया है।

द- उसने बताया कि एक चीज़ दीन है, एक शर्अ़ व मिन्हाज है। दीन एक ही है और एक ही तरह पर सबको दिया गया है। अलबत्ता शर्अ़ व मिन्हाज में इख़्तिलाफ़ हुआ और ये इख़्तिलाफ़ ना गुज़ीर था, क्योंकि हर अ़हद और हर क़ौम की हालत यक्साँ न थी और ज़रूरी था कि जैसी जिसकी हालत हो वैसे ही अहकामो-आमाल भी उसके लिए इख़्तियार किए जाएँ। पस शर्अ़ व मिन्हाज के इख़्तिलाफ़ से अस्ले दीन मुख़्तलिफ़ नहीं हो जा सकते। तुमने दीन की हक़ीक़त तो फ़रामोश[1] कर दी है, महज़ शर्अ़ व मिन्हाज के इख़्तिलाफ़ पर एक दूसरे को झुठला रहे हो।

1-भुला देना।

ह- उसने बतलाया कि तुम्हारी मज़हबी गिरोह बन्दियों और उनके ज़वाहिर व रुसूम को इन्सानी निजातो-सआदत में कोई दख़ल नहीं। ये गिरोह बन्दियाँ तुम्हारी बनाई हुई हैं, वर्ना ख़ुदा का ठहराया हुआ दीन तो एक ही है। वो दीन हक़ीक़ी क्या है? वो कहता है: ईमान और अमले सालेह का क़ानून।

व- उसने साफ़-साफ़ लफ़्ज़ों में एलान कर दिया कि उसकी दावत का मक़्सद इसके सिवा कुछ नहीं है कि तमाम मज़ाहिब सच्चे हैं, लेकिन पैरवाने मज़हब सच्चाई से मुन्हरिफ़ हो गए हैं। अगर वो अपनी फ़रामोश-करदा सच्चाई अज़-सरे नौ इख़्तियार कर लें तो मेरा काम पूरा हो गया और उन्होंने मुझे क़बूल कर लिया। तमाम मज़ाहिब की यही मुश्तरक और मुत्तफ़िक़ा सच्चाई है जिसे वो "अद्दीन" और "अल-इस्लाम" के नाम से पुकारता है।

ज़- वो कहता है: ख़ुदा का दीन इसलिए नहीं है कि एक इन्सान दूसरे इन्सान से नफ़रत करे, बल्कि इसलिए है कि हर इन्सान दूसरे इन्सान से मुहब्बत करे और सब एक ही परवरदिगार के रिश्त-ए-अबूदियत में बंधकर एक हो जाएँ। वो कहता है: जब सब का परवरदिगार एक है, जब सबका मक़सूद उसी की बन्दगी है, जब हर इन्सान के लिए वही होना है जैसा कुछ उसका अमल है तो फिर ख़ुदा और मज़हब के नाम पर ये तमाम जंगो-निज़ाअ़ क्यों है ?

6- मज़ाहिबे आलम का इख़्तिलाफ़ सिर्फ़ इख़्तिलाफ़ ही की हद तक नहीं रहा है, बल्कि बाहमी नफ़रतो-मुख़ासमत[1] का ज़रिया बन गया है। सवाल ये है कि ये मुख़ासमत क्यों कर दूर हो? ये तो

1-घृणा और झगड़े।

हो नहीं सकता कि तमाम पैरवाने मज़ाहिब अपने दावे में सच्चे मान लिए जाएँ, क्योंकि हर मज़हब का पैरौ सिर्फ़ इसी बात का मुद्दई नहीं कि वो सच्चा है, बल्कि इसका भी मुद्दई है कि दूसरे झूठे हैं। पस अगर इनके दावे मान लिए जाएँ तो तस्लीम करना पड़ेगा कि हर मज़हब बयक-वक़्त[1] सच्चा भी है और झूठा भी है। ये भी नहीं हो सकता कि सबको झूठा क़रार दिया जाए, क्योंकि अगर तमाम मज़ाहिब झूठे हैं तो फिर मज़हब की सच्चाई है कहाँ? पस अगर कोई सूरत रफ़्ए निज़ाअ की हो सकती है तो वो वही है जिसकी दावत लेकर क़ुरआन नमूदार हुआ है। तमाम मज़ाहिब सच्चे हैं, क्योंकि अस्ले दीन एक ही है और जो सबको दिया गया है। लेकिन तमाम पैरवाने मज़ाहिब सच्चाई से मुन्हरिफ़ हो गए हैं, क्योंकि उन्होंने दीन की हक़ीक़त और वहदत ज़ाय कर दी है और अपनी गुमराहियों की अलग-अलग टोलियाँ बना ली हैं। अगर इन गुमराहियों से लोग बाज़ आ जाएँ और अपने-अपने मज़हब की हक़ीक़ी तालीम पर कारबन्द हो जाएँ तो मज़ाहिब के तमाम निज़ाआत ख़त्म हो जाएँगे, हर गिरोह देख लेगा कि उसकी राह भी अस्लन वही है जो और तमाम गिरोहों की राह है। क़ुरआन कहता हैः तमाम मज़ाहिब की यही मुश्तरक और मुत्तफ़िक़ा हक़ीक़त "अद्दीन" है, यानी नौए इन्सानी के लिए हक़ीक़ी दीन और इसी को वो "अल-इस्लाम" के नाम से पुकारता है।

7- नौए इन्सानी की बाहमी यगानगत और इत्तिहाद के जितने रिश्ते भी हो सकते थे सब इन्सान के हाथों टूट चुके। सबकी

1-एक ही वक़्त में।

नस्ल एक थी, मगर हज़ारों नस्लें हो गईं, सबकी क़ौमियत एक थी मगर बेशुमार क़ौमियतें बन गईं, सबकी वतनियत एक थी लेकिन सैंकड़ो वतनियतों में बट गए। सबका दर्जा एक था लेकिन अमीरो-फ़क़ीर, शरीफ़ो-वज़ीअ़ और अदना व आला के बहुत से दर्जे ठहरा लिए गए। ऐसी हालत में कौन-सा रिश्ता है जो इन तमाम तफ़रिक़ों पर ग़ालिब आ सकता है और तमाम इन्सान एक ही सफ़ में खड़े हो जा सकते हैं? क़ुरआन कहता है कि ख़ुदा परस्ती का रिश्ता। यही एक रिश्ता है जो इन्सानियत का बिछड़ा हुआ घराना फिर आबाद कर दे सकता है। ये एतिक़ाद कि हम सबका परवरदिगार एक ही परवरदिगार है और हम सबके सर उसी एक चौखट पर झुके हुए हैं, यक-जहती और यगानगत[1] का एक जज़्बा पैदा कर देता है कि मुमकिन नहीं इन्सान के बनाए हुए तफ़रिक़े इस पर ग़ालिब आ सकें।

● ✻ ●

1-एकता-भाईचारा।
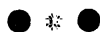
सिराते मुस्तक़ीम

इसी बिना पर सूरः फ़ातिहा में जिस दुआ़ की तल्क़ीन की गई वो "सिराते मुस्तक़ीम" पर चलने की तलबगारी है। "सिरात" के मअ़ना राह के हैं और "मुस्तक़ीम" के मअ़ना सीधा होने के हैं। पस "सिराते मुस्तक़ीम" ऐसी राह हुई जो सीधी हो, किसी तरह का पेचो-ख़म न हो। फिर इस राह की पहचान ये बतलाई कि :

صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ ٥ غَيْرِ الْمَغْضُوْبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّآلِّيْنَ ٥

यानी उन लोगों की राह जिन पर ख़ुदा का इनाम हुआ। उनकी राह नहीं जो मग़ज़ूब[1] हुए, न उनकी जो गुमराह हैं।

ये इनाम-याफ़्ता इन्सान कौन है जिनकी राह सीधी राह हुई? क़ुरआन ने जा-बजा वाज़ेह किया है कि ख़ुदा के तमाम रसूल और रास्तबाज़ इन्सान जो दुनिया के मुख़्तलिफ़ अ़हदों और गोशों में गुज़र चुके हैं, इनाम-याफ़्ता इन्सान हैं और इन्हीं की राह सिराते मुस्तक़ीम है :

وَمَنْ يُطِعِ اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ فَاُولٰٓئِكَ مَعَ الَّذِيْنَ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ مِنَ النَّبِيّٖنَ وَالصِّدِّيْقِيْنَ وَالشُّهَدَآءِ وَالصّٰلِحِيْنَ ۚ وَ

और जिस किसी ने अल्लाह और रसूल की इताअ़त की तो बिला शुब्हा वो उन लोगों का साथी हुआ जिन पर अल्लाह ने इनाम किया है। ये इनाम-याफ़्ता जमाअ़त नबियों की है, सिद्दीक़ों की है, शुहदा की है, नेक अ़मल

1-ईश्वरीय प्रकोप के भागीदार।

حَسُنَ اُولٰٓئِكَ رَفِيْقًا ○
(٤: ٦٩)

इन्सानों की है, और (जिसके साथी ऐसे लोग हों तो) क्या ही अच्छी उसकी रिफ़ाक़त है!
(4: 69)

इस आयत में बित्तरतीब चार जमाअ़तों का ज़िक्र किया गया है और उन्हें इनाम-याफ़्ता क़रार दिया है: अंबिया, सिद्दीक़ीन, शुहदा, सालिहीन।

''अंबिया'' से मक़सूद ख़ुदा की सच्चाई के तमाम पैग़म्बर हैं जो नौअ़े इन्सानी की हिदायत के लिए पैदा हुए।

''सिद्दीक़'' से मक़सूद ऐसे इन्सान हैं जो कामिल मअ़नों में सच्चे हों, यानी सच्चाई के सांचे में कुछ इस तरह ढले हुए हों कि सच्चाई के ख़िलाफ़ कोई बात उनके दिमाग़ में उतर ही न सके।

''शहीद'' के मअ़ना गवाह के हैं, यानी ऐसे इन्सान जो अपने क़ौलो-फ़े'ल[1] से हक़्क़ो-सदाक़त की शहादत बुलन्द करने वाले हों।

''सालिहीन'' से मक़सूद वो तमाम इन्सान हैं जो नेक अ़मली की राह में इस्तिक़ामत[2] रखें और बुराई की राहों से किनाराकश हों।

पस मालूम हुआ इनाम-याफ़्ता इन्सानों से मक़सूद दुनिया के तमाम रसूल और दाइयाने हक़ हैं जो क़ुरआन के नुज़ूल से पहले दुनिया में पैदा हो चुके थे और तमाम रास्तबाज़ इन्सान हैं जो नौअ़े इन्सानी में गुज़र चुके थे। इसमें न तो किसी ख़ास नस्लो-क़ौम की ख़ुसूसियत रखी गई है, न किसी ख़ास मज़हब और उसके पैरवों की।

1-वचन व कर्म। 2-खड़े रहें, ठहरे रहें, जमे रहें।

दुनिया के तमाम नबी, तमाम सिद्दीक़, तमाम शुहदाए हक़, तमाम सालेह इन्सान, ख़्वाह किसी मुल्क व क़ौम में हुए हों, क़ुरआन के नज़दीक ''इनाम-याफ़्ता'' इन्सान हैं और इन्हीं की राह ''सिराते मुस्तक़ीम'' है।

ख़ुदा के इन तमाम रसूलों और नौअ़े इन्सानी के रास्तबाज़ अफ़राद की राह कौन-सी राह थी? वही राह जिसे क़ुरआन दीने हक़ीक़ी की राह क़रार देता है। वो कहता है: दुनिया में जिस क़द्र भी सच्चाई के दाई आए, सबने यही तालीम दी कि : اَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَلَا تَتَفَرَّقُوْا فِيْهِ (42:13) ख़ुदा का एक ही दीन क़ायम रखो और इस राह में जुदा-जुदा न हो जाओ (यही राह सच्चाई की सीधी राह है।)

चुनांचे यही वजह है कि क़ुरआन ने जा-बजा ''अद्दीन'' को सिराते मुस्तक़ीम से भी ताबीर किया है। सूर: शूरा में पैग़म्बरे इस्लाम को मुख़ातिब करते हुए कहता है: ''तुम सिराते मुस्तक़ीम की तरफ़ हिदायत करने वाले हो और सिराते मुस्तक़ीम ही सिरातल्लाह है'' यानी अल्लाह की ठहराई हुए सआ़दत :

وَاِنَّكَ لَتَهْدِىْٓ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝ صِرَاطِ اللّٰهِ الَّذِىْ لَهٗ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الْاَرْضِ ۭ اَلَآ اِلَى اللّٰهِ تَصِيْرُ الْاُمُوْرُ ۝ (٤٢: ٥٢-٥٣)

और (ऐ पैग़म्बर!) बिला-शुब्हा तुम सिराते मुस्तक़ीम की तरफ़ हिदायत करने वाले हो, सिरातल्लाह, यानी अल्लाह की राह की तरफ़, वो अल्लाह कि आसमानो-ज़मीन में जो कुछ है सब उसी का है। हाँ याद रखो!

(काइनाते खिल्क़त के) तमाम
कामों का मर्जा उसी की ज़ात
है। (42: 52-53)

इसी तरह वो जा-बजा कहता है कि ख़ुदा के तमाम रसूलों की दावत सिराते मुस्तक़ीम की दावत थी। सूरः नहल में हज़रत इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) की निस्बत है: وَهَدٰىهُ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ٥ (16:121) ख़ुदा ने उसे सिराते मुस्तक़ीम दिखा दी। सूरः ज़ुख़्रुफ़ में हज़रत मसीह (अ़लैहिस्सलाम) की ज़बानी सुनते हैं :

اِنَّ اللّٰهَ هُوَ رَبِّيْ وَرَبُّكُمْ فَاعْبُدُوْهُ ۚ هٰذَا صِرَاطٌ مُّسْتَقِيْمٌ (43:64)
अल्लाह मेरा और तुम्हारा सबका परवरदिगार है, पस उसी की बन्दगी करो, यही सिराते मुस्तक़ीम है। सूरः अनआ़म में पहले हज़रत नूह और हज़रत इब्राहीम (अ़लैहिमुस्सलाम) का ज़िक्र किया है, फिर सिलसिलए इब्राहीमी के मुतअ़द्दद नबियों का जो तौरात की मशहूर शख़्सियतें हैं। उसके बाद कहा है:

وَاجْتَبَيْنٰهُمْ وَهَدَيْنٰهُمْ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ (6:87) इन सबको हमने सिराते मुस्तक़ीम दिखा दी।

अस्ल ये है कि ख़ुदा के आ़लमगीर दीन की हक़ीक़त ज़ाहिर करने के लिए सिराते मुस्तक़ीम से बेहतर ताबीर नहीं हो सकती थी। तुम किसी ख़ास मक़ाम तक पहुँचने के लिए कितनी ही राहें निकाल लो, लेकिन सीधी राह हमेशा एक ही होगी और उसी पर चलकर मुसाफ़िर मन्ज़िले मक़सूद तक बहिफ़ाज़त पहुँच सकेगा। अ़लावा बरीं सीधी राह ही हमेशा शाहे-राह आ़म की हैसियत इख़्तियार कर लेती है। तमाम मुसाफ़िर, ख़्वाह किसी गोशे के रहने वाले हों, लेकिन सब

मिल-जुल कर वही राह इख़्तियार करेंगे और कभी ये न करेंगे कि अलग-अलग टोलियाँ बना कर टेढ़ी तिरछी राहों में मुतफ़र्रिक़ हो जाएँ। क़ुरआन कहता है: ठीक इसी तरह दीन की सीधी राह भी एक ही है, अब अगर तुम चाहते हो कि मन्ज़िले मक़सूद का सुराग़ पाओ तो चाहिए कि इसी सीधी राह पर इकट्ठे हो जाओ। फ़हुव सबीलुल्लाह (111) तरीक़म् मुस्तक़ीमन, सहलन, मस्लूकन, वासिअ़न, मूसिलन इलल-मक़सूद :

وَاَنَّ هٰـذَا صِرَاطِیْ مُسْتَـقِیْمًا فَاتَّـبِعُوْهُ ۚ وَلَاتَـتَّبِعُوا السُّبُلَ فَـتَـفَرَّقَ بِكُمْ عَنْ سَبِـیْـلِـهٖ ؕ ذٰلِـكُـمْ وَصّٰـكُـمْ بِهٖ لَعَلَّـكُمْ تَـتَّـقُوْنَ ۝ (۱۵۳:۶)

और (देखो!) ये मेरी राह है, बिल्कुल सीधी राह, पस इसी एक राह पर चलो, तरह-तरह के रास्तों के पीछे न पड़ो, वो तुम्हें ख़ुदा की सीधी राह से हटा कर जुदा-जुदा कर देंगे। यही बात है जिसका ख़ुदा तुम्हें हुक्म देता है ताकि (उसकी ना फ़रमानी से) बचो। (6: 153)

चुनांचे ये हक़ीक़त बिल्कुल वाज़ेह हो जाती है। अब "सिराते मुस्तक़ीम" की उस तफ़्सीर पर नज़र डाली जाए जो ख़ुद पैग़म्बरे इस्लाम (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) ने फ़रमाई है :

عن ابن مسعود قال خط لنا رسول الله صلى الله عليه وسلم خطا بيده ثم قال هذا

अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) कहते हैं रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) ने अपनी उंगली से एक लकीर खींची और

سبيل الله مستقيما ثم خط خطوطا عن يمين ذلك الخط وعن شماله ثم قال وهذه السبل ليس منها سبيل الا عليه شيطان يدعو اليه ثم قرأ هذه الاية ـ

(اخرجه النسائي واحمد والبزار وابن المنذر وابو الشيخ و الحاكم وصححه)ـ

फ़र्माया यूँ समझो कि ये अल्लाह का ठहराया हुआ रास्ता है, बिल्कुल सीधा। उसके बाद उस लकीर के दोनों तरफ़ बहुत सी लकीरें खींच दीं और फ़रमाया ये तरह-तरह के रास्ते हैं जो बना लिए गए हैं और इनमें कोई रास्ता नहीं जिसकी तरफ़ बुलाने के लिए एक शैतान मौजूद न हो, फिर ये आयत पढ़ी 'وَاَنَّ هٰذَا صِرَاطِيْ مُسْتَقِيْمًا' आख़िर तक।

(नसाई, अहमद, बज़्ज़ार, इब्नुल मुंज़िर, अबुश्-शैख़ और हाकिम वग़ैरा ने इस हदीस की तख़रीज की है और इसको सहीह बतलाया है)

इससे मालूम हुआ कि तमाम इधर-उधर के टेढ़े तिरछे रास्ते "सुबुले मुतफ़र्रिक़ा" हैं जो जमइय्यते बशरी को मुत्तहिद करने की जगह मुतफ़र्रिक़ कर देते हैं और दरमियान की एक ही सीधी राह "सिराते मुस्तक़ीम" है। ये मुतफ़र्रिक़ करने की जगह तमाम रहरवाने मन्ज़िल को एक ही शाहेराह पर जमा कर देती है।

ये सुबुले मुतफ़र्रिक़ा क्या हैं? उसी गुमराही का नतीजा हैं जिसे क़ुरआन ने "तशय्यो" और "तहज़्ज़ुब" की गुमराही से ताबीर किया है और तशरीह उसकी ऊपर गुज़र चुकी।

दीने हक़ीक़ी का सीधा होना और "सुबुले मुतफ़र्रिक़ा" यानी ख़ुद-साख़्ता[1] गिरोह बन्दियों का पुरपेचो-ख़म[2] होना, एक ऐसी हक़ीक़त है जिसे हर इन्सान बग़ैर किसी अ़क़्ली काविश के समझ ले सकता है। ख़ुदा का दीन अगर इन्सान की हिदायत के लिए है तो ज़रूरी है कि ख़ुदा के तमाम क़वानीन की तरह ये भी साफ़ और वाज़ेह हो। इसमें कोई राज़ न हो, कोई पेचीदगी न हो, ना क़ाबिले-हल मोअ़म्मा न हो। एतिक़ाद में सहल हो और अ़मल में हलका, हर अ़क़्ल उसे बूझ ले, हर तबीअ़त उस पर मुतमइन हो जाए। अच्छा अब ग़ौर करो! ये तारीफ़ किस राह पर सादिक़ आती है? उन मुख़्तलिफ़ राहों पर जो पैरवाने मज़हब ने अलग-अलग गिरोह बन्दियाँ करके निकाल ली हैं या उस एक ही राह पर जिसे क़ुरआन अस्ल दीन की राह बताता है।

इन गिरोह बन्दियों में से कोई गिरोह बन्दी ऐसी नहीं है जो अपने बोझल अ़क़ीदों, ना क़ाबिले फ़हम उक़्दों और ना क़ाबिले बर्दाश्त अ़मलों की एक तूल-तवील फ़ेहरिस्त न हो। हम यहाँ तफ़्सीलात में नहीं जाएँगे, हर शख़्स जानता है कि दुनिया के तमाम पैरवाने मज़हब के मज़ऊमा अ़क़ाइद व आमाल का क्या हाल है और उनकी नौइयत कैसी है। मज़हब का अ़क़्ल के लिए मोअ़म्मा और तबीअ़त के लिए बोझ होना एक ऐसी बात है जो आ़म तौर पर मज़ाहिब का ख़ास्सा तस्लीम कर ली गई है। लेकिन क़ुरआन जिस राह को दीने हक़ीक़ी की राह कहता है उसका क्या हाल है? उसकी राह तो इतनी वाज़ेह, इतनी सहल, इतनी मुख़्तसर है कि अ़क़ाइद व

1-ख़ुद बनाए गए। 2-टेढ़ा, घुमावदार।

आमाल की पूरी फेहरिस्त दो लफ़्ज़ों में ख़त्म कर दी जा सकती है "ईमान और अ़मले सालेह" (112) इसके अ़क़ाइद में अ़क्ल के लिए कोई बोझ नहीं, इसके आमाल में तबीअ़त के लिए कोई सख़्ती नहीं, हर तरह के पेचो-ख़म से पाक, हर मअ़ना में एतिक़ादो-अ़मल की सीधी से सीधी बात "अल-हनफ़िय्यतुस सम्हतु लैलुहा वनहारिहा" उसकी रात भी उसके दिन की तरह रौशन है" :

हर तरह की सताइश अल्लाह ही के लिए है जिसने अपने बन्दे पर किताब नाज़िल की और उसमें किसी तरह की भी कजी नहीं रखी। (18: 1)	اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْٓ اَنْزَلَ عَلٰی عَبْدِهِ الْكِتٰبَ وَلَمْ يَجْعَلْ لَّهٗ عِوَجًا ۝ (١٨: ١)

बहरहाल क़ुरआन का पैरौ वो है जो दीन की सीधी राह पर चलने वाला है। वो राह नहीं जो किसी ख़ास गिरोह, किसी ख़ास नस्ल, किसी ख़ास क़ौम, किसी ख़ास अ़हद की राह है, बल्कि ख़ुदा की आ़लमगीर सच्चाई की राह जो हर जगह और हर अ़हद में नुमायाँ हुई है और हर तरह की जुग़राफ़ियाई और जमाअ़ती हद बन्दियों के इम्तियाज़ात[1] से पाक है :

अल्लाह मेरा और तुम्हारा दोनों का परवरदिगार है, पस उसी की बन्दगी करो, यही सिराते मुस्तक़ीम है। (43:64)	اِنَّ اللّٰهَ هُوَ رَبِّیْ وَرَبُّكُمْ فَاعْبُدُوْهُ ؕ هٰذَا صِرَاطٌ مُّسْتَقِيْمٌ ۝ (٤٣: ٦٤)

अ़लावा बरीं बहसो-नज़र के बाज़ दूसरे पहलू भी हैं जो इस

1-भेद-भाव।

मौक़े पर पेशे नज़र रहने चाहिएँ :

अव्वलन[1], फ़लाहो-सआ़दत की राह को "सीधी राह" से ताबीर किया गया और सीधी राह पर चलना एक ऐसी बात है जिस की समझ और तलब बित्तबा हर इन्सान के अन्दर मौजूद है। फिर इसकी पहचान बतलाते हुए, कोई इस तरह की तारीफ़ नहीं की जिसके समझने और मुन्तबिक़[2] करने में ज़ेहनी काविशों की ज़रूरत हो, बल्कि एक ख़ास तरह के इन्सानों की तरफ़ उंगली उठा दी कि "सिराते मुस्तक़ीम" इन लोगों की राह है। इस उसलूबे बयान ने हर इन्सान के सामने सिराते मुस्तक़ीम को एक महसूस व मशहूद सूरत में नुमायाँ कर दिया। हर इन्सान ख़्वाह किसी अ़हद और किसी मुल्को-क़ौम से तअ़ल्लुक़ रखता हो, लेकिन इस बात से बेख़बर नहीं हो सकता कि यहाँ दो तरह के इन्सान मौजूद हैं: एक वो हैं जिनकी राह सआ़दत व कामयाबी की राह है, एक वो हैं जिनके हिस्से में महरूमी व शक़ावत आई है। पस कामयाबी की राह की पहचान इससे ज़्यादा बेहतर और मोअस्सिर तरीक़े से बयान नहीं की जा सकती कि वो कामयाब इन्सान की राह है। अगर इसकी पहचान मन्तिक़ी तारीफ़ों की तरह बयान की जाती तो ज़ाहिर है न तो हर इन्सान बग़ैर काविश व फ़िक्र के समझ सकता, न क़तई तौर पर किसी एक ही राह पर मुन्तबिक़ की जा सकती।

सानियन[3], जहाँ तक इन्सानी फ़लाहो-सआ़दत का तअ़ल्लुक़ है सिराते मुस्तक़ीम की ताबीर ही हर लिहाज़ से हक़ीक़ी और क़ुदरती ताबीर हो सकती थी। इन्सान के फ़िक्रो-अ़मल का कोई गोशा हो

1-पहले। 2-तर्क से सिद्ध करना। 3-दूसरे।

लेकिन सेहत व दुरुस्तगी की राह हमेशा वही होगी जो सीधी राह हो, जहाँ इंहिराफ़ और कजी पैदा हुई, नक़्सो-फ़साद ज़ुहूर में आ गया। यही वजह है कि दुनिया की तमाम ज़बानों में सीधी होना और सीधी चाल चलना फ़लाहो-सआ़दत के मअ़नों में आ़म तौर पर बोला जाता है। गोया अच्छाई के मअ़नों में ये एक ऐसी ताबीर है जो तमाम नौअ़े इन्सानी की आ़लमगीर ताबीर कही जा सकती है।

हज़रत मसीह से चार सौ बरस पहले दारायूश अव्वल ने जो फ़रामीन कुन्दा कराए[1] थे, उनमें से बेसुतून का कतबा आज तक मौजूद है और उसका ख़ातिमा इन जुम्लों पर होता है "ऐ इन्सान! आहूराम्ज़द का (यानी ख़ुदा का) तेरे लिए हुक्म ये है कि बुराई का ध्यान न कर, सीधा रास्ता न छोड़, गुनाह से बचता रह"। (113)

पस सिराते मुस्तक़ीम पर चलने की तलब ज़िन्दगी की तमाम राहों में दुरुस्तगी व सेहत की राह चलने की तलब हुई और इसी लिए सई व अ़मल के हर गोशे में इनाम-याफ़्ता गिरोह वही हो सकता है जिसकी राह सिराते मुस्तक़ीम हो।

'अल-मग़ज़ूबि अ़लैहिम' और 'अज़्ज़ाल्लीन'

फिर सिराते मुस्तक़ीम की पहचान सिर्फ़ उसके मुस्बत पहलू[2] ही से वाज़ेह नहीं की गई, बल्कि उसका ज़िद मुख़ालिफ़[3] पहलू भी वाज़ेह कर दिया गया: "غَيْرِ الْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّالِّينَ उनकी राह नहीं जो मग़ज़ूब[4] हुए, न उनकी जो गुमराह होकर भटक गए"।

1-शिलालेखों में संदेश अंकित कराना। 2-सकारात्मक। 3-विपरीत। 4-प्रकोप के भागीदार।

"मग़ज़ूबि अ़लैह" गिरोह "मुन्इम अ़लैह" की बिल्कुल ज़िद है, क्योंकि इनाम की ज़िद[1] ग़ज़ब है और फ़ित्रते काइनात का क़ानून ये है कि रास्त बाज़ इन्सानों के हिस्से में इनाम आता है, ना फ़रमानों के हिस्से में ग़ज़ब। "गुमराह" वो हैं जो राहे हक़ न पा सके और उसकी जुस्तुजू में भटक गए। पस मग़ज़ूब वो हुए जिन्होंने राह पाई और उसकी नेमतें भी पाईं, लेकिन फिर उससे मुन्हरिफ़ हो गए और नेमत की राह छोड़ कर महरूमी व शक़ावत की राह इख़्तियार कर ली। "गुमराह वो हुए जो राह ही न पा सके, इसलिए इधर-उधर भटक रहे हैं और सिराते मुस्तक़ीम की सआ़दतों से महरूम हैं।

"मग़ज़ूबि अ़लैह" की महरूमी हुसूलो-मअ़रिफ़त[2] के बाद इनकार का नतीजा है और "गुमराह" की महरूमिये जहल का नतीजा है। पहले ने पाकर रू-गर्दानी की इसलिए महरूम हुआ, दूसरा पा ही न सका इसलिए महरूम है। महरूम दोनों हुए, मगर ये ज़ाहिर है कि पहले की महरूमी ज़्यादा मुजरिमाना है, क्योंकि उसने नेमत हासिल करके फिर उससे रू-गर्दानी की, इसी लिए उसे मग़ज़ूब कहा गया और दूसरे की हालत सिर्फ़ गुमराही के लफ़्ज़ से ताबीर की गई।

हम देखते हैं दुनिया में फ़लाहो-सआ़दत से महरूम आदमी हमेशा दो ही तरह के होते हैं: जाहिद और जाहिल। जाहिद वो होता है जो हक़ीक़त पा लेता है, बईं-हमा उससे रू-गर्दानी करता है। जाहिल वो होता है जो हक़ीक़त से ना आश्ना होता है और अपने जेहल पर क़ाने[3] हो जाता है। पस सिराते मुस्तक़ीम पर चलने की तलबगारी के साथ महरूमी व शक़ावत की इन दोनों सूरतों से

1-विलोम। 2-सत्य उपलब्धि। 3-अज्ञान पर संतुष्ट।

बचने की तलब भी सिखला दी, ताकि फ़लाहो-सआ़दत की राह का तसव्वुर हर तरह कामिल और लग़ज़िशों से महफ़ूज़ हो जाए।

जहाँ तक मज़हबी सदाक़त का तअ़ल्लुक़ है, दोनों तरह की महरूमियों की मिसालें क़ौमों की तरीख़ में मौजूद हैं, कितनी ही क़ौमें हैं जिनके क़दम सिराते मुस्तक़ीम पर इस्तवार हो गए थे और फ़लाहो-सआ़दत की तमाम नेमतें उनके लिए मुहैया थीं, बई-हमा उन्होंने रू-गर्दानी की और राहे हक़ की मअ़रफ़ित हासिल करके फिर उससे मुन्हरिफ़ हो गए, नतीजा ये निकला कि वही क़ौम जो कल तक दुनिया की इनाम-याफ़्ता जमाअ़त थी, सबसे ज़्यादा महरूम व ना मुराद जमाअ़त हो गई। इसी तरह कितनी ही जमाअ़तें हैं जिनके सामने फ़लाहो-सआ़दत की राह खोल दी गई, लेकिन उन्होंने मअ़रिफ़त की जगह जेहल और रौशनी की जगह तारीकी पसन्द की, नतीजा ये निकला कि राहे हक़ न पा सके और ना मुरादी व महरूमी की वादियों में गुम हो गए।

अहादीस व आसार में इसकी जो तफ़्सीर बयान की गई है उससे ये हक़ीक़त और ज़्यादा वाज़ेह हो जाती है। तिर्मिज़ी और अहदम व इब्ने हिब्बान वग़ैरहुम की मशहूर हदीस है कि आँहज़रत[1] (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) ने फ़रमाया "अल-मग़ज़ूब" यहूदी हैं और "अज़्ज़ाल्लीन" नसारा हैं। यक़ीनन इस तफ़्सीर का मतलब ये नहीं हो सकता कि मग़ज़ूब से मक़सूद सिर्फ़ यहूदी और गुमराह से मक़सूद सिर्फ़ नसारा हैं, बल्कि मक़सूद ये है कि मग़ज़ूबियत और गुमराही की हालत वाज़ेह करने के लिए दो जमाअ़तों का ज़िक्र बतौर

1-हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम)।

मिसाल के कर दिया जाए। चुनांचे इन दोनों जमाअ़तों की तारीख़ में हम महरूमी की दोनों हालतों का कामिल नमूना देख ले सकते हैं। यहूदियों की क़ौमी तारीख़े मग़ज़ूबियत के लिए और ईसाइयों की तारीख़े गुमराही के लिए इबरतो-तज़्कीर का बेहतरीन सरमाया है।

क़ुरआन के क़सस और इस्तिक़राए तारीख़ी

यही वजह है कि हम देखते हैं क़ुरआन ने हिदायत व तज़्कीरे उमम के लिए जिन-जिन उसूलों पर ज़ोर दिया है उनमें से सबसे ज़्याद नुमायाँ अस्ल पिछली क़ौमों के अय्याम व वक़ाय और उनके नताइज हैं। वो कहता है: काइनाते हस्ती के हर गोशे की तरह क़ौमों और जमाअ़तों के लिए भी ख़ुदा का क़ानूने सआ़दत व शक़ावत एक ही है और हर अ़हद[1] और हर मुल्क में एक ही तरह के अहकामो-नताइज रखता है। उसके अहकाम में कभी तब्दीली नहीं हो सकती और उसके नताइज हमेशा और हर हाल में अटल हैं। जिस तरह संखिया की तासीर इसलिए बदल नहीं जा सकती कि वो किस अ़हद में और किस सन् में इस्तेमाल की गई, इसी तरह क़ौमों और जमाअ़तों के आमाल के नताइज भी इसलिए मुतग़ैयर[2] नहीं हो जा सकते कि किस मुल्क में पेश आए। अगर माज़ी में हमेशा शहद, शहद का ख़ास्सा रखता आया है और संखिया की तासीर संखिया ही की रही है तो मुस्तक़बिल में भी हमेशा शहद, शहद ही रहेगा और संखिया की तासरी संखिया ही की होगी। पस जो कुछ माज़ी में पेश आ चुका है ज़रूरी है कि मुस्तक़बिल में भी पेश आए :

1-काल, ज़माना। 2-बदलना।

سُنَّةَ اللّٰهِ فِى الَّـذِينَ خَلَـوْ مِنْ قَبْلُ ۚ وَلَـنْ تَـجِـدَ لِسُنَّةِ اللّٰهِ تَـبْدِيـلًا ۝ (٣٣: ٦٢)

जो लोग तुमसे पहले गुज़र चुके हैं उनके लिए अल्लाह की सुन्नत यही रही है (यानी अल्लाह के क़वानीन व अहकाम का दस्तूर यही रहा है) और अल्लाह की सुन्नत[1] में तुम कभी रद्दो-बदल नहीं पाओगे। (33: 62)

فَـهَـلْ يَـنْـظُـرُوْنَ اِلَّا سُـنَّـتَ الْاَوَّلِـيْـنَ ۚ فَلَنْ تَجِدَ لِسُنَّتِ اللّٰهِ تَـبْدِيْلًا ۚ وَلَنْ تَجِدَ لِسُنَّتِ اللّٰهِ تَحْوِيْلًا ۝ (٣٥: ٤٣)

फिर ये लोग किस बात की राह तक रहे हैं? क्या उस सुन्नत की जो अगले लोगों के लिए रह चुकी है? तो याद रखो! तुम अल्लाह की सुन्नत को कभी बदलता हुआ नहीं पाओगे और न कभी ऐसा हो सकता है कि उसकी सुन्नत के अहकाम फेर दिए जाएँ। (35: 43)

سُـنَّـةَ مَـنْ قَـدْ اَرْسَلْـنَا قَـبْلَكَ مِـنْ رُّسُلِـنَـا وَلَاتَـجِـدُ لِسُنَّـتِنَا تَحْوِيْلًا ۝ (١٧: ٧٧)

(ऐ पैग़म्बर!) तुमसे पहले जिन रसूलों को हमने भेजा है, उनके लिए हमारी सुन्नत यही रही है और हमारी सुन्नत कभी टलने वाली नहीं। (17: 77)

चुनांचे वो एक तरफ़ इनाम-याफ़्ता जमाअ़तों की कामरानियों का बार-बार ज़िक्र करता है, दूसरी तरफ़ मग़ज़ूब और गुमराह

1-रीति, प्रणाली, तरीक़ा।

जमाअ़तों की महरूमियों की सर गुज़िश्तें[1] बार-बार सुनाता है, फिर जा-बजा उनसे इबरतो-बसीरत के नताइज अख़्ज़ करता है जिन पर अक़्वामो-जमाआ़त[2] का उरूजो-ज़वाल[3] मौक़ूफ़ है। वो खोल-खोल कर बतलाता है कि इनाम-याफ़्ता जमाअ़तों की सआ़दत व कामरानी इन-इन आमाल का इनाम थी और मग़ज़ूब व गुमारह जमाअ़तों की शक़ावतो-महरूमी इन-इन बद अ़मलियों की पादाश थी। अच्छे नताइज को 'इनाम' कहता है, क्योंकि ये फ़ित्रते इलाही की क़बूलियत है, बुरे नताइज को 'ग़ज़ब' कहता है, क्योंकि ये क़ानूने इलाही की पादाश है। वो कहता है: जिन अस्बाबो-इलल[4] से दस मर्तबा एक ख़ास तरह का मालूल[5] पैदा हो चुका है, तुम क्यों कर इनकार कर सकते हो कि ग्यारहवी मर्तबा भी वैसा ही मालूल पैदा न होगा :

قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِكُمْ سُنَنٌ ۙ فَسِيْرُوْا فِى الْاَرْضِ فَانْظُرُوْا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِيْنَ ۝ (٣: ١٣٧)

तुमसे पहले दुनिया में (ख़ुदा के) अहकामो-क़वानीन के नताइज गुज़र चुके हैं, पस मुल्कों की सैर करो और देखो उन लोगों का अंजाम क्या हुआ जिन्होंने (अल्लाह के अहकाम व क़वानीन को) झुठलाया था। (3: 137)

क़ुरआन की सूरतों में एक बड़ी तादाद ऐसी सूरतों की है जो तमामतर इसी मतलब पर मुशतमिल[6] हैं। कहा जा सकता है कि क़ुरआन में जिस क़द्र भी पिछले अ़हदों के वक़ाय व क़सस का ज़िक्र है वो तमामतर सूरः फ़ातिहा की इसी आयत की तफ़्सील है।

1-कथाएं। 2-कौमों व समुदायों। 3-उत्थान-पतन। 4-कारणों। 5-निष्कर्ष, प्रतिफल 6-आधारित।

सूर: फ़ातिहा की तालीमी रूह

अच्छा! अब चन्द लम्हों के लिए सूर: फ़ातिहा के मतालिब पर बहैसियत मजमूई नज़र डालो और देखो इसकी सात आयतों के अन्दर मज़हबी अक़ाइद व तसव्वुर की जो रूह मुज़्मर है वो किस तरह की ज़ेहनियत पैदा करती है। सूर: फ़ातिहा एक दुआ है। फ़र्ज़ करो एक इन्सान के दिलो-ज़बान से शबो-रोज़ यही दुआ निकलती रहती है, इस सूरत में उसके फ़िक्रो-एतिक़ाद का क्या होगा ?

वो ख़ुदा की हम्दो-सना में जमज़मा-संज है, लेकिन उस ख़ुदा की हम्द में नहीं जो नस्लों, क़ौमों और मज़हबी गिरोह बन्दियों का ख़ुदा है, बल्कि "रब्बुल-आलमीन" की हम्द में जो तमाम काइनाते ख़िल्क़त का परवरदिगार है और इसलिए तमाम नौए इन्सानी के लिए यकसाँ तौर पर परवरदिगारी व रहमत रखता है। फिर वो उसे उसकी सिफ़तों के साथ पुकारना चाहता है, लेकिन उसकी तमाम सिफ़तों में से सिर्फ़ रहमत और अदालत ही की सिफ़तें उसे याद आती हैं। गोया ख़ुदा की हस्ती की नुमूद उसके लिए सर-तासर रहमतो-अदालत की नुमूद है और जो कुछ भी उसकी निस्बत जानता है वो रहमतो-अदालत के सिवा कुछ नहीं हैं। फिर वो अपना सरे नियाज़ झुकाता और उसकी अब्दियत का इक़रार करता है। वो कहता है: सिर्फ़ तेरी ही एक ज़ात है जिसके आगे बन्दगी व नियाज़ का सर झुक सकता है और सिर्फ़ तू ही है जो हमारी सारी दर-मांदगियों और एहतियाजों में मददगारी का सहारा है। वो अपनी इबादत और इस्तिआनत दोनों को सिर्फ़ एक ही ज़ात के साथ

वाबस्ता कर देता है और इस तरह दुनिया की सारी क़ुव्वतों और हर तरह की इन्सानी फ़रमाँ-रवाइयों से बेपरवा हो जाता है। अब किसी चौखट पर उसका सर झुक नहीं सकता, अब किसी क़ुव्वत से वो हिरासाँ नहीं हो सकता, अब किसी के आगे उसका दस्ते-तलब दराज़[1] नहीं हो सकता।

फिर वो ख़ुदा से सीधी राह चलने की तौफ़ीक़ तलब करता है। यही एक मुद्दआ है जिससे ज़बाने एहतियाज़ आश्ना होती है, लेकिन कौन-सी सीधी राह? किसी ख़ास नस्ल की सीधी राह? किसी ख़ास क़ौम की सीधी राह? किसी ख़ास मज़हबी हल्क़े की सीधी राह? नहीं, वो राह जो दुनिया के तमाम मज़हबी रहनुमाओं और तमाम रास्तबाज़ इन्सानों की मुत्तफ़िक़ा राह है, ख़्वाह किसी अ़हद और किसी क़ौम में हुए हों। इसी तरह वो महरूमी और गुमराही की राहों से पनाह मांगता है, लेकिन यहाँ भी किसी ख़ास नस्ल व क़ौम या किसी ख़ास मज़हबी गिरोह का ज़िक्र नहीं करता, बल्कि उन राहों से बचना चाहता है जो दुनिया के तमाम महरूम और गुमराह इन्सानों की राहें रह चुकी हैं। गोया जिस बात का तलबगार है वो भी नौअ़े इन्सानी की आ़लमगीर अच्छाई है और जिस बात से पनाह मांगता है वो भी नौअ़े इन्सानी की आ़लमगीर बुराई है। नस्ल, क़ौम, मुल्क या मज़हबी गिरोह बन्दी के तफ़रिक़ा व इम्तियाज़ की कोई परछाईं उसके दिलो-दिमाग़ पर नज़र नहीं आती।

ग़ौर करो! मज़हबी तसव्वुर की ये नौइयत इन्सान के ज़ेहनो-अ़वातिफ़ के लिए किस तरह का सांचा मुहैया करती है? जिस

1-मांगले वाला, हाथ फैलाना।

इन्सान का दिलो-दिमाग़ ऐसे सांचे में ढलकर निकलेगा वो किस क़िस्म का इन्सान होगा? कम अज़ कम दो बातों से तुम इनकार नहीं कर सकते, एक ये कि उसकी ख़ुदा परस्ती, ख़ुदा की आलमगीर रहमतो-जमाल के तसव्वुर की ख़ुदा-परस्ती होगी, दूसरी ये कि वो किसी मअ़ना में भी नस्ल व क़ौम या गिरोह-बन्दियों[1] का इन्सान नहीं होगा, आलमगीर इन्सानियत का इन्सान होगा और दावते क़ुरआनी की अस्ल रूह यही है।

● ● ●

1-गुट-बन्दियों।

हवाशी तफ़्सीर सूरः फ़ातिहा

तर्जुमानुल-क़ुरआन जिल्द-1

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
1	138	पहले एडीशन के सफ़्हा 176 पर ये इबारत ज़्यादा है (यानी हुस्नो-जमाल के एतिराफ़[1] और किबरियाई और कमाल के एतिक़ाद[2] के साथ जो कुछ भी और जैसा कुछ भी कहा जाए)। मुसहहिह[3]
2	,, ,,	पहले एडीशन के सफ़्हा 176 पर ये इबारत ज़्यादा है: (जिसकी परवरदिगारी काइनाते ख़िल्क़त के हर वुजूद को ज़िन्दगी और बक़ा का सरो-सामान बख़्शती और परवरिश की सारी ज़रूरतें मुहैया करती रहती है)। म
3	,, ,,	पहले एडीशन में आयतः 3 का तर्जुमा इस तरह है: जो जज़ा व सज़ा के दिन का मालिक है (और जिसकी अ़दालत ने हर काम के लिए बदला और हर बात के लिए नतीजा ठहरा दिया है)। म
4	,, ,,	पहले एडीशन में ये इबारत ज़्यादा है : (तेरे सिवा कोई माबूद नहीं जिस की

1-स्वीकार। 2-विश्वास। 3-शोधक, दुरूस्तगी करने वाला।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		बन्दगी की जाए और ताआतो-बख़्शिश का कोई सहारा नहीं जिससे मदद मांगी जाए) म
5	138	पहले एडीशन में ये इबारत ज़्यादा है: और मन्ज़िल का सुराग़ उनपर गुम हो गया। म
6	140	इमाम बुख़ारी और अस्हाबे सुनन[1] ने अबू सईद बिन अल-मुअ़ल्ली से रिवायत की है: "الحمد لله رب العالمين" هي السبع المثاني والقرآن العظيم الذي اوتيته और इमाम मालिक, तिर्मिज़ी और हाकिम ने अबू हुरैरा से रिवायत की है कि आँहज़रत (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) ने उबय बिन काब को सूरः फ़ातिहा तल्क़ीन की और यही अल्फ़ाज़ फ़रमाए। इसी तरह तबरी ने हज़रत उमर, हज़रत अ़ली, हज़रत इब्ने अ़ब्बास और इब्ने मसऊद वग़ैरहुम से रिवायत की है कि السبع المثاني فاتحة الكتاب۔ इब्ने मसऊद की अस्नाद मुन्क़ता है, लेकिन इब्ने अ़ब्बास की हसन है। अबुल आ़लिया से भी ऐसा ही मरवी है।

1-हदीसों की छह मुख्य किताबों के एकत्र करने वाले।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		है। इसके अलावा अइम्मए ताबईन की एक बहुत बड़ी जमाअत इसी तरफ़ गई है। हाफ़िज़ इब्ने हजर ने फ़त्हुल बारी में तमाम रिवायात जमा कर दी हैं। (शर्ह किताबुत्तफ़्सीर जिल्दः 8, सफ़्हा 120, तबा अव्वल)
7	140	सहीह बुख़ारी, मोअत्ता, अबू दाऊद, इब्ने माजा और मुस्नद में ब-इख़्तिलाफ़े अल्फ़ाज़ इस मज़्मून की रिवायात मौजूद हैं।
8	141	अबू सईद बिन अल-मुअल्ली की रिवायत में जिसकी तख़रीज पिछले हाशिये में गुज़र चुकी है उसे "अअ़ज़मु सूरतुन फ़िल-क़ुरआन" फ़रमाया है और मुस्नद की रिवायत इब्ने में 'ख़ैर' का लफ़्ज़ है [दोनों एडीशन में लफ़्ज़ "अख़री" तबा[1] हुआ है जो ग़लत है, मुस्नद इब्ने हंबल में अब्दुल्लाह बिन जाबिर की रिवायत इस तरह है ...... ثم قال الا اخبرك يا عبد الله بن جابر بخير سورة فى القرآن۔ जिल्दः4 सफ़्हा 177 मिस्र- म]

1-छपा हुआ है।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
9	142	पहले एडीशन में ये हदीस नहीं है। म
10	,, ,,	,, ,, ये उन्वान नहीं है। म
11	143	,, ,, ,, ,, ,, म
12	145	पहले एडीशन में फ़िक़र-ए-ज़ैल[1] ज़्यादा है: ख़ुदा परस्ती इन्सानी फ़ित्रत का खमीर है, इसलिए ख़ुदा परस्ती की कोई सच्ची बात इन्सान के लिए अनोखी बात हो ही नहीं सकती, उसकी फ़ित्रत के लिए सबसे ज़्यादा जानी-बूझी हुई बात यही है कि ख़ालिक़े काइनात का इक़रार करे। पस सूर: फ़ातिहा की नुदरत[2] महज़ उसके मआनी में नहीं बल्कि मआनी की ताबीर में ढूंढनी चाहिए। ख़ुदा-परस्ती का जोश इन्सान में पहले भी मौजूद था, उसकी रुबूबियत और रहमत के जल्वे कभी उसकी आँखों से ओझल नहीं हुए। जज़ा व सज़ा का एतिक़ाद समंदरों और पहाड़ों से भी ज़्यादा पुराना है। टेढ़े रास्ते से बचने और सीधी राह चलने की तलब न सिर्फ़ इन्सान में बल्कि कीड़ों मकोड़ों तक में मौजूद है। इन्सान अपनी मईशत के

1-निम्नलिखित पंक्ति। 2-अनुपमता, ख़ूबी।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		किसी अहद में भी इस दर्जा मस्ख़ नहीं हुआ कि इन विज्दानी तसव्वुरात से उसका ज़ेहन ख़ाली हो गया हो। लेकिन उसकी सारी महरूमी ये थी कि अपने विज्दान की ठीक-ठीक ताबीर नहीं कर सकता था। वो ख़ुदा की रुबूबियत महसूस कर रहा था लेकिन उसे "रब" कह कर पुकारना नहीं जानता था उसकी रहमत के जल्वे हर आन उसके सामने थे लेकिन वो नहीं जानता था कि अपने दिल का एहसास क्योंकर लफ़्ज़ों और नामों में अदा कर दे। जज़ा और सज़ा उसके दिल के एक एक रेशे का एतिक़ाद था, लेकिन उसे मालूम न था कि उसकी सहीह ताबीर क्या है। हिदायत की तलब और गुमराही से गुरेज़[1] तो अक़्ले हैवानी[2] की फ़ित्री ख़ास्सा[3] है, लेकिन इन्सान की सारी दरमांदगी[4] ये थी कि इस बात की ज़्यादा से ज़्यादा तलब रखने पर भी तलबगारी की राह से आशना न था। (सफ़्हाः 4-5) म

1-बचना, दूर रहना। 2-जीव बुद्धि। 3-प्राकृतिक विशेषता। 4-दरिद्रता, दुर्बलता।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
13	147	पहले एडीशन में ये फ़िक़रा इस तरह हैः फिर हम्द के बाद सिफ़ाते इलाही में से रुबूबियत और रहमत का ज़िक्र किया है और इस तरह नौए इन्सानी की इस आलमगीर ग़लती का इज़ाला कर दिया है कि ख़ुदा को सिर्फ़ उसकी सिफ़ात क़हरो-जलाल ही में देखती थी, उसकी रहमतो-जमाल की तमाशाई न थी। इस उसलूबे बयान ने वाज़ेह कर दिया कि ख़ुदा का सहीह तसव्वुर वही हो सकता है जो सर-तासर हुस्नो-जमाल और रहमतो-मुहब्बत का तसव्वुर हो। (सफ़्हाः 6) म
14	156	यानी "ख़ुदाया! ऐसा कर कि तेरी हस्ती में हमारा तहैयुर[1] बढ़ता रहे" क्योंकि यहाँ तहैयुर जेहल का नहीं बल्कि मअ़रिफ़त का नतीजा है [पहले एडीशन में ये अ़रबी शेर भी हैः *ज़िदनी बिफ़र्तिल हुब्बि फ़ीक तहैयुरा* *व अर्जिम हशन बिलज़ी हवाक तुसइरा।*

1-व्याकुलता।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
15	158	"इलाह की तरह ...... ख़बर देता है" ये फ़िक़रा पहले एडीशन में नहीं है। म
16	,, ,,	मुफ़्रदाते राग़िब अस्फ़हानी।
17	160	Naked eye ग़ैर मुसल्लह आँख, यानी ऐसी जो अपनी क़ुदरती निगाह से देख रही हो, ज़्यादा क़ुव्वत के साथ देखने का कोई इलाह मसलन ख़ुर्दबीन[1] उसके साथ न हो।
18	174	इन्सान में माँ की मुहब्बत बुलूग़[2] के बाद भी बदस्तूर बाक़ी रहती है और बाज़ हालतों में उसके इन्फ़िआलात[3] इतने शदीद होते हैं कि अ़हद तफ़ूलियत[4] की मुहब्बत में और उस मुहब्बत में कोई फ़र्क़ महसूस नहीं होता, लेकिन ये सूरते हाल ग़ालिबन इन्सान की मदनी व अ़क़्ली ज़िंदगी के नशो-नुमा का नतीजा है, न कि फ़ित्रते हैवानी का। इब्तिदाई इन्सान में भी ये इलाक़ा फ़ित्रतन उसी हद तक होगा कि बच्चा सिन्ने तमीज़[5] तक पहुँच जाए, लेकिन बाद को नस्लो-ख़ानदान की

1-सूक्ष्मदर्शी। 2-बड़े होने। 3-प्रभाव, प्रति प्रभाव। 4-शैशवकाल, बचपन। 5-जानने-समझने की उम्र।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		तशकील[1] और इज्तिमाई एहसासात[2] की तरक़्क़ी से भदरी रिश्ता[3] एक दाइमी[4] रिश्ता बन गया।
19	185	ये हाशिया पहले एडीशन में है, सफ़्हा: 27, लेकिन दूसरे में नहीं है। म यही हक़ीक़त है जिसे आज इल्मी मुस्तलिहात में यूँ अदा किया जाता है: "From the motion of the electrons round the positively charged nucleus of an atom to the motion of the planets round the sun, and so forth, every thing points only to one conclusion, viz predetermined law." Sir Oliver Lodge. इसकी मज़ीद तशरीह अपने मक़ाम पर आएगी। जिस हक़ीक़त को यहाँ 'Pred-etermined Law' से ताबीर किया गया है इसीको क़ुरआन ने "तख़्लीक़ बिल-हक़" से ताबीर किया है।
20	186	ये हाशिया पहले एडीशन में है, सफ़्हा: 27 लेकिन दूसरे में नहीं है। म

1-गठन। 2-सामूहिक भावना। 3-मातृत्व का रिश्ता। 4-पुराना, हमेशा का।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		ये ताबीर इसलिए इख़्तियार की गई की गई कि नुज़ूले क़ुरआन से पहले तमाम पैरवाने मज़ाहिब ने दुनिया की पैदाइश का जो नक़्शा खींचा था वो हिकमतो-मसालेह से यक-क़लम ख़ाली था। लोग ख़याल करते थे कि ताक़तो-इख़्तियार के साथ हिक्मतो-मसालेह[1] की रिआयत जमा नहीं हो सकती। हिक्तमो-मसालेह की पाबन्दी वही करेगा जो किसी के आगे जवाबदेह हो। ख़ुदा जो सबसे बड़ा और सबपर हुक्मराँ है उसके काम हिक्मो-मसालेह से क्यों वाबस्ता हों, वो मुत्लकुल-इनान बादशाहों को देखते थे कि जो जी में आता है कर गुज़रते हैं और उनके कामों में चूनो-चिरा की गुंजाइश नहीं होती। पस समझते थे कि ख़ुदा के कामों का भी यही हाल है। चुनांचे हिन्दुस्तान, मिस्र, बाबुल और यूनान की तमाम इल्मुल-अस्नामी[2] रिवायात इसी तख़ैयुल का नतीजा हैं। देवताओं ने इश्क़-बाज़ी में रंग-रलियाँ मनाईं और सितारे पैदा हो गए। किसी

1-सूझबूझ और तर्कनीति। 2-मूर्तिवादी, मूर्तिपूजक।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		देवता ने शिकार खेलते हुए तीर मारा पहाड़ पैदा हो गया। एक देवता ने अपनी जटा खोल दी दरिया वुजूद में आ गया। अस्नाम परस्त अक़्वाम के अ़लावा यहूदियों और ईसाइयों के ख़यालात भी इस बारे में अ़क़्ली तसव्वुरात से ख़ाली थे। यहूदियों का ख़याल था कि एक मुत्लक़ुल-इनान और मुस्तबद बादशाह की तरह ख़ुदा के अफ़्आ़ल भी हिक्मो-मसालेह की जगह महज़ जोशो-हैजान का नतीजा होते हैं। वो ग़ुस्से में आकर क़ौमों को हलाक कर देता है और जोशे मुहब्बत में आकर किसी ख़ास क़ौम को अपनी चहेती क़ौम बना लेता है।
		बिला-शुब्हा ईसाई तसव्वुर का माय-ए-ख़मीर[1] रहमो-मुहब्बत है, लेकिन हिक्मो-मसालेह के लिए इसमें भी जगह न थी। कफ़्फ़ारे के ए़तिक़ाद के साथ हिक्म व मसालेह का ए़तिक़ाद नशो-नुमा नहीं पा सकता था। क़ुरआन तरीख़े मज़ाहिब में पहली किताब है =

1-मूल भाव, निचोड़।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= जिसने ख़ुदा की सिफ़ात व अफ़आल के लिए अक़्ली तसव्वुर क़ायम किया और ये हक़ीक़त वाज़ेह की कि हिक्म व मसालेह की रिआयत मनाफ़िए क़ुदरत[1] नहीं है, बल्कि महासिने क़ुदरत[2] में से है। बिला-शुब्हा ख़ुदा जो कुछ चाहे कर सकता है, लेकिन उसकी हिकमत व अदालत का मुक़्तज़ा यही है कि जो कुछ करता है, हिकमतो-मस्लहत के साथ करता है। इसी अस्ल का नतीजा है कि उसने तख़्लीक़े काइनात का भी जो नक़्शा खींचा, वो सर-तासर अक़्ली नक़्शा है। इसी लिए उसने जा-बजा "तख़्लीक़ बिल-बातिल[3]" के ख़याल को कुफ़्र की तरफ़ निस्बत दी है। وَمَا خَلَقْنَا السَّمَاءَ وَالْأَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَا بَاطِلًا ذَٰلِكَ ظَنُّ الَّذِينَ كَفَرُوا (38:37) हमने आसमानो-ज़मीन को और जो कुछ इनके दर्मियान है बग़ैर हिकमत व मस्लहत के नहीं बनायाहै। ये ख़याल कि हमने बग़ैर हिकमत =

1-प्रकृति विरुद्ध। 2-प्रकृति के अनुकूल। 3-असत्य मूलक सृष्टि।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= व मस्लहत के पैदा किया, उन लोगों का गुमान है जिन्हों ने कुफ़्र का शेवा इख़्तियार किया।
21	187	आयत के आख़िरी हिस्से का तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। म
22	194	''क़ुल'' का तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन[1] में लिख दिया गया है। म
23	202	इस मौक़े पर ये अस्ल पेशे नज़र रखनी चाहिए कि जिस तरह काइनात की हर चीज़ नज़र व एतिबार के मुख़्तलिफ़ पहलू रखती है इसी तरह क़ुरआन का इस्तिशहाद[2] भी बयक-वक़्त मुख़्तलिफ़ पहलुओं से तअ़ल्लुक़ रखता है, अलबत्ता ख़ुसूसियत के साथ ज़ोर किसी एक ही पहलू के लिए होता है, मसलन शहद की पैदाइश और शहद की मक्खी के आमाल के मुख़्तलिफ़ पहलू हैं। ये बात कि एक निहायत मुफ़ीद और लज़ीज़ ग़िज़ा पैदा हो जाती है, रुबूबियत है। ये बात कि एक हक़ीर-सा जानवर इस दानिशमन्दी व दिक़्क़त के साथ ये काम

1-कोष्ठक। 2-अवलोकन।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		अंजाम देता है, ज़ेहनो-इदराक की बख़्शिश का अ़जीबो-ग़रीब मन्ज़र है और इसलिए हिकमतो-क़ुदरत का पहलू रखता है। इन आयात का सियाक़ो-सबाक़ बतलाता है कि यहाँ ज़्यादातर तवज्जोह रुबूबियत पर दिलाई गई है, लेकिन साथ ही हिकमतो-क़ुदरत के पहलुओं पर भी रौशनी पड़ रही है। इसी तरह अक्सर मक़ामात में रुबूबियत, रहमत, हिकमत और क़ुदरत के मुश्तरक मज़ाहिर बयान किये गए हैं, लेकिन ख़ुसूसियत के साथ ज़ोर किसी एक ही पहलू पर है।
24	205	'فَأَنّٰى تُؤْفَكُوْنَ' का तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। म
25	218	पहले एडीशन में ये जुम्ला ज़्यादा हैः फ़े'ली ज़ुहूर उनके लिए ज़रूरी नहीं होता। (सफ़्हाः 39) म
26	,, ,,	पहले एडीशन में ये जुम्ला ज़्यादा हैः और अपना फ़े'ली ज़ुहूर भी रखते हैं। (सफ़्हाः 39) म
27	223	"क़ुल" का तर्जुमा छूट गया था जो =

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= क़ौसैन में लिख दिया गया है। म
28	225	इस आयत में और इसकी तमाम हम-मअ़ना आयात में 'सख़्ख़र' का लफ़्ज़ इस्तेमाल किया गया है, यानी तमाम चीज़ें तुम्हारे लिए मुसख़्ख़र कर दी गई हैं, अरबी में 'तस्ख़ीर' ठीक-ठीक उसी मअ़ना में बोला जाता है जिस मअ़ना में हम उर्दू में बोला करते हैं, यानी किसी चीज़ का क़हरन व हकमन इस तरह मुती[1] हो जाना कि जिस तरह चाहें उससे काम लें। ग़ौर करो! इन्सानी कुवा की अ़ज़्मतो-सरवरी के इज़्हार के लिए इससे ज़्यादा मौज़ूँ[2] ताबीर और क्या हो सकती थी? क़ुरआन के नुज़ूल से पहले अक़्वामे आ़लम की दीनी ज़ेहनियत इन्सान की अ़क्ली उमंगों के कतअ़न ख़िलाफ़ थी। लेकिन क़ुरआन ने सिर्फ़ यही नहीं किया कि उसकी अ़क्ली उमंगों की जुर्अत अफ़्ज़ाई कर दी, बल्कि उसकी हिम्मत, अ़क्ल और उलुल-अ़ज़्मी इल्म के लिए एक ऐसी बुलन्द नज़री का नक़्शा खींच दिया जिससे बेहतर =

1-अधीन, वश में। 2-उपयुक्त।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= नक़्शा आज भी नहीं खींचा जा सकता। आसमान और ज़मीन में जो कुछ है सब इसलिए है कि इन्सान के आगे मुसख़्ख़र होकर रहे और इन्सान इनमें तसर्रुफ़ करे। इन्सानी अ़क़्लो-फ़िक्र के लिए इससे ज़्यादा बुलन्द नसबुल-ऐन[1] और क्या हो सकता है? फिर ग़ौर करो "तस्ख़ीर" का लफ़्ज़ इन्सानी अ़क़्ल की हुक्मरानियों के लिए किस दर्जा मौज़ूँ लफ़्ज़ है? इस तस्ख़ीर का क़दीम मंज़र ये था कि इन्सान का छोटा सा बच्चा लकड़ी के दो गज़ तख़्ते जोड़ कर समन्दर के सीने पर सवार हो जाता था और नया मंज़र ये है कि आग, पानी, हवा, बिजली तमाम अ़नासिर पर हुक्मरानी कर रहा है। अलबत्ता ये बात याद रहे कि क़ुरआन ने जहाँ कहीं इस तस्ख़ीर का ज़िक्र किया है उसका तअ़ल्लुक़ सिर्फ़ कुरए अर्ज़ी की काइनात से है या आसमान के उन मोअस्सिरात से है जिन्हें हम यहाँ महसूस कर रहे हैं ये नहीं कहा है कि =

1-लक्ष्य।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= तमाम मौजूदाते-हस्ती उसके लिए मुसख़्ख़र कर दी गई हैं या तमाम मौजूदाते हस्ती में वो अशरफ़ व आला मख़्लूक़ है। ये ज़ाहिर है कि हमारी दुनिया काइनाते हस्ती के लिए बेकिनार[1] समन्दर में एक क़तरे से ज़्यादा नहीं : وَمَا يَعْلَمُ جُنُودَ رَبِّكَ إِلَّا هُوَ (47:31) और इन्सान को जो कुछ भी बरतरी[2] हासिल है वो सिर्फ़ इस दुनिया की मख़्लूक़ात में है।
29	227	" لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ " का तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। म
30	238	" إِنَّهُ كَانَ حَلِيمًا غَفُورًا " का तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। म
31	263	"وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ" का तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। म
32	266	क़ुरआने हकीम ने आख़िरत के वुजूद का जिन-जिन दलाइल से इज़्आन पैदा =

1-असीम। 2-बड़प्पन।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= किया है उनमें से एक ये भी है, वो कहता है: दुनिया में हर चीज़ अपना कोई न कोई मुतक़ाबिल वुजूद या मुसन्ना[1] ज़रूर रखती है, पस ज़रूरी है कि दुनियवी ज़िन्दगी के लिए भी कोई मुतक़ाबिल और मुसन्ना ज़िन्दगी हो। दुनियवी ज़िन्दगी की मुतक़ाबिल ज़िन्दगी आख़िरत की ज़िन्दगी है, चुनांचे बाज़ सूरतों में इन्हीं मुतक़ाबिल मज़ाहिरात से इस्तशहाद किया है। मसलन सूर: वश-शम्स में फ़रमाया: وَالشَّمْسِ وَضُحٰهَا ۝ وَالْقَمَرِ اِذَا تَلٰهَا ۝ وَالنَّهَارِ اِذَا جَلّٰهَا ۝ وَاللَّيْلِ اِذَا يَغْشٰهَا ۝ وَالسَّمَآءِ وَمَا بَنٰهَا ۝ وَالْاَرْضِ وَمَا طَحٰهَا ۝ الخ (91: 1-6)
33	266	"لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُوْنَ" का तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। म
34	269	यानी हव्वा – मुसह्हिह [तबा दोम–म]
35	'' ''	यानी आदम और हव्वा की नस्ल है, मुसह्हिह [तबा दोम- म]
36	272	"وَلَعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ" का तर्जुमा छूट =

1-प्रतिरूप, दूसरा रूप।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। म
37	290	पहले एडीशन में हस्बे-जैल फ़िक़रात ज़्यादा हैं: चुनांचे सूरः बक़रा में जहाँ तहवीले क़िब्ला के मामले का ज़िक्र किया है वहाँ अहले किताब की मुतअ़स्सिबाना मुख़ालिफ़तों की तरफ़ इशारा करके फ़रमाया : اَلْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ فَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُمْتَرِيْنَ (2: 147) ये (यानी तहवीले क़िब्ला[1] का मामला) तुम्हारे परवरदिगार की तरफ़ से एक अम्रे-हक़ है। पस देखो! ऐसा न हो कि तुम शक करने वालों में से हो जाओ। चुनांचे आ़म मुफ़स्सिरीन की नज़र इस अस्ल पर न थी, इसलिए इस ख़िताब का सहीह महल मुतअ़ैयन न कर सके और "فَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُمْتَرِيْنَ" का मतलब ये समझा गया कि इस मामले के ख़ुदा की तरफ़ से होने में शक न करो, हालांकि दाइये इस्लाम का क़ल्ब =

1-क़िब्ला बदलना (क़िब्लाः वो दिशा या रुख़ जिसकी तरफ़ मुंह करके नमाज़ पढ़ी जाए)।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= जो ख़ुद महल्ले वही था इस बारे में शक का महल क्यों कर हो सकता था। दरअसल इस ख़िताब का मक़्सद ही दूसरा है। तहवीले क़िब्ला के मामले में कमज़ोर और बेसरो-सामान मुसलमानों के ईमान के लिए बहुत बड़ी आज़माइश थी। मुट्ठी भर मज़लूमो-मक्हूर इन्सानों की जमाअ़त ने दुनिया की दो सबसे बड़ी मज़हबी क़ुव्वतों के क़बीलों के ख़िलाफ़ अपना एक नया क़िब्ला मुक़र्रर किया था और यरूशलम का अ़ज़ीमुश-शान और सदियों का मुसल्लमा हैकल[1] छोड़ कर रेगिस्ताने अ़रब के एक गुमनाम और बेशानो-शौकत माबद[2] की तरफ़ मुतवज्जह हो गए थे। ऐसी हालत में कौन उम्मीद कर सकता था कि ये बेबाकाना जुर्अत कामयाब हो सकेगी और दुनिया की क़ौमों का रुख़ अचानक फ़िर जाएगा। यही हक़ीक़त है जिसकी तरफ़ इन लफ़्ज़ों में इशारा किया गया कि: "وَإِنْ كَانَتْ لَكَبِيرَةً إِلَّا عَلَى الَّذِينَ هَدَى اللَّهُ ط وَمَا كَانَ اللَّهُ لِيُضِيعَ إِيمَانَكُمْ" (2:138) पस ज़रूरत थी कि कमज़ोर =

1-सम्माननीय प्रार्थनागृह। 2-प्रार्थना केन्द्र यानी काबा।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= दिलों की तक़वियत के लिए वाज़ेह कर दिया जाए कि ये मामला कितनी ही बेसरो-सामानियों के साथ ज़ुहूर में आया हो और नाकामयाबी के अस्बाब बज़ाहिर कितने ही क़वी नज़र आते हों ताहम कामयाबी और फ़त्हमन्दी इसी के लिए है और इसका नतीजा हर तरह के शको-शुब्हा से पाक है, क्यों कि ये अल्लाह की तरफ़ से ठहराया हुआ "अम्रे-हक़" है और जो हक़ हो वो क़ायम व बाक़ी रहने के लिए होता है, मुसन्ना के लिए नहीं होता। हर वो चीज़ जो उससे मुक़ाबिल होगी और उसकी राह रोकेगी, महव और फ़ना हो जाएगी। इसी तरह सूरः आले इमरान में जहाँ उलूहियते मसीह[1] के एतिक़ाद का रद किया है फ़रमाया: اَلْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ فَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُمْتَرِيْنَ (3:60) ये तुम्हारे परवरदिगार की तरफ़ से अम्रे हक़ है। पस देखो! ऐसा न हो कि तुम शक करने वालों में से हो जाओ।

1-हज़रत मसीह की उपास्यता।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		उलूहियते मसीह का एतिक़ाद मसीही कलीसा का बुनियादी एतिक़ाद बन गया था और इस क़ुव्वतो-वुस्अ़त के साथ दुनिया में इसकी मनादी की गई थी कि अब इसके ख़िलाफ़ किसी दावत का कामयाब होना तक़रीबन मुहाल मालूम होता था। ख़ुसूसन ऐसी हालत में जबकि इस दावत के पीछे एक नौज़ाइदा और बेसरो-सामान जमाअ़त के सिवा कोई ताक़तो-शौकत नज़र न आती हो। फ़रमाया: "अल-हक़्क़ु मिर्रब्बिक" उलूहियते मसीह के बातिल एतिक़ाद ने कितनी ही अ़ज़्मतो-वुस्अ़त हासिल कर ली हो, लेकिन अ़ब्दियते मसीह[1] की दावत एक अम्रे हक़ है और इसलिए जब कभी "हक़" और "बातिल" में मुक़ाबला होगा तो बक़ा व सबात हक़ ही के लिए होगा, बातिल के लिए नहीं होगा। बातिल का तो ख़ास्सा ही यही है कि वो मिट जाने वाली चीज़ होती है। सरे-दस्त ये दावत कितनी ही कमज़ोर मालूम होती हो लेकिन वो =

1-हज़रत ईसा का ख़ुदा का बन्दा होना।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= वक़्त दूर नहीं जब ये अपनी फ़त्ह-मन्दी का अ़लम बुलन्द कर देगी। इसी तरह "अल-हक़" के तमाम मक़ामाते-इस्तेमाल पर ग़ौर करना चाहिए। (सफ़्हाः 71-72) म
38	294	ये फ़िक़रा "मसलन फ़ित्रत .... इन्तिज़ार किया जाए" पहले एडीशन में नहीं है। म
39	304	"وَلَيَنْصُرَنَّ اللّٰهُ ...... لَقَوِيٌّ عَزِيْزٌ" इस हिस्से का तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। म
40	310	"قُلْ" का तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। म
41	315	[किताबुल-बिर्रि वस्सिलाति, बाबु फ़ज़्लि इ़यादतिल मरीज़। म]
42	317	तबरानी व इब्ने जरीर बिसनदिन सहीहिन।
43	,, ,,	इमाम अहमद ने मुस्नद में, तिर्मिज़ी और अबू दाऊद ने सहीह में और हाकिम ने मुस्तदरक में इब्ने उमर से रिवायत की है। وروينه مسلسلا من طريق الشيخ محمود =

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		شکری الالوسی العراقی وایضا عن والدی المرحوم عن الشیخ صدر الدین الدهلوی منطریق الشیخ احمد ولی الله رحمهم الله [तिर्मिज़ी, अब्वाबुल-बिर्रि वस्सिलति, बाबु मा जाअ फ़ी रहमतिल मुस्लिमीन, में ये हदीस इस तरह है: الراحمون يرحمهم الرحمن ، ارحموا من في الارض يرحمكم من في السماء، الرحم شجنة من الرحمن، فمن وصلها وصله الله ومن قطعها قطعه الله۔ -म]
44	317	रवाहुल-बुख़ारी फिल-अदबिल मुफ़रद [बाबु रहमतिल बहाइम (176) हदीस (381) वत्तब्रानी अ़न अबी उमामत व सह्हहुस्-सुयूती फ़िल-जामिस्-सग़ीर [अल-मुजल्लदुस्सानी (मन रहिम)]
45	318	"यानी ख़ुदा ने आदम में ...... आ़लमे ज़ुर" ये इबारत पहले एडीशन में नहीं है। म
46	329	पहले एडीशन से इज़ाफ़ा किया गया है, दूसरे एडीशन में कातिब से छूट गया था। म
47	330	शायद इन्सान की गुमराही की =

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= बुल-अजबियों की इससे बेहतर मिसाल नहीं मिल सकती कि जिस इंजील की तालीम का ये मतलब समझ लिया गया था कि वो किसी हाल में बदला लेने और सज़ा देने की इजाज़त नहीं देती, उसी इंजील के पैरवों ने नौए इन्सानी की ताज़ीबो-हलाकत का अमल ऐसी वहशत व बेरहमी के साथ सदियों तक जारी रखा कि आज हम उसका तसव्वुर भी बग़ैर दहशतो-हिरास के नहीं कर सकते और फिर ये जो कुछ किया गया इंजील और उसके मुक़द्दस मोअल्लिम के नाम पर किया गया।
48	334	पहले एडीशन में ये फ़िक़रा ज़्यादा है: सबको जवाब में कहना पड़ा "वो जिसे ज़्यादा रक़म माफ़ कर दी गई" सफ़्हा: 90- म
49	,, ,,	पहले एडीशन (सफ़्हा: 90) में ये आयत भी है: وقلیل من عبادی الشکور (34:13)। म
50	335	وایضا عن انس قال رسول الله صلی الله علیه وسلم والذی نفسی بیده! لواخطاتم

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		حتی تملأ خطایاکم ما بین السماء والارض ثم استغفرتم اللّٰه یغفر لکم ۔ والذی نفسی بیده ! لولم تخطئوا لجاء اللہ بقوم یخطئون ثم یستغفرون فیغفرلهم۔ اخرجه احمد وابو یعلی باسناد رجاله ثقات ۔ وعن ابن عمر مرفوعا: لولم تذنبوا لخلق اللہ خلقا یذنبون ثم یغفرلهم ۔ اخرجه احمد والبزار ورجاله ثقات۔ واخرج البزار من حدیث ابی سعید نحو حدیث ابی هریرة فی الصحیح ، وفی اسناده یحی بن بکیر وهو ضعیف۔
51	338	पहले एडीशन, सफ़्हा: 92 में ये फ़िक़रा नहीं है: "फिर इस पहलू पर भी नज़र रहे ... अफ़्वो-दरगुज़र की राह इख़्तियार करते हैं" । म
52	342	पहले एडीशन, सफ़्हा: 94 में ये जुम्ला भी है: "सूरः अनफ़ाल के मुक़द्दमे में हम क़ुरआन के अहकामे जंग पर नज़र डालेंगे और इस सिलसिले में मब्हस के इस पहलू पर भी रौशनी पड़ जाएगी"म
53	343	"सामी ज़बानों का .... मुरत्तिब की थी" ये फ़क़रा पहले एडीशन में नहीं है। म

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		इसी तरह लिखा है, लेकिन होना यूँ चाहिएः अस्हाबे दोज़ख़ और अस्हाबे जन्नत। इला-अख़िरिही। म
55	353	[सहीह मुस्लिम, किताबुल-बिर्रि वस्-सिलति वल-अदबि, बाबु तहरीमिज़्-ज़ुल्मि। म]
56	354	पहले एडीशन में ये फ़िक़रा भी हैः अगर यहाँ "ملك يوم الدين" की जगह कोई सिफ़त नमूदार होती जो सिफ़ाते सल्बो- क़हर पर दलालत करती तो ज़ाहिर है कि ये हक़ीक़त वाज़ेह न होती और ख़ुदा का तसव्वुर क़हरो-ग़ज़ब से अलूदा हो जाता। (सफ़्हाः 99) म
57	358	الا تطغوا في الميزان का तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। म
58	363	पहले एडीशन में ये फ़िक़रा भी हैः यही वजह है कि इल्मुल-इज्तिमा के मुफ़क्किरीन ख़ुसूसियत के साथ इस पहलू पर ज़ोर देते हैं। वो कहता है किसी जमाअत की ज़ेहनी व इख़्लाक़ी रफ़्तारे तरक़्क़ी मालूम करने के लिए =

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= सबसे पहले इस बात का सुराग़ लगाओ कि उसने अपने ख़ुदा को किस शक्लो-शबाहत में देखा था। उसी शक्लो- शबाहत में तुम्हें ख़ुद उस जमाअ़त के ज़ेहन व इख़्लाक़ की सूरत नज़र आ जाएगी। (सफ़्हा: 103) म
59	363	पहले एडीशन में ये फ़िक़रा इस तरह है: ऐसा मालूम होता है गोया इन्सान के माद्दी तसव्वुरात की तरह उसके ख़ुदा परस्ताना तसव्वुरात में भी एक तरह के तदरीजी इरतिक़ा का सिलसिला जारी रहा और बतदरीज अदना से आला और पस्ती से बुलन्दी की तरफ़ तरक़्क़ी होती रही। बिला-शुब्हा ये मुश्किल है कि हम इस सिलसिले की सबसे इब्तिदाई कड़ियाँ मुतअ़ैयन कर सकें, क्योंकि जिस क़द्र माज़ी की तरफ़ बढ़ते हैं तारीख़ की रौशनी धुंधली पड़ जाती है और वह्यो-नुबुव्वत की ज़बानें भी तफ़्सीलात से ख़ामोश हैं। ताहम अक़्वामो-जमाअ़ात के मुख़्तलिफ़ अ़हद हमारे सामने हैं और उनसे इस सिलसिले की मुख़्तलिफ़ =

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		– कड़ियाँ बहम पहुँचाई जा सकती हैं। अगर ये तमाम कड़ियाँ तारीख़ी तरतीब[1] के साथ यकजा कर दी जाएँ तो साफ़ नज़र आ जाए कि इस सिलसिले की सबसे आख़िरी और इसलिए सबसे ज़्यादा तरक़्क़ी याफ़्ता कड़ी वही है जो क़ुरआन ने नौअ़े इन्सानी के सामने पेश की है। लेकिन याद रहे यहाँ ख़ुदा के तसव्वुर से मक़सूद उसकी सिफ़ात का तसव्वुर है, उसकी हस्ती का एतिक़ाद नहीं है। (सफ़्हाः 103-104) म
60	374	The origin and growth of religion
61	375	गेज़न सफ़्हाः 262
62	376	"मरदा की किताब" क़दीम मिस्री तसव्वुरात का सबसे ज़्यादा मुरत्तब और मुंज़बित नविश्ता है। मिस्रियात के मशहूर मुहक़्क़िक़ डॉक्टर बुज Budge की राय में ये सबसे ज़्यादा क़दीम फ़िक्री मवाद है जो मिस्री आसार ने हमारे हवाले किया है। ये ख़ुद इतनी ही पुरानी है जितना पुराना मिस्री –

1-ऐतिहासिक क्रम।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= तमद्दुन[1] है, लेकिन जो तसव्वुरात इसमें जमा किए गए हैं वो मिस्री तमद्दुन से भी ज़्यादा क़दीम हैं। वो इतने क़दीम हैं कि हम उनकी क़दामत की कोई तारीख़ मुतअ़ैयन नहीं कर सकते। इस नविश्ते में ओसीरीज़ के ये सिफ़ात हमें मिलते हैं: माबूदे आज़म, अल-ख़ैर, अज़ली बादशाह, आख़िरत का मालिक।
63	384	पहले एडीशन में इस जुम्ले की जगह हस्बे-ज़ैल जुम्ला है : बहरहाल इन्सान के तमाम तसव्वुरात की तरह सिफ़ाते इलाही का तसव्वुर भी उसकी ज़ेहनी व मअ़नवी तरक़्क़ी के साथ-साथ तरक़्क़ी करता रहा है। (सफ़्हाः 105) म
64	385	''तजस्सुम'' से मक़सूद ये है कि ख़ुदा की निस्बत ऐसा तसव्वुर क़ायम करना कि वो मख़्लूक़ की तरह जिस्मो-सूरत रखता है। ''तशब्बोह'' से मक़सूद ये है कि ऐसी सिफ़ात तज्वीज़ करनी जो मख़्लूक़ात की सिफ़ात से मुशाबह[2] हों। ''तन्ज़ीह'' से मक़सूद ये है कि उन =

1-सभ्यता। 2-मिलती-जुलती।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		तमाम बातों से जो उसे मख़्लूक़ात से मुशाबह करती हों उसे मुबर्रा यक़ीन करना। अंग्रेज़ी में तजस्सुम के लिए Anthropomorphism[1] और तशब्बोह के लिए Anthropomorphism[2] की मुस्तलहात इस्तेमाल करते हैं।
65	387	पहले एडीशन में ये जुम्ला भी है: चुनांचे हम देखते हैं कि इन्सान के बच्चे हों या हैवान के, डरते ज़्यादा हैं और उन्स[3] देर में पकड़ते हैं। पहला असर जो वो क़बूल करेंगे ख़ौफ़ का होगा, उन्सो- मुहब्बत का न होगा। (सफ़्हा: 106) म
66	389	पहले एडीशन में इस्लाम से पहले के सिर्फ़ चार दीनी तसव्वुरात का ज़िक्र है, यानी उसमें चीनी तसव्वुर मज़कूर[4] नहीं है। इसके अलावा चार दीनी तसव्वुरात का ज़िक्र भी मुख़्तसर है और उसका अन्दाज़े बयान भी कुछ बदला हुआ है जो, स: 107 से स: 121 तक फैला हुआ है और दर्जे-ज़ैल है :

1-मानवतारोप, मानवीकरण। 2-मानवीकरण, मानवारोपण। 3-अपनापन। 4-वर्णित उल्लिखित।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		हिन्दुस्तानी तसव्वुर में सबसे पहले उप निषदों का फ़लसफ़-ए-इलाही[1] नुमायाँ होता है। उप निषदों के मतालिब की नौइयत के बारे में ज़मान-ए-हाल के शारिहों[2] और नक्क़ादों[3] की राएँ मुत्तफ़िक़[4] नहीं हैं (1) ताहम एक बात बिल्कुल वाज़ेह ——— (1) उप निषदों के मुतअ़ल्लिक़ हमारी जिस क़द्र भी मालूमात हैं तमाम मुस्तशरिक़ीने यूरोप की तहक़ीक़ात से माख़ूज़ हैं मिस्टर गॉफ़ Gough की राय में उप निषद रूहानियत से ख़ाली हैं, लेकिन पॉल डीवसन Paul Deussen मेक्स मूलर Max-Muller और नाइट Knight उन्हें रूहानियत का सर-चश्मा कहते हैं। मशहूर जर्मन हकीम शोपेन हार Schopenhauer तो इस दर्जा मोतरिफ़ हुआ कि उसका ये जुम्ला मशहूर हो गया है: "उप नषिद ज़िन्दगी भर मेरी तशफ़्फ़ी करते रहे और दमे आख़िर भी मुझे उन्हीं से तशफ़्फ़ी मिलेगी"।

1-ईश-दर्शन। 2-व्याख्याकारों। 3-समालोचकों। 4-एकमत।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= है, यानी उप निषद मसअल-ए-वह्-दतुल-वुजूद का सबसे क़दीम सर-चश्मा है और गीता का ज़मानए तस्नीफ़ कुछ ही क्यों न हो, लेकिन वो भी उप निषद ही की सदाओं की बाज़-गश्त[1] है। मसअल-ए-वह्दतुल वुजूद ख़ुदा की हस्ती व सिफ़ात का जो तसव्वुर पैदा करता है उसकी नौइयत कुछ अ़जीब तरह की वाक़े हुई है। एक तरफ़ तो वो हर वुजूद को ख़ुदा क़रार देता है, क्यों कि वुजूदे हक़ीक़ी के अ़लावा और कोई वुजूद मौजूद ही नहीं। दूसरी तरफ़ ख़ुदा के लिए कोई महदूद और मुक़ैयद तख़ैयुल भी क़ायम नहीं करता। बहरहाल जो कुछ भी हो ये तसव्वुर अपनी नौइयत में इस दर्जा फ़लसफ़ियाना क़िस्म का था कि किसी अ़हद और मुल्क में भी आ़म्मतुन्नास[2] का अ़क़ीदा न बन सका। ख़ुद हिन्दुस्तान में भी इसकी हैसियत फ़लसफ़ए इलाहियात के एक मज़हब (स्कूल) से ज़्यादा नहीं रही। बेहतरीन –

1-प्रतिध्वनि। 2-आम लोगों।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= ताबीर जो इस सूरते हाल की की गई है ये है कि अवाम के लिए अस्नाम-परस्ती[1] क़रार दी गई थी और ख़वास के लिए वह्दतुल-वुजूद[2] का एतिक़ाद था। उप निषदों के बाद बौद्ध मज़हब की तालीम नुमायाँ होती है और ज़ुहूरे क़ुरआन के वक़्त हिन्दुस्तान का आम मज़हब यही था। बौद्ध मज़हब की भी मुख़्तलिफ़ तफ़्सीरें की गई हैं। मुस्तशिरक़ीन का एक गिरोह इसे उप निषदों की तालीम ही की एक अमली शक्ल क़रार देता है और कहता है "निरवाण" में जज़्बो-इन्फ़िसाल का अक़ीदा पोशीदा है, यानी जिस सर-चशमए उलूहियत से हस्तिए इन्सानी निकली है फिर उसी में वासिल हो जाना "निरवाण" है। लेकिन दूसरा गिरोह इससे इनकार करता है। इस गिरोह की राय में बौद्ध मज़हब ख़ुदा की हस्ती का कोई तसव्वुर ही नहीं रखता वो दुनिया का तन्हा मज़हब है=

1-मूर्तिपूजा। 2-अद्वैतवाद।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		– जिसने फ़लसफ़ियाना अ़क़ाइद को मज़हब का जामा पहना दिया। वो सिर्फ़ 'प्राकृति' यानी माद्दए अज़ली का ज़िक्र करता है जिसे तबीअ़त और नफ़्स हरकत में लाते हैं। 'निरवाण' से मक़सूद ये है कि हस्ती की अनानियत[1] फ़ना हो जाए और ज़िन्दगी के अ़ज़ाब से छुटकारा मिल जाए। हम जब उन तसरीहात का मुतालआ़ करते हैं जो बराहे-रास्त गौतम बुद्ध की तरफ़ मंसूब हैं तो हमें दूसरी तफ़्सीरें ही ज़्यादा सहीह मालूम होती हैं। जहाँ तक फ़ित्रते काइनात की सिफ़ात का तअ़ल्लुक़ है, गौतम बोद्ध दुनिया में दर्दो-अज़ियत[2] के सिवा कुछ नहीं देखता ज़िन्दगी उसके नज़दीक सर-तासर अ़ज़ाब है। वो कहता है ज़िन्दगी की बड़ी अज़ियतें चार हैं: पैदाइश, बुढ़ापा, बीमारी, मौत। और निजात की राह 'अष्टांग मार्ग' है यानी आठ राहों का सफ़र। इन आठ अ़मलों से मक़सूद इल्मे सहीह, रहम व –

1-अहंकार। 2-दुख-पीड़ा।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= शफ़क़त, क़ुर्बानी, हविस से आज़ादी और अनानियत[1] फ़ना कर देना है।(1) अमली नुक़्तए ख़याल से बौद्ध मज़हब की ख़ुसूसियत ये है कि उसने ताज़ीर व सज़ा की जगह सर-तासर रहमो-हमदर्दी पर ज़ोर दिया। 'किसी जानदार को दुख न पहुँचाओ' उसकी बुनियादी तालीम है। मजूसी तसव्वुर की बुनियाद सनवियत पर है, यानी ख़ैरो-शर की दो अलग क़ुव्वतें तस्लीम की गई हैं। 'यज़्दान' नूर और ख़ैर का ख़ुदा है, 'अहरमन' तारीकी व बदी का। इबादत की बुनियाद आतिश परस्ती और आफ़ताब परस्ती पर रखी गई कि रौशनी यज़्दानी सिफ़त की सबसे बड़ी मज़्हर है। कहा जा सकता है कि ईरान ने ख़ैरो-शर की कश-मकश की गुत्थी यूँ सुलझाई कि उलूहियत की क़ुव्वत दो मुतक़ाबिल ख़ुदाओं में तक़सीम कर दी। (1) David's Early Buddhism

1-सम्यक ज्ञान, करुणा व अहिंसा, त्याग, वासनाओं से मुक्ति और अहंकार मिटाना आदि।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		यहूदियों का तसव्वुर तजस्सुम और तनज़्ज़ोह के बैन-बैन था और सिफ़ाते इलाही में ग़ालिब उन्सुर क़हरो-ग़ज़ब का था। ख़ुदा का गाहे-गाहे मुतशक्कल होकर नमूदार होना, मुख़ातबाते इलाहिया का सर-तासर इन्सानी सिफ़ात व जज़्बात पर मब्नी होना, क़हर व इन्तिक़ाम की शिद्दत और अदना दर्जे का तम्सीली उसलूब तौरात के सफ़हात का आम तसव्वुर है। मसीही तसव्वुर रहमो-मुहब्बत का प्याम था और ख़ुदा के लिए बाप की मुहब्बत व शफ़्क़त का तसव्वुर पैदा करना चाहता था। तजस्सुम व तनज़्ज़ोह के लिहाज़ से उसने कोई क़दम आगे नहीं बढ़ाया। गोया उसकी सतह वहीं तक रही जहाँ तक तौरात का तसव्वुर पहुँच चुका था। लेकिन हज़रत मसीह के बाद जब मसीही अक़ाइद का रूमी अस्नाम परस्ती के तख़ैयुलात से इम्तिज़ाज हुआ तो अक़ानीमे सलासा, कफ़्फ़ारा और मरयम परस्ती के अक़ाइद पैदा हो गए। नुज़ूले क़ुरआन के वक़्त =

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= बहैसियत मजमूई मसीही तसव्वुरे तरह्हुम व मुहब्बत के साथ कफ़्फ़ारा, तजस्सुम और मरयम परस्ती का मख़्लूत तसव्वुर था। इन तसव्वुरात के अ़लावा एक तसव्वुर फ़लासफ़-ए-यूनान का भी है जो अगर्चे मज़ाहिब के तसव्वुरात की तरह क़ौमों का तसव्वुर न हो सका, ताहम उसे नज़र-अन्दाज़ नहीं किया जा सकता। तक़रीबन पाँच सौ बरस क़ब्ल अज़ मसीह यूनान में तौहीदो-तन्ज़ीह का एतिक़ाद नशो-नुमा पाने लगा था। इस की सबसे बड़ी मोअ़ल्लिम शख़्सियत सुक़रत की हिकमत में नुमायाँ हुई। सुक़रात के तसव्वुरे इलाही का जब हम सुराग़ लगाते हैं तो हमें अफ़लातून की शुहर-ए-आफ़ाक़[1] किताब जुम्हूरियत Republic में हस्बे-ज़ैल मुकालमा मिलता है : (1) --- (1) अफ़लातून की जुम्हूरियत मुकालमा के पैराए में है। मुकालमा यूँ शुरू होता है कि एक ईद के मौक़े पर सुक़रात =

1-विश्व विख्यात।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		एडमिंटस ने सवाल किया कि शुअरा को उलूहियत का ज़िक्र करते हुए क्या पैरा-ए-बयान इख़्तियार करना चाहिए। सुक़रात: हर हाल में ख़ुदा की ऐसी तौसीफ़ करनी चाहिए जैसी कि वो अपनी ज़ात में है, ख़्वाह क़ससी शे'र हो, ख़्वाह ग़नाई। अलावा बरीं इसमें कोई शुब्हा नहीं कि ख़ुदा की ज़ात सालेह[1] है, पस ज़रूरी है कि उसकी सिफ़ात भी सलाह व हक़[2] पर मब्नी हों। ---------- = और गलोकन Glaucon सेफ़ाल्स Cephalus के मकान में जमा हुए। सेफ़ाल्स का लड़का पोली मार्कस Polemarchus एडमिंटस Adeimantus और नसेराटस Niceratus भी मौजूद थे। अस्नाए गुफ़्तगू ये सवाल पैदा हो गया कि अदालत की हक़ीक़त क्या है। इस पर पोली मार्कस और बाज़ हाज़िरीन ने यकेबाद-दीगरे अदालत की तारीफ़ बयान की लेकिन सुक़रात उन्हें रद करता रहा। फिर बात में से बात –

1-शुभ, अच्छी। 2-शुभत्व व सत्य।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		एडमिंटस : ये दुरुस्त है। सुक़रात: और ये भी ज़ाहिर है कि जो वुजूद सालेह होगा, उससे कोई बात मुज़िर[1] सादिर नहीं हो सकती और जो ————— = निकलते हुए हुकूमत व क़वानीन की नौइयत तक पहुँच गई और यही किताब का अस्ली मौज़ू है। पूरी किताब दस अब्वाब में मुन्क़सिम है। अशख़ास मुकालमे में गलोकन और एडमिंटस अफ़लातून के भाई हैं। गलोकन का ज़िक्र ख़ुद अफ़लातून ने अपने मक़ालात में किया है। खुलफ़ाए अ़ब्बासिया के अ़हद के मुतरज्जिमीन ने जुम्हूरियत का भी तर्जुमा किया था, चुनांचे छठी सदी हिज्री में इब्ने रुशद ने इसकी शर्ह लिखी है। शर्ह की दीबाचे में तसरीह की है कि "मैंने अरस्तू की किताब अस्सियासत की शर्ह लिखनी चाही थी, लेकिन उंदुलुस में उसका कोई नुस्ख़ा नहीं मिला। मजबूरन अफ़लातून की किताब शर्ह के लिए मुन्तख़ब करता हूँ"। अबू नसर फ़ाराबी ने गो =

1-हानिकारक।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		हस्ती ग़ैर मुज़िर होगी वो कभी शर[1] की साने नही हो सकती। इसी तरह ये बात भी ज़ाहिर है कि जो ज़ात सालेह होगी ज़रूरी है कि नाफ़े[2] भी हो, पस मालूम हुआ कि ख़ुदा सिर्फ़ ख़ैर[3] की इल्लत है, शर की इल्लत[4] नहीं हो सकता।
		= तसरीह नहीं की है, लेकिन ये ज़ाहिर है कि 'अल-मदीनतुल-फ़ाज़िलह' का तख़ैयुल उसे अफ़लातून की जुम्हूरियत ही से हुआ था। इब्ने रुशद की शर्ह के इब्रानी और लातीनी तराजिम यूरोप के कुतुब ख़ानों में मौजूद हैं, लेकिन अस्ल अ़रबी नापैद है। यूरोप की ज़बानों के मौजूदा तराजिम बराहे-रास्त यूनानी से हुए हैं। हमारे पेशे नज़र ए०ई० टेलर A.E. Taylor का अंग्रेज़ी तर्जुमा है।
		याद रहे कि "रिपब्लिक" के लिए "जुम्हूरिया" का लफ़्ज़ मौजूदा अ़हद की इस्तिलाह नहीं है, बल्कि उसी अ़हद के मुतरज्जिमीन के इख़्तियारात में से है।

1-बुराई। 2-लाभकर, कल्याणकारी। 3-अच्छाई। 4-कारण।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		एडमिंटस : दुरुस्त है। सुक़रात: और यहीं से ये बात भी वाज़ेह हो गई कि ख़ुदा का तमाम हवादिस व अफ़आ़ल की इल्लत होना मुमकिन नहीं जैसा कि आ़म तौर पर मशहूर है। बल्कि वो इन्सानी हालात के बहुत ही थोड़े हिस्से की इल्लत है, क्यों कि हम देखते हैं हमारी बुराइयाँ भलाइयों से कहीं ज़्यादा हैं और बुराइयों की इल्लत ख़ुदा की सालेह व नाफ़े हस्ती नहीं हो सकती। पस चाहिए कि सिर्फ़ अच्छाई ही को उसकी तरफ़ निस्बत दें और बुराई की इल्लत किसी दूसरी जगह ढूंढें। एडमिंटस : मैं महसूस करता हूँ कि ये अम्र[1] बिल्कुल वाज़ेह[2] है। सुक़रात : तो अब ज़रूरी हुआ कि हम शुअ़रा के ऐसे ख़्यालात से मुत्तफ़िक़ न हों जैसे ख़यालात होमर (Homer) के हस्बेज़ैल अशआ़र में ज़ाहिर किये गए हैं: "मुशतरी (1) की डेवढ़ी में दो प्याले ——— (1) मुशतरी (Jupiter) यूनान के =

1-बात। 2-साफ़।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		रखे हैं। एक खै़र का है एक शर का, और वही इन्सान की भलाई और बुराई की तमामतर इल्लत हैं। जिस इन्सान के हिस्से में प्याल-ए-ख़ैर की शराब आ गई उसके लिए तमामतर ख़ैर है, जिसके हिस्से में शर का घूंट आ गया,
		= अस्नामी अक़ाइद में रब्बुल अरबाब यानी सबसे बड़ा देवता था। होमर ने इलेड में देवताओं की जो मज्लिस आरास्ता की है उसमें तख़्त-नशीन हस्ती मुशतरी ही की है। उसकी बीवी (Juno) हुवा का मुम्सिला और इज़्दवाज की देवी थी। अपोलो (Apollo) रौशनी का देवता था। एथना या मिनरवा (Minerva) हिकमत की देवी थी। मिर्रीख़ (Mars) जंग का देवता था। ज़ोहरा (Venus) हुस्नो-ग़राम की देवी थी, हेड्स (Hades) तारीकी और मौत का देवता था और जहन्नम का पासबान यक़ीन किया जाता था। अतारिद या हरमेस (Hermes) की निस्बत उनका ख़याल था कि देवताओं का पैग़ाम्बर है।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		उसके लिए तमामतर शर है। और फिर जिस किसी को दोनों प्यालों का मिला-जुला घूंट मिल गया उसके हिस्से में अच्छाई भी आ गई बुराई भी आ गई'(1) फिर आगे चलकर तजस्सुम की तरफ़ इशारा किया है और इससे इन्कार ——————— (1) ये अशआर इलेड (Iliad) के हैं। सुलैमान बुस्तानी ने अपने अ़दीमुन्नज़ीर तर्जु-ए-अ़रबी में इनका तर्जुमा हस्बेज़ैल किया है: فياعتاب زفس قارورتان ذى لخير وذى لشر الهوان فيهما كل قسمة الانسان فالذى منهما مزيجاً انالا زفس يلقى خيرا ويلقى وبالا والذى لاينال الا من الشر فتنتابه الخطوب انتيابا بطواه يطوى البلاد كيلا تائهاً فى عرض الفلادة ذليلا من بنى الخلد والورى مخذولا (اليادة، نشيد ٢٤ ص ١١٣١) फ़या इताबु ज़िफ़्सु क़ारूरतानि ज़ी लिख़ैरिन व ज़ी लिशर्रिल-हवानि =

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		किया है कि ख़ुदा एक बाज़ीगर और बहरूपए की तरह कभी एक भेस में नमूदार होता है, कभी दूसरे भेस में[1]। हुकमाए यूनान के तसव्वुरे इलाही की ये सबसे बेहतर शबीह है जो अफ़लातून के क़लम से निकली है। ये ख़ुदा के तशक्कुल से इनकार करती है और सिफ़ात रदिया व ख़सीसा से भी एक मुनज़्ज़ह तख़ैयुल पेश करती है। लेकिन बहैसियत मजमूई सिफ़ातें हम्ना कोई
		— फ़ीहिमा कुल्लु किम्मातिल इन्सानि फ़ल्लज़ी मिन्हुमा मिररीख़न इनालन ज़िफ़्सुन युलक़ा ख़ैरन व युलक़ा वबालन वल्लज़ी ला यनालु इल्ला मिनश्शर्रि फ़तन्ताबहुल ख़ुतूबु इन्तियाबान वतव्वाहु युतविल बिलादु कलीलन ताइहन फ़ी अर्ज़िल फ़लाति ज़लीलन मन बनल ख़ुलद वलवरा मख़्ज़ूलन (अलयाज़ह, नशीद: 24, स० 1131) इन अशआर में "ज़िफ़्स" से मक़सूद मुशतरी है।
		(1) दी रिपब्लिक, तर्जुमा टेलर बाब दोम।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		अर्फ़ा व आला तसव्वुर नहीं रखती और ख़ैरो-शर की गुत्थी सुलझाने से यक-क़लम आ़जिज़ है। उसे मजबूरन ये एतिक़ाद पैदा करना पड़ा कि हवादिसे आ़लम और अफ़आ़ले इंसानी का ग़ालिब हिस्सा ख़ुदा के दायर-ए-तसर्रुफ़ से बाहर है, क्योंकि दुनिया में ग़लबा शर को है न कि ख़ैर को और ख़ुदा को शर का साने नहीं होना चाहिए। बहरहाल छठी सदी मसीही में दुनिया की ख़ुदा परस्ताना ज़िन्दगी के तसव्वुरात इस हद तक पहुँचे थे कि क़ुरआन का नुज़ूल हुआ। अब ग़ौर करो कि क़ुरआन के तसव्वुरे इलाही का क्या है। जब हम उन तमाम तसव्वुरात के मुतालआ़ के बाद क़ुरआन के तसव्वुर पर नज़र डालते हैं तो साफ़ नज़र आ जाता है कि तसव्वुरे इलाही के तमाम अ़नासिर में इसकी जगह सबसे अलग और सबसे बुलंद है इस सिलसिले में हस्बेज़ैल उमूर क़ाबिले ग़ौर हैं : अव्वलन, तजस्सुम और तन्ज़ीह के लिहाज़ से क़ुरआन का तसव्वुर तन्ज़ीह

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		की ऐसी तकमील है जिसकी कोई नुमूद उस वक़्त दुनिया में मौजूद नहीं थी। क़ुरआन से पहले तन्ज़ीह का बड़े से बड़ा मर्तबा जिसका ज़ेहने इन्सानी मुतहम्मिल हो सका था, ये था कि अस्नाम परस्ती की जगह एक अन-देखे ख़ुदा की परस्तिश की जाए, लेकिन जहाँ तक सिफ़ाते इलाही का तअ़ल्लुक़ है इन्सानी औसाफ़ो-जज़्बात की मुशाबहत और जिस्मो-हैअत के तमस्सुल से कोई तसव्वुर भी ख़ाली न था। यहूदी तसव्वुर जिसने अस्नाम परस्ती की कोई शक्ल भी जायज़ नहीं रखी थी, इस तरह के तशब्बोह और तमस्सुल से यकसर आलूदा है। हज़रत इब्राहीम का ख़ुदा को ममरे के बलोतों में देखना, ख़ुदा का हज़रत याक़ूब से कुश्ती लड़ना, मिस्र से ख़ुरूज के वक़्त बदली और आग का सुतून बनकर रहनुमाई करना, कोहे तूर पर शोलों के अन्दर नमूदार होना, हज़रत मूसा का ख़ुदा को पीछे से देखना, ख़ुदा का जोशे ग़ज़ब में आकर कोई काम कर बैठना और पछताना,

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		बनी इस्राईल को अपनी चहीती बीवी बना लेना और फिर उसकी बदचलनी पर मातम करना, हैकल की तबाही पर उसका नौहा, उसकी अंतड़ियों में दर्द का उठना और कलेजे में सूराख़ पड़ जाना तौरात का आ़म उसलूबे बयान है। अस्ल ये है कि क़ुरआन से पहले फ़िक्रे इन्सानी इस दर्जा बुलन्द नहीं हुआ था कि तम्सील का पर्दा हटा कर सिफ़ाते इलाही का जल्वा देख लेता। इसलिए हर तसव्वुर की बुनियाद तमामतर तम्सीलो-तशबीह ही पर रखनी पड़ी। मसलन तौरात में हम देखते हैं कि एक तरफ़ ज़बूर के तरानों और अम्साले सुलैमान में ख़ुदा के लिए शाइस्ता सिफ़ात का तख़ैयुल मौजूद है, लेकिन दूसरी तरफ़ ख़ुदा का कोई मुख़ातबा ऐसा नहीं जो सर-ता-सर इनसानी औसाफ़ो-जज़्बात की तशबीह से मम्लू न हो। हज़रत मसीह ने जब चाहा कि रहमते इलाही का आ़लमगीर तसव्वुर पैदा करें तो वो भी मजबूर हुए कि ख़ुदा के लिए बाप की तशबीह से काम

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		लें। इसी तशबीह से ज़ाहिर परस्तों ने ठोकर खाई और इब्नियते मसीह का अक़ीदा पैदा कर लिया। लेकिन इन तमाम तसव्वुरात के बाद जब हम क़ुरआन की तरफ़ रुख़ करते हैं तो ऐसा मालूम होता है गोया अचानक फ़िक्रो-तसव्वुर की एक बिल्कुल नई दुनिया सामने आ गई। यहाँ तम्सील व तशबीह के तमाम पर्दे बयक दफ़ा उठ जाते हैं, इन्सानी औसाफ़ो-जज़्बात की मुशाबहत मफ़्क़ूद हो जाती है, हर गोशे में मजाज़ की जगह हक़ीक़त का जल्वा नुमायाँ हो जाता है और तजस्सुम का शायबा तक बाक़ी नहीं रहता। तन्ज़ीह इस मर्तब-ए-कमाल तक पहुँच जाती है कि لَيْسَ كَمِثْلِهِ شَيْءٌ (42:11) उसके मिसल कोई शय नहीं, किसी चीज़ मे भी तुम उसे मुशाबेह नहीं ठहरा सकते। لَا تُدْرِكُهُ الْأَبْصَارُ وَهُوَ يُدْرِكُ الْأَبْصَارَ ۖ وَهُوَ اللَّطِيفُ الْخَبِيرُ (6: 103) इन्सान की निगाहें उसे नहीं पा सकतीं, लेकिन वो इन्सान को देख रहा है। वो

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		बड़ा ही बारीक-बीं (और) आगाह है। (6: 103) قُلْ هُوَ اللّٰهُ اَحَدٌ ۝ اَللّٰهُ الصَّمَدُ ۝ لَمْ يَلِدْ ۝ وَلَمْ يُوْلَدْ ۝ وَلَمْ يَكُنْ لَّهٗ كُفُوًا اَحَدٌ ۝ (122: 1-4) अल्लाह की ज़ात यगाना है, बेनियाज़ है, उसे किसी की एहतियाज नहीं, न तो उससे कोई पैदा हुआ, न वो किसी से पैदा हुआ और न कोई हस्ती उसके दर्जे और बराबर की है। (112: 1-4) यही वजह है कि हम देखते हैं कि क़ुरआन का उसलूबे बयान उस तम्सीली उसलूब से बिल्कुल मुख़्तलिफ़ है जो तौरातो-इंजील वग़ैरहा में पाया जाता है। वो हर मौक़े पर तम्सील व मजाज़ की जगह हक़ीक़त का तसव्वुर पैदा करना चाहता है और तशबीह की जगह तन्ज़ीह के एतिक़ाद पर ज़ोर देता है। वो न तो ख़ुदा की हस्ती को माद्दे की तरह अज्सामो-अशकाल की अस्ल क़रार देता है, न तौरात की तरह शौहर की तशबीह इख़्तियार करता है, न इंजील

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		की तरह बाप के रिश्ते से मुशाबहत पैदा करता है, बल्कि बराहेरास्त एक ख़ालिक़ और मालिक हस्ती का तसव्वुर पैदा करता है और फिर उस की रुबूबियतो-रहमत व सिफ़ाते कामिला व हसना का एक मुकम्मल नक़्शा खींच देता है। ये गोया इस तालीम का सबसे आला सबक़ था। पिछले दौरों में नौअ़ इन्सानी की ज़ेहनी इस्तेदाद इस दर्जा शाइस्ता नहीं हुई थी कि तम्सीलों के बग़ैर हक़ीक़त का तसव्वुर पैदा कर सकती, ला मुहाला पैराय-ए-तालीम भी तमामतर तशबीह व मजाज़ पर मब्नी होता था, लेकिन जब तालीम अपने दर्जा-ए-कमाल तक पहुँच गई तो तम्सीलों की ज़रूरत बाक़ी न रही। ज़रूरी हो गया कि अब हक़ीक़त बराहे-रास्त अपना जल्वा दिखला दे ! तौरात और क़ुरआन के जो मक़ामात मुश्तरक हैं, दिक़्क़ते नज़र के साथ उनका मुतालआ़ करो। तौरात में जहाँ कहीं ख़ुदा की बराहेरास्त नुमूद का ज़िक्र किया गया है क़ुरआन वहाँ ख़ुदा की

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		तजल्ली का ज़िक्र करता है। तौरात में जहाँ कहीं ये पाओगे कि ख़ुदा मुतशक्कल होकर उतरा, क़ुरआन इस मौक़े की यूँ ताबीर करेगा कि ख़ुदा का फ़िरिश्ता मुतशक्कल होकर नमूदार हुआ बतौरे मिसाल के सिर्फ़ एक मक़ाम पर नज़र डाली जाए। तौरात में है :
		ख़ुदावन्द ने कहाः ऐ मूसा! देख ये जगह मेरे पास है, तू इस चटान पर खड़ा रह और 'यूँ होगा कि जब मेरे जलाल का गुज़र होगा तो मैं तुझे इस चटान की दराड़ में रखूँगा और जब तक न गुज़र लूँगा तुझे अपनी हथेली से ढाँपे रहूँगा। फिर ऐसा होगा कि मैं हथेली उठा लूँगा और तू मेरा पीछा देख लेगा, लेकिन तू मेरा चेहरा नहीं देख सकता।
		(ख़ुरूजः 33: 20)
		तब ख़ुदावन्द बदली के सुतून में होकर उतरा और ख़ीमे के दरवाज़े पर खड़ा रहा......उसने कहा "मेरा बन्दा मूसा अपने ख़ुदावन्द की शबीह देखेगा"
		(गतनीः 12: 5)

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		इसी मामले की ताबीर क़ुरआन ने यूँ की है : قَالَ رَبِّ اَرِنِیْٓ اَنْظُرْ اِلَیْكَ ؕ قَالَ لَنْ تَرٰىنِیْ وَلٰكِنِ انْظُرْ اِلَى الْجَبَلِ (7: 143) मूसा ने कहाः ऐ परवरदिगार! मुझे अपना जल्वा दिखा ताकि मैं तेरी तरफ़ निगाह कर सकूँ। फ़रमाया नहीं, तू कभी मुझे नहीं देखेगा, लेकिन हाँ, इस पहाड़ की तरफ़ देख! (7: 143) अलबत्ता याद रहे कि तन्ज़ीह और तातील में फ़र्क़ है। तन्ज़ीह से मक़सूद ये है कि जहाँ तक अक़्ले बशरी की पहुँच है सिफ़ाते इलाही को मख़्लूक़ात[1] की मुशाबहत[2] से पाक और बुलन्द रखा जाए। तातील के मअ़्ना ये हैं कि तन्ज़ीह के मनओ-नफ़ी[3] को इस हद तक पहुँचा दिया जाए कि फ़िक्रे इन्सानी के तसव्वुर के लिए कोई बात बाक़ी ही न रहे। क़ुरआन का तसव्वुर तन्ज़ीह की तक्मील है, तातील की इब्तिदा नहीं है। अगर ख़ुदा के तसव्वुर के लिए सिफ़ात व आमाल की कोई ऐसी सूरत

1-सृष्टि, जीवधारियों। 2-समानता, उपमा। 3-नकार व निषेध।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		बाक़ी ही न रहे जिसका फ़िक्रे इन्सानी इदराक कर सकती हो तो नतीजा ये निकलेगा कि तन्ज़ीह के मअ़ना नफ़ी वुजूद के हो जाएँगे। मसलन अगर कहा जाए कि ख़ुदा के लिए कोई सिफ़त क़रार नहीं दी जा सकती, इसलिए कि जो सिफ़त भी क़रार दी जाएगी उसमें मख़्लूक़ात के औसाफ़ से मुशाबहत पैदा हो जाएगी तो ज़ाहिर है कि अ़क़्ले इन्सानी किसी ऐसी ज़ात का तसव्वुर ही नहीं कर सकती, या मसलन अगर नफ़ी मुमासलत में इस दर्जा ग़ुलू किया जाए कि ख़ुदा की हस्ती इस्बात की जगह सर-तासर नफ़ी हो जाए तो अ़क़्ले इन्सानी के लिए बजुज़ इसके क्या रह जाएगा कि वुजूद की जगह अ़दम[1] का तसव्वुर करे। पस क़ुरआन ने तन्ज़ीह का जो मर्तबा क़रार दिया है वो ये है कि फ़रदन-फ़रदन तमाम सिफ़ातो-अफ़आ़ल का इस्बात करता है, मगर साथ ही अस्लन मुमासलत की नफ़ी भी कर देता है। वो कहता है : ख़ुदा ख़ूबी व जमाल की तमाम सिफ़तों

1-अनस्तित्व, न होना।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		से मुत्तसिफ़ है। वो ज़िन्दा है, क़ादिर है, परवरिश कुनिन्दा है, रहीम है, सुनने वाला है, देखने वाला है, सब कुछ जानने वाला है। इतना ही नहीं बल्कि इन्सान की बोल-चाल में क़ुदरत व इख़्तियार और इरादा व फ़े'ल की जितनी शाइस्ता ताबीरात हैं उन्हें भी बिला तुअम्मुल[1] इस्तेमाल करता है। मसलन कहता है: ख़ुदा के हाथ कुशादा हैं: 'بَلْ يَدَاهُ مَبْسُوطَتَانِ' (5:64) उसके तख़्ते हुकूमत के तसर्रुफ़ से कोई गोशा बाहर नहीं 'وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ' (2:255) वो अपने अ़र्शे जलाल पर मुतमक्किन है 'اَلرَّحْمٰنُ عَلَى الْعَرْشِ اسْتَوٰى' (20:5) लेकिन साथ ही ये भी वाज़ेह कर देता है कि जितनी चीज़ें काइनाते हस्ती में मौजूद हैं या जितनी चीज़ों का भी तुम तसव्वुर कर सकते हो उनमें से कोई चीज़ नहीं जो उसके मिसल हो 'لَيْسَ كَمِثْلِهٖ شَيْءٌ' (42:11) तुम्हारी निगाह उसे पा ही नहीं सकती।

1-निस्संकोच।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		"لَا تُدْرِكُهُ الْأَبْصَارُ" (6:103) पस ज़ाहिर है कि उसका ज़िन्दा होना हमारे ज़िन्दा होने की तरह नहीं हो सकता, उसकी रुबूबियत हमारी रुबूबियत की सी नहीं हो सकती, उसका जानना, देखना, सुनना वैसा नहीं हो सकता जैसा हमारा जानना, देखना और सुनना है। उसकी क़ुद्रतो-बख़्शिश का हाथ और किबरियाई व जलाल का अ़र्श ज़रूर है, लेकिन यक़ीनन इनका मतलब वो नहीं हो सकता जो इन अल्फ़ाज़ से हमारे ज़ेहन में मुतशक्कल हो जाता है। इस्लामी फ़िरक़ों में से जहमिया और बातिनिया ने जो सिफ़ात की नफ़ी की थी तो वो उसी ग़लती के मुरतकिब हुए थे। वो तन्ज़ीह और तातील में फ़र्क़ न कर सके। (1) सानियन, तन्ज़ीह की तरह सिफ़ाते रहमतो-जमाल के लिहाज़ से भी क़ुरआन के तसव्वुर पर नज़र डाली जाए ——————— (1) मसअल-ए-सिफ़ात में व सलफ़िया का मुतकल्लिमीन से इख़्तिलाफ़ भी =

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		तो उसकी शाने तक्मील नुमायाँ है। नुज़ूले क़ुरआन के वक़्त यहूदी तसव्वुर में क़हरो-ग़ज़ब का उन्सुर ग़ालिब था। मजूसी तसव्वुर ने नूरो-जुलमत की दो मुसावियाना क़ुव्वतें अलग-अलग बना ली थीं। मसीही तसव्वुर ने रहमो-मुहब्बत पर ज़ोर दिया, अ़दालत पर उसकी नज़र नहीं पड़ी। गोया जहाँ तक रहमतो-जमाल का तअ़ल्लुक़ है या तो क़हरो-ग़ज़ब का उन्सुर ग़ालिब था या मुसावी था, या फिर रहमतो-मुहब्बत आई थी तो इस तरह आई थी कि
		— दरअसल इसी अस्ल पर मब्नी था। ये बात न थी कि वो तजस्सुम की तरफ़ थे जैसा कि उनके मुतअ़स्सिब मुख़ालिफ़ों ने मशहूर किया। मुतअख़्ख़िरीन में शैखुल-इसलाम इब्ने तैमिया ने इस मसअले पर निहायत दिक़्क़ते नज़र के साथ बहस की है। उनके शागिर्द इमाम इब्ने क़ैयिम की "इज्तिमा जुयूशु इस्लामिया" भी इसी मौज़ू पर है और इस बाब में किफ़ायत करती है।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		अ़दालत के लिए कोई जगह बाक़ी नहीं रहती है। लेकिन क़ुरआन ने एक तरफ़ तो रहमत व जमाल का ऐसा कामिल तसव्वुर पैदा कर दिया कि क़हरो-ग़ज़ब के लिए कोई जगह न रही, दूसरी तरफ़ जज़ा व सज़ा का सरे-रिश्ता भी हाथ से नहीं जाने दिया। क्योंकि जज़ा व सज़ा का एतिक़ाद क़हर व ग़ज़ब की बिना पर नहीं, बल्कि अ़दालत की बिना पर क़ायम कर दिया। चुनांचे सिफ़ाते इलाही के बारे में उसका ये एलान है : قُلِ ادْعُوا اللّٰهَ اَوِادْعُوا الرَّحْمٰنَ ط اَيًّامَّا تَدْعُوْا فَلَهُ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى (17: 110) ऐ पैग़म्बर! इनसे कह दो तुम ख़ुदा को अल्लाह के नाम से पुकारो या रहमान कह कर पुकारो, जिस सिफ़त से भी पुकारो उसकी सारी सिफ़तें हुस्नो-ख़ूबी की सिफ़तें हैं। यानी वो ख़ुदा की तमाम सिफ़तों को "अस्माए-हुस्ना[1]" क़रार देता है। इससे मालूम हुआ कि ख़ुदा की कोई सिफ़त

1-अच्छे नाम, अच्छी ख़ूबियों।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		नहीं जो हुस्नो-ख़ूबी की सिफ़त न हो। ये सिफ़तें क्या-क्या हैं? क़ुरआन ने पूरी वुस्अ़त के साथ इन्हें जा-बजा बयान किया है। इनमें ऐसी सिफ़तें भी हैं जो क़हरो-जलाल की सिफ़तें हैं, मसलन जब्बार, क़ह्हार, लेकिन क़ुरआन कहता है वो भी "अस्माए़ हुस्ना" हैं। क्योंकि उनमें अ़दालते इलाही का ज़ुहूर है और अ़दालत हुस्नो-ख़ूबी है, ख़ूँ-ख़ुवारी व ख़ौफ़नाकी नहीं हैं। चुनांचे सूर: हश्र में सिफ़ाते रहमतो-जमाल के साथ क़हरो-जलाल का भी ज़िक्र किया है और फिर मुत्तसिलन उन सबको "अस्माए़ हुस्ना" क़रार दिया है : هُوَ اللّٰهُ الَّذِىْ لَاۤ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۚ اَلْمَلِكُ الْقُدُّوْسُ السَّلٰمُ الْمُؤْمِنُ الْمُهَيْمِنُ الْعَزِيْزُ الْجَبَّارُ الْمُتَكَبِّرُ ؕ سُبْحٰنَ اللّٰهِ عَمَّا يُشْرِكُوْنَ ○ هُوَ اللّٰهُ الْخَالِقُ الْبَارِئُ الْمُصَوِّرُ لَهُ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى ؕ يُسَبِّحُ لَهٗ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۚ وَهُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ○ (59: 23-24)

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		वो अल्लाह है, उसके सिवा कोई माबूद नहीं, वो अल-मलिक है, अल-कुद्दूस है, अस-सलाम है, अल-मुअ्मिन है, अल-मुहैमिन है, अल-अ़ज़ीज़ु है, अल-जब्बार है, अल-मुतकब्बिर है, और उस साझे से पाक है जो लोगों ने उसकी माबूदियत में बना रखे हैं। वो अल-ख़ालिक़ है, अल-बारी है, अल-मुसव्विर है, (ग़र्ज़े कि) उसके लिए हुस्नो-ख़ूबी की सिफ़तें हैं, आसमानो-ज़मीन में जितनी भी मख़्लूक़ात हैं सब उस की पाकी और अ़ज़्मत की शहादत दे रही हैं और बिला-शुब्हा वही है जो हिकमत के साथ ग़लबा व तवानाई भी रखने वाला है ! (59: 23-24)
		وَلِلّٰهِ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى فَادْعُوْهُ بِهَا ص وَذَرُوا الَّذِيْنَ يُلْحِدُوْنَ فِىْٓ اَسْمَآئِهٖ ط (7: 180)
		इसी तरह सूरः अअ़्राफ़ में है : और अल्लाह के लिए हुस्नो-ख़ूबी की सिफ़तें हैं, सो चाहिए कि उन सिफ़तों से उसे पुकारो। और जिन लोगों का

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		शेवा ये है कि उसकी सिफ़तों (1) में कज- अन्देशियाँ करते हैं उन्हें उनके हाल पर छोड़ दो। (7: 180)
		(1) इस आयत में 'इल्हाद फ़िल-अस्मा' से मक़सूद क्या है? 'इल्हाद' लहद से है, 'लहद' के मअ़ना ''मैलान अ़निलवस्त'' के हैं यानी दरमियान से किसी एक तरफ़ को हटा हुआ होना। इसी लिए ऐसी क़ब्र को जिस में नाश की जगह एक तरफ़ को हटी हुई होती है, उसको लहद कहते हैं। जब ये लफ़्ज़ इन्सानी अफ़आ़ला[1] के लिए बोला जाता है तो इसके मअ़ना राहे हक़ से हट जाने के होते हैं। क्योंकि ''वस्त'' हक़ है और जो इससे मुन्हरिफ़ हो बातिल है। الحد فلان ای مال عن الحق पस यहाँ इल्हाद फ़िल-अस्मा का मतलब ये हुआ कि ख़ुदा की सिफ़ात के बारे में जो राहे हक़ है उससे मुन्हरिफ़ हो जाना। इमाम राग़िब अस्फ़हानी ने इसकी तशरीह हस्बेज़ैल लफ़्ज़ों में की है : ان يوصف بما لا يصح وصفه به او ان يتاول اوصافه على ما لا يليق به۔ (मुफ़रदात: 467)

1-मानवीय कर्म।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		चुनांचे इसी लिए सूर: फ़ातिहा में सिर्फ़ तीन सिफ़तें नुमायाँ हुईं: रुबूबियत, रहमत और अ़दालत, और क़हरो-ग़ज़ब की किसी सिफ़त को यहाँ जगह न दी गई। इससे मालूम हुआ कि क़ुरआन का तसव्वुरे इलाही सर-तासर रहमतो-जमाल का तसव्वुर है, क़हर व ख़ौफ़-नाकी की इसमें कोई गुंजाइश नहीं। सालिसन, जहाँ तक तौहीद व इशरक[1] का तअ़ल्लुक़ है क़ुरआन का तसव्वुर इस दर्जा कामिल और बेलचक है कि उसकी कोई नज़ीर पिछले तसव्वुरात में नहीं मिल सकती। अगर ख़ुदा अपनी ज़ात में यगाना है तो ज़रूरी है कि वो अपनी सिफ़ात में भी यगाना हो, क्योंकि उसकी यगानगत की अ़ज़्मत क़ायम नहीं रह सकती अगर ——— = यानी ख़ुदा के लिए ऐसा वस्फ़ क़रार देना जो उसका वस्फ़ नहीं होना चाहिए या उसकी सिफ़तों का ऐसा मतलब ठहराना जो उसकी शान के लायक़ नहीं।

1-साझेदारी, ईश्वर की हस्ती के साथ किसी को मिलाना, अनेकेश्वरवाद।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		कोई दूसरी हस्ती उसकी सिफ़ात में शरीको-सहीम मान ली जाए। क़ुरआन से पहले तौहीद के ईजाबी पहलू पर तो तमाम मज़ाहिब ने ज़ोर दिया था, लेकिन सलबी पहलू नुमायाँ नहीं हो सका था। ईजाबी पहलू ये है कि ख़ुदा एक है, सलबी पहलू ये है कि उसकी तरह कोई नहीं और जब उसकी तरह कोई नहीं तो ज़रूरी है कि जो सिफ़तें उसके लिए ठहरा दी गई हैं उनमें कोई दूसरी हस्ती शरीक न हो। पहली बात तौहीद फ़िज़्-ज़ात[1] से और दूसरी बात तौहीद फ़िस्-सिफ़ात[2] से ताबीर की गई है। क़ुरआन से पहले फ़िक्रे इन्सानी की इस्तेदाद इस दर्जा बुलन्द नहीं हुई थी कि तौहीद फ़िस्सिफ़ात की नज़ाकतों और बन्दिशों की मुतहम्मिल हो सकती, इसलिए मज़ाहिब ने तमामतर ज़ोर तौहीद फ़िज़्ज़ात ही पर दिया, तौहीद फ़िस्सिफ़ात अपनी इब्तिदाई और सादा हालत में छोड़ दी गई। चुनांचे यही वजह है कि हम देखते हैं

1-हस्ती की दृष्टि से एक। 2-गुणों की दृष्टि से एक (अकेला)।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		बावजूदे कि तमाम मज़ाहिब क़ब्ल अज़ क़ुरआन[1] में अक़ीदए तौहीद की तालीम मौजूद थी, लेकिन किसी न किसी सूरत में शख़्सियत परस्ती[2], अज़्मत परस्ती[3] और अस्नान परस्ती[4] नमूदार होती रही और रहनुमायाने मज़ाहिब इसका दरवाज़ा बन्द न कर सके। हिन्दुस्तान में तो ग़ालिबन अव्वल दिन ही से ये बात तस्लीम कर गई थी कि अ़वाम की तशफ़्फ़ी के लिए देवताओं और इन्सानी अज़्मतों की परिस्तारी नागुज़ीर[5] है और इसलिए तौहीद का मक़ाम सिर्फ़ ख़वास के लिए मख़्सूस होना चाहिए। फ़लासफ़-ए-यूनान का भी यही ख़याल था। यक़ीनन वो इस बात से बेख़बर न थे कि कोहे ओलम्पस के देवताओं की कोई असलियत नहीं, ताहम सुक़रात के अ़लावा किसी ने भी इसकी ज़रूरत महसूस नहीं की कि अ़वाम के अस्नामी अक़ाइद में ख़लल अन्दाज़ हो। वो कहते थे: "अगर देवताओं की परस्तिश का निज़ाम क़ायम न रहा तो अ़वाम की

1-क़ुरआन से पहले के धर्मों। 2-व्यक्ति पूजा। 3-महानता की पूजा। 4-मूर्ति पूजा। 5-अपरिहार्य।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		मज़हबी ज़िन्दगी दर्हम-बर्हम हो जाएगी'' फ़ीसाग़ोरस की निस्बत बयान किया गया है कि जब उसने अपना मशहूर हिसाबी क़ायदा मालूम किया था तो उसके शुकाने में सौ बछड़ों की क़ुर्बानी देवताओं की नज़र की थी। इस बारे में सबसे ज़्यादा नाज़ुक मामला मुअ़ल्लिम व रहनुमा की शख़्सियत का था। ये ज़ाहिर है कि कोई तालीम अ़ज़्मतो-रफ़अ़त[1] हासिल नहीं कर सकती जब तक मुअ़ल्लिम की शख़्सियत में भी अ़ज़्मत की शान पैदा न हो। लेकिन शख़्सियत की अ़ज़्मत के हुदूद[2] क्या हैं? यहीं आकर सबके क़दमों ने ठोकर खाई। वो इसकी ठीक-ठीक हद-बन्दी न कर सके, नतीजा ये निकला कि कभी शख़्सियत को ख़ुदा का अवतार बना दिया, कभी इब्नुल्लाह[3] समझ लिया, कभी शरीको-सहीम ठहरा दिया। और अगर ये नहीं किया तो कम अज़ कम उसकी ताज़ीम बन्दगी व नियाज़ की सी शान पैदा कर दी। यहूदियों ने अपने

1-महानता व उत्कृष्टता। 2-सीमाएं। 3-अल्लाह का बेटा।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		इब्तिदाई अ़हद की गुमराहियों के बाद कभी ऐसा नहीं किया कि पत्थर के बुत तराश कर उनकी पूजा की हो, लेकिन इस बात से वो भी न बच सके कि अपने नबियों की क़ब्रों पर हैकल की तामीर करके उन्हें इबादतगाहों की सी शान व तक़दीस[1] दे देते थे। गौतम बुद्ध की निस्बत मालूम है कि उसकी तालीम में अस्नाम परस्ती के लिए कोई जगह नहीं थी, उसकी आख़िरी वसिय्यत जो हम तक पहुँची है ये है "ऐसा न करना कि मेरी नाश की राख की पूजा शुरू कर दो, अगर तुमने ऐसा किया तो यक़ीन करो! निजात की राह तुमपर बंद हो जाएगी"(1)। लेकिन इस वसिय्यत पर जैसा कुछ अ़मल किया गया वो दुनिया के सामने है। न सिर्फ़ बुद्ध की ख़ाक और यादगारों पर माबद[2] तामीर किए गए, बल्कि मज़हब की इशाअ़त का ज़रिया ही ये समझा गया कि उसके मुजस्समों से ज़मीन का कोई गोशा ——————— (1) Early Buddhism।

1-पवित्रता, श्रद्धा। 2-पूजा स्थल।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		ख़ाली न रहे। ये वाक़िआ है कि दुनिया में किसी माबूद के भी इतने मुजस्समे नहीं बनाए गए जितने गौतम बुद्ध के बनाए गए हैं। इसी तरह हमें मालूम है कि मसीहियत की हक़ीक़ी तालीम सर-तासर तौहीद की तालीम थी, लेकिन अभी उसके ज़ुहूर पर पूरे सौ बरस भी नहीं गुज़रे थे कि उलूहियते मसीह का अक़ीदा नशो-नुमा पा चुका था। लेकिन क़ुरआन ने तौहीद फ़िस्-सिफ़ात का ऐसा कामिल नक़्शा खींच दिया है कि इस तरह की लग़्ज़िशों[1] के तमाम दरवाज़े बंद हो गए, उसने सिर्फ़ तौहीद ही पर ज़ोर नहीं दिया, बल्कि शिर्क की राहें भी बंद कर दीं और यही इस बाब में उसकी ख़ुसूसियत है। वो कहता है "हर तरह की इबादत और नियाज़ की मुस्तहिक़ सिर्फ़ ख़ुदा ही की ज़ात है। पस अगर तुम ने आबिदाना[2] इज्ज़ो-नियाज़ के साथ किसी दूसरी हस्ती के सामने सर झुकाया तो तौहीदे

1-भटकाव, हटना, हिलना। 2-उपासनात्मक।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		इलाही का एतिक़ाद बाक़ी न रहा" वो कहता है: "ये उसी की ज़ात है जो इन्सानों की पुकार सुनती और उनकी दुआएँ क़बूल करती है। पस अगर तुमने अपनी दुआओं और तलबगारियों में किसी दूसरी हस्ती को भी शरीक कर लिया तो गोया तुम ने उसे ख़ुदा की ख़ुदाई में शरीक कर लिया"। वो कहता है: दुआ, इस्तिआनत, रुकूअ, सुजूद, इज्ज़ो-नियाज़, एतिमाद व तवक्कुल और इस तरह के तमाम इबादत-गुज़ाराना और नियाज़मंदाना आमाल वो आमाल हैं जो ख़ुदा और उसके बन्दों का बाहमी रिश्ता क़ायम करते हैं। पस अगर इन आमाल में तुमने किसी दूसरी हस्ती को भी शरीक कर लिया तो ख़ुदा के रिश्तए मार्बूदियत[1] की यगानगी[2] बाक़ी न रही। इसी तरह अज़्मतों, किबरियाइयों, कार-साज़ियों और बेनियाज़ियों का जो एतिक़ाद तुम्हारे अन्दर ख़ुदा की हस्ती का तसव्वुर पैदा करता है, वो सिर्फ़ ख़ुदा ही के लिए मख़्सूस होना चाहिए।

1-उपासनात्मक सम्बन्ध। 2-एकात्मकता।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		अगर तुमने वैसा ही एतिक़ाद किसी दूसरी हस्ती के लिए भी पैदा कर लिया तो तुमने उसे ख़ुदा का निद्द यानी शरीक ठहरा लिया और तौहीद का एतिक़ाद दर्हम-बर्हम हो गया। यही वजह है कि सूर: फ़ातिहा में "إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ" की तल्क़ीन की गई। इसमें अव्वल तो इबादत के साथ इस्तिआनत का भी ज़िक्र किया गया, फिर दोनों जगह मफ़्ऊल को मुक़द्दम किया जो मुफ़ीदे हस्र है, यानी "सिर्फ़ तेरी ही इबादत करते हैं और सिर्फ़ तुझी से मदद तलब करते हैं"। इसके अलावा तमाम क़ुरआन में इस कसरत के साथ तौहीद फ़िस-सिफ़ात पर और रद्दे इश्राक[1] पर ज़ोर दिया गया है कि शायद ही कोई सूरत बल्कि कोई सफ़्हा इससे ख़ाली हो। सबसे ज़्यादा अहम मस्अला मक़ामे नुबुव्वत की हद-बन्दी का था, यानी मुअ़ल्लिम की शख़्सियत को उसकी अस्ली जगह में महदूद कर देना, ताकि

1-अनेकेश्वरवाद का निषेध।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		शख़्सियत परस्ती का हमेशा के लिए सद्दे-बाब[1] हो जाए। इस बारे में क़ुरआन ने जिस तरह साफ़ और क़तई लफ़्ज़ों में जा-बजा पैग़म्बरे इस्लाम की बशरियत[2] और बन्दगी पर ज़ोर दिया है, मोहताजे बयान नहीं। हम यहाँ सिर्फ़ एक बात की तरफ़ तवज्जोह दिलाएंगे। इस्लाम ने अपनी तालीम का बुनियादी कलिमा जो क़रार दिया है, वो सब को मालूम है : أَشْهَدُ أَنْ لَّا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ وَأَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ यानी "मैं इक़रार करता हूँ कि ख़ुदा के सिवा कोई माबूद नहीं और मैं इक़रार करता हूँ कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) ख़ुदा के बन्दे और उसके रसूल हैं"। इस इक़रार में जिस तरह ख़ुदा की तौहीद का एतिराफ़ किया गया है, ठीक इसी तरह पैग़म्बरे इस्लाम की बन्दगी और दर्जाए रिसालत का भी एतिराफ़ है। ग़ौर करना चाहिए कि ऐसा क्यों किया गया सिर्फ़ इसलिए कि पैग़म्बरे इस्लाम की

1-द्वार बंद होना, रोक लग जाना। 2-मानवीयता।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		बन्दगी और दर्जाए रिसालत का एतिक़ाद इस्लाम की अस्ल व असास बन जाए और इसका कोई मौक़ा ही बाक़ी न रहे कि अ़ब्दियत की जगह माबूदियत का और रिसालत की जगह अवतार का तख़ैयुल पैदा हो। ज़ाहिर है कि इससे ज़्यादा इस मामले का तहफ़्फ़ुज़[1] क्या किया जा सकता था? कोई शख़्स दायरए इस्लाम में दाख़िल ही नहीं हो सकता जब तक कि वो ख़ुदा की तौहीद की तरह पैग़म्बरे इस्लाम की बन्दगी का भी इक़रार न कर ले। यही वजह है कि हम देखते हैं पैग़म्बरे इस्लाम (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की वफ़ात के बाद मुसलमानों में बहुत से इख़्तिलाफ़ात पैदा हुए, लेकिन उनकी शख़्सियत के बारे में कभी कोई सवाल पैदा नहीं हुआ। अभी उनकी वफ़ात पर चन्द घंटे भी नहीं गुज़रे थे कि हज़रत अबूबक्र रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने बर-सरे मिंबर एलान कर दिया था : من كان يعبد محمداً فان محمداً قد مات

1-सुरक्षा, हिफ़ाज़त।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		ومن كان منكم يعبد الله فان الله حى لايموت - (بخارى) जो कोई तुम में मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की परस्तिश करता था, सो उसे मालूम होना चाहिए कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) ने वफ़ात[1] पाई और जो कोई तुम में से अल्लाह की परस्तिश करता था तो उसे मालूम होना चाहिए कि अल्लाह की ज़ात हमेशा ज़िन्दा है, उसके लिए मौत नहीं। (बुख़ारी) राबिअ़न, क़ुरआन से पहले उलूमो-फ़ुनून की तरह मज़हबी अ़क़ाइद में भी ख़ासो-आ़म का इम्तियाज़ मल्हूज़ रखा जाता था और ख़याल किया जाता था कि ख़ुदा का एक तसव्वुर तो हक़ीक़ी है और ख़्वास के लिए है, एक तसव्वुर मजाज़ी है और अ़वाम के लिए है। चुनांचे हिन्दुस्तान में ख़ुदा-शनासी के तीन दर्जे क़रार दिए गएः अ़वाम के लिए देवताओं की परस्तिश, ख़्वास के लिए बराहे-रास्त ख़ुदा की परस्तिश,

1-देहावसान, मृत्यु।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		अख़स्सुल-ख़्वास[1] के लिए वह-दतुल-वुजूद[2] का मुशाहदा। यही हाल फ़लासफ़-ए-यूनान का था। वो ख़याल करते थे कि एक ग़ैर मरई और ग़ैर मुजस्सम ख़ुदा का तसव्वुर सिर्फ़ अहले इल्मो-हिकमत ही कर सकते हैं। अ़वाम के लिए इसी में अम्न है कि देवताओं की परस्तारी में मशग़ूल रहें। लेकिन क़ुरआन ने हक़ीक़तो-मजाज़ या खासो-आ़म का कोई इम्तियाज़ बाक़ी न रखा। उसने सबको ख़ुदा परस्ती की एक ही राह दिखाई और सबके लिए सिफ़ाते इलाही का एक ही तसव्वुर पेश कर दिया। वो हुकमां व उरफ़ा[3] से लेकर जुह्हाल[4] व अ़वाम तक सबको हक़ीक़त का एक ही जल्वा दिखाता है और सब पर एतिक़ाद व ईमान का एक ही दरवाज़ा खोलता है। उसका तसव्वुर जिस तरह एक हकीम व आ़रिफ़ के लिए सरमायाए तफ़क्कुर है इसी तरह एक चरवाहे और दहक़ाँ के लिए सरमायाए तस्कीन।

1-अति विशिष्ट। 2-अद्वैतवाद। 3-ज्ञानी, जानकार। 4-अज्ञानी।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		ख़ामिसन, क़ुरआन ने तसव्वुरे इलाही की बुनियाद नौअ़े इन्सान के आ़लमगीर विज्दानी एहसास पर रखी है। ये नहीं किया है कि उसे नज़रो-फ़िक्र की काविशों का एक ऐसा मोअ़म्मा बना दिया हो जिसे किसी ख़ास गिरोह का ज़ेहन ही हल कर सके। इन्सान का आ़लमगीर विज्दानी एहसास क्या है? ये है कि काइनाते हस्ती ख़ुद बख़ुद पैदा नहीं हो गई, पैदा की गई है, और इसलिए ज़रूरी है कि एक साने हस्ती मौजूद हो। पस क़ुरआन भी इस बारे में जो कुछ बतलाता है, सिर्फ़ इतना ही है, वो न तौहीदी वुजूदी का ज़िक्र करता है न तौहीदे शुहूदी का। (1) वो सिर्फ़ एक ख़ालिक़े काइनात हस्ती का ज़िक्र करता ——— (1) तौहीदे वुजूदी से मक़्सूद 'वह्दतुल-वुजूद' का अक़ीदा है, यानी ख़ुदा की हस्ती के सिवा कोई हस्ती वुजूद नहीं रखती, वुजूद एक ही है, बाक़ी जो कुछ है तअ़य्युनात का फ़रेब[1] है : =

1-माया, दिखावा।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		है जो ख़ूबी व कमाल की तमाम सिफ़तों से मुत्तसिफ़ और नक़्सो-ज़वाल की तमाम बातों से मुनज़्ज़ा है और इससे ज़्यादा फ़िक्रे इन्सानी पर कोई बोझ नहीं डालता। सादिसन, जिस तरतीब के साथ सूर: फ़ातिहा में ये तीनों सिफ़तें बयान की गई हैं दरअसल फ़िक्रे इन्सानी की तलब व मअ़रिफ़त की क़ुदरती मन्ज़िलें हैं, ——————————— मगो केह कसरते अशिया नक़ीज़े वहदत हस्त तू दर हक़ीक़त अशिया नज़र फ़गन हम ओस्त तौहीदे शुहूदी है कि मौजूदाते ख़िल्क़त को बहैसियत मौजूदात तस्लीम करते हैं, लेकिन कहते हैं जब इन्हें वुजूदे इलाही की नुमूद में देखा जाता है तो इनकी हस्ती यक-क़लम नापैद हो जाती है। इसलिए नहीं कि वो ग़ैर मौजूद हैं, बल्कि इसलिए कि सूरज निकल आया और उसकी सुलताने तजल्ली में सितारे ना पैद हो गए : فلما استبان الصبح ادرج ضوؤه باسفاره اضواء نور الكواكب

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		और अगर ग़ौर किया जाए तो इसी तरतीब से पेश आती हैं। सबसे पहले रुबूबियत का ज़िक्र किया गया, क्योंकि काइनाते हस्ती में सबसे ज़्यादा ज़ाहिर नुमूद इसी सिफ़त की है और हर वुजूद को सबसे ज़्यादा इसी की एहतियाज है। रुबूबियत के बाद रहमत का ज़िक्र किया गया, क्योंकि इसकी हक़ीक़त बमुक़ाबले रुबूबियत के मुतालआ़ व तफ़क्कुर की मोहताज है और रुबूबियत के मुशाहदात से जब नज़र आगे बढ़ती है तब रहमत का जल्वा नमूदार होता है। रहमत के बाद अ़दालत की सिफ़त बयान की गई, क्योंकि ये इस सफ़र की आख़िरी मन्ज़िल है। रहमत के मुशाहदात से जब नज़र आगे बढ़ती है तो मालूम होता है कि यहाँ अ़दालत की भी नुमूद हर जगह मौजूद है और इसलिए मौजूद है कि रुबूबियत और रहमत का मुक़्तज़ा यही है।
67	391	'किंग फ़ोज़ी' फ़ारसी तलफ़्फ़ुज़ है, सहीह चीनी तलफ़्फ़ुज़ "कोंग फ़ो-तसी" है। ईरानियों ने इसे ज़्यादा सेहत के

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		साथ नक़ल किया, यानी सिर्फ़ इतनी तब्दीली की कि 'फ़ोतसी' को 'फ़ोज़ी' कर दिया। लेकिन यूरोप की ज़बानों ने इसे यक-क़लम मस्ख़ करके कन्फ्यूशियस (Confucius) बना दिया और इसकी आवाज़ असल आवाज़ से इस दर्जा मुख़्तलिफ़ हो गई कि एक चीनी सुनकर हैरान रह जाता है कि ये किस चीज़ का नाम है और किस मुल्क में बोली है
68	393	संस्कृत में "शमन" ज़ाहिद और तारि-कुद्दुनिया को कहते हैं। बौद्ध मज़हब के तारिकुद्दुनिया भुकषो इस लक़ब से पुकारे जाते थे। रफ़्ता-रफ़्ता तमाम पैरवाने बोद्ध को 'शमनी' कहने लगे। इसी शमनी को अ़रबों ने 'समनी' बना लिया और वस्ते एशिया के बाशिन्दों ने 'शामानी' चुनांचे ज़करिया राज़ी, अल-बैरूनी और इब्ने नदीम वग़ैरहुम ने बौद्ध मज़हब का ज़िक्र समनिया ही के नाम से किया है। अल-बैरूनी बौद्ध मज़हब की आ़लमगीर इशाअ़त की तारीख़ की भी ख़बर रखता था।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		चुनांचे किताबुल हिन्द की पहली फ़स्ल में इस तरफ़ इशारात किए हैं। चंगेज़ ख़ाँ की निस्बत ये तसरीह मिलतीं है कि वो शामानी मज़हब का पैरौ था, यानी बौद्ध मज़हब का। चूंकि शामानी और बौद्ध मज़हब का तरदुफ़ वाज़ेह नहीं हुआ था इसलिए 19वीं सदी के बाज़ यूरोपीय मोअर्रिख़ों[1] को तरह-तरह की ग़लत फ़हमियाँ हुईं और वो इसका सहीह मफ़्हूम मुतअ़ैयन न कर सके। ये ग़लत फ़हमी यूरोप के आ़म अहले क़लम में आज भी मौजूद है। शिमाली सायबेरया और चीनी तुरकिस्तान के हम साया इलाक़ों के तूरानी क़बाइल अपने मज़हबी पेशवाओं को (जो तिब्बत के लामाओं की तरह मुल्की पेशवाई भी रखते हैं) ''शामान'' कहते हैं। सोवियत रूस की हुकूमत आज-कल उनकी तालीमो-तरबियत का सरो-सामान कर रही है। ये लोग भी बिला-शुब्हा बौद्ध मज़हब के पैरौ हैं, लेकिन उनका बौद्ध मज़हब मंगोलियों के मुहर्रफ़ मज़हब की

1-इतिहासकारों।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		की भी एक मस्ख़ शुदा सूरत है, इसलिए असलियत की बहुत कम झलक बाक़ी रह गई और इसी लिए उनकी मज़हबी असलियत के बारे में आज-कल के मुसन्निफ़ हैरानी ज़ाहिर कर रहे हैं। अंग्रेज़ी में इन्हीं तूरानी क़बाइल के मज़हब की निस्बत शैमिनिज़्म (Shamanism) की तरकीब राइज हो गई है और जादूगरी के आमालो-असरात को (Shamanic) और (Shamanistic) वग़ैरा से ताबीर करने लगे हैं। ये 'शैमन' भी वही 'शामानी' और 'शमनी' ही की एक मुहर्रफ़ सूरत है। चूंकि इन क़बाइल में जादूगरी का एतिक़ाद आम है और वो अपने शमानों से बीमारियों में जादू के टूटके कराते हैं इसलिए जादूगरी ये लफ़्ज़ मुसतामल हो गया है।
69	395	ऋग्वेद-हिस्सा सोम, स०: 909
70	,, ,,	रब्बुल-अरबाबी तसव्वुर से मक़सूद तसव्वुर की वो नौइयत है जब ख़याल किया जाता है कि बहुत से ख़ुदाओं में

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		एक ख़ुदा सबसे बड़ा है और छोटे ख़ुदाओं में एक ख़ुदा सबसे बड़ा है और छोटे ख़ुदाओं को उसके मातहत रहना पड़ता है, जैसा कि यूनानियों और रूमियों का अक़ीदा मुशतरी की निस्बत था।
71	395	ऋग्वेद और उप निषद के मतालिब के लिए हमने हस्बेज़ैल मसादिर से मदद ली है : Max-Muller : दी वैदिक हेम्ज़ The Vedic Hymns. Bloomfield: दी रिलीजन ऑफ़ दी वेद The Religion of the Ved. Kaegi: दी रिगवैड The Rig Ved. Ghate: लेक्चरज़ ऑन दी ऋग्वेद Lectures on the Rigved. Deussen : दी फ़लॉसफ़ी ऑफ दी उप निषदा The ilosophy of the Upnishads. Hume: दी थरटीन प्रिन्सिपल उप निषद The Thirteen Principal Upnishads.
72	396	हमारे सूफ़ियाए किराम ने इसी सूरते हाल को यूँ ताबीर किया है कि "अहदियत" ने मर्तबए "वाहिदियत" की तजल्ली में नुज़ूल किया। 'अहदियत'

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		यानी यगाना हो, 'वाहिदियत' यानी अव्वल होना। यगाना हस्ती को हम अव्वल नहीं कह सकते, क्योंकि अव्वल जभी होगा जब दूसरा, तीसरा और चौथा भी हो, और यगानगी बहत के मर्तबे में दूसरे और तीसरे की गुंजाइश ही नहीं। लेकिन जब 'अहदियत' ने 'वाहिदियत' के मर्तबे में नुज़ूल किया तो अब "हुवल अव्वल" का मर्तबा ज़ुहूर में आ गया। और जब अव्वल हुआ तो दूसरे, तीसरे और चौथे के तअ़ैयुनात भी ज़ुहूर में आने लगे। وما اصح قول الشاعر العارف. दरियाए कुहन चूँ बर ज़नद मौजए तू मौजश ख़्वानन्द व फ़िल हक़ीक़त दरियास्त
73	398	प्रोफ़ेसर एस राधा कृष्णणः इन्डियन फ़लासफ़ी (Indian Philosophy) जिल्द अव्वल, स०: 144-तबा सानी।
74	,, ,,	अगर उप निषद की इशाराती लचक के दूसरे सरीह शवाहिद मौजूद न होते तो इस तरह की तसरीहात बआसानी मजाज़ात पर महमूल की जा सकती थीं, चुनांचे दारा शिकोह ने इन्हें इस्तिआ़रात ही पर महमूल किया है।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		ये बात पेशे नज़र रखनी चाहिए कि उप निषद एक सौ साठ हैं और मुख़्तलिफ़ अ़हदों में मुरत्तब हुए हैं। हर उप निषद अपने अ़हद के तदरीजी तसव्वुरात व मबाहिस के असरात पेश करता है और यहाँ जो कुछ लिखा गया है वो उन नजाइज पर मब्नी है जो मजमूई हैसियत से निकाले गए हैं।
75	400	वैदांत परिजात सौरभ, जिल्द सोम, सफ़्हा : 25 इसका अंग्रेज़ी तर्जुमा मुतरजिमा डा० रोमा बोस, Dr. Roma Bose. रॉयल एशयाटिक सोसाइटी बंगाल ने शाय किया।
76	402	अल-बैरूनी ने किताबुल हिन्द में बाज़ संस्कृत किताबों से बुतों के बनाने के अहकामो-क़वायद नक़्ल किए हैं। उसके बाद लिखता है : "وكان الغرض فی حكاية هذا الهذيان ان تعرف الصورة من صنمها اذا شوهد ـ وليتحقق ما قلنا من ان هذه الاصنام منصوبة للعوام الذين سفت مراتبهم وقصرت معارفهم۔ فما عمل صنم قط باسم من علا

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		المادة فضلا عن اله تعالى۔ وليعرف كيف يعبد السفل بالتمويهات. ولذلك قيل فى كتاب "گيتا" ان كثيرا من الناس يتقربون فى مباغيهم الى بغيرى ويتوسنون بالصدقات والتسبيح والصلاة نسواى فاقويهم عيها واو فقهم لها واو صهم الى ارادتهم لاستغنائى عنهم" (93-94) आज-कल के तमाम हिन्दू अहले नज़र जो हिन्दू अक़ाइद व तसव्वुरात की फ़लसफ़ियाना ताबीर करना चाहते हैं उमूमन यही तौजीह पेश करते हैं जो अल-बैरूनी ने पेश की थी। अबुल फ़ज़्ल और दारा शिकोह ने भी यही ख़याल ज़ाहिर किया है।
77	404	प्रोफ़ेसर एस राधा कृष्णण: इन्डियन फ़लासफ़ी, जिल्द: अव्वल, सफ़्हा: 453, तबा सानी।
78	405	ये क़दीम किताब जिसका सिर्फ़ तिब्बती नुस्ख़ा दुनिया के इल्म में आया था, अब अस्ल संस्कृत में निकल आई है और गयकवाड़ ओरेन्टियल सीरीज़ के इदारे ने हाल में शाय कर दी है। मैसूर का मशरिक़ी कुतुब ख़ाना भी उसका एक =

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= दूसरा नुस्ख़ा इशाअत के लिए मुरत्तब कर रहा है।
79	405	'न्याय' यानी मन्तिक़। 'विशेसयक' तरीक़े नज़र से मक़सूद मन्तिक़ी नक़दो-तहलील का एक ख़ास मसलक है।
80	,, ,,	गौतम बुद्ध की तालीम में 'अष्टांग मार्ग' यानी आठ बातों का तरीक़ा एक बुनियादी अस्ल है। आठ बातों से मक़सूद इल्म और अ़मल का तज़्किया व तहारत है: इल्मे हक़, रहमो-शफ़क़त, क़ुर्बानी, हवा-ओ-हविस से आज़ादी, ख़ुदी को मिटाना वग़ैरा।
81	406	मैं तस्लीम करता हूँ कि ये मेरा ज़ाती इस्तिंबात है और मुझे हक़ नहीं कि अपनी राय को वुसूक़ के साथ उन मुहक़्क़िक़ों के मुक़ाबले में पेश करूँ जिन्हों ने इस मौज़ू के मुतालअ़े में ज़िन्दगियाँ बसर कर दीं हैं। ताहम मैं मजबूर हूँ कि अपनी महदूद मालूमात की रौशनी में जिन नताइज तक पहुँचा हूँ उनसे दस्तबरदार न हूँ। यूरोप के मुहक़्क़िक़ों ने बौद्ध मज़हब के मसादिर की जुस्तुजू व फ़राहमी में बड़ी कद्दो-काविश की है =

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		= और पाली ज़बान के तमाम अहम मसादिर फ़्रैंच या अंग्रेज़ी में मुन्तक़िल कर लिए हैं। मैंने हत्तलइम्कान[1] इस तमाम मवाद के मुतालअ़े की कोशिश की और बिलआख़िर इसी नतीजे तक पहुँचा।
82	408	'ईरानियान' वही लफ़्ज़ है जो हिन्दुस्तान में 'आर्या' हो गया। ओस्ता में चौबीस मुल्कों की पैदाइश का ज़िक्र किया गया है जिस में सबसे पहला और सबसे बेहतर ''एर्याना वैज'' (Airyana Vej) है और ग़ालिबन इससे शिमाली ईरान मक़सूद है। (वनदीदाद, फ़रगिरा अव्वल, फ़िक़रा-2) हुरमुज़देश्त के फ़िक़रा-21 में भी एर्याना वैज का ज़िक्र किया है और उसपर दुरूद भेजा है। 'वैज' जर्मन मुश्तशरिक़ स्पेगल (Spiegel) की क़िराअ़त है, आंक तील (Anquetil) ने इसे वेगो पढ़ा था। 'वैज' या 'वैगो' के मअ़ना पहलवी में मुबारक के हैं, यानी मुबारक एर्याना की सर-ज़मीन।

1-यथा संभव।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
83	412	अ़हदे अ़तीक़ में यशइया नबी की तरफ़ जो किताब मंसूब है उसकी ज़बान और मतालिब का आयत 51 तक एक ख़ास अन्दाज़ है और फिर उसके बाद बिल्कुल दूसरा हो जाता है। इब्तिदाई हिस्सा एक ऐसे शख़्स का कलाम मालूम होता है जो क़ैदे बाबुल से पहले था, लेकिन बाद के हिस्से में क़ैदे बाबुल के ज़माने के असरात साफ़-साफ़ नुमायाँ हैं। इसलिए 19वीं सदी के नक़्क़ादों ने इसे दो शख़्सों के कलाम में तक़्सीम कर दिया। एक को यशइया अव्वल और दूसरे को दोम से ताबीर करते हैं।
84	414	इसी लिए हिन्दू तसव्वुर ने माँ की तशबीह से काम लिया, क्योंकि माँ तशबीह में अगर्चे इन्सानियत आ जाती है, लेकिन तशबीह बाप से भी ज़्यादा पुरअसर हो जाती है। बाप की शफ़क़त कभी-कभी जवाब दे देगी लेकिन माँ की मुहब्बत की गहराइयों के लिए कोई थाह नहीं।
85	419	'नाऊस' जिसका तलफ़्फ़ुज़ 'नाऊज़' किया जाता है अ़रबी के ''नफ़्स'' से इस

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		दर्जा सौती मुशाबहत रखता है कि मालूम होता है 'नॉज़' तारीब का जामह पहन कर 'नफ़्स' हो गया। इसी तरह नोइटिक Noetic और 'नातिक़' इस दर्जे क़रीब हैं कि दूसरे को पहले की तारीब समझा जा सकता है। चुनांचे रीनान और डोज़ी ने नफ़्से नातिक़ा को 'नोइटिक नॉज़' का मुअर्रब क़रार दिया है। वो कहते हैं: ये 'नातिक़' नुत्क़ से नहीं है बल्कि 'नोइटिक' की तारीब है जिसके मअ़ना इदारक हैं। बाज़ अ़रबी मसादिर से भी इसकी तसदीक़ होती है कि अस्ल यूनानी अल्फ़ाज़ पेशे नज़र रखे गए थे। 'नफ़्स' अ़रबी लुग़त में ज़ात और ख़ुद के मअ़ना में बोला जाता था और अरस्तू ने आक़िलाना नुत्क़ को इन्सान की फ़स्ल क़रार दिया था। इसलिए ऐसा मालूम होता है कि अ़रब मुतरज्जिमों ने यूनानी ताबीर सामने रख कर नफ़्से नातिक़ा की तरकीब इख़्तियार करे और ये तारीब ख़ुद अ़रबी अल्फ़ाज़ के मदलूलों से भी मिलती-जुलती हुई बन गई।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
86	420	जुमहूरियत के अश्ख़ास मुकालमे में एड्मिंटस (Adeimantus) और गलोकन (Glaucon) अफ़लातून के भाई हैं। चुनांचे अफ़लातून ने ख़ुद एक जगह इस की तसरीह की है। अफलातून की दूसरी मुसन्निफ़ात के साथ जुमहूरियत का तर्जुमा भी अ़रबी में हो गया था। चुनांचे छठी सदी हिज्री में इब्ने रुशद ने इसकी शर्ह लिखी। शर्ह के दीबाचे में लिखता है कि मैंने अरस्तू की "किताबुस सियासत" की शर्ह लिखनी चाही थी मगर उन्दुलस में उसका कोई नुस्ख़ा नहीं मिला, मजबूरन अफ़लातून की किताब इख़्तियार करनी पड़ी। इब्ने रुशद की शर्ह के इबरानी और लातीनी तराजिम यूरोप में मौजूद हैं मगर अस्ल अ़रबी नापैद है। यूरोप के मौजूदा तराजिम बराहेरास्त यूनानी से हुए हैं हमारे पेशे नज़र ए० ई० टेलर (Taylor) और बी० जोवेट (Jowett) के अग्रेज़ी तराजिम है।
87	422	मुशतरी यानी ज़्यूस (Zeus) यूनान के अस्नामी अ़क़ाइद में रब्बुल अरबाब=

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		यादी देवताओं में सबसे बड़ा और हुक्मराँ देवता था। होमर (Homer) ने इलेड (Iliad) में देवताओं की मज्लिस आरास्ता की है उसमें तख़्त नशीन हस्ती मुशतरी ही की है।
88	422	ये अशआ़र एलेड के हैं। सुलैमान बुस्तानी ने अपने बेनज़ीर तर्जुमए अ़रबी में इनका तर्जुमा हस्बेज़ैल अ़रबी शे'रों में किया है : ذی لخیر وذی لشر الھوان فیھما کل قسمة الانسان فالذی منھما مزیحا انالا زفس یلقی خیرا ویلقی وبالا والذی لاینال الا من الشر فتنتابه الخطوب انتیابا بطواہ یطوی البلاد کلیلا تائھا فی عرض الفلاة ذلیلا من بنی الخلد والوری مخذولا अल्यादतु नशीद 24 स०: 1131 मत्बूआ़ अल-हिलाल, मिस्र 1904 ई० इन अश्आ़र में 'ज़फ़स' यूनानी 'ज़्यूस' की तारीब है।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
89	422	दी रिपब्लिक, तर्जुमा टेलर, बाब, 2
90	423	Stephen Mackenna जिल्दः 2, स०: 134
91	,, ,,	ऐज़न
92	424	ऐज़न
93	,, ,,	ऐज़न जिल्द अव्वल सफ़्हाः 118, मज़हबे अफ़लातून जदीद अफ़लातून की तरफ़ इसलिए मंसूब हुआ कि उसकी बुनियाद बाज़ अफ़लातूनी मबादियात पर रखी गई थी, मगर फिर अपनी बहसो-नज़र में उसने जो राह इख़्तियार की और जिन नताइज तक पहुँचा उन्हें अफ़लातून से कोई तअ़ल्लुक़ नहीं। लेकिन अ़रब फ़लासफ़ा का एक बड़ा तबक़ा इस ग़लत फ़हमी में पड़ गया कि फ़िल-हक़ीक़त ये अफ़लातून ही का मज़हब है, इस मज़हब के बाज़ फ़लसफ़ियों मसलन फ़ॉरफ़ूरियूस ने अरस्तू की शर्ह करते हुए उसके मज़हब में जो इज़ाफ़े किए थे, उसे भी अ़रब हुकमा अस्ल से मुम्मताज़ न कर सके। चुनांचे अबू नसर फ़ाराबी ने "अल-जमउ बैनर्रायैन" में अरस्तू का जो मज़हब ज़ाहिर किया है उससे ये हक़ीक़त वाज़ेह हो जाती है। इब्ने रुशद

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		पहला अ़रब फ़लसफ़ी है जिसने ये ग़लत फ़हमी महसूस की और अरस्तू के मज़हब को शारिहों के इज़ाफ़े से ख़ालिस करके देखना चाहा। सन् 529 ई० में जब शहनशाहे जस्टेनियन के हुक्म से अस्कंदरिया के फ़लासफ़ा जिला वतन किए गए तो उनमें से बाज़ ने ईरान में पनाह ली। चुनांचे सिमपलेसेस (Simplicius) और डीमासेस (Damasess) खुसरो के दरबार में मुअ़ज़्ज़ज़ जगह रखते थे। इन फ़लासफ़ा की वजह से पहलवी ज़बान भी मज़हबे अफ़लातूने जदीद से आश्ना हो गई और ईरानी हुकमा ने इसे क़ौमी रंग देने के लिए ज़र्दुशत और जामास्प की तरफ़ मंसूब कर दिया। अ़रबी में जब पहलवी अदबियात मुंतक़िल हुईं तो ये फ़लसफ़ियाना मक़ालात भी तर्जुमा हुए और आ़मतौर पर ये ख़याल पैदा हो गया कि ये ज़रदुश्त और जामास्प का एक पुर-अस्रार फ़लसफ़ा है। चुनांचे शैख़ शहाबुद्दीन ने "हिक्मतुल अशराक़" में और शीराज़ी ने इसकी शर्ह में दोनों

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		ग़लतियाँ जमा कर दी हैं। वो मज़हबे अफ़लातूने जदीद को अफ़लातून का मज़हब समझते हैं और ज़रदुश्त और जामास्प का भी हवाला देते हैं।
94	428	"وَهُوَ اللَّطِيفُ الْخَبِيرُ" का तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। म
95	430	'नेति' यानी कलिमए नफ़ी। वो ऐसा भी नहीं है, ऐसा भी नहीं है। बर्हद्र-न्यक उप निषद में ये नफ़ी दूर तक चली गई है। वो कसीफ़ है? नहीं। वो लतीफ़ है? नहीं। वो कोताह है? नहीं। वो दराज़ है? नहीं। ग़रज़ेकि हर मुशंबहत के जवाब मे "नहीं" दोहराया जाता है। ना वो ऐसा है ना वैसा है, ना ये है ना वो है: ऐ बरूँ अज़ वहम व क़ाल व क़ीले मन ख़ाक बर फ़र्क़ मन व तम्सीले मन
96	432	यक़ीनन तुम्हारा परवरदिगार तुम्हें घात लगाए ताक रहा है।
97	,, ,,	और जब मेरा बन्दा तुझसे मेरी निस्बत सवाल करता है तो उससे कह दे कि मैं

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		उससे दूर कब हूँ? मैं तो बिल्कुल उसके पास हूँ [और जब पुकारने वाला मुझे पुकारता है तो मैं उसकी पुकार सुनता हूँ। (1)]
98	436	तफ़्वीज़ के मस्लक से मक़सूद ये है कि जो हक़ाइक़ हमारे दाइरए इल्मो-इदराक से बाहर हैं उनमें रद्दो-कद और बारीक बीनी करना और अपने इज्ज़ो-नारसाई का एतिराफ़ कर लेना।
99	441	शंकर भाष्य 1:2 और चंधोज्ञ उप निषद क़िस्म: 8
100	444	इस आयत में "इल्हाद फ़िल-अस्मा" से मक़सूद क्या है? "इल्हाद" लहद से है, "लहद" के मअ्ना "ميلان عن الوسط" के हैं यानी दरमियान से किसी एक तरफ़ को हटा हुआ होना। इसी लिए ऐसी क़ब्र को जिस में नाश की जगह एक तरफ़ को हटी हुई होती है, 'लहद' कहते हैं। जब ये लफ़्ज़ इंसानी अफ़्आल के लिए बोला जाता है तो इसके मअ्ना राहे हक़ से हट जाने के होते हैं। ——— (1) तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। म

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		क्योंकि वस्त हक़ है और जो इससे मुन्हरिफ़ हो बातिल है। الحد فلان ای مال عن الحق पस यहाँ इल्हाद फ़िल-अस्मा का मतलब ये हुआ कि ख़ुदा की सिफ़ात के बारे में जो राहे हक़ है उस से मुन्हरिफ़ हो जाना। इमाम राग़िब अस्फ़हानी ने इसकी तशरीह हस्बेज़ैल लफ़्ज़ों में की है : ان یوصف بمالایصح وصفه به او ان یتأول اوصافه علی مالا یلیق به۔ (मुफ़रदातः 467) यानी ख़ुदा के लिए कोई ऐसा वस्फ़ क़रार देना जो उसका वस्फ़ नहीं होना चाहिए या उसकी सिफ़तों का ऐसा मतलब ठहराना जो उकसी शान के लायक़ नहीं।
101	446	अरली बुद्धिज़्म (Early Buddhism)
102	450	बाबु मरज़िन्नबियि व वफ़ातहू। म
103	456	गिरेशम के क़ानून से मक़सूद इक़्तिसा-दियात की ये अस्ल है कि अगर खरे सिक्कों के साथ खोटे सिक्के मिला दिए जाएँगे तो खरे सिक्कों की क़ीमत बाक़ी नहीं रहेगी।

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
104	457	प्रोफ़ेसर एस राधा कृष्णण: इन्डियन फ़लासफ़ी, जिल्द अव्वल, सफ़्हा: 119, तबा सानी।
105	472	पहले एडीशन सफ़्हा: 126 में ये इबारत 'अगर उसने ……….. और फ़ैसला-कुन होता' मौजूद नहीं है।
106	474	याद रहे कि अ़रबी में क़ल्ब और फ़ुआद के मअ़ना महज़ उसे अ़ज़्व ही के नहीं हैं जिसे उर्दू में दिल कहते हैं, बल्कि इसका इत्लाक़ अ़क़्लो-फ़िक्र पर भी होता है। क़ुरआन में जहाँ कहीं सम्ओ-बसर वग़ैरा के साथ क़ल्ब और फ़ुआद कहा गया है उससे मक़सूद जौहरे अ़क़्ल है।
107	,, ,,	पहले एडीशन में क़ौसैन में ये जुम्ले ज़्यादा हैं (पस जो कोई सीधी राह चलेगा उसके लिए दोनों जगह कामयाबी है और जो मुन्हरिफ़ होगा उसके लिए दोनों जगह नामुरादी)।
108	476	पहले एडीशन में स०: 127 पर क़ौसैन में ये इबारत ज़्यादा है (पस तुम्हारी मज़हबी गिरोह बन्दियों की मिल्लतों की मैं क्यों कर पैरवी कर सकता हूँ! मेरी राह तुम्हारी ख़ुद-साख़्ता मिल्लतों की=

हाशिया न०	सफ़्हा न०	इबारत हाशिया
		राह नहीं है, अल्लाह की आलमगीर हिदायत की राह है) (म)
109	483	पहले एडीशन में सफ़्हा: 130 पर क़ौसैन में ये इबारत ज़्यादा है (यानी हमारे क़वानीन की रू-से सिर्फ़ वही आबादी हलाक होती है जो ज़ुल्मो-फ़साद में ग़र्क़ हो जाती है और हिदायते इलाही से इंकार करती है) (म)
110	539	पहले एडीशन में 'قُلْ क़ुल' तर्जुमा छूट गया था जो क़ौसैन में लिख दिया गया है। (म)
111	566	साबिक़ा दोनों एडीशनों में ये लफ़्ज़ छूट गया था, हदीस इब्ने मसऊद जो इसी सफ़्हे में दर्ज है, इससे इज़ाफ़ा किया गया है। (म)
112	569	पहले एडीशन में ये अल्फ़ाज़ ज़ाइद हैं: यानी ख़ुदा परस्ती और नेक अमली। (म)
113	571	पहले एडीशन में सफ़्हा: 169 में ये फ़िक़रा नहीं है।

مُلحقات

मुल्हिक़ात

इस्तदराक[1] बर तर्जुमानुल-क़ुरआन

जिल्द अव्वल

अज़ मौलवी अजमल ख़ाँ साहब

मरहूम व मग़फ़ूर मौलाना अबुल कलाम अज़ाद रहमतुल्लाह अ़लैह की इल्मी व अदबी ख़िदमात में "तर्जुमानुल-क़ुरआन" का दर्जा सबसे ऊँचा है, इसी लिए सबसे पहले इसी को शाय किया जाता है। अफ़सोस है कि मौलाना को वक़्त न मिल सका कि वो बक़िया बारह पारों की तफ़्सीर व तर्जुमे को मुकम्मल कर सकते। उन्होंने फ़रवरी सन् 1945 ई० में अहमद नगर फ़ोर्ट जेल में जिल्द अव्वल पर नज़रे सानी की और बहुत से मज़ामीन के बढ़ाने के बाद उसे छपने के लिए दे दिया। (देखिए दीबाचा तब्अ़ सानी)

तर्जुमानुल-क़ुरआन जिल्द दोम पर भी उसी ज़माने में नज़रे सानी की और इसमें भी जा-बजा तरमीमें और इज़ाफ़े किए। वफ़ात के ज़माने तक इस जिल्द में कमी-बेशी करते रहे हत्ताकि इसमें से "कोरश कबीर" का मुफ़स्सल ज़िक्र अ़रबी रिसाला सक़ाफ़तुल हिन्द में "ज़ुल-क़रनैन" के उन्वान[2] से छपा। इस जिल्द में निहायत अहम तरमीमें हैं बाज़ का तअ़ल्लुक़ जिल्द अव्वल से भी है। इसलिए उनमें से चार को यहाँ दर्ज कर दिया जाता है :

(1) क़ुरआन की तफ़्सीर क़ुरआन ही से

"معنی تفصیل و مفصل مستعملہ قرآن را از خود قرآن باید فہمید۔

1-संशोधन, काट-छाँट। 2-शीर्षक, सुर्ख़ी।

مثلا در اعراف است: فَأَرْسَلْنَا عَلَيْهِمُ الطُّوفَانَ وَالْجَرَادَ وَالْقُمَّلَ وَالضَّفَادِعَ وَالدَّمَ آيَاتٍ مُّفَصَّلَاتٍ (132) ''یعنی این همه آیات به یک دفعه ظهور نه کردند بلکه علی حده تارة بعد تارة "

(2) हक़ीक़ते हम्द

حمد فی الحقیقت تاثر ماحول فطرت است، مثلا طیور و حیوانات۔

''क़ुरआन का जमाले फ़ित्रत पर इस दर्जा ज़ोर देना और उसे बिनाए इस्तेदलाल ठहराना फ़िल-हक़ीक़त एक हैरत अंगेज़ सूरतेहाल है। अरब की महरगाई और शहरी ज़िन्दगी फ़ित्रत की आसाइशों और आराइशों से यक-क़लम ख़ाली थी। मोतदिल और ज़रख़ेज़ ख़ित्तों का माहौल वहाँ मुयस्सर नहीं आ सकता। ज़िन्दगी सर-तासर कशाकश और सख़्तियों की आज़माइश है। एक ऐसे माहौल में क़ुरआन का जमाले फ़ित्रत और इफ़ाद-ए-फ़ैज़ाने फ़ित्रत पर ज़ोर देना और एक रहीमो-रहमान ख़ुदा का तसव्वुर पैदा करना यक़ीनन अ़रब के माद्दी माहौल का परतौ नहीं हो सकता।''

(3) अल-आ़लमीन

اطلاق "عالم" براقطاع وامم در کلام جاهلیه، پس مقصود از عالمین تمام اقطاع وامم باشد "يَا بَنِي إِسْرَائِيلَ اذْكُرُوا نِعْمَتِيَ الَّتِي أَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَأَنِّي فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعَالَمِينَ" ای علی الامم والجماعات۔

(4) अर्रहमान

जिल्द दोम स०: **374** पर जो नोट है उसका मफ़्हूम ये है कि ''अर्रहमान'' अ़लम है और अल्लाह के लिए बोला जाता था, फ़रमाते

हैं "यमन से जो आसार निकले हैं उनसे मालूम होता है कि ख़ुदा के लिए अर्रहमान का नाम वहाँ बोला जाता था" अलख़।

अगर्चे ख़ुद मौलाना ने मुख़्तलिफ़ मक़ामात पर उन तर्जुमों की इस्लाह नहीं की (और हमने भी उन्हें उसी हाल पर छोड़ दिया है) लेकिन इस नई मालूमात की रौशनी में जो साहिब चाहें "अल-आलमीन" का तर्जुमा "जमाअ़तों और क़ौमों" से कर सकते हैं और "अर्रहमान" का तर्जुमा सिर्फ़ लफ़्ज़ "ख़ुदा" या "अल्लाह" से हो सकता है, अगर्चे बेहतर यही है कि "अर्रहमान" का तर्जुमा भी "अर्रहमान" लिखा जाए और क़ौसैन में (अल्लाह) बढ़ा दिया जाए, जैसा कि अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है "ادعوا الله او ادعوا الرحمن"

इसके अ़लावा तर्जुमानुल क़ुरआन जिल्द दोम के तर्जुमों में जो इस्लाहें मौलाना ने की हैं वो सब नये एडीशन में बना दी गई हैं। और एक ख़ुशी की बात ये है कि जिल्द दोम के बाद मौलाना ने सूरः नूर का मुकम्मल तर्जुमा और तफ़्सीर कर दी थी। अ़ब्दुल क़ैयूम अल-ख़त्तात ने उसे तबाअ़त के लिए ख़ुशख़त लिख भी दिया था। वो मुकम्मल तर्जुमा मिल गया है। उसका हमने फ़ोटो भी हासिल कर लिया है और जिल्द दोम के साथ वो भी छापा जा रहा है।

فالحمد لله على ذلك

मुहम्मद अजमल ख़ाँ

सितम्बर सन् 1959 ई०

मुक़द्दमा अल-बयान के बारहवें बाब का एक हिस्सा

(मुतअ़ल्लिक़ तफ़्सीर सूर: फ़ातिहा)

अल-हिलाल का पहला परचा 13 जुलाई सन् 1912 ई० को निकला। उसका मक़सद ही ये था कि क़ुरआन को असास बना कर हुर्रियत की तालीम को जिन्दा किया जाए। इसलिए ज़रूरत था कि क़ुरआन की तालीम को आ़म्मतुन-नास तक पहुँचाया जाए। जिल्द दोम नम्बर 19 से "مَنْ أَنصَارِي إِلَى اللَّهِ" का शजरा 14 मई 1913 ई० से शुरू हुआ और जमाअ़त "हिज़्बुल्लाह" का तसव्वुर नम्बर 20 और 22 में भी नुमायाँ किया गया। फिर जिल्द सोम में "यौमुल हज और हिज़्बुल्लाह" के उन्वान से यही ख़याल ज़ाहिर किया गया। आख़िरकार 29 जुलाई 1914 ई० (जिल्द न० 5) में ये ख़ुशख़बरी शाय हुई कि हिज़्बुल्लाह के मरकज़ी दारुल जमाअ़त का संगे बुन्याद गुज़श्ता इतवार (यकम रमज़ान 1332 ई०) को नसब कर दिया गया और मौलाना के वालिद के एक मुख़्लिस क़दीम ने शहर कलकत्ता के क़रीब एक क़िता ज़मीन वक़्फ़ कर दिया और "दारुल इरशाद" यानी लेक्चर रूम या ईवाने दर्स की तामीर के मसारिफ़ भी उन्होंने अपने ज़िम्मे ले लिए। उस जगह एक मस्जिद तैयार है और हज़ार रुपये में बोर्डिंग का एक कमरा बनेगा। उम्मीद की गई कि अल्लाह ऐसे लोगों को भेज देगा जो बोर्डिंग बनवा देंगे। जो बाज़ कागज़ात बतौर आसारे असास एक बोतल में बन्द करके बुनियाद में रखे गए, उनमें सूर: अल-हज की पाँच आयतें "وَجَاهِدُوا فِي اللَّهِ" الخ और सूर:

यूनुस की "رَبَّنَا لَا تَجْعَلْنَا فِتْنَةً ...... الخ" भी रखी गई।

नवम्बर 1914 ई० में अल-हिलाल से ज़मानत तलब हुई और बन्द हो गया, एक साल के बाद 12 नवम्बर 1915 ई० से मार्च 1916 ई० तक अल-बलाग़ के नाम से अल-हिलाल निकला। इसमें पहले ही नम्बर में तहरीर है कि गुज़शता साल रमज़ान में "दारुल इरशाद" की बुनियाद रखी गई थी ...... इरादा था कि इसी साल से तालीमो-इरशाद का सिलसिला भी शुरू कर दिया जाए, लेकिन मशिय्यते इलाही मुसाइद न हुई।

(2) मौजूदा हालत ये है कि मदरसे का हाल तैयार हो चुका है ...... लेकिन जब तक तलबा के क़ियाम के लिए एक दूसरी इमारत तैयार न हो जाए, वहाँ काम शुरू नहीं हो सकता। इसके लिए अक़ल्लन दस, पन्दरह हज़ार रुपये और होना चाहिए।

(3) कमरों की तैयारी का इन्तिज़ार मैं कर सकता हूँ लेकिन न तो मेरी ज़िन्दगी कर सकती है (जिसका क़ियाम ना मालूम है) और न ज़माना कर सकता है (जिसकी रफ़्तार हमारे इरादों और उम्मीदों की पाबन्द नहीं) पस मुतवक्किलन अलल्लाह इस आजिज़ ने पिछले दिनों फ़ैसला कर लिया कि सरेदस्त एक किराए के मकान में सिलसिलए तदरीसो-इरशाद शुरू कर दिया जाए :

ब-ई केह क़ाबा नुमायाँ शवद ज़-पा मनशीं

केह नीम-गाम जुदाई हज़ार फ़रसंग अस्त

(4) ज़्यादातर ये अम्र भी इसका बाइस हुआ कि अपनी हालत देखता हूँ तो रोज़-बरोज़ सेहत जवाब दे रही है और ज़ोफ़ व इज़्मेहलाल बढ़ता जा रहा है ...... अगर प्यामे अजल सर पर आ

पहुँचा तो आह किससे कहिये और कौन जानता है कि इस मुश्ते ख़ाक के साथ क्या-क्या चीज़ें हैं जो सपुर्दे ख़ाक होंगी और फ़ैज़ाने इलाही ने अपने फ़ज़्ले मख़्सूस कैसे-कैसे दरवाज़े उलूमो-मआरिफ़ के इस आजिज़ पर खोले हैं जो बग़ैर इसके कि एक तालिबे सादिक़ व सालेह भी उनसे गुज़रे, बन्द के बन्द ही रह जाएँगे :

तू नज़ीरी फ़-ल-क आमदा बूदी चू-मसीह
बाज़ पस रफ़्ती व कस क़द्र तू नशनाख़्त दरेग़

(5) . (وهلم جرا) वो अलीम बेहतर जानता है कि गुज़श्ता छेह सात सालों में उसने न सिर्फ़ क़ुरआने हकीम बल्कि तमाम उलूमे इस्लामिया के दर्सो-बसीरत के कैसे-कैसे ग़ैर मफ़्तूह दरवाज़े इस आजिज़ पर खोले हैं ......

राही केह ख़िज़र दाश्त ज़-सर चश्मा दूर बूद
लबे तिश्नगी ज़-राहे दिगर बुरदेम मा

ग़रज़ कि मुसलमानों की दाख़िली इस्लाह व अहयाए इल्मो-अमल और ग़ैर क़ौमों में इस्लाम की तब्लीग़ के लिए दारुल इरशाद खोल दिया गया है और तलबा के लिए एक दो मन्ज़िला मकान शहर के यूरोपियन क्वार्टर में ले लिया गया है, इख़राजात[1] मदरसा देगा ......"

(फ़क़ीर अबुल कलाम كان الله له)

(अल-बलाग़ न० 1 नवम्बर सन् 1915 ई०)

1-ख़र्च।

आख़िर में रिसालए "तफ़्सीरुल-बयान फ़ी मक़ासिदिल क़ुरआन" का इश्तिहार था जो हर माह निस्फ़ हिस्सा मुक़द्दमए तफ़्सीर और निस्फ़ तफ़्सीर सूरः फ़ातिहा पर मुश्तमिल होगा।

अल-बलाग़ न० 2, नवम्बर 1915 ई० में सरेवरक़[1] पर "तर्जुमानुल-क़ुरआन" का इश्तिहार था। इसमें बताया गया था कि शाह वलिउल्लाह रह० ने सौ बरस पहले फ़ारसी तर्जुमा किया, फिर शाह रफ़ीउद्दीन रह० और शाह अब्दुल क़ादिर रह० ने उर्दू तर्जुमे किए, अब इस बुनियाद की तक्मील[2] का शर्फ़ ख़ुदा[3] ने एडीटर अल-हिलाल को दिया है। तर्जुमानुल-क़ुरआन उर्दू बिहम्दिल्लाह लेथू में ज़ेर-तबा है, क़ीमत फ़ी जिल्द 6रुपये। पेशगी अदाइगी 4.50 रुपये।

मुक़द्दमा तफ़्सीर

अल-बलाग़ न० 3, 10 दिसम्बर 1915 ई० में मुन्दर्जा बाला इश्तिहारात के अलावा पेशगी क़ीमत का ज़िक्र है और ये तहरीर है कि "तफ़्सीर के अलावा एक और अहम और मुस्तक़िल चीज़ तफ़्सीर का मुक़द्दमा है। इन्शाअल्लाह उसके इब्तिदाई अज्ज़ा[4] भी अल-बयान की अव्वलीन इशाअत के साथ शाय हो जाएँगे और फिर अस्ल तफ़्सीर के साथ छपते रहेंगे, उम्मीद है कि मुक़द्दमा जल्द मुरत्तब हो जाएगा, क्योंकि वो एक महदूद और मुरत्तब चीज़ है।"

अल-बलाग़ मोरख़ा[5] 14 और 21 जनवरी 1916 ई० में तहरीर है कि अल-बयान व तर्जुमानुल-क़ुरआन के लिए अहबाब को और इन्तिज़ार करना चाहिए। हत्तलइम्कान पूरी कोशिश कर रहा हूँ

1-मुख पृष्ठ। 2-पूरा करने का। 3-सौभाग्य। 4-अंश। 5-दिनांक।

कि इसका सिलसिला जल्द शुरू हो जाए। तफ़्सीर व मुक़द्दमा शाय हो जाता लेकिन इनके मुक़द्दमे की वजह से देर हो गई, क्योंकि मालूम हुआ कि पहले नम्बर के साथ मुक़द्दमा पूरा शाय कर दिया जाएगा।

फिर अल-बलाग़ नम्बर 13 और 14 मोरख़ा 3 और 10 मार्च 1916 ई० में अल-बयान की ताख़ीर का ज़िक्र है और अफ़्वो की ख़्वास्तगारी[1] की गई है। क्योंकि काग़ज़ का क़हत है, यही हाल तर्जुमानुल-क़ुरआन का भी है।

आख़िरकार 18 मार्च 1916 ई० को गवरमेंट बंगाल ने कलकत्ता से इख़्राज का हुक्म दे दिया और मौलाना रांची चले गए।

इसी ज़माने में मौलाना ने ये मुक़द्दमा छपवाया था जिसके इब्तिदाई 32 सफ़्हात हमें किर्म-ख़ुर्दा[2] हालत में मिले हैं।

मौलाना की तहरीरात से मालूम होता है कि मुक़द्दमा ''एक महदूद और मुरत्तब चीज़'' था और उसके अब्वाब का एक मुज्मल[3] नक़्शा मौलाना ने बना लिया था, उनमें से एक बाब ये है जो मारज़े तहरीर में आने के बाद छपा था।

मुहम्मद अजमल ख़ाँ

1-क्षमा याचना करना। 2-वो पन्ने जिन्हें कीड़ों ने खा लिया हो। 3-संक्षिप्त।

फ़ेहरिस्त अस्मा-ए-अश्ख़ास व क़बाइल

तर्जुमानुल-क़ुरआन – जिल्द अव्वल

⁂